ISSN : 0975-8011

बुन्देली बसंत



2015

ISSN - 0975- 8011

बुन्देली साहित्य, संस्कृति तथा इतिहास को समर्पित -

पंजी. क्र. MPHIN-17761/12/1/2002-TC

बुन्देली बसन्त

अंक १६, मार्च २०१५

❋

संरक्षक :

शंकरप्रताप सिंह बुन्देला 'मुन्नाराजा'

राजमहल परिसर, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५१४१४५५, ०९९८१५०३०५५

❋

संपादक :

डॉ. बहादुर सिंह परमार

एम.आई.जी.-७, न्यू हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी,

पन्ना रोड, छतरपुर (म.प्र.) ४७१००१

मोबाइल : ०९४२५४७४६६२, ०९७५५४६८९८९

e-mail : bsparmar1962@gmail.com

❋

सह संपादक

डॉ. के.एल. पटेल

रेडियो कॉलोनी के सामने, पन्ना रोड, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५८७९७७३

e-mail : dr.kunjeelalpatel@gmail.com

डॉ. हरिसिंह घोष

घोषयाना, संकटमोचन मार्ग, छतरपुर (म.प्र.)

मोबाइल : ०९४२५१४२०६६

प्रकाशक :

बुन्देली विकास संस्थान

महल परिसर, छतरपुर (म.प्र.) ४७१००१

c प्रकाशकाधीन

◆ संपादन एवं प्रबंध पूर्णतया अवैतनिक एवं अव्यावसायिक

◆ **आवरण चित्र :**
प्रो. सुधीर छारी
चित्रकला विभाग,
शासकीय महाराजा महाविद्यालय. छतरपुर (म.प्र.)

◆ **सहयोग राशि :**
१५१/- रुपये

◆ **संगणकीय अक्षर संयोजन :**
जिला सहकारी संघ मुद्रणालय, छतरपुर (म०प्र०)
☎ : ०७६८२-२४८६८६

◆ **मुद्रक :**
जिला सहकारी संघ मुद्रणालय मर्या०,
छतरपुर (म.प्र.) ☎ : (०७६८२) २४८६८६

◆ बुन्देली बसन्त में प्रकाशित लेखकों के विचार उनके अपने हैं। उनसे संपादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है।

◆ विवादास्पद मामले केवल छतरपुर न्यायालय के अधीन होंगे।

अनुक्रमणिका

भाषा, साहित्य एवं आलोचना

इतिहास, परम्परा और संस्कृति

बुन्देली गद्य

बुन्देली काव्य

अन्य

संपादकीय-

आज हम भारतवासी मंगल ग्रह पर यान को भेजने में सफल रहे हैं फिर भी इसी देश में स्थित बुन्देलखण्ड अँचल वासी अपनी पुरानी कुरीतियों, अंधविश्वासों तथा पाखण्डों को नहीं छोड़ना चाहते। इस प्रश्न पर विचार करते हैं तो पाते हैं कि यहाँ के लोग अशिक्षा के कारण अनेक समस्याओं से जकड़े हैं। शिक्षा की हालत ऐसी है कि पूछिए मत। अक्षर ज्ञान कराकर हम साक्षरों की फौज खड़ी कर रहे हैं, सच्चे मायने में शिक्षित नहीं कर रहे। साक्षरता बढ़ाने के प्रयासों के चलते जिन दूरस्थ ग्रामीण इलाकों में पाठशालाएँ खोल दी गईं हैं। वहाँ अध्यापक नहीं है। अध्यापक यदि हैं भी तो वे समर्पित भाव से कर्तव्यरत नहीं है। इन परिस्थितियों में गाँवों में भी अधकचरे अंग्रेजी मानसिकता को पुष्ट करने वाले तथा पैसा कमाने वाले विद्यालय निजी तौर पर खोले जा रहे हैं। उनमें हमारा भविष्य गढ़ा जा रहा है। इस ओर सोचने व कुछ करने की आवश्यकता है। हमारे बुन्देलखण्ड में आज भी सामंती मानसिकता बुरी तरह घर किए हैं। आजादी मिलने के बाद सामंत अधिकाधिक रूप से समाप्त हो गए किन्तु लगभग हर गाँव में इस मानसिकता के लोग हैं। सामंती मनोवृत्ति को एक जाति से जोड़ने के प्रयास किए जाते रहे हैं, जो काफी हद तक सही भी था किन्तु आज पैसा व पद पाकर हर गाँव में विभिन्न जातियों के सामंत पैदा हो गए हैं। जो अपनी बिरादरी के साथ अन्य का भी शोषण कर रहे हैं। आज भी खबरें मिलती हैं कि छुआछूत, जातिगत भेदभाव तथा स्थानीय दबावों के चलते समाज़ के बहुत बड़े तबके को अन्याय सहना पड़ रहा है। यह सामंती मानसिकता अँचल के स्वस्थ विकास में बड़ी बाधा है। इस बाधा को पार करने के लिए शिक्षा व शिक्षा से प्राप्त उदात्त भावों का जागना और जगाना जरूरी है।

आज बुन्देलखण्ड में स्थित गाँवों की दशा विचित्र है। सामाजिक ताना-बाना जो भेदभाव पर आधारित था, बदल रहा है। इस बदलाव में संघर्ष जारी है। इस सामाजिक संघर्ष में राजनीति उत्प्रेरक का काम सकारात्मक व नकारात्मक दोनों कर रही हैं। पंचायती चुनाव जो बापू के सपने 'ग्राम स्वराज्य' को साकार करने हेतु कराये गए हैं। उसने हर गाँव में कई गुट बना दिए हैं। यहाँ तक कि परिवार-परिवार में विवाद व मतभेद की स्थिति है। पंचायत के माध्यम से जो विकासधारा बहाने के लिए मोटी रकमें आ रही हैं, उसको पाने की ललक में वास्तविक लड़ाई है। आज आगे बढ़ने के लिए समाज में प्रतिस्पर्धा भाव की आवश्यकता है लेकिन ईर्ष्या-द्वेष से हम आगे बढ़ने के लिए दूसरों को लंगड़ी मार रहे हैं। पंचायतों को शिक्षा व विकास के लिए सच्चे मन से प्रयास करने की जरूरत है किन्तु यह कार्य नहीं किया जा रहा है। मुझे लगता है कि शायद प्रभु वर्ग को डर सताता है कि सच्चे मायने में लोग शिक्षित व जागरूक हो जाएँगे तो वे शोषण नहीं कर सकेंगे इसलिए उनके अस्तित्व पर संकट खड़ा हो जाएगा। ऐसी विकट

परिस्थिति में हमारे अंचल के रचनाकारों एवं जागरूक समर्पित लोगों का दायित्व महती हो जाता है कि वे अपनी भूमिका तय करें इस अन्याय को समाप्त करने हेतु संलग्न हो जाएँ। आज बुन्देलखण्ड में न केवल जातिगत भेदभाव है बल्कि स्त्री की भी स्थिति बदतर है। इससे बदलने की जरूरत है। बालिका शिक्षा में वृद्धि हो रही है किन्तु यह वृद्धि तीव्रतर हो, वे हर क्षेत्र में कदम बढ़ाकर आगे आएँ तो हमारा अँचल बढ़ेगा। हम सबको प्रयत्न करना चाहिए कि समाज के प्रत्येक तबके में आगे बढ़ने की ललक पैदा करें यदि हम यह करने में सफल हो गए तो समाज अपने आप आगे बढ़ने लगेगा।

अँचल के साथियों से निवेदन है कि हम लेखन तथा अनुसंधान में नया नहीं कर पा रहे हैं। इसके लिए परिश्रम से बचते हैं। आप से आग्रह है कि साहित्य, इतिहास तथा संस्कृति की गवेषणा हेतु हम मध्यकाल से बाहर निकलकर आदिकाल की ओर रुख करें। हम चेदि, जेजाक भुक्ति, दशार्ण देश की धरोहरों को खंगालने के साथ बुद्ध का प्रभाव, गोंड़ों का शासन, चंदेलों का कार्यकाल एवं अन्य प्राचीन छिपे रहस्यों से पर्दा उठायें। उन तथ्यों का आज के संदर्भ में विवेचन करें। इसके साथ आज या समकालीनता पर हम मुँह मोड़े बैठे हैं। समकालीन प्रश्नों को न केवल चिंतन में लाएँ वरन् उनसे मुठभेड़ करने की जरूरत है। फिल्म तथा टीवी जनमानस को प्रभावित कर रहा है, जिससे बुन्देली की दशा व दिशा बदल रही है। उस पर भी विचार करने की जरूरत है।

बुन्देली की अनेक पुरानी पोथियाँ अभी भी आपके घरों में बस्तों में बँधी हैं। उनको बाहर निकालकर प्रकाशित कराने का पुनीत कार्य कीजिए। इस संदर्भ में मुझे स्वर्गीय कवि बाबूलाल खरे के सुपुत्रों की याद आती है जिन्होंने अपने पिता द्वारा बुन्देली खंड काव्य 'मंगा' का प्रकाशन कराया है, जो पुनीत कार्य है। इसी तरह का कार्य छतरपुर के श्री बृजभूषण खरे द्वारा भी किया गया है। गृहणियाँ भी रचनारत हैं, उनकी रचनाएँ आ रही हैं। इस क्रम में जबलपुर की श्रीमती लक्ष्मी शर्मा का उद्धरण देना चाहूँगा जिनका जन्म बुन्देली धरा पर हुआ, विवाह जबलपुर हुआ, विवाहोपरांत देश के कोने- कोने के साथ विदेश भी पति के साथ जाना पड़ा किन्तु उनकी बुन्देली कविता नहीं मरी और बलवती हुई और वे रचनारत रहीं और अब काव्य संग्रह छपवाया ।

बुन्देली विकास संस्थान के अध्यक्ष श्री शोभा लाल गुप्ता का आकस्मिक निधन होने से हमारे परिवार की बडी क्षति हुई है हम उनके प्रति विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं हमारे वरिष्ठ रचनाकार चरखारी निवासी वैद्य हरिदास सक्सेना, राधाकृष्ण बुन्देली बाँदा तथा जवाहरलाल कँचन झाँसी का देहावसान बुन्देली की अपूरणीय क्षति है। बुन्देली बसंत परिवार उनको विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

अन्त में, हर बार की तरह आपसे आग्रह है कि अपनी टिप्पणी जरूर दें।

बहादुरसिंह परमार

चिट्ठी मिली अपुन की

'बुन्देली बसंत' 2014 का अंक पाकर अपार खुशी हुई। अंक वास्तव में संग्रहणीय है। बुन्देलखण्ड के साहित्य, पर्यटन, इतिहास से संबंधित बेजोड़ सामग्री अंक में समाहित है। बुन्देलखण्ड की प्राचीन परम्परा को बचाने में आप महती भूमिका अदा कर रहे हैं। वह आज के युग में अत्यंत दुरूह है जिसके लिए आपको साधुवाद। बुन्देली बसंत का अंक पाकर लगता है मैं अपनी माटी को छू रही हूँ। बुन्देली बसंत का प्रत्येक अंक आपके परिश्रम, सोच और विषय के गांभीर्य को दर्शाता है। पत्रिका भेजने के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

-डॉ.मोना जैन, रायपुर, छत्तीसगढ़

'बुन्देली बसंत' अंक 15, दिनाँक १७/०२/२०१४ हस्तगत आज हुआ। सायँकाल के बाद घर आया। भोजन किया और ९:३० बजे रात्रि से अभी १:०० बजे अर्धरात्रि तक पत्रिका को पलटता रहा। अंक तो आकर्षित है ही, ऊपरे से आपके संपादकीय में एक आग्रह यह कि अपनी बेबाक टिप्पणी से अवगत जरूर करायें, इस आदेश का किसी हद तक पालन करने का मन, पत्रिका के पृष्ठ पलटने का कार्य अलसाई आँखों के बावजूद करता रहा।

बधाई, इतने परिश्रम, 'भाषा, साहित्य एवं आलोचना, इतिहास, परम्परा और संस्कृति' 'बुन्देली गद्य' बुन्देली काव्य एवं अन्य पाँच भागों में पत्रिका प्रकाशित करना, एक असाधारण उत्तरदायित्व वाला कार्य है, यदि मुझे भी जरा सा संकेत मिलता तो मैं भी कहीं को गद्य-पद्य में अपनी स्व रचित रचना भेजकर पत्रिका में अपनी उपस्थिति अवश्य दर्ज कराता। खैर...।

दद्दा गुणसागर सत्यार्थी का लेख, डॉ.यशवंत सिंह का नवीनता किए हुए लोक साहित्य पर शोध लेखन, आपका दो साहित्यकारों को स्मृति वर्धक संवेदनात्मक लेख, अवधबिहारी श्रीवास्तव द्वारा बुन्देलखण्ड की युगल प्रिया का निबन्ध, हरिविष्णु अवस्थी का हमसें काते तुमसे सुनते, ओ.पी.रिछारिया की लोहे की सास (बुन्देली कथा) लिहाज श्री साकेत चतुर्वेदी सुमन, हम कवि बुन्देली बानी के, डॉ. ए.के.जड़िया, मुलिया की घरवारी- रतिभान तिवारी 'कंज', मिलकें रइयो-नवलकिशोर सोनी 'मायूस' बुन्देली कौ अनोखोपन-सुरेन्द्र शर्मा 'शिरीष' को ही पढ़ सका- जो अच्छे लगे। मेरी शुभकामनाएँ स्वीकार करें।

-देवकी नंदन 'शान्त', इन्दिरा नगर, लखनऊ उ0प्र0

'बुन्देली बसंत' का अंक 15 पढ़ने के लिए प्राप्त हुआ। मुझे तो विश्वास ही नहीं हुआ कि बुन्देली बोली को, शिखर तक पहुँचाने के लिए इतना कुछ सृजन किया जा रहा है।

आज भोजपुरी में बहुत काम हो रहा है। यहाँ तक कि फिल्म निर्माण क्षेत्र में भोजपुरी काफी अग्रणी है। तमिल, तेलगू, कन्नड़, उड़िया सभी भाषायें बोलियाँ तरक्की कर रहीं हैं। ऐसे प्रगतिशील समय में बुन्देली को आगे बढ़ने के लिए 'बुन्देली बसंत' पुस्तिका मील का पत्थर है। 'बुन्देली बसंत' के फरवरी 2014 के अंक में अच्छे-अच्छे सुलेख पढ़ने को मिले। विशेष रूप से 'अनोखी बगिया' डॉ. सुरेश पराग, अदबनी अटाई, शकूर मुहम्मद की कहानी, बुन्देली गजलें डॉ. वर्षा सिंह, एवं लोहे की सास-लेखक ओ.पी.रिछारिया की, हास्य रस में डूबी शिक्षाप्रद कहानी काफी सराहीय और मानवीय भावनाओं को उजागर करती हुई मनोरंजक रचना है। डॉ.रामसेवक गुप्त जी एवं डॉ.शंकरलाल शुक्ल जी पर आधारित संस्मरण लेख- गुरुशिष्य परम्परा को नवजीवन देते हैं।

-प्रसून मिश्रा एवं के.के. मिश्रा सागर म0प्र0

'बुन्देली बसंत' अंक 15 पढ़ने का सौभाग्य मिला। 'बुन्देली बसंत' हमारी संस्कृति और संस्कारों को नई पीढ़ी तक पहुँचाने वाला ब्रह्मास्त्र है। बुन्देली साहित्य के रसिक जनों और रचनाकारों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनकर प्रतिवर्ष अवतरित होने वाला अनूठा संकलन है। फरवरी 2014 अंक 15 में काफी प्रेरणादायी कहानियाँ, विचारोत्तेजक, लेख, हास्य व्यंग्य की रचनायें अनमोल साहित्य, हमारी परम्पराएँ, संस्कृति बुन्देली गीत काव्य सभी कुछ समाहित है। पाठकों के मन-मस्तिष्क को भरपूर खुराक मिल जाने से असीम तृप्ति का बोध होता है।

प्रस्तुत अंक में-'बुन्देली स्वास्थ्य परक गीतों की जीवन में उपयोगिता' डॉ.सरोज गुप्ता का अद्भुत संकलन है। 'एक थीं सुमन एक थीं उम्मेद' डॉ.दया दीक्षित की समसामायिक मनोरंजक कहानी काबिले तारीफ है। यदि गंभीरता से अंक पढ़ा जाये, मनन चिंतन किया जावे तो उभरते हुए नये लेखकों को 'बुन्देली बसंत' के सम्पादकीय लेख से मार्गदर्शन और प्रेरणा मिल जाती है, कि वह श्रेष्ठ-सृजन कर सकें। 'कनवर टाइगो' व्यंग में डॉ.गंगाप्रसाद बरसैयां जी ने आज के समाज का आईना सामने रख दिया है। दूसरी ओर डॉ. देवदत्त द्विवेदी जी का व्यंग्य लेख-मातेराज में आम जनमानस को अपने मताधिकार को लेकर सही और गलत निर्णय पर विचार करने को मजबूर करने वाला लेख है। 'एक कुत्ते का दर्द' कहानी में लेखक महोदय श्री दिनेशचन्द्र दुबे जी ने जीवजन्तु के प्रति प्राणी हिंसा के विरुद्ध और मानव के प्रति मानव के गिरते हुए नैतिक स्तर को सांकेतिक रूप से रेखांकित किया है। जो एक मनोरंजक कहानी है। बुन्देली साहित्य कितना अथाह है, यह सिद्ध होता है, श्री सुरेन्द्र शर्मा 'शिरीष' जी के संकलन बुन्देली कौ अनोखोपन से। निश्चित ही यह ज्ञान वर्धन करता है। विलुप्त होती बुन्देलखण्ड की विवाह परम्परायें लेखक श्री एन.डी.सोनी जी ने हमारी बुन्देली संस्कृति, परम्परा, रीति-रिवाज, का चित्रण बड़ी मेहनत के साथ किया है। निश्चित ही वे बधाई के पात्र हैं।

अतः यह कहा जाता सकता है कि 'बुन्देली बसंत' स्थाई रूप से वर्षो तक पढ़ा जाने वाला और आगामी पीढ़ी को मार्गदर्शन देने वाला 'अमृत कुण्ड' रूपी श्रेष्ठ साहित्य बन गया है। संपादक जी और उनकी सभी टीम इस भागीरथी प्रयास के लिये साधुवाद की हकदार हैं।

-ओ.पी.रिछारिया, ७५, परकोटा वार्ड सागर म0प्र0

बुन्देली संस्कृति के संरक्षण, लोकसाहित्य के उन्नयन और संवर्धन में आपके समर्पण और श्रम की श्रृंखला में नवीन

कड़ी 'बुन्देली बसंत 2014' को देखकर आपके प्रति और भी श्रद्धावनत् हो गया हूँ। परिवर्तन के दौर में हम, बुन्देली में मूल मानवीय संवेदनाओं को कैसे संरक्षित करें? आप द्वारा इंगित यह यक्ष प्रश्न अंतर्मन को मथ रहा है और परिवर्तित हो रहे लोकमानस को साहित्यिक सृजन में सूक्ष्मता से पकड़ने का आपका आह्वान मेरी साहित्यिक अभिरुचि को दिशा बोध दे रहा है। डॉ.दया दीक्षित की कहानी, एक थी सुमन एक थी उम्मेद, मानवीय संवेदनाओं की सशक्त प्रस्तुति है। कहानी में लोक संस्कृति और भाषा का सौष्ठव उत्कृष्टता से प्रकट हुआ है। रचनाकार की संवेदनशीलता एवं बुन्देली परिवेश के साथ-साथ सामाजिक परिवर्तन की गहरी समझ प्रशंसनीय है। आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल के शोधपूर्ण आलेख 'अकौआ की विथा' में आदि वृक्ष अकौआ और उसके दिव्य मंदार पुष्प के गुणों का शास्त्रीय एवं आयुर्वेदीय विवेचन ज्ञानवर्धक है। विद्वान लेखक ने इस माध्यम से हमारी अस्मिता को यह कहकर ललकारा है कि 'रस वैद, पंडत, ग्यानी, सब जी के गुनन खों अभऊँ जानत और मानत है, ऊँखों हमने अपनी बुन्देलखण्ड में का बात से घूरे को बिरछा बना दओ।'

संवेदनहीनता की पराकाष्ठा पार कर रहे मानव समाज के बीच मूकप्राणी के आर्त्तनाद को सशक्त भाषा शैली में व्यक्त करती हुई कहानी 'एक कुत्ते का दर्द' यह साबित करती है कि संवेदना, मनोविज्ञान एवं व्यंग की अभिव्यक्ति में भी बुन्देली भाषा पूर्ण सक्षम है।

बुन्देली के विद्वान अध्येताओं में डॉ.कुंजीलाल पटेल 'मनोहर' द्वारा लोकछंद 'कहरवा' की शोध यात्रा, पं. गुणसागर सत्यार्थी द्वारा बुन्देली भूतल की प्राचीनता के संदर्भ से लोकभाषा और संस्कृति की प्राचीनता का दिग्दर्शन, पं. उदय शंकर दुबे द्वारा 'कवि भौड़ेले जी' के अप्रकाशित छंदों को प्रकाश में लाना, डॉ. रामनारायण शर्मा द्वारा अज्ञात कृति 'विसातनभेष' की खोज पं. हरिविष्णु अवस्थी द्वारा महालक्ष्मी व्रत कथा में भी इतिहास तथ्यों की खोज आदि के साथ अन्य सभी अध्येताओं के शोधपूर्ण आलेखों ने 'बुन्देली बसंत' के इस अंक को एक संदर्भ ग्रंथ जैसा रूप दे दिया है।

इस अंक की सभी काव्य रचनायें मनभावन हैं। रतिभानु तिवारी 'कंज' की कविता 'मुलिया को घरवारौ' एक ओर जहाँ बुन्देलखण्ड की विपन्नता की मार्मिक अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर सामाजिक विषमता को भी दृढ़ता से रेखांकित करती है। स्वतंत्र प्रभाकर रावत की सकारात्मक भावों से भरी कविता 'जी के बोल मिश्री घाँईं' में श्रम की प्रतिष्ठा को आध्यात्मिक आयाम दिया गया है और बुन्देलखण्ड की समृद्धि की परिकल्पना संजोई है।

आवरण पृष्ठ बहुत ही सुन्दर बन पड़ा है। तैल चित्र में उकेरी गई 'मार्डन आर्ट' ने अपनी मौन अभिव्यक्ति से मन को संगीत और नृत्य के संजीव आनंद से तरंगित कर दिया है। बुन्देली वेशभूषा में वादक की इकतारा पर मचलती उंगलियों एवं धुन पर मुग्ध थिरकती नृत्यांगना, सुन्दर रंग संयोजन के साथ बुन्देली बसंतोत्सव का सृजन करते लग रहे हैं। पैंटिंग से अन्य अनेक अर्थ भी प्रतिभाषित हो रहे हैं। चित्रकार अंशुमान सोनी बधाई के पात्र हैं।

-इं.अभिनंदन कुमार गोइल, *बाजार जैन मंदिर मार्ग टीगमगढ़ म0प्र0*

बुन्देलखण्ड की विविध पक्षीय एवं बहुरंगी विरासत को अन्तर में समेटे हुये, बुन्देली बसंत का अंक १५ वर्ष २०१४ मिला। परम्परा के अनुरूप पूरी सजधज के साथ प्रकाशित इस वार्षिक पत्रिका के लिये पूरे सालभर की प्रतीक्षा दर्शन मात्र से उत्कंठा में परिवर्तित हो गई।

सम्पादकीय समापन के तुरन्त बाद 'राईनृत्य का प्राण तत्व कहरवा' पढ़कर मन प्रफुल्लित हो गया। इस लघु छंद की संरचना लयात्मकता तथा मनोभावों की अभिव्यक्ति की सम्पूर्णता अत्यन्त मनोहारी है। इसके पूर्व के अंकों में भी डॉ. कुंजीलाल पटेल 'मनोहर' के आलेख उनकी खोजी वृत्ति एवं शोध पूर्ण सामग्री पढ़ने को मिलेगी ऐसी आपेक्षा है।

बुन्देली शिल्पकला पर प्रकाश डालते आलेख बुन्देलखण्ड में छतरी निर्माण की परम्परायें (डॉ.साफिया खान) छतरपुर जिले में बुन्देली शैली के शिल्प (सुधीर कुमार छारी) तथा दतिया रियासत की भरतगढ़ की हवेली और स्थापत्य के अथबोध (डॉ.रामस्वरूप ढेंगुला) अच्छे हैं। बुन्देली शिल्प पर अभी बहुत कुछ अनदेखा व अनकहा है। जिसे प्रकाशित करना हित कर होगा। इसी श्रृंखला में संस्कृत वांग्मय में चंदेल कालीन शिला लेख (संतोष कुमार पटैरिया) व बुन्देलखण्ड महिमा (अशोक चतुर्वेदी) लेख भी महत्वपूर्ण हैं। इन आलेखों से बुन्देलखण्ड के वैभव व उसकी प्राचीनता का भान होता है।

कुल मिला कर पत्रिका के लगभग सभी आलेख पठनीय हैं। पद्य की अपेक्षा गद्य ज्यादा आकर्षक है। हाँ एक बात और कहना चाहता हूँ वह यह कि इस धरा के वैभव की खोज के लिये छत्रसाल बुन्देला के बुन्देलखण्ड की सीमाओं के परे जाकर भी देखना होगा अन्यथा विचार दृष्टि कालबाधित रहेगी और महत्वपूर्ण परिदृश्य दृष्टि पथ से ओझल रह जावेंगे।

आशा है भविष्य में बुन्देली बसंत और अधिक विरासत को समेटने व सहेजने में सक्षम होगी ऐसी कामना है।

कुँ.शिवभूषण सिंह गौतम-अन्तर्वेद, कमला कॉलोनी, छतरपुर

बुन्देली बसंत की चर्चा अब दिल्ली में भी होने लगी है। यह मुझे देखकर खुशी हुई कि इसकी कुछ सामग्री समावर्तन ने साभार छापी।

डॉ.रामशंकर द्विवेदी-१२६० नया रामनगर, उरई उ0प्र0

का-कित्ती कित्ती लिखें, शोभा छटा अपार।
बुन्देली बसंत महिमा बढ़ी, खुशी है अपरम्पार।
सुहानों गेटअप न्यारो।
ई-पन्द्रहवें अंक में, पचखण्डी आकाश।
भाषा साहित्य परम्परा, गद्य काव्य अन्याभास।
एक छप्पन पृष्ठऊ भी।
संपादकीय के धन्य संग, कहरवऊ राई नृत्य।
अंतिम लेख बुन्देली कवि, रामसखे भी कृत्य।
लयँ ऊँचाई सीकर।

-डॉ.एल.आर.सोनी-सीकर, ठंडी सड़क, दतिया म0प्र0

बुन्देली गद्य की अवधारणा

-पं.गुणसागर 'सत्यार्थी'

मुझ पर यह आरोप प्राय: लगाया जाता है कि मैं कुछ उद्धरणों को अपने आलेखों में बार-बार प्रयोग क्यों करता हूँ? मेरी भी यह मजबूरी है कि विषयवस्तु या प्रसंग नया होने पर भी उद्धरण उस नए सन्दर्भ में पुराना ही लिखना पड़ता है, क्योंकि नये सन्दर्भ को प्रभावशाली बनाने में वह उद्धरण उतना ही उपयुक्त होता है जितना पूर्व में लिखे गए सन्दर्भ के लिए था। अस्तु प्रो0कान्तिकुमार जैन का यह उद्धरण आज पुन: दुहरा रहा हूँ कि-'...कभी-कभी हम अपने परम्परा, इतिहास अथवा जनश्रुति को इतना स्वीकार कर लेते हैं कि उसकी वास्तविकता से परिचित नहीं होना चाहते और उसके ब्योरों में जानें में हमें आलस्य आने लगता है।.....हमारे लिए दीवानगी एक बड़ा और प्रिय मूल्य बन जाता है और इसकी तुलना में ज्ञान अथवा वास्तविकता एक उपेक्षणीय और अकाम्य वस्तु।...' बुन्देली गद्य लेखन के सन्दर्भ में भी इस उद्धरण के अनुसार हमारी दीवानगी ही दीवानगी आज दिखाई दे रही है।

हमें सर्व प्रथम इस सच्चाई को स्वीकार करना चाहिए कि पद्य लेखन की तुलना में गद्य लेखन कहीं अधिक कठिन है। परन्तु हमारी दीवानगी ने हमें श्रृगाल परम्परा से जोड़ दिया है कि-एक श्रृगाल ने कहा- 'हुआऽऽऽ...' तो सभी श्रगाल हुआ, हुआ, हुआ... चिल्लाने लगते हैं। यही स्थिति आज बुन्देली में गद्य लिखने की बन गई है। बुन्देली जब से विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रमों में समाहित हुई है, तब से बुन्देली में पद्य के साथ अब गद्य लेखन की भी बाढ़ सी आ गई है। जो लोग हिन्दी खड़ी बोली में भी गद्य लेखन में सफल नहीं हो सके वे लोग भी बुन्देली में गद्य लिख रहे हैं। जबकि हिन्दी खड़ी बोली की प्रकृति (मिजाज) और बुन्देली की प्रकृति एक सी नहीं है। बुन्देली की प्रकृति संस्कृत की प्रकृति से अधिक मेल खाती है। क्यों न हो संस्कृत और बुन्देली परस्पर सभी बहिनें ही तो हैं। संस्कृत में धातुओं के 'लकार' (स्वरूप) अलग-अलग होते हैं और हिन्दी में प्राय: नहीं होते। जबकि बुन्देली में अवश्य होते हैं। उदाहरण के लिए देने या देना क्रिया को ही लें-संस्कृत में प्रथम पुरुष में ददामि, मध्यम पुरुष में ददासि और अन्य पुरुष में ददाति होगा। परन्तु हिन्दी में? ऐसे रूप नहीं के बराबर हैं। जबकि बुन्देली में प्रथम पुरुष भविष्य काल में दैवी, मध्यम पुरुष में दियो, अन्य पुरुष में देबै हो जाता है।

भाषा की इस गहराई में उतरे बगैर हम बुन्देली के प्रति दीवानगी को ढोते हुए, पत्र व्यवहार भी बुन्देली गद्य में करते हैं। फिर हम लिखेंगे-'कै जौन रचना मोखा पठाव वा अपनी अन्य बैन पत्रिकान में न दैवी।...' यहाँ मध्य पुरुष वाली क्रिया धातु का प्रयोग यदि किया जाता तो उचित होता। लिखना चाहिए था कि-जो कछू लिखकें मोखाँ अपन पठाव बाय औरई पत्रिकन में ना पठै दियो जू, जा हमाई बिनती है।' तात्पर्य यह है कि बुन्देली में गद्य लिखा जावे अथवा पद्य, उसकी प्रकृति को ध्यान में रखकर ही लिखा जाना चाहिए।

गद्य लेखन में कितने प्रकार के वाक्यों का प्रयोग होता है? इस पर ध्यान देना अति आवश्यक है। यथा- सरल वाक्य, संयुक्त वाक्य, मिश्र वाक्य, प्रश्नबोधक वाक्य, विस्मय बोधक वाक्य,... आदि। ऐसा कुछ न करके गद्य में जो कुछ लिखा जा रहा है उसे बुन्देली के मठाधीश जिन्हें स्वयं इसका ज्ञान नहीं है कि गद्य लेखन का विधान क्या है? वाक्य कितने प्रकार के होते हैं? बुन्देली भाषा की प्रकृति क्या कैसी है? यह समझे बगैर जो भी तथा कथित गद्य लेखन उनके पास आया कि उसे इकट्ठा करके पुस्तक के रूप में प्रकाशित करके ढिंढोरा पीटना शुरु कर दिया कि बुन्देली में मैंने गद्य का विकास किया है, मैं ही बुन्देली का भारतेन्दु हरिश्चन्द्र हूँ। फिर तो श्रृगाल कोलाहल भी शुरु हो जाता है- हुआ, हुआ, हुआ, हुआ...। जबकि यथार्थ में कुछ भी नहीं हुआ। अस्तु-

ऐसे श्रृगाल कोलाहल की चकाचौंध से हटकर हमें बुन्देली को एक साहित्यिक भाषा के रूप में संवारना होगा। क्योंकि अब हमें बोली नहीं भाषा लिखना है। बोली के लिए तो बुन्देलखण्ड में कहावत कही जाती है-'कोस-कोस पै पानी बदलै, बीस कोस पै बानी'। और बुन्देलखण्ड बहुत बड़े भू-भाग में फैला हुआ है। तब हमें लिखते समय सर्व प्रथम अति क्षेत्रीय बोली के प्रभाव से ऊपर उठकर लिखना चाहिए। ऐसे शब्दों का प्रयोग न करें जिनका चलन मात्र हमारे इर्द-गिर्द के दस-बीस कोस की परिधि में है। हमें यह सोचकर लिखना चाहिए कि हम सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड के लिए लिख रहे हैं और सम्पूर्ण बुन्देलखण्ड सिर्फ हमारा अपना गाँव नहीं है।

बुन्देली में पत्र व्यवहार की परम्परा बहुत पुरानी है। अत: पत्र लेखन के माध्यम से बुन्देली गद्य लेखन में पर्याप्त विकास भी हुआ है। उदाहरणार्थ ओरछा राज्य के अन्तिम शासक सवाई महेन्द्र महाराजा वीरसिंह जू देव (द्वितीय) का लिखा एक बुन्देली पत्र देखें। यह पत्र उन्होंने दिनाँक २/७/१९३३ को अपने राजकवि-मुंशी अजमेरी 'प्रेम' को लिखा था-

'भैय्या अजमेरी जी! जै राधे की।

तुम्हारौ पत्र तारीख २३ कौ काल संजा कों मिलौ। सिकत्तर साहब कौ कसूर नैंय्याँ कै उन्नें लिख दयी कै मैं तीर्थयात्रा कों गऔ तौ, काय सें कै उनें हिन्दी की यात्रा के लानें एकै शब्द आउत है और बौ है 'तीर्थयात्रा'। बे जानत हैं कै 'यात्रा' पूरौ शब्द नैंयां, तीर्थ लगा दैबे सें पूरौ होत। जा आपगुड़ी हती।

सो श्याम सुन्दर दास जू परोपकार कौ मुड़ायछौ बाँदें, फिरत? का कैय्ये साब, बड़े परोपकारी! आल्हा की बा तुक याद आगइ कै 'रैय्या जूझै पराये काज।' मैं उनें थोरे दिनन में पत्र लिखत हों। देखें का जबाब देत?

अबै ग्लैसियर यात्रा कौ लेख अधूरौ डरो, काय सें कै इतै पोंच कें दो-तीन दिन के बाद मोरी रान में एक फोरा हो गऔ तौ ऊ मुतराँयदे के मारें अबैलों ठीक सें बैठ नइँ पाउत। आसा है कै दो-तीन दिना में ठीक हो जैउँ।

अबै दो-तीन दिना भैय बाँस की दस-बीस लठियाँ आँयीं तीं, उनमें दो नबेरी हैं और कड़ेरे के इतै डार दईं हैं। जोई तैय्यार होकें आहे कै उनें स्याम-व्याम... सें लैस कराकें पठवा दैउँ।

नाहर के जो दोहा बना भेजे सो भौतइ नोंने लगे। सबैइँ नें पसन्द करे। धन्यवाद। इतै सब प्रकार कुशल हैं। आशा है अपुन कुशल सें हूहौ।

भवदीय

हस्ताक्षर (वीरसिंह जू देव)

निश्चय ही गद्य के इस उद्धरण में सरल वाक्य, संयुक्त वाक्य, मिश्र वाक्य, विस्मयबोधक वाक्य... आदि के साथ संस्कृत की प्रवृत्ति को भी देखा जा सकता है। होने की क्रिया में उन्होंने प्रथम पुरुष में 'होवी' नहीं बल्कि मध्य पुरुष में 'हूहौ' लिखा है। गद्य का प्रवाह बुन्देली की प्रकृति के यथानुसार अपने सहज स्वाभाविक रूप में बुन्देली की मिठास एवं सौन्दर्य को प्रदर्शित कर रहा है। छोटे-छोटे सरल वाक्यों के साथ छोटे-छोटे पैराग्राफ देकर पत्र में अनेक विषयों का सहज समावेश है।

बुन्देली गद्य का विकास पत्र व्यवहार से शुरू होकर साहित्य में सर्वप्रथम ओरछा निवासी स्व. भगवान सिंह गौंड़ ने अब से छैः-सात दशक पूर्व किया था। उन्होंने बुन्देली गद्य में 'अथाई की बातें' शीर्षक से पुस्तक लिखी थी जिसके कई भाग उन्निस सौ पचास के दशक में प्रकाशित भी हुए थे। जिसकी भूमिका ऐतिहासिक-उपन्यास सम्राट बाबू वृन्दावन लाल वर्मा ने लिखी थी। उस समय आज के तथा कथित बुन्देली गद्य के जन्मदाता स्वयं-भू बुन्देली के भारतेन्दु हरिश्चन्द्रों का जन्म भी नहीं हुआ था और तब बुन्देली गद्य लिखा जा रहा था।

अब से छैः दशक पूर्व प्रकाशित स्व. भगवान सिंह गौंड की पुस्तक 'अथाई की बातें' प्रकाशित होने वाली संभवतः बुन्देली गद्य की पहली पुस्तक है। उस पुस्तक में हिन्दी गद्य विधा में 'रेखाचित्र' की भाँति सम सामयिक वातावरण का सजीव चित्र उभरता है। एक उद्धरण देखें-

'...सौबतमाते और मनमोहन की बातें हो रइँ, कैरये-सुनत हैं कै सुराज मिल गऔ, अब सुराज के राज में कौनऊँ बात की हैरानी नइँ हौनें। मनमोहन बोले- का पतौ कै का कैसौ सुराज मिलौ है? बा सुराज में अपुन खों कछू मिल है कै नेतई नेता बाँट खै हैं? सुनकें सौबत माते बोले-अथाई पै चलौ, उतै पतौ पर है कै का-कैसौ सुराज मिलौ है? ऐसी बातें करत दोऊ जनें अथाई पै जा बैठे, लम्बरदार सें बोले-राम-राम। राम-राम, काय हो माते बौनी होगई? सौबत माते बोले-अबै तौ चना-जबा बै रये, सुनत हैं कै पिसी उड़ रई। लम्बरदार नें कई-हओ, अबै कन्या के सूरज हैं सो घाम करौ है बई की चौंदी सें उनारी उड़त जात।

मनमोहन बोले-दाऊजू, सुनी है कै सुराज मिल गऔ? जा बात साँची है कै झूँठी? राजन और गोरन के राज में जिन-जिन बातन की हैरानी हती अब बा सब जानें? सुनकें लम्बरदार बोले-सुराज तौ बिलात दिनन कौ मिल गऔ पै हैरानी मिटबे ना मिटबे की बातें बैठकें सुन लेव, जिन बातन सें सब पतौ परजै कै कैसौ सुराज मिलौ है...।'

यह अब से छैः दशक पूर्व का गद्य है, जिसमें भाषा का सहज प्रवाह है, हिन्दी गद्य की इस पर छाया भी नहीं है। छोटे-छोटे सरल वाक्यों के साथ संयुक्त एवं मिश्र वाक्यों का सहज प्रयोग है। तब से अब तक हम अपेक्षाकृत अधिक साधन सम्पन्न एवं विकसित भी हुए हैं। इन छैः दशकों में बुन्देली गद्य का स्वरूप परिमार्जित होकर आज इस स्थिति में आ जाना चाहिए था, कि विश्वविद्यालयीन पाठ्य क्रम में पढ़ाया जा सकता। परन्तु एक ओर तो बुन्देली भाषा को आज विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रम में समाहित किया जा चुका है, तो दूसरी ओर कविसम्मेलनी-बाजारवाद ने बुन्देली लिखने वालों की भीड़ खड़ी कर दी है।

देख-सुनकर अच्छा लगता है कि बुन्देली में लिखने वालों की संख्या दिनों-दिन बढ़ती जा रही है। परन्तु सब के सब अति क्षेत्रीय प्रभावों में केवल ग्रामीणों के बोलने बाली बोली को ही यथावत लिपिवद्ध करने को बुन्देली भाषा साहित्य मान कर भ्रमित हैं। बुन्देली को अति क्षेत्रीय प्रभावों से निकालकर उसका साहित्यिक भाषा-स्वरूप निखारने की ओर प्रायः सभी उदासीन हैं। अब तक पद्य लेखन में ही बुन्देली का भाषायी स्वरूप नहीं निखारा जा सकता है, तब गद्य लेखन पर बुन्देली की बहु प्रचलित कहावत ही चरितार्थ होती है कि-'बिच्छू कौ मन्तर नइँ जानत और साँप की बामी में हाँत डार रये।' हिन्दी में ऐसे लोगों की संख्या नहीं के बराबर है जो गद्य और पद्य दोनों ही अधिकार के साथ लिखते हों। हिन्दी में कवि अलग हैं तो गद्य लेखक अलग। बुन्देली में भी हमें यह बँटवारा कर ही लेना चाहिए कि गद्य लेखक केवल गद्य लिखकर रचनाधार्मिता का उत्तरोत्तर विकास करें और पद्य रचनाकार केवल कविता के माध्यम से बुन्देली का साहित्यिक स्वरूप भाषायी स्तर पर निखारें। ऐसा जब तक नहीं होता तब तक बुन्देली का भविष्य स्वयं में प्रश्न चिन्हों से ही घिरा रहने वाला है। कवि सम्मेलनों की सस्ती वाह-वाही और गाढ़ी कमाई को गौंण करके बुन्देली के लिए बुन्देली में रचनाधार्मिता की अपेक्षा दर अपेक्षा है। बुन्देली हिन्दी के अन्तर्गत हिन्दी की बोली नहीं है वह भाषाविज्ञान की कसौटी पर स्वयं में एक समर्थ भाषा है। अतः बुन्देली में गद्य साहित्य की अपेक्षा करना हमारी चाह स्वाभाविक है। परन्तु उसके लिए हमें दीवानगी छोड़कर गम्भीर होना पड़ेगा और गद्य लेखन की अवधारणा को बारीकी से समझना होगा।

-कुण्डेश्वर, जिला टीकमगढ़ म0प्र0 卐

रामधई

-ओ0पी0 रिछारिया

राम दुहाई....अर्थात् भगवान राम जी की दुहाई देकर कही गई बात...पत्थर की लकीर होती है। रामदुहाई .....का अपभ्रंश रूप ......'रामधई' बन गया।

बुन्देलखण्ड में, - 'रामधई' कह कर अर्थात् राम जी की सौगंध खाकर....अपनी बात को भरोसा दिलाया जाता है। अपने किए हुये, वादे का 'विश्वास' दिलाया जाता है।

****

रतनपुर गाँव ....।

गाँव के स्कूल में छुट्टी की घण्टी बजबे में, आधे घण्टा की देर हती....। नौंमी किलास की छात्रा 'गिरजा' पेट पकरें बैठी हती। वैसे तो ओखों पिछले तीन दिना सें पेट में 'मरोड़' की शिकायत हो रई ती। 'गिरजा' खों बेर-बेर लोटा ले कें जावे के कारन बेजाँ कमजोरी हो गई ती।

गिरिजा छुट्टी लैकें घरे ईसें नें जा रई ती, काए के ओके घरे 'शौचालय' नें बनो हतो। दूर मैदान में जाबे को काम तो रोज को हतो। स्कूल में 'शौचालय' की सुबधा हती। ईसें बिचारी स्कूल के बन्द शौचालय में जाबो ठीक समझ रई ती...।

हिम्मत कर कें-तीसरी बेर गिरजा अपनी मैडम सें अनुमति माँगी-मैडम जी हमें फिर सें मरोड़ हो रई है...।'हाँ-हाँ तो जाओ न बेटा...।' संकोच क्यों कर रही हो...? मैडम ने उठते हुए कहा। और सुनो घर जाकर दवा जरूर ले लेना।'जी मैडम ...। कहती हुई-गिरजा शौचालय की ओर चली गई। थोड़ी देर बाद...।

जब गिरजा का पेट हल्का हो गया, तो उसने मन-मन ही मन ठान लिया था, कि वह घर जाकर अपने पापा जी को शौचालय बनवाने के लिए अवश्य ही राजी कर लेगी।
गिरजा घर पौचीं...। खेत से लौटकें पापा घरै आये तो गिरिजा ने साफ-साफ कै दओ तो, पापा जी घर में शौचालय जरूर बनावा दो। अब आप की टाल मटोल नहीं चलेगी। आपके जमाने की बात और थी...। गिरिजा के पापा अर्थात् मकुन्दी पटेल अपनी पत्नी रामसखी और बेटी गिरिजा खों कई बेर भरोसो दे चुके थे, शौचालय अगली साले बना देहैं। कई सालें बीत रई ती। शौचालय को अतो-पतो नईं।
अब की बार...। गिरिजा ने रनवा लई....। पापा रामधई खाओ...। कबे बनवा रये? मकुन्दी ने, पंचकें उतरवे के बाद बनवावे की झूठी रामधई खा लई...।

अँधियारों पाख लग गओ...। पूनें हो गई फिर अमावस, फिर पूनें... मईना, दो मईना, और साल बीत गई। गिरिजा निराश हो गई...। अब की बार गिरिजा ने रामधई खा लई ई बात की, कबऊँ पापा से शौचालय बनवावे की दोबारा न कैहैं।

सात मईना बाद..। सिरकारू अस्पताल के बायरें गेट पे रामसखी डिडया कें रो रई ती। अस्पताल की सुरक्षा ड्यूटी पे तैनात सिपाई रामसखी खों डाँट रओ तो- ऐ! बाई इतें न नर्‌रयाओ, साब लोगन को डिसटरब होत है..। जो होने तो, सो हो गओ...। रोए-धोए से का होत है...? उठो इतें सें, उते कुआं के पछीते जा के बैठो...। इते मरीज घबरात हैं...।

सिपाई जू आडर देकें, पान के टपरा कोद निकर गये। परौसी मरीज सूरजभान दादा सब देख रएे ते...। अरे! जा बाई तो अपनी मौड़ी खों ले कें भियानें आई ती। हमाए बगल बारे पलका पे भरती हती...। अचानक का हो गओ? मौड़ी की तबियत तो उम्दा हती...। सूरजभान लम्बे डग धरत अपने वार्ड की तरफ लपके...। वार्ड में, अपने मरीज के बगल बारो पलका खाली डरो हतो...। सूरजभान को माथो ठनक गओ...। सूरजभान की आँखों के सामने तीन दिना पैलें की बातें-सिनेमा के चित्र की नाँई घूमन लगी...।
आज से तीन दिना पैलें..। सूरजभान अपनी नातिन चन्द्रप्रभा खों डायरिया हो जाबे के कारन भरती करबे ल्याए हते...। चन्द्रप्रभा की उमर पन्दरा साल की हुइये। देखबे में, बड़ी भोली-भाली औ खबसूरत मोड़ी होवे के संगे-संगे समझदार औ बड़ी हुसियार मोड़ी। अपने दादा की बड़ी लाड़ली और प्यारी मौड़ी होवे के कारन दादा की आँखन के साँमू हँसत खेलत रये तब तो ठीक है, कजात तनक सी छींक आ जावे, के खाँस देवे तो दादा धरती सरग एक कर डारत। जोई कारन हतो के जब मौड़ा सिरकारू नौकरी के काम सें दौरा पे हतो, ओई बखत पे नातिन बीमार हो गई। सो दादा अस्पताल ले के भगे।

सूरजभान अपनी बहू औ नातिन खों लेकें अस्पताल आ गए औ ससुर बहू मिलकें, चन्द्रप्रभा की सेवा देखभाल करन लगे। जब सूरजभान ने चन्द्रप्रभा खों भरती करो हतो तब उनके ठीक बगल बारो पलका खाली हतो। शुरू के दो दिना तो सूरजभान बगल में खाली पलका पे सो जावे। और चन्द्रप्रभा की मताई धरती पे चटाई डार के सो जावे।

चन्द्रप्रभा को इलाज लगातर चलई रओ तो। तीसरे दिना बगल वारे पलका पे, एक नऔ मरीज भरती भओ। बातन-बातन में पतो चल गओ तो के पास के गाँव रतनपुर के पटेल मकुन्दीलाल अपनी बिटिया खों ले के आए हैं और बगल बारो पलका उन्हें मिलो है।

एक सें भले दो-सामूँ मौंचाई खों कोऊ तो आ गओ। सूरजभान जा सोच कें थोड़े खुशी भए। मानों उनकी खुशी तनक देर की रई। काए के नओ मरीज कछु अजीब सी हरकतें करत आओ हतो...। एक तो बिटिया जात ऊपर सें, देहात सें

आए, सीधे सादे... लोग सूरजभान से रओ न गओ तो पूँछ धरी ती-काँ से आए..?

रतनपुर सें...। मरीज के पिता ने कई, का हो गओ... मौड़ी खों...? पतो नईंया...। ऊँसई घबरात् सी है...। हाँथ-पाँव पटकत है, औ उठ-उठ कें भगत है...। कब से है, तबियत खराब..। ई के पैलें सूरजभान खों जबाव मिलई न पाओ, के एक नर्स बाई.... रपकत् आई.. और केन लगी...'हटो-हटो..' एक तरफ..होओ..। अपने-अपने मरीज के पास रहो। कहत भई मरीज खों एक इंजैक्शन लगा दओ..। बीमार मौड़ी.. पाँच सात मिनट बाद आराम से सो गई ती...।

****

करीब तीन घण्टा बाद...। सूरजभान की नातिन चन्द्रप्रभा और नये मरीज की, बातचीत और चिनार होन लगी...। बगल के पलका बारी मौड़ी.. चन्द्रप्रभा खों देख कें मुस्क्यान लगी..। दीदी ... आप को का नाँव..? धीरे से ओनें पूँछी हती...। सूरजभान खों... बड़ो अच्छो लगो हतो... के मौड़ी नौनी.. बतयान लगी..। उनने अपनी नातिन चन्द्रप्रभा खें इशारो करो.. बताओ बेटा अपनो नाँव...। चन्द्रप्रभा नाम है...। औ तुम्हारा नाम..? गिरिजा..। बीमार मौड़ी...तुरतईं हँस के बोली...। अपने मन से..अपनो परिचय देन लगी..। हम रतनपुर गाँव से आए..हैं। रतनपुर गाँव के पटेल मकुन्दी लाल की बिटिया हैं, हम। हमारे घरे सब्जी तरकारी को कछवारो लगो है, सब्जी को धंधो होत है। अच्छा गिरिजा तुम्हें का हो गओ...? जो भरती होने परो? चन्द्रप्रभा ने पूँछा था...। कछु नइँ...।

हमें घबराहट सी होत है जी कपत है। औ हाँथ-पाँव अकड़ जात हैं...। रोटी नइँ खाई जात है...। पानी भी अच्छो नहीं लगत...। समझ में नइँ आउत का जाल है...। गिरिजा बोली। तबइँ बीच में दूसरी नर्स आई। हाँथ में, दवा की पर्ची लिए हुये जोर से आवाज देती हुई बोली-गिरिजा-मकुन्दी पटेल कौन है?

तबइँ गिरिजा की माँ उठकर खड़ी हो गई औ बोली जी नर्स बाई हम हैं तुम्हारा नाम गिरिजा हैं....? नइँ, हमाओ नाँव रामसखी है। गिरिजा हमाई बिन्ना आऐं। रामसखी बोली। और मुकुन्दी कौन है..? बिन्ना के दद्दा आएँ..? कहाँ हैं? वो...जल्दी बुलाओ...। और ये परची पकड़ो...। दवाई लाना है, इंजेक्शन और गोलियाँ लाना है। नर्स ने कहा...। और रामसखी को परची देकर चली गई।

रामसखी परची लेकर बैचेनी से इधर-उधर देखने लगी..। वह दरवाजे तक जाती.. और फिर लौटकर पलंग पर बैठ जाती..। सूरजभान रामसखी की बैचेनी और घबराहट को भाँप गए थे। हम तो हैं...। हम लएँ आ रये हैं, दवाई इंजैक्शनस ...। देओ ऊ परचा..। आँ हाँ.. रान दो...। आप काए खों हैरान होत..। अबई इनके पापा आए जात हैं, सो मँगाय लेत हैं। रामसखी सकुचात सी बोली...। अरे! कबे आए जात..? देओ हमें हम तो लियायें देत हैं, सूरजभान नें कई। मनो अबे हम डब्बल सोई नईं लयें। अरे भगे जात हैं का डब्बल..?

हमें फिर दे दइयो...। अबे हम अपने जरौं से लियानें देत हैं...। कहते हुये सूरजभान परचा लेकर मेडिकल स्टोर की ओर निकल गए थे।

****

थोड़ी देर बाद...। जब सूरजभान दबाई इंजैक्शन ले कर लौटे तो हक्के-बक्के से रह गए..। उनके पाँव तरें से जमीन सरक गई..। उनने देखो कि गिरिजा हाँथ-पाँव फड़फड़ा रई ती...। पलका पै उठ कें बैठे...। फिर धच्च सें गिर परे। शरीर थर-थर कप रओ...। पानी मांगे... रामसखी बिटिया खों पानी पियाबे सो पिए न...। सूरजभान से, जो सब देखो ने गओ सो उल्टे पाँव नरस बाई के कमरा कोद रपकत् गए..। फिर नरस से बोले सिस्टर बाई.. हमाए बगल बारो मरीज... तो अखल बखल सो हो रओ है। तनक जल्दी चलो ओखों देख लो। हालत बेजाँ खराब हो रई है..।

जे हम परचा की दवाई और इंजेक्शन लियाए हैं, सो जल्दी लगा देओ...। सूरजभान की बात सुनकें तो नरस बाई खों आग सी लग गई..। बे तो बिफरया कें दौरी..। जल्दी लगा देव ए! को का मतलब? का इते हम बैठे हैं....? आ गए, घोड़ा चढ़े...। जल्दी लगा देओ...। का तुमाई अकेले अनोखे मरीज हो...? जाओ...अपने पलका पे...। अबई हम आउत हैं..।

नरसबाई की बातें सुन कें सूरजभान तो ससरया से गए.. ते। वे तनक देर तक नरस बाई को मों देखत रए..। सोचन लगे धन्य रे! मानव सेवा दया धरम नाम की चीज नहीं रई...। सिरकार भर मौंसरा तनखा दे रई...। ई, बात की, के मरीजों की देखभाल करो सेवा-समाँर करो...। जो तो गओ एक तरफ.. उल्टी गरे खों दौरत..? अब इते ठाँड़े हमाई शकल काए देख रए , जाओ..। नरस बाई आँखें काढ़ के दौरी... सो सूरजभान उदक परे...। और जल्दी-जल्दी...लौट के मरीज के पलका के पास आके ठाँड़े हो गए...। और नरस बाई के आबे की बाट हैरन लगे...।

अगल-बगल के दूसरे मरीज घेर के ठाँड़े हो गए...। सब असहाय से गिरिजा खों देख रए ते। गिरिजा है के हाँते-नें-आवें....। कबऊँ गिरिजा, रोटी मांगे...भूख लगी है, मम्मी रोटी खुआ देव..। मताई झट्ट... कौरा टोर कें मों में, देवे... सो गुटकी नें जावें...। तनक में बाहर उगल देवें...। छटपटान लगे, उठ कें ठाँड़ी हो जावे...फिर पलका, पे गिर परे...। पानी माँगे... पियावें सो पिये न...। रामसखी हैरान हो गई...।

सूरजभान सें देखों ने जा रओ तो ओ बखत...। उन्हें खबर आ गई ती, के जब हम दौड़ कें नरस बाई खों फिर सें बुलावे गदबद देत गए ... तब। नर्स बाई मोबाइल पें बतिया रईं ती...। पाँच-दस मिनट तक सूरजभान ठाँड़े-ठाँड़े बाट हेरत रए, के कबे मोबाइल बन्द होबे...? कबे नरसबाई से गिरिजा को हाल सुना दऐं...। जैसे तैसे बदकाव पूरो भओ के सूरजभान तुरतइँ बोल परे- सिस्टर बाई तनक चलियो...। देख तो लो... मनों हमने एक इंजेक्शन तो जबई लगवा लओ तो और डॉक्टर

ने कई ती चिन्ता की कछू बात नइयाँ...। गिरिजा बोली और घबरान लगी। मौड़ी की घबराहट देख कें, रामसखी भी घबरान लगी ती। फिर पति से बोली-कछु उपाव करो, मौड़ी की तबियत ठीक हो जावे...। परमेसुरी माता बाई खों- घँघरिया फरिया चढ़े हैं। हमारी मौड़ी ठीक हो जाए..।

सूरजभान! अपनी नातिन की तबियत भूल गए ते। रामसखी की बातें सुनकें, डॉक्टर साहब की राय जान कें उनखों बड़ी चिन्ता सी लग गई। वे सोच विचार में डूबे अपनी नातिन चन्द्रप्रभा के सिराने बैठ गए ते...।

****

तनक देर बाद...। मकुन्दी लाल उठे.. और सूरजभान के जरौं आके बोले- काय! दद्दा डॉक्टर तो भोपाल ले जावे की के रए.. का करें? ले जावे भोपाल...? आप की का राय है...? सूरजभान खों क्रोध आ गओ तो... वे बिफरया के बोले हते- तुम अधबूढ़े तो हो गए, मानों अण्ड-गण्ड कछु नईंयाँ तुमें, कुत्ता ने मौड़ी खों कबे काटो? कहाँ काटो...? काँ, को कुत्ता है, कैसा कुत्ता, तुमें कछु अटकर ऐंड़ा नइयाँ...काय? और बा रती भरी मौड़ी सब हाल बता रई...। तुम औरें कैसे बऊ दद्दा हो रये..। कित्ते दिना हो गए, कुत्ता खों काटे...। मकुन्दी सुट्ट ठाँड़े हते...। गिरिजा खुद कैन लगी... दादा जी..छै: मइना हो गए, मकुन्दी झेंप गओ...। फिर रोउन लगो। सूरजभान के गोड़े पे गिर परो तो...। और रोउत-रोउत बोलो हतो-रामधई हमें कछु नहीं पतो...? गिरिजा खों किरोध आ गओ, चिल्लया परी-पापा खों.. झूठी रामधई ने खाओ। ई! रामधई के बाँदे हम बँदे रए हमाए पापा के कारन हमें कुत्ता ने काटो है...।

ऐंसी नइँ कैने आउत गिरिजा..। पुरानी बातें छोड़ो बेटा माँ रामसखी बात खों टालन लगी ती...। सूरजभान खों कछु अटपटो सो लगो.. सो वे बोले... कैसी पुरानी बातें...? पापा के कारन कुत्ता ने काटो...? ई को का मतलब है? तुम काए चिमानी रामसखी... साँची-साँची बताओ...? का बात है..? सूरजभान जोर देकें पूछन लगे ते...। रामसखी-गहरी साँस लेकें बोली,अब का बताएँ... चन्द्रप्रभा के दादा कछु ने पूछो....। एक बेर- गिरिजा लोटा ले कें दिसा मैदान खों गई तो..। लौट के जब आई सो बेजाँ हॉफ रई ती। जब हमने पूँछी सो कैन लगी के कारीगर को कुत्ता झूम गओ तो हमें। दूसरे दिना हमने साइकिल बारे डॉक्टर खों दिखाओ, तीन दाँत लगे हते...। डागधर साहब ने तुरतइँ टिटिनस को इंजैक्शन लगा दओ तो...। और केन लगे के कुत्ता खों देखत रइयो...। अगर मर जावे तो और इंजेक्शन लग हैं। ... अरे! जो तो सब ठीक है, मौड़ी के रई पापा के कारन कुत्ता ने काटो? जा बात समझ में नईं आई? इको का मतलब है...? सूरजभान ने पूँछी- गिरिजा बोल परी, नें पापा झूँठी रामधई खाते...। नें हम भरोसो कर ते...? नें बाहर लोटा ले कें जाते, ... नें कुत्ता काटतो। काए की रामधई खाई ती बेटा, सूरजभान ने पूँछी..। गिरिजा बोली-हम समझा रए हैं पूरी बात...। दादाजी, हम नौमी क्लास में पढ़त हैं। एक बेर हमाए पेट में मरोड़ भईती, हम बेर-बेर शौचालय जा रहे ते। हमाई मेडम ने कई ती-अब सिरकार घर-घर में शौचालय बनवावे के लाने मदद दे रई है, तुम भी अपने घर में शौचालय बनवा लइयो...।

हमने घरे आकें पापा सें कई..। पापा ने हमें डाँट दओ। केन लगे अच्छे भले सब जनें खुले मैदान में जात है सो का परेशानी है? हमाई गुंजाइस नइयाँ बनवावे की। शौचालय- मौचालय की, चर्चा अब नें करियो...। हम पापा से नाराज हो गए ते...। कछु दिना बाद पापा ने हमें पास में बुलओ। फिर पुटया के बोले अच्छा गिरिजा, तुम अच्छी मेहनत से आठवीं किलास पास करकें बतेहो, तो हम जरूर शौचालय बनवा देहैं। तुमई मनसा पूरी करहैं। हमने पापा से कई-साँची बताओ कबे बनवाहो शौचालय जब तुम पास हो जैहो। कै तो दई। मकुन्दी ने कई....। रामधई खाओ...। जब मान हैं...। गिरिजा ने रिसा के कई ती....। अच्छा रामधई खा कें के रए...। बनवा देहैं...। अब तो है भरोसो? हव..। है भरोसो...। गिरिजा ने कई।

हम आठवों किलास पास हो गए। मनो पापा अपनी बात से मेंट गए। हमने पापा खों याद दुआई, बड़े भुनसारें पापा उठे...। सो गिरिजा भी सकारूँ उठ बैठी...। पापा से बोली- पापा तुमने रामधई खा के कई ती.. शौचालय बनवा दे हैं, फिर काए नहीं बनवाओ? हमें शौचालय बनो देखबे की लकमा ली है। अरे! हल्ला नें करो...। भुनसारें सें फिर दाँती करन लगी...। हमाए बाप दादा शुरू से बाहर जा रहे हैं। सबेरे सें घूमबो हो जात है, मँई के मँई फारग हो के आ गए, सो ओ में तुम्हें का परेशानी है? हमाई समझ में नइँ आऊत....? मकुन्दी ने बिटिया खों समझाओ....। अगर फसल आ जै है-तो पर की साले बनवा देहैं। अब तो गिरिजा से रओ न गओ सो बोली, सुनो पापा एक तो तुमने झूठी रामधई खा लई...। सो बा तो तुम जानो...। हमें तो लोटा ले के बाहर जावें में, शरम लगत है...। मानों फिर भी हम जात रैते....। मानों कारीगर के दोरें में से कढ़ के जाने परत है और उनको कुत्ता मोए भौंकत है, काटबे खों दौरत है, काऊ दिन अगर चींथ खाओ तो...? ऐसें तुम तो घरई शौचालय बनवा देओ...। हम कछु नईं जानें... हमाई बात मानने पर है। कुत्ता-मुत्ता को दंन्द भी मिट जैहै।

पापा खिच्चया परे ते...। कै तो दई, एक दारे-पर की साले बनवा देहैं..। मनो दो बारा शौचालय बनवावे की चर्चा करी सो ठीक नें हुइये...। हमें अबे किसानी में, घाटो लगो है, पैसा धेला हैं, नइयाँ, ज्यादा उकतेहो हमें सो हम घर से निकर जैहैं...? फिर बनवात रइयो, शौचालय...। बड़ी लकमा लगी है, तोए..? गिरिजा हैरत से देखत रै गई। ऊनें मनईं-मन में ठान लई, कै अब वा दुवारा कभऊँ शौचालय बनवावे की बात न करहै। चाय कछु होय...।

****

एक दिन..। अपने मनइँ मन में कछु घोकत विचारत गिरिजा दिसा मैदान से फारग हो कें, कारीगर कक्का के दोरें से कड़ी के जबईं ऊके पुसैला कुत्ता ने गिरिजा के पाँव में मों मार

दओ। गिरिजा किकया परी...। दौर के आदमन नें कुत्ता भगाओ...। गिरिजा खों पकड़ कें छाँयरे में बैठार दओ...। गिरिजा ने गुस्सा में ठान लई के हमें कोऊ से कछु नइँ कानें। घरे आके गिरिजा चुपचाप सो गई। घर में, कोऊ से कछु नइँ कई...। बात आई गई हो गई...।

कुत्ता जियो के मरो... जो पतो लगाबे की कोशिश भी नइँ करी...। एक दिना स्वास्थ्य विभाग के बाबू से टिटनस को इंजैक्शन लगवात में मम्मी खों पतो चलो... सो नाराज होकें बोली-घर में काय नइँ बताई तुमने? गिरिजा बोली-जब झूठी रामधई खाके साँची बात पूरी नहीं होय तो हमाई बात पै भी कोऊ का भरोसो कर है? ऐसे बतावे से का फायदा? पापा केहैं, शौचालय बनवावे के लाने बहाने कर रई है। अरे! काए रोटी नई खाने का?...

****

चन्द्रप्रभा की मम्मी ने ससुर सूरजभान खों जोर से हलूँसो...। सूरजभान की मानो गहरी नींद सी टूटी...। वे चौंक परे.. और उदक के बोले... ऐंऽऽऽ क..का...? रोटी...? हव ऽऽऽऽ हव-हव... खा लेहैं, अबईं...। ...दादा... गिरिजा के, मम्मी पापा और सिस्टर डॉक्टर के साथ बाहर की ओर गए हैं....? क्या हुआ उसे...? चन्द्रप्रभा ने पूँछी...। कछू नइँ बेटा...। तुम तो आराम से लेटो। मैं अभी बाहर तक देखकर आता हूँ। सूरजभान नातिन खों समझाकर...बाहर की ओर रपकत चले गए...।

रास्ते में नरस बाई बड़बड़ात मिली- इतने मूर्ख लोग हैं बच्ची को रोटी खिला दी..। मना किया था, कुछ मत देना...। मगर मानते ही नहीं...। साँस की नली में रोटी फँस गई और मर गया वो कुत्ते वाला मरीज ..। सूरजभान की बगल से बोलती हुई नर्स निकल गई थी..। सूरजभान सब कुछ समझ गये थे...। थोड़ी देर पहले ड्यूटी पर तैनात सिपाही ने ... रामसखी खों कुआँ के पछीतें जावे की कई ती...। हो न हो सब लोग वहीं होंगे। .. ऐसा सोचकर सूरजभानस भी वहीं पहुँच गये।

****

परिजन आ चुके थे... स्पेशल वाहन की व्यवस्था करके गिरजा के मृतशरीर को घर ले जाने की तैयारी हो रही थी। मकुन्दी एक कोने में बैठा सुबक रहा था।.. हिम्मत जुटा कर सूरजभान मकुन्दी के पास पहुँच गये। फिर उनके कंधे पर हाँथ रखकर कर बोले-....मकुन्दीलाल अब तुमें सबर सें काम लेने हैं। धीरज धरो...।... जो होने तो सो हो गओ...। शांति रखो....।

मकुन्दी लाल फफक के रोन लगे...। और बोले अब तो मन खों शांति जबईं मिल हैं, जब घर में शौचालय बन जैहै...। हाँ...। मोरी गिरिजा की मन की लकमा पूरी करने है। सूरजभान बोले आँ...हाँ ऽऽऽ। ऐसें नई मानत एक दारे...फिर से रामधई खाओ...। मकुन्दी की आँखों में अँसुआ भर आए...। गिरिजा को चेहरा सामने आ गओ-फिर उठ कें बोले रामधई अब की दारें जरूर शौचालय बनवा लैहैं।

-७५, रिछारिया घाट परकोटा, सागर म०प्र०卐

दो मिनट कौ मौन

-पं.हरगोविन्द 'विश्व' मैथिल

दो मिनट को मौन जो, माफक शहीदों खों नहीं।
दुख न पौंचे उनकी रूह खों, जो तनक सोचो कहीं।।

तप्त लोहे की सलाखें वीर आंखन में धसीं।
गरदनें भी फाँसियों के बंधनों में हैं फँसीं।
घुड़सवारों के दुआरा, जो घसीटे हैं गए।
हन्टरों से खूब हनकें जो कि पीटे हैं गए।।
छोड़ के सुख गद्दियों को, मौत जिनने हँस गहीं।। दुख...

देश हित में जिनने सरबस, होम अपनो कर दओ।
दो मिनट को मौन दे, ऐसान का हम धर दओ।।
जलियाँ में कित्ते मरे, ऊ-बाग पावन धाम है।
निर्दयी डायर को जो तो, क्रूरता को काम है।
जादतीं गोरों की जिनने, चीख चिल्ला कें सहीं।। दुख...

जान जोखम में जो डारें, लाम पे सैनिक डटे।
फिर ने होवें 'विश्व' भगवन, और कोनउँ सिर कटे।
ई सरल परिपाट पे का, ध्यान ना देवेंगे हम।
दो मिनट दे कें उरन का , इनसें हो जाएँगे हम।।
सोचनें है आज हमखों, चर्चाएँ जे हो रहीं। दुख...

वीर बे को को हते कित्तों को सूरज अस्त है।
नामना उनकी हमें गणतंत्र पन्द्र अगस्त है।
हाल में ही शीश जिनके, पाक सैनिक ले गए।
सैनिकों को काम ही मरना है नेता कै गए।
और उनके तन बदन सें, रक्त की नदियाँ बहीं।। दुख...

आज अँसुआ पोंछ दें, उनके जो दुख सें मौन हैं।
और उन माँओं खों धीरज जो बँध दें कौन हैं।
केऊ ललनाओं की मांगें, आज सूनी हैं डरीं।
बैरियों ने ही तो उनकीं, गोदं सूनी हैं करीं।।
काय उनखों हम नमन कर, चिन-रिणी होऊत नहीं।। दुख...

प्रान त्यागे ते जिन्होंने के कें 'वन्दे मातरम्'।
जन्म लेहें फिर इतइँ पे खा गये थे वे कसम।
जिन सपूतों की बदौलत ले रये सुख साँस हम।
दो मिनट हम दै रयै हैं, वे भी लागें भौत कम।।
भूल जायें अब न उनखों, 'विश्व' सागर हम कहीं।। दुख...

-तिलक गंज, सागर म०प्र०卐

आल्हखण्ड

-डॉ. कन्हैया लाल अग्रवाल

आल्हखण्ड बुन्देलखण्ड के लोकमानस में पल्लवित होने वाली वीररस से ओत-प्रोत महागाथा है। उसे विकासात्मक महाकाव्य का उदाहरण स्वीकार किया जा सकता है, अन्तर केवल इतना है कि उसकी रचना के मूल में एक ही व्यक्ति जगनिक है। आल्हखण्ड आज भी जनमानस को मुग्ध कर लेने वाली रचना है। लगभग सात सौ वर्षों से यह रचना लोक में प्रचलित है। सदियाँ बीतती रही, किन्तु आल्हखण्ड श्रुत परम्परा में अद्यावधि जीवित है। भारत में छापेखाने स्थापित हुए। पुस्तकें छपने लगी। किन्तु लोकगाथा की ओर किसी का ध्यान नहीं गया। भारतवासियों के पास न तो उसे प्रकाशित करने में रुचि थी और न ही आर्थिक सामर्थ्य।

१९वीं सदी ई. के उत्तरार्द्ध में कला पारखियों की दृष्टि इस ओर गई। उनमें इस ओर रुझान भी था और आर्थिक सामर्थ्य भी। इस लोकगाथा को सर्वप्रथम लिपिवद्ध करने का श्रेय १८६५ ई0 में फर्रुखाबाद के तत्कालीन अंग्रेज कलेक्टर सर चार्ल्स इलियट को है। उन्होंने विषयक्रम से बावन लड़ाइयों को तेइस खण्डों में विभक्त कर सम्पादित कराया। इसका प्रकाशन मुंशी रामस्वरूप, फतहगढ़ ने १८७३ ई0 में किया। इसके मुख पृष्ठ पर निम्नांकित पंक्तियाँ हैं-

'सदा भवानी दाहिनी सन्मुख रहें गणेश।
पाँच देव रक्षा करें ब्रह्मा विष्णु महेश।।
श्री गणेश जी
श्री गंगा जी
कृपा ते

पुस्तक समर आल्हखण्ड सन १८७३ ईसवी में कीमत फी जिल्द २/- रुपये मतबै दिलकुशा वाकै कंप फतहगढ़ में एहतगाम से मुंशी रामस्वरूप के छपी।'

प्रारंभिक पंक्तियाँ

हते कलक्टर बंदोनस्त के, तब उन आल्हखण्ड लिखवाय।
अंगरेजी में करो तर्जुमा, सो लन्दन कौ दऔ पठाय।।१५
मुंशी रामस्वरूप ने कायथ, भटनागर हैं पिता हमार।
जन्म भूमि जिनकी दिल्ली ढ़िग, जानौ सहर सिकन्दराबाद।।१६
जिला फर्रुखाबाद के बस्सन रहै अगार सरिश्तेदार।
गदर मीरते छापाखाना, करो उन कायथ फतेगढ़ माहि।।१७
आल्हखण्ड जब अंगरेजी में, सबै भाँति लिखि चुको बनाय।
अर्जी दै तब उन साहिब कौ, छापन काज लियो मँगाय।।१८
संवत उनिस सै अट्ठाइस, ऋतु बसन्त अरु फागुन मास।
आल्हखण्ड के छापबे कौ, उन तब लगा दऔ लगाय।।१९
परमेश्वर ते जहे मनाउँत, हाथ जोरि अरु सीस निवाय।
असल खैर ते औ चटिकाई अब जहु आल्हखण्ड छपि जाय।।
शंकर और स्वरूप मिलावें, तौ सब जाने नाम हमार।
जो कोउ जेहि पढ़े पढ़ावे, तिनही सुखी राखै करतार।।२०

पुस्तक के अन्त में इस प्रकार का इश्तहार है-

जो कि बहुत दिनों से यह आल्हखण्ड गाने वालों की जबान पर था, लेकिन किसी ने ऐसा ख्याल न किया जो किताब समर आल्हखण्ड की होती, लेकिन इस जमाने में जनाब फैज़याब खुदाबंद न्यागत फैयाज जमान मिस्तर सी0ई0 इलियट साहब व बहादुर जूनियर सिकर्टरी नब्बाब लफटैंट गवर्नर बहादुर मुमालिक मगरबी व शिमाली ने वक्त इजलास बंदोवस्त जिले फर्रुखाबाद बड़ी मेहनत और द्रव्य खर्च करके खत अंगरेजी में लिखवाई बादि उसके बन्दह खाकसार मुंशी रामस्वरूप मालिक व मुहतमिम मतवै दिलकुशा कंप फतेहगढ़ को वास्ते छापने व खत नागरी के दिया जबकि परमेश्वर की दया से इह मुशकिल सहज हो गई तब रजष्टरी इसकी बमूजिब दफै। १८ एक्ट सन् १८६७ ईसवी में कराई गई। इस वास्ते ये इश्तहार वास्ते इन्तलाह एवं मालिकौं छाप खानों को लिखा जाता है कि कोई साहब बिना इजाजत हमारे इस किताब को न छापैं और जो छापेंगे तो फसल ४ दफै १२ एक्ट २५ सन् १८६७ ईसवी के मुताबिक सजा हो सकती है।

पहली बार छपी १००० किताब, बकलम भोलानाथ कापी नवीस आखिरी पन्ने पर यानी इसके पीछे यही इबारत उर्दू में छपी है। छह सौ छियालिस पृष्ठों (प्रत्येक पृष्ठ पर तेइस पंक्तियाँ) के तीनों भाग एक ही जिल्द में हैं।

चाल्स इलियट के बाद बिलियम वाटरफील्ड दूसरे विद्वान हैं, जिन्होंने आल्हखण्ड पर काव्य किया। वाटरफील्ड उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्तस के बंगाल सिविल सर्विस के अन्तर्गत महालेखाकार थे। उन्होंने देशी लोक साहित्य, बोली आदि का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उन्हें अंग्रेजी में कविता करने का शौक था। इसीलिए आल्हा की लोकप्रियता से आकृष्ट होकर उन्होंने उसका कन्नौजी पाठ प्राप्त कर लिया था और 'दि नाइन लैक चेन और दि मारो फ्यूड' शीर्षक से नौलखा हार तथा माड़ौ की लड़ाई गाथा गीत में काव्यबद्ध करके कलकत्ता रिव्यू के १८७५,७६ के अंकों में प्रकाशित कराये। इसे लोकप्रिय बनाने के लिए इसमें भूमिका और टिप्पणियों का भी समावेश किया गया था।

भारतीय भाषा सर्वेक्षक गियर्सन का ध्यान इस ओर पहले ही आकृष्ट हो चुका था। अत: १८९५ ई0 में जब वे सेवा निवृत होकर इंग्लैण्ड लौटे तब उन्होंने वाटरफील्ड के पुत्र फिलिप्स से सम्पर्क किया। उसने अपने पिता के सारे कागजात गिर्यसन को सौंप दिये। इनमें पाँच (१,२,३,४,१३) के पूरे तथा दो (८,१५) के अंश पद्यबद्ध मिले। गिर्यसन जानते थे कि कलकत्ता रिव्यू जैसी पत्रिका विदेशी बहुत कम पढ़ते थे। इसलिए उसने उपलब्ध समस्त सामग्री का सम्पादन कर उसे दि ले आफ आल्हा शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित कराया। ग्रंथ का प्रथम संस्करण हम्फ्रेमिल्फर्ड, लन्दन से १९२३ ई0 में और दूसरा संस्करण आक्सफोर्ड प्रेस से १९२५ ई0 में प्रकाश में आया। उन्नीसवीं सदी के समाप्त होते न होते स्वलिखित आल्हखण्ड का प्रचलन प्रारम्भ हो गया। पंडरीकला के ललिता प्रसाद मिश्र तथा मेरठ के मटरुमल अत्तार का आल्हखण्ड इस कोटि

की रचनाएँ हैं। मटरुमल का आल्हखण्ड समग्र तथा अलग-अलग खण्ड गाँवों की चौपालों में ही नहीं विभिन्न नगरों के मेले-ठेले में खूब बिकते हैं। इस ग्रंथ की समाप्ति तिथि इस प्रकार दी गई है- 'सम्मत (संवत) उन्नीस सौ सन्तावन तिथि घट और महीना क्वार तीस सितम्बर सन् उन्नीस सौ एक शन्ने को करी तैयार।' इसका कापी राइट अग्रवाल बुक डिपो, खारी बावली, दिल्ली का है।

इसके अतिरिक्त आल्हा रामायण (आठ खण्ड) भी उपलब्ध है। इस क्रम में 'आल्हखण्ड तेइस मैदान बावन लड़ाई' के लेखक पंडरीकलां निवासी ललिताप्रसाद मिश्र विशेष उल्लेखनीय हैं। छह सौ पृष्ठों का यह बृहद ग्रंथ मुंशी नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ से प्रकाशित होता रहा है। १९७२ ई0 में तक इसके बारह संस्करण निकल चुके थे। इसकी कथा इलियट के आल्हखण्ड से मिलती जुलती है।

मौखिक परम्परा में प्रचलित ऐसी लोकगाथा जिसे सदियों से पारम्परिक गायकों ने जीवित रखा है और गत एक सदी में जिसके अनेक मुद्रित रूप विभिन्न प्रकाशकों द्वारा अनेक संस्करणों में प्रकाशित किये गये हों, उनमें पाठ भिन्नता होना स्वाभाविक है। बुन्देलखण्ड के अतिरिक्त पूरे उत्तरभारत की लोकपरम्परा का यह सर्वाधिक प्रभावशाली वीरकाव्य है। इसमें बोली के भाषा संबंधी संक्रमण के अतिरिक्त अनेक क्षेत्रों की सांस्कृतिक परम्परायें घुल-मिल गईं हैं। अनेक उत्तर भारतीय बोलियों और उनकी विपुल शब्द सम्पदा में घुले-मिले वर्तमान प्रकाशित पाठों में पुन: बुन्देली पाठ का अन्वेषण करना एक कठिन काम है। पाठ निर्धारण का अर्थ है। सही पाठ का चयन। जब किसी गाथा के अनेक पाठों और उन पाठों में न्यूनाधिक भिन्नता हो, तब उपयुक्त पाठ का चयन ही पाठ निर्धारण है। इस कठिन कार्य को छतरपुर के स्वर्गीय डॉ. नर्मदाप्रसाद गुप्त ने बुन्देलखण्ड के विशाल क्षेत्र में से कुछ स्थानों का चयन कर पारम्परिक अल्हैतो से इस गाथा के चार पाठ एकत्र कर इन पाठों का ऐतिहासिक, भाषाशास्त्रीय और लोकसंस्कृति के दृष्टिकोण से समाज वैज्ञानिक अध्ययन करने का प्रयत्न किया है। उनके द्वारा सम्पादित आल्हखण्ड ही इस गाथा का नवीनतम संस्करण है, जो मध्यप्रदेश आदिवासी लोककला परिषद, भोपाल द्वारा २००१ ई0 में प्रकाशित हुआ है।

-ट्रेज़री रोड, पलटन मस्जिद के पास, नौगांव, छतरपुर (म0प्र0) 卐

'काम' और 'श्रद्धा' कौ मिलाप-रितुराज बसंत

-अभिनंदन गोइल

ई धरती पै रितुअन कौ बदलबौ तौ प्रकिरती कौ नियम आय। खगोल सास्त्रन के जनबा पंडतन कौ कैबौ है कै धरती पै जितेक रितुयें हैं उनकौ सूदौ लगाव खगोल के ग्रह-नछत्रन सें है। जैसें- मंगल और रवि गरमी कौ गिरा (ग्रह), चंदा बसकारे कौ, बुध शरद कौ, गुरु हेमन्त कौ औ शनि शिशिर रितु कौ गिरा मानौ जात, ऊसई शुक्र बसंत रितु कौ गिरा कहाउत।

जौ बसंत रितु कौ गिरा 'शुक्र' सब गिरन सें जादां चमकत औ देखत में सबसे नौनौ लगत। ऐई सें जिन्दगानी में मस्ती चढ़त। जौ जनानियन कौ गिरा सोऊ मानौ जात। जौ गिरा जनी मान्सन में इक-दूजे सौं प्रीत जगाउत, लगाव पैदां करत, वासना जगाउत, सबई तरा के भोगन खों भोगवे कौ जोग बनाउत। समजौ कै जौ गिरा तौ सूदौ 'माया' आय। ऐसौ नौनौ औ ताक्तदार गिरा जौन रितु कौ मालक होय ऊ रितु खौं 'रितुराज' कैबे में का थराई, बौ तौ सबई रितुअन कौ महाराजा साँचऊँ आय।

रितुराज बसंत धरती पै आव नइँ कै प्रकिरती में सबकछू बदलौ-बदलौ सौ, नव सौ औ मसती भरौ लगन लगत। फूल-खिलन लगत, बाग बगीचा महकन लगत औ चिरैंया, कोयल, तोता फुदकन लगत। आम के विरछन पै मौंर लगजात। वनन-उपवनन में, हार गेंवड़न में बिरछा फूलन लगत। भौंरा, तरा-तरा की चिरैंयां, जनावर औ जनी-मान्स सबऊ ई रितु में जिन्दगानी कौ रस लेन लगत। जिते देखौ उतै नेह उमड़ै परत। 'काम' की मारीं जनानियन के चंदा जैसे मौंअन पै पसीना सौ आउन लगत और उननके नैना सोऊ मटकन लगत। ऐसें लगत कै ई संसार खों जीतवे के लाने 'कामदेव' पानी चाराई अंगन बारी (चतुरंगिनी) पल्टन लयें सबई तरपै विचररऔ होय। ऐसई कछू गुसाँई मराज तुलसीदास जू ने पनी 'रामचरित मानस' में कई है कै-

रथगिरि सिला दुंदुभी झरना, चातक बंदी गुनगन बरना।
मधुकर मुखर भेरि सहनाई,त्रिविध बयारि वसीठीं आई।
चतुरंगिनी सेन संग लीन्हें, विचरत सबहिं चुनौति दीन्हें।

जा सब परमातमा कीअई तौ लीला आय। ओई ने तौ 'काम' खौं ई चराचर की रचना कौ मूल बिन्दु बनाव है। श्री किसन भगवान सोऊ गीताजू में कै गय कै 'प्रजनश्चास्मि कन्दर्प:' मतलब जौ कै संतत जनवे खौं बेई कामदेव आयें। सबई तरा कौ सिरजन 'काम' कौ रूप आय ऐसौ अपन खौं समजो चइये।

अपन ने अबै लौं 'काम' के बसंत की खूबईं बातें करीं, अब तनक 'श्रद्धा के बसंत' की सोऊ कछू कई जाय। श्रद्धा कौ बसंत तौ परमातमा के चरनन कौ अनुराग आय, जी सें संसार सें तरवे कौ मारग सोऊ सूजत। 'काम कौ बसंत' तौ ई संसार खौं भोगवे कौ दरवाजौ खोलत पै 'श्रद्धा कौ बसंत' तौ मुकति कौ दरवाजौ खोल देत। सो जिन्दगानी में इन दोऊ तरा के वसन्तन खौं 'बुद्धि औ विवेक' सें मिलाव जुराव चइये। ऐईं सें बुद्धि और विवेक की देवी सरसुती मैया की खास पूजा बसंत पाँचे खौं करी जात औ जेऊ साँचौ 'वसन्तोत्सव' आय।

'काम' जौलौं कामदेव है, और ई से पनौ-पराव भलौ हो रव, तौलौं तौ अच्छौ है। पै जब जौ 'कामासुर' हो जात तौ मान्सन खौं राक्षस बना कैं छोड़त। आजकाल तौ ऐसौ लगरऔ कै जौ 'काम' इकाऊ 'कामासुर' होत जा रऔ होय। तबई तौ सबरी मरजादा मटियामेंट हो रई। ई कौ कारन अबै कौ बिगरौ भऔ पैरबो-ओढ़बौ, रैबौ-खैबौ तो हैई पै नये-नये साधनन से जुरकें जनी औ मान्स दुनिया भरे कौ नंगपन देखरय औ ऊसऊ करकें अपने आचरन बिगार रय। ईमें 'सिरजन करता कामदेव' खौं अपन कामासुर न बनन देव और सरसुती मैया से विनती करौ कै वे अपन सबई की जिन्दगानी में धरम, अरथ, काम औ मोक्ष जे चाराई पुरसारथ साधवे खौं बुद्धि, विवेक दैवे की किरपा करावें।

-बाजार जैन मंदिर मार्ग, टीकमगढ (म0प्र0) 卐

पिसनारी-जो इतिहास बना गई

-डॉ. रामनारायण शर्मा

पिसनारी अथवा पिसनहारी की अनेक गाथाएँ बुन्देलखण्ड के विशाल क्षेत्र में बिखरी पड़ी हैं। जिनके नाम इतिहास के पृष्ठों में दबे-छिपे विस्मृति के घेरे में भले ही दर्ज हैं। परन्तु उनके अकल्पित अद्भुत कार्य उनकी प्रतिभा के प्रकाश पुंज की चमक को दृष्टिगोचर बनाए हुये हैं। ऐसी प्रतिभासम्पन्न पिसनारी की अकथ कहानियों को प्रकट करना आज हमारा परम दायित्व है। जिनके प्रमाण बुन्देलखण्ड के भग्नावशेष बाँध, ताल, मठ-मड़ियाँ, गाँव-गली आदि उनके नाम-कर्म से संबद्ध हैं। कचो मनों के राछरे, उनकी प्रशस्ति में लोकजीवन में आदर के साथ गाये जाते हैं तथा इतिहास की रचना में आधार स्तम्भ बने हैं। जिनके संकल्प वर्ग विभेदों की दीवारों को लाँघ समाजोत्थान की अमिट छाप व आधार स्तम्भ बन नारी शक्ति को प्रतिष्ठित कर रहे हैं। ऐसी ही शक्ति सामर्थ्य वाली कुछ पिसनारीं के संकल्पों के विवरण लेखनीवद्ध यहाँ कर इतिहास के अधूरे पृष्ठों को उजागर कर रहा हूँ।

पिसनारी का कर्म चक्की से दूसरों का अनाज पीसने से अपने भरण-पोषण से जुड़ा सदियों से चला आ रहा है। यह अलग बात है कि पिसनारी का नाम उसकी चक्की के महत्व से कमतर आँका गया है। कबीर दास ने चक्की की पूजा करने को तो कहा किन्तु इसके पीछे की पिसनारी की शक्ति को अनदेखा कर दिया। चक्की के दो पाटों के बीच पिसता जीव का दर्शन तो दिया किन्तु उसके पीछे शक्ति के महत्व को अदृश्य किया। इसी प्रकार गोस्वामी तुलसीदास ने सूपोदन, सुरभी, सरपि, स्वाद और चतुर 'सुआर' का बखान तो किया है किन्तु 'पिसनारी' की बात अलोप रखी। व्यक्ति के जीवन की महत्वपूर्ण 'चक्की' की महिमा अकथ व अविस्मरणीय है। घर में स्थापित चक्की भरण-पोषण का आधार है और उसके पीछे की पिसनहारी (शक्ति) स्वरूप अघोषित रही। जिसने राजा-महाराजा, बादशाहों-नबावों, जमींदारों-जागीरदारों के 'अटाले' भरने में सराहनीय कार्य किया। इसके उपलक्ष्य में उसे मात्र कुछ सेर अनाज जीवकोपार्जन हेतु मिला किन्तु ऐसी उदम्य कर्मठ नारी शक्ति ने समाज के विपत्तिकाल में अपना सर्वस्व दान किया। उसकी सहायता के कार्य इतिहास में उल्लिखित हैं।

पिसनारी वास्तव में अपने मालिक के पिसनोट (अनाज) की चक्की पर पीसने का काम करती और गोबर को सार (गौशाला) से उठाने और साफ-सफाई का काम कर अपनी झोली में कुछ अनाज पाकर संतुष्ट रहती। कुछ बड़े घरानों में उनका घरवाला मईंदारी (माहवारी) का काम कर माहवारी अनाज रूप में पाने का हकदारी होता था। ऐसी विपन्नता से ग्रसित पिसनारियों ने वर्ग धर्म के विभेदों से ऊपर उठकर जन-रक्षा के काम निःस्वार्थ भाव से कर अनाम रहीं। किन्तु समाज ऐसे जन-कल्याण के उनके कार्यों से ज्यादा दिनों तक अनभिज्ञ नहीं रह सका। आज हम ऐसी ही पिसनारी की अमर गाथाओं का प्राप्त काव्य प्रस्तुत कर रहे हैं-

ओरछा की पिसनारी-मध्ययुगीन ओड़ेछौ एक भव्य विशाल नगर था। जिसके भवन शिखर व दीवारों की पच्चीकारी बुन्देलखण्ड क्षेत्र ही नहीं अपितु मध्यभारत में प्रख्यात थे। यहाँ के शौर्य-साहित्य की ख्याति जग जाहिर थी। कालिंजर और तुंगारण्य का समस्त क्षेत्र एवं कलप्पि (कालपी) तक यहाँ की सुरभि फैली हुई थी। औडेछौ उत्तर से दक्षिण जाने का द्वार था। अतएव ओड़ेछो की स्वीकृति के बिना यह संभव नहीं था। मुगलों की धृष्टता के अनेक अतिक्रमणों का प्रत्युत्तर बड़े साहस के साथ दिया गया तथा गौ-ब्राह्मण, साधुओं का आदर-सम्मान के साथ धर्म एवं संस्कृति की रक्षा प्राण-प्रण से की गई। यही नहीं दिल्ली सल्तनत की पहरेदारी ओरछा के वीरवर व हरदौलों द्वारा रक्षित थी। किन्तु जिस शाहजहाँ को दुश्मन की कैद से मुक्ति ओरछा के शक्ति-संधान से मिली थी। वही शत्रु बन ओरछा के विनाश का कारण बना। ओरछा को ध्वस्त कर यहाँ की भव्यता और सांस्कृतिक विरासत को कुचलने का कुचक्र चला कर इसे निर्जन बना दिया गया। असंख्य लोगों के पलायन से ओरछा एक वीरान स्थल बन गया था। वेत्रवती की निर्मल जलधारा इस की प्रमाण बनी। जब सन् १७८३ ई० में विक्रमाजीत सिंह ने ओड़छा से राजधानी टीकमकढ़ ले जाकर टीकमगढ़ में स्थापित की थी। इस प्रकार ओरछा उजड़ गया। जन जीवन असुरक्षित हो गया था। प्राकृतिक आपदा और भुकमरी से त्रस्त लोग समीप के गाँवों में सिमट कर रह गये थे।

सौंर गाँव वेतवा के उस पार अब भी ओरछा की अस्मिता को सम्भाले जीवन्त था। लोग गाँव से ओरछा व अन्य स्थानों पर अपनी आजीविका के लिए आते-जाते थे। किन्तु बरसात के दिनों में सौंर नाला अपने पूर्ण वेग के साथ अनेक दिनों तक उपफनाता रहता। जिससे आवागमन अवरुद्ध रहता और लोग भुखमरी के शिकार रहते। उनकी सुनवाई के लिये राव-राजा कोई नहीं आता। ऐसी विपत्ति के समय गाँव की एक पिसनारी ने सौंर नाले पर पुल बनाने का मन में संकल्प लिया और घर-घर जाकर अनाज पीसने का कार्य कर अच्छी रकम जुटा ली थी। इस धन और गाँव वालों की मेहनत के बल पर उसनें एक बाँध का निर्माण किया जिससे आवागमन सुचारू रूप से चलने लगा और सौंर गाँव की खुशहाली लौट आई। इस बाँध का नाम आज भी 'पिसनारी का पुल' सुविख्यात है।

इसी तरह 'पिसनारी' के जन-कल्याण की भावना प्रसिद्ध हुई। जिससे उत्प्रेरित हो अनेक स्थानों पर पलायन करने वाली 'पिसनारियों' का इतिहास बना। जिसमें झाँसी की 'पिसनारी' मनोबाई का नाम सर्वोपरि है।

झाँसी की पिसनारी मनोबाई-बंगस विजय के उपलक्ष्य में

छत्रसाल ने सन् १८०२ ई0 में मराठों को अपने राज्य का तृतीयांस में गुरसराय कालपी एवं मोंठ को दे दिया था। जिसमें नारोशंकर मराठा सूबेदार ने झाँसी आदि क्षेत्रों को हथियाकर विस्तार कर लिया था। अंग्रेजों मराठों व बुन्देलों के बीच संघर्षों से यहाँ की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ बिगड़ती गईं। जनता और राजाओं के संबंधों पर इसका दुष्प्रभाव पड़ा। झाँसी में शिवराज भाऊ की (सन् १८१५ ई०) मृत्यु से उसका पौत्र रामचन्द्र राव उत्तराधिकारी बना किन्तु नावालिग होने के कारण राज-काज की देखरेख उसकी माता सुखूबाई करती थी जो दुष्ट प्रकृति की रानी थी। प्रजाजन उससे दुखी रहते थे। ऐसे में अनावृष्टि से झाँसी में अकाल की स्थिति पैदा हो गई थी। जन जीवन त्रस्त था किन्तु शासन मौन था। लोग अन्यत्र पलायन करने लगे थे। इस स्थिति का वर्णन आचार्य द्वारिका प्रसाद मिश्र 'द्वारिकेश' ने अपनी पुस्तक 'रानी लक्ष्मी बाई चरित' में किया है।

ताल-तलइया कुंआ सूक गए,
फट गई भूम उजर गए खेत।
गाविन के गरीब हरवाएँ,
भगे घर छोड़ बिबूचैं लेत।।
मरे ढोर-डंगर गइयाँ-बछियाँ,
चारे-भुस बिन डकरात।
पानी मिलै न पीबे खां,
कबनौ जी पाबैं बैहर खात।।

भूखे प्यासे लोग गली-गली जूठन खावे को विवश हो गये थे। भीषण विपदा झेल रहे लोगों का मनोबाई एक सहारा बनी। उसने अनाज पीस-पीस कर कुछ मेहनत कर पैसा इकट्ठा किया और जनता को साथ लेकर एक तालाब की खुदाई की। जिससे क्षेत्र भर की पानी की प्यास बुझी।

जौ गत देख पसीज रुआँसी, भइँ पिसनारी।
बैंच पुराने गाँने, गुरिया, कंगालन की बिदी लगाई।
घर की मड़ा-बुखारी खोदी, पुरखन कौ धन गड़ौ उखार।
बड़े गाँव दरबाजे बाहर, लगी तला खुदवाबे तार।
कंगालन खाँ मिली मजूरी, तन-तन पेट भरउआ लाख।
बड़े घरन में चर्चा भई, उजियारीं पिसनारी की साख।

इस तरह के जन सहयोग के कार्यों से प्रेरित लोगों ने भी ताल चौपड़ा मठ-मड़ियाँ बनवा कर हाथों को काम और खाने के लिये अन्न दिया। जिसके भग्नावेश आज भी झाँसी में स्थित श्याम चौपड़ा, बिलैया का बाग, भिड़े का बाग, बिलैया की हबेली के रूप में पिसनारी के उत्प्रेरक बने देखने को मिलते हैं।

ऐसे असाधारण, निस्वार्थ कार्य कर पिसनारी मनोबाई जन प्रिय बनी। जिसके संकल्प रूप मनोबाई का ताल आज भी उसकी विरल कीर्ति पताका फहरा रही है।

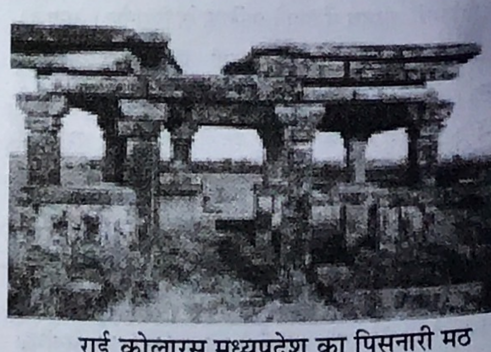
'ऐसें कटी अकाली विपदा, सब पिसनारी के गुन गायें।

राई की पिसनहारी-राई ग्राम मध्यप्रदेश के शिवपुरी जनपद का एक गाँव है जो मुख्यालय कोलारस से लगभग ८ किलोमीटर उत्तर दिशा में अवस्थित है। वास्तव में राई ग्राम चार 'राइयों' का एक समूह है जिसमें 1. सिंधराई, 2. राई 3. रामराई और 4. बूढ़ी राई नामक स्वतंत्र इकाइयाँ हैं। और इन के केन्द्र में स्थापित राई के एक किलोमीटर व्यास में हैं। इसे बूढ़ी राई से जाना जाता है। जो सब से पुरानी है। प्राचीन रियासत काल की जागीर की गढ़ी व सत्ता के नाम इससे जुड़े हुए हैं। दूसरी ओर राई ग्राम तंत्र-मंत्र के लिये भी जाना जाता रहा। इसका आधार यहाँ के दक्षिण वर्ती प्रस्तर शंखों की प्राप्ति से इसे एक पुरातन वैभवशाली स्थल बना देता है। राई की पिसनहारी का मठ इसी ग्राम में स्थित है।

राई की पिसनहारी का मठ ग्राम वासियों के अनुसार एक बड़े टीले पर स्थित था। इसे 'पिसनहारी की टौरिया' कहते थे। किन्तु समय और प्रकृति की मार से आज यह टीला ध्वस्तप्राय है। राई निवासी साहित्य मनीषी श्री हरिबल्लभ श्री वास्तव के अुसार इस टीले पर स्थित मठ पर हाथ से चलती अनाज पीसने की चक्कियाँ थीं। जहाँ से गाँव के समृद्ध लोगों का आटा तैयार किया जाता था। किन्तु आज इनमें चक्कियों का नामो निशान नहीं है। किन्तु इस मठ से लगभग आधा फर्लांग दूर एक जैन मंदिर (मठ) है जिसमें जैन प्रतिमाएँ खड्गासन मुद्रा में अवस्थित हैं। इससे एक मत यह भी हो सकता है कि जैन मुनियों की विहार स्थली रही हो, जिनके आहार हेतु यहाँ चक्कियों से आटा पीसा जाता हो। जो डॉ.लखन लाल खरे से प्राप्त विवरण में उल्लिखित है।

पिसनहारी का मठ-पिसनहारी का मठ इसी टौरिया पर अवस्थित, अपनी पुरानी पहिचान बनाए भग्नावेश रूप में खड़ा है। मठ प्रस्तर खंडो से बना है जिसकी लम्बाई १५ फीट, चौड़ाई १० फीट तथा ऊँचाई ९ फीट है। इसकी सपाट छत चारों ओर ढालनुमा है, चारों ओर चार खुले द्वार हैं। यह मठ आठ विशाल प्रस्तर खंभों पर टिका है। इससे यह मठ १० वीं या ११ वीं शताब्दी की रचना प्रतीत होती है।

इस सब जानकारी से यह पिसनहारी का मठ एक संकल्पवान पिसनारी की कथा का उद्घाटन करता है। ये तमाम तथ्य बुन्देलखण्ड की अनेकों पिसनारियों की अमर गाथा और ऐतिहासिकता से जुड़े मिलते हैं। जिन्होंने निस्वार्थ जन-कल्याण के काम कर कीर्ति अर्जित की है। राई का पिसहानी का मठ ऐसी ही सन्नारी की सत्कर्मों का घोतक है।



राई कोलारस मध्यप्रदेश का पिसनारी मठ

पिसनहारी की मढ़िया जबलपुर-जबलपुर संभाग के ग्राम पुरवा में अवस्थित पिसनारी की मढ़िया का इतिहास भी एक पिसनारी की अमरगाथा बन आज भी जनश्रुति में प्रचलित चला आ रहा है। कहते हैं कि पूर्व काल में एक वृद्ध महिला ने चक्की पीसने के काम कर जो धन अर्जित किया था उससे उसने यहाँ की एक पहाड़ी पर छोटा मठ का निर्माण कर अपनी सदेच्छा की पूर्ति की थी। यह वृद्धा कौन थी स्पष्ट रूप से किसी को पता नहीं। कुछ लोग इसे जैन समाज से जोड़ते हैं। जिन्होंने समीप ही और मंदिरों का निर्माण कराया जो लगभग १०-१२ की संख्या में हैं। इस स्थल तक पहुँचने का मार्ग 'पिसनारी की गली' के नाम से जाना जाता है और समीपस्थ मुहल्ला पिसनारी के नाम से प्रसिद्ध है। पहाड़ी पर जाने के लिए १६५ पक्की सीढ़ियाँ निर्मित हैं। मठों में एक सुन्दर गोलाकार नन्दीश्वरद्वीप नाम का मंदिर है। जिसकी विशाल प्रांगण में २४ तीर्थकारों की प्रतिमायें शोभायमान हैं। एक सुन्दर बगीचा बना है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर लाखों श्रद्धालुओं के ठहरने के लिये 'पिसनारी ट्रस्ट' द्वारा स्थान बनवाये गये हैं। यहाँ एक गुरुकुल व छात्रावास भी ट्रस्ट द्वारा संचालित है। छात्रावास में ४० कमरे छात्रों के निवास हेतु बने हैं। जैन मुनियों के आगमन से यह स्थल प्रसिद्ध है। जो एक निर्धन पिसनारी की संकल्पनिष्ठा का प्रतीक बन गया है।

मढ़िया गाँव की पिसनारी व कुटनारी-मध्यप्रदेश के पृथ्वीपुर से लगभग ५ किलोमीटर दूर ग्राम पंचायत मड़िया एन०एच० ३७ सड़क पर स्थित है। इस गाँव के मध्य एक पहाड़ी है कहते हैं कि खौंमदार गाँव के लोग यहाँ आकर बस गये थे। खेत बिरौरा और मड़िया गाँव पास-पास ही है। जिनका इतिहास जन-श्रुति के अनुसार १३वीं १४वीं शताब्दी का माना जाता है। खैमदार ग्राम की चमार परिवार की मनकू और धनकू के अप्रतिम कार्यों से यह स्थान सुप्रसिद्ध हुआ। जिनकी कथा आज भी यहाँ के लोगों की प्रेरणा स्रोत बनी हुई है।

मनकू और धनकू गरीब परिवार में जन्मी थीं, और इनका व्याह खौंमदार ग्राम के चमार परिवार में हुआ था। ये दोनों सगी बहिनें थीं। इनमें मनकू बड़ी और धनकू छोटी थी। समय की मार और फिर असमय वेधव्य से दोनों आहत हो किसी तरह अपना जीवन यापन करतीं। मनकू पीसने का काम करती और धनकू अनाज (कोंदो फिकार धान)कूटने का काम करतीं और अपना पेट पालती थीं। इनके कोई संतान नहीं थी। अतएव ये दोनों पीसने और कूटने से कुछ धन बचा कर रख लेती। फिर इन्होंने पहाड़ी पर एक 'मड़िया' बनाई और उसे जमीन से जोड़ने की एक 'सुरई' बनाई जहाँ से नीचे के तालाब से पानी ले जाकर ऊपर कुँए में भरता। इसकी लम्बाई लगभग २५० फीट की है और पूरी सुरई लगभग ७८५ मीटर है। कुंआ का निर्माण धनकू ने स्वयं खुदाई कर किया बताया जाता है। उसने ईंट गारे से पक्का बनाया। जिसकी चौड़ाई लगभग १० फीट एवं गहराई लगभग ३० फीट है। इस तरह दोनों बहनों के इस पुन्य कर्म के प्रताप से आज भी लोग घर के व खेती के कार्य में पानी लेने के लिये करते हैं।

पिसनारी की मड़िया-यह मड़िया पहाड़ी पर बनी विश्वास व संकल्प की पहिचान है। जिसका निर्माण मनकू पिसनारी ने किया था जो एक पक्के आधार पर खड़ी है। इस की ऊँचाई लगभग १५-२० फीट व चौड़ाई लगभग १० फीट है। ऊपर एक गुम्मदनुमा आकार है जिस पर लाल पताका फहरा रही है। इसका प्रवेश द्वार एक ही आदमी के आने जाने का है। मंदिर के अन्दर एक मूर्ति काले पत्थर की है जिसकी पूजा लोग आकर करते हैं। यहाँ एक मेला भी लगता है। इस मड़िया से कुछ दूरी पर ही अछरूमाता का प्रसिद्ध मंदिर है। मड़िया मठ पिसनारी की श्रम साधना का प्रतीक है।



पिसनारी का मठ, मड़िया गाँव जिला टीकमगढ़

ललितपुर की पिसनारी-बुन्देलखण्ड क्षेत्र का ललितपुर अति महत्वपूर्ण स्थान है। पौराणिक, सांस्कृतिक अतिशय क्षेत्र है। समृद्धि व शांति के लिये यह क्षेत्र जितना प्रसिद्ध है उतना ही यहाँ की पिसनारी की गली व मठ प्रख्यात हैं।

गोकुल दास घाट से लगभग १५० मीटर की दूरी पर पिसनारी रोड पर स्थित रामजानकी मंदिर है जो दो सौ साल पुराना है। जिसे किसी विसनरायण संज्ञा ने बनवाया था। इसी के पास एक पीपल का पेड़ है जहाँ एक चबूतरा है जिस पर एक मड़िया बनी है। यही पिसनारी की मड़िया के नाम से प्रसिद्ध है जो पत्थरों की बनी है। कहते हैं कि एक पिसनारी ने चक्की पर अनाज पीस-पीस कर इसे बनवाया था। पिसनारी का नाम तो अज्ञात है और समय भी अज्ञात है किन्तु इसका निर्माण २००-३०० वर्ष पुराना बताया जाता है। इसी के पास एक कुंआ है जिसको यहाँ पर आने वाले श्रद्धालुओं को जल प्रदान करने हेतु बनवाया गया था। इसी प्रांगण में एक विशाल बाग है जिसे पिसनारी का बाग कहते हैं। जहाँ सुन्दर पेड़ लगे हैं और सैलानियों के लिये बैठने को सीमेन्ट की बेंचे बनी हैं। ये सब इस स्थल की सुन्दरता के लिये बाद में बनवाईं गई हैं। यहीं पास में ब्रह्मदेव मंदिर भी है जिससे यह स्थान देवस्थान-सा लगता है।

पिसनारी मड़िया के पास ही पुरानी ईंट छप्पर का जीर्णशीर्ष घर है जो पिसनारी का घर बताया जाता है। जिसके दरबाजे पर किवाड़ ताले लगे हैं। वास्तव में यही वह घर है जहाँ पिसनारी ने रह कर

भगवान की मड़िया बनवाई होगी और स्वयं व अन्य लोगों को पुन्यार्जन कराया होगा।

उदय पुर की पिसनारी-मध्यप्रदेश की विदिशा जिले की गंज बसौदा तहसील के उदयपुर ग्राम में नील कण्ठेश्वर प्रसिद्ध मंदिर है। यह मंदिर राजा उदयादित्य ने एक पिसनारी की स्मृति में बनवाया था। जिसमें भगवान शिव की मूर्ति प्रतिष्ठित है। इसी मंदिर के पास पिसनारी चक्की से आटा पीस कर राज परिवार का कार्य करती थी। राज परिवार की पूर्ण निष्ठा से सेवा से राजा उससे प्रसन्न थे। किले के पास ही पिसनारी का घर था। वहीं समीप पिसनारी का मंदिर है। जिसमें महादेव की मूर्ति विराजमान है। वहीं चक्कीनुमा प्रस्तर की शिला पड़ी है जिस पर नारी आकृति सी बनी है जिसको यहाँ के लोग पिसनारी के रूप में देखते हैं। मंदिर और दरबाजे सब पत्थर के बने हैं। पिसनारी की कर्तव्य और निष्ठा के लिये यहाँ के लोग श्रद्धा से उसे नमन कर स्मरण करते हैं।

नरवरगढ़ की पिसनारी-'नरवर चढ़ै ना बेड़नी' की कहावत बहुश्रुत है किन्तु नरवरगढ़ राजसत्ता के केन्द्र के रूप में अधिक जाना जाता है। किन्तु इसके इतिहास में एक गरीब पिसनारी की अमरगाथा भी जुड़ी है।

नरवरगढ़ का किला अहीर नदी के निकट स्थित एक पहाड़ी पर बना है। इसका मुख्य दरबाजा 'पिसनारी' उर्फ आलम गोरी दरबाजा कहलाता है। इसकी कहानी भी बहुचर्चित है। कहते हैं कि किले की एक विशाल बुर्ज के नीचे बस्ती की ओर जाने वाले मार्ग पर जुलेखा नाम की एक गरीब पिसनारी रहती थी। जो लोगों का अनाज पीस कर अपना जीवन यापन करती थी। किन्तु औरंगजेब का नरवरगढ़ आगमन पर इस पिसनारी को हटा दिया गया। जिससे वह निराश्रित हो भुखमरी से पीड़ित हो गई थी। तभी औरंगजेब को अपने सिपहसालार बखतावर खाँ से पीड़ित पिसनारी की दुर्दशा का पता पड़ा तो उसने जुलेखा पिसनारी को धन-दौलत देकर सहायता की थी और तभी से किले का दरबाजा पिसनानी के नाम से प्रसिद्ध हुआ जिसका उल्लेख औरंगजेब नामा में भी देखने को मिलता है।

इस प्रकार अनेक पिसनारियों की अमर गाथाएँ यत्र-तत्र विश्रुत हैं। जिनसे लोग आज भी प्रेरणा प्राप्त करते हैं। निर्धनता वर्ग-विभेद से ऊपर उठकर उनके कार्य समाज को दिशा प्रदान आज भी करते हैं।

सहायक सूत्र-

1. आचार्य द्वारिकेश कृत लक्ष्मीबाई चरित
2. डॉ.रामनारायण शर्मा अभिनन्दन ग्रंथ अक्षत चंदन
3. डॉ.भगवत दुबे जबलपुर
4. डॉ. लखन लाल खरे प्रवक्ता करैरा महाविद्यालय
5. डॉ. के0पी0 त्रिपाठी का आलेख बुन्देली बसंत बसारी छतरपुर
6. देवेन्द्र कुमार अहिरवार 'भारत' दिगौड़ा जिला टीकमगढ म0प्र0

-६९५/३, रानी लक्ष्मीबाई पार्क सिविल लाइन्स, झाँसी (उ0प्र0) 卐

दो बुन्देली गजलें

-सुधा रावत 'क्षमा'

रम्मू कक्का

सामूँ सें जिनखों गरया रये रम्मू कक्का।
पाछें उनखों गरें लगा रये रम्मू कक्का।।

कत्ते उन गलियन नइँ जानें दद्दा मारें,
अब तौ डेरा उतइँ जमा रये रम्मू कक्का।

कईती बात दाबियो मन में वे नइँ माने,
सबके आँगे ढोल बजा रये रम्मू कक्का।

आस-पास के बिल भरवा दये ढूंढ़ ढूंढ़ कें,
आसतीन में साँप बसा रये रम्मू कक्का।

पढ़ लिख कें बाबू जी बनहैं ई आशा में,
पेट काट कें उनें पढ़ा रये रम्मू कक्का।

वे पढ़कें परदेस चले गये फिर नइँ मुरके,
कर्जा पाई-पाई पटा रये रम्मू कक्का।

हसरत हती ब्याओ, बरात की मढ़ियाँ पूर्जी,
पूत ब्याओ की खबर सुना रये रम्मू कक्का।

हर गलती पै क्षमा न माँगौ न दै पाहैं,
टटकी-टटकी मनो सुना रये रम्मू कक्का।

साऊ कार कौ कड़ुआ हो रओ

कैबे खों तौ अगुआ हो रओ।
पै सबरौ जग ठगुआ हो रओ।
बेटा कितऊँ बाप खों लूटत,
कितऊँ बाप नरभरूआ हो रओ।

गैल पतौ खुद नइयाँ जी खों,
वो पलटन कौ अगुआ हो रओ।
मान्स इतै कऊँ उतै लुड़क रओ,
बे पैंदी कौ गडुआ हो रओ।

चापलूस की खूब चटक रइँ,
दोइ हाँतन कौ लडुआ हो रओ।
भ्रष्टाचार तौ बढ़तई जा रओ,
साऊकार कौ कड़ुआ हो रओ।

मसकऊँ मसकऊँ जेब कुतर रओ,
फैशन मानो कटुआ हो रओ।
घोर-घोर पानी में पी रये,
समय न भओ सतुआ हो रओ।

सच्चाई काँटे सी गुच्च रई,
झूठ भटा कौ नरूआ हो रओ।
'क्षमा' जिये हम समझत अपनो,
भुंज कें जरूआ-बरूआ हो रओ।

-एफ ७, गीत बंगले फेस-२, दुर्गेश बिहार जेके रोड भोपाल म0प्र0 卐

बुन्देलखण्ड की देन - कुँवर अस्कंद गिरि रचित रस मोदक हजारा

-उदय शंकर दुबे

पंचक, सप्तक, षोडशी, पचीसी, पचासा, शतक, सप्तशती की भाँति बुन्देलखण्ड के कवियों ने रीति-काल में हजारा नाम से ग्रंथों की रचना की। हजारा नाम से दो प्रकार के ग्रंथ उपलब्ध है-प्रथम कवियों द्वारा स्वतंत्र ढंग से रचित रीतिपरक ग्रंथ (नायक -नायिका भेद) तथा द्वितीय रसिक हृदय काव्य प्रेमी द्वारा कई कवियों द्वारा रचित एक ही विषय से संबंधित एक हजार या उससे कुछ अधिक छंदों को संग्रहित कर उसे विषयानुसार हजारा की संज्ञा दी गई है। प्रथम कोटि के दो हजारा ग्रंथ प्राप्त हैं-१-कालिदास कृत कालिदास हजारा-इसकी अपूर्ण हस्तलिखित प्रति प्राप्त होती है तथा अस्कंद गिरि कृत रस मोदक हजारा। द्वितीय प्रकार के ग्रंथों में तुलसी हजारा का नाम प्रमुख है, इसमें तुलसीदास कृत रामचरित मानस, रामाज्ञा प्रश्न, दोहावली जैसे ग्रंथों से दोहों और सोरठों को संकलित कर उसे तुलसी हजारा नाम दिया गया है। इसी प्रकार जबलपुर म0प्र0 के परमानन्द सुहाने ने सन् १८८५-१८९३ ई0 के मध्य नख-शिख हजारा और षट-ऋतु हजारा नामक ग्रंथों का संकलन किया। उनके दोनों ग्रंथ नवल किशोर प्रेस लखनऊ से सन् १८९३ ई0 और सन् १८९४ ई0 में प्रकाशित हुये थे।[1] परमानन्द सुहाने की हरी भाँति हरदोई (उ0प्र0) जिले के श्री हफीजुल्लाह खाँ ने एक हजारा ग्रंथ तैयार किया जो मुंशी नवल किशोर प्रेस लखनऊ उ0प्र0 से सन् १८९५ ई0 में प्रकाशित हुआ था।[2] इस संग्रह ग्रंथ में नाना प्रकार के बहुत ही उत्तम २१८४ कवित्त संग्रहीत हैं। इसमें स्थान-स्थान पर चित्र बने हैं। यद्यपि इसमें २१८४ छंद हैं फिर भी संग्रहकर्ता ने इसे हजारा का नाम दिया है। इसकी प्रति अब दुर्लभ सी है। श्री हफीजुल्लाह खाँ ने सन् १८९७ ई0 में विविध विषयों से संबंधित ५५० छंदों का एक और संग्रह तैयार किया जिसे 'नवीन संग्रह' नाम दिया। उनका नवीन संग्रह सन् १८९८ में नवल किशोर प्रेस लखनऊ से ही मुद्रित हुआ।[3] भूषण हजारा ग्रंथ का नामोल्लेख तो मिलता है किन्तु इसकी प्रति अनुपलब्ध है।

स्वतंत्र रूप से हजारा नामक ग्रंथों के रचयिताओं में कालिदास त्रिवेदी के बाद बुन्देलखण्ड के कुँवर अस्कंदगिरि हैं जिन्होंने संवत् १९०५ वि0(सन् १८४८ई0) में रस मोदक नामक नायिका भेद की रचना की। कुँवर स्कंदगिरि, हिम्मत बहादुर अनूप गिरि के वंशज थे। हिम्मत बहादुर जहाँ वीर योद्धा था वहीं वह साहित्य प्रेमी भी था। पद्माकर भट्ट जैसे कवि ने उसकी यश: कीर्ति में हिम्मत बहादुर विरदावली की रचना की थी। अनूप गिरि के वंशज हिम्मत बहादुर नरेन्द्र गिरि उपनाम रंग ने संवत् १८७४ वि0 (सन् १८ ई0) में 'रसरंग' नामक ग्रंथ की रचना की। हिन्दी साहित्य की समृद्धि में बुन्देलखण्ड की धरती पर निवास करने वाले गिरियों का पर्याप्त योगदान रहा है। इस ओर विद्वानों का ध्यान नहीं गया है।

> (३२६) रसमोदक।
>
> **दोहा।**
>
> **दशनौसै अरु पाँचको, संवत भादौमास।**
> **शुक्लपक्ष द्वादश रवौ, पूरण ग्रंथप्रकाश॥१०१४॥**
> **राधा माधवको कियो यामें रूप शृँगार।**
> **भूल चूक जो होइकछु, लीजौ सुजन सुधार१०१८**
>
> इति श्रीशिवसुत षोडश नाम प्रतापअनुभारतीज्ञ: श्रीमन्महाराजकुमार श्रीमत्कुँवर स्कंदगिरि विरचिते रसमोदकाऽभिधकाव्ये श्रीमहाराजाधिराज राधाकृष्णविहारे कविजन रसिक हृदयप्रमोददायिने नवरसभाव प्रकरणं नाम षष्ठोल्लास: ॥ ६ ॥
>
> इति रसमोदक हजारा सम्पूर्ण।
>
> पुस्तक मिलनेका ठिकाना-
>
> **खेमराज श्रीकृष्णदास,**
>
> **"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना, खेतवाड़ी-बंबई.**
>
> **रसमोदक हजारा के अंतिम पृष्ठ की फोटो**

कुँवर अस्कंद गिरि बाँदा में निवास करते थे। बाँदा में रहकर उन्होंने रसमोदक जैसे सरस ग्रंथ की रचना की। इस ग्रंथ में कुल मिलाकर १०१५ छंद हैं। पूरा ग्रंथ दोहा, सोरठा, बरवै, सवैया छंद में लिखा गया। विषय क्रम से ग्रंथ छ: (६) उल्लासों में विभक्त है। प्रथम उल्लास की पुष्पिका दृष्टव्य है- 'इति श्री शिव सुत षोडशनाम प्रताप अनुभारतीज्ञ श्रीमन्महाराज कुमार श्रीमत्कुँवर स्कंद गिरि विरचिते रसमोदक मिधे काव्ये श्री महाराज राधाकृष्ण विहारे कविजन हृदयानंद दायिने आलंबन विभाव प्रकरणं नाम प्रथमोल्लास: ।।१।। संवत् १९५७ वि0 (सन् १९०० ई0) में खेमराज की कृष्णदास ने श्री वेंटकेश्वर प्रेस मुंबई से इसे रस मोदक हजारा नाम से प्रकाशित किया था। ग्रंथ की प्रति उनको पन्ना (बुन्देलखण्ड) निवासी पण्ड्या रामनाथ से प्राप्त हुई थी। ध्यातव्य है कि ग्रंथ के सभी छ: उल्लासों में कवि ने ग्रंथ का नाम रस मोदक ही लिखा है। संभवत: ग्रंथ में एक हजार से अधिक छंद थे इस कारण से खेमराज श्री कृष्ण दास ने इसका नाम रस मोदक हजारा कर दिया। इस ग्रंथ की संवत् १९०५ वि0 की लिखी हुई एक हस्तलिखित प्रति छतरपुर म0प्र0 निवासी बाबू जगन्नाथ प्रसाद, प्रधान अर्थ लेखक के संग्रह में थी। नागरी प्रचारिणी सभा काशी की सन् १९०५ई0 की खोज विवरणिका संख्या ३२ पर इस प्रति का पूरा विवरण प्राप्त है।[4] इस प्रति में भी ग्रंथ का नाम रस मोदक ही मिलता है। सन् १९०० ई0 के पूर्व परमानन्द सुहाने और हफीजुल्ला खाँ के हजारा ग्रंथ छप चुके थे और काव्य रसिकों में उन ग्रंथों का व्यापक प्रचार प्रसार भी हो चुका था। श्री खेमराज ने भी अस्कंद गिरि कृत रस मोदक काव्य ग्रंथ को रस मोदक हजारा नाम से प्रकाशित कर उसे रसिक जनों तक पहुँचाने का प्रशंसनीय कार्य किया।

रस मोदक हजारा के प्रत्येक उल्लास की छंद संख्या इस प्रकार है।

प्रथम उल्लास	-	आलंबन विभाव प्रकरण	छंद संख्या १ से ५२४
द्वितीय उल्लास	-	उद्दीपन विभाव	५२५ से ६३१=८९

तृतीय उल्लास - अनुभाव विभाव ६१४ से ६९१=७८
चतुर्थ उल्लास - अनुभाव विभाव ६९२ से ८१९=१२८
पंचम उल्लास - स्थायी भाव ८२० से ८५६=३७
षष्टम् उल्लास - नवरस भाव ८५७ से १०१५=१५९

अस्कंद गिरि कृत रस मोदक हजारा ग्रंथ की सबसे बड़ी विशेषता है कि कवि ने राधा कृष्ण को नायिका और नायक के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रत्येक उदाहरण में राधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन मिलता है। इस प्रकार अस्कंद गिरि ने देव कवि की इस उक्ति-'आगे सुकवि रीझिहै तो कविताई नाहिं राधिका-कन्हाई को सुमिरन को बहानो है।' ग्रंथारंभ में कवि ने श्री गणेश भगवान आशुतोष और माँ पार्वती का स्मरण किया है। विस्तारभय से यहाँ हम ग्रंथ में वर्णित संपूर्ण विषयों की सूची न देकर प्रत्येक उल्लास से लक्षण और उदाहरण सहित कुछ छंदों को प्रस्तुत करना उचित समझते हैं। इन उदाहरणों से कवि की काव्य प्रतिभा को समझा जा सकता है-

प्रथम उल्लास-

दोहा- कहत श्रृंगार रस, नव रस में कविराव।
वरणत नायका नायकहिं, आलंबन रस भाव।।९।।
वरणौ प्रथमाई नायिका, नायक बहुरि बनाम।
भाव हाव जे तरुण के, ते पीछे कह गाय।।१०।।
उपजत लखि जाहि को, रस श्रृंगार को भाव।
ताको कहि नायिका, वर्णत जे कवि राव।।११।।

नायिका का उदाहरण-

कवित्त-कीरति किशोरी छवि वरणी न जात कहि,
कोटि मेनका की गति होत मतवारे हैं।
अंग-अंग शोभित ही लोभित निरखि पुनि,
प्रगट प्रदीसमान उपमा न टारे हैं।
भनै असकंद रच्यो वदन विरंचि जनु,
आभा जौ न रही तासु करन मँझारे हैं।
दीन्हयो जो निचोय धोय चंद्र भानु,
छिरके के ते बूँद भये तौन नभतारे हैं।।१२।।

मुग्धा आगत पतिका- लक्षण
नवल वधू पिय आगमन, चरचा सुन सुन कान।
हिय हरषत परखत नयन परखत सुमन कमान। ४४१।।

उदाहरण सवैया-
रहे खेलत संग सखीन के आइ कहूँ यह बात सुनाई दई।
चलि आये विदेश ते वैन सुने निज मंदिर बेगही दौरि गई।
असकंद भनै कछु चातुरी सों, पटकी करि ओट प्रमोद मई।
पिय को मुख देखत बाल नई भय लाज भरी सुकुचात भई।।४४२।।

द्वितीय उल्लास- ऋतु वर्णन,
बरवै- सावन सरित सुहावन आवन कीन।
वन उपवन हरियाने, अधिक नवीन।। ६०७।।

सवैया
भादौं घने-घने घूमि रहे, चपला चमकै चहुँ ओर सुहाई।
फूले प्रसून सबै वन के, अवनी पै हरी -हरी सेज बिछाई।
त्यों असकंद भनै ब्रज गोपिन साँवरे सों रसरीति बढ़ाई।
झूलै सबै मिलि कुंज कदंब पै, डारि हिंडोलना धूम मचाई।।६०८
बरवै- जित देखौ तित वरषत घन घहराय।
पावस ऋतु को आवन लेव लुभाय।। ६०९।।

तृतीय उल्लास- हेत्वा लक्षण,
दोहा- पिय सों करै विलास जो, बाल ढिठाई संग।
हेला हाव सुग्यारहो, नेही मदन तरंग।। ६८६।।

उदाहरण-सवैया
पीतपटी लकुटी लई छीन, सु रास में श्यामहि नारि बनावती।
अंजन आँजि उढ़ाइ कै चूनरी नैन नचाइ करै मन भावती।
त्यों असकंद भनै मुसक्याइ, रिझाइ कै गेह की राह बनावती।
भेद न पावत शेष महेश गुवालिन ताहिये नाच नचावती।।६८७

चतुर्थ उल्लास-स्मृति लक्षण,
दोहा- सुमिरण बीती बात को, करत हिये में जौन।
ताही को स्मृति कहत, जे कवि रस के भौन।।७४३।।

उदाहरण कवित्त-
बाँसुरी बजाइबो रिझाइबो सुगाइबोई,
नेह सरसाइबो निकुंज सुख सारी के।
रहस रस मण्डल में नाचिबो नचाइवो री,
खेलिबो खिलाइबो अनंद अधिकारी के।
भनत अस्कंद मढ़ी चित्त में हमेस रहै,
प्रीति की प्रतीतवारी छवि मतवारी के।
भूलत न एकोक्षण झूलत सदा ही रहै,
नैनन में मन में चरित्र गिरिधारी के।।७४४।।

पंचम उल्लास, हास लक्षण,
दोहा- बने बनाये रूप अरु, कछु-कछु भीत प्रकास।
हँसन होत तासों प्रगट, सो कहि हास विलास।।८२८।।

कवित्त-
धारि कै सखी को रूप एक समै नंदलाल,
निकरे करि ख्याल बरसाने की खोरी है।
तहाँ ललता ने बात राधि कै जनाई जाइ,
उन बुलवायो गई भीतर लै भोरी है।
भनत अस्कंद पहिचान कै विशारबहू ने,
पदम बतायो लखै चरित बड़ोरी है।
हँसि इठलाइ रहैस गोपिन के वृंद-वृंद,
मृदु मुसक्याइ रही कीरति किशोरी है।।८२९।।

षष्टम उल्लास-वियोग श्रृंगार लक्षण,
दोहा- जहँ बिछुरन दोहून की, दोहुन व्यापत आई।
विप्रलंभ श्रृंगार खों, विरह दशा सम पाई।।८७२।।

सवैया-
देखो जितै तित फूलि रहे वन बाग चहूँ दिशि फूल सुहाये।
तापर देत है कोइल कूक सुहूक उठे दिय मैन बढ़ाये।
त्यों अस्कंद भनै अलिपुंज के पुंज सु गुंज करै फिरै धाये।
मोहि सतावत है विरहा अबत्तौं सखी श्याम घरै नहिं आये।।८७४

अस्कंद गिरि ने रस मोदक काव्य में बहुत सरल शब्दों का प्रयोग किया। रीतिकालीन अन्य कवियों की भाँति उन्होंने कठिन भाषा को नहीं अपनाया। संभव है उन्होंने और भी ग्रंथों की रचना की हो जो आज अनुपलब्ध हैं। 卐

संदर्भ-

१. दृष्टव्य-बुन्देलखण्ड के अज्ञात रचनाकार, पृष्ठ २०७-२१२
२. दृष्टव्य-हफीजुल्ला खाँ हजारा, सन् १८९३ ई० में प्रकाशित
३. दृष्टव्य-नवीन संग्रह हफीजुल्लाह खाँ, सन् १८९८ ई० में प्रकाशित
४. दृष्टव्य-हस्तलिखित हिन्दी ग्रंथों की खोज विवरण, सन् १९०५ संपादक श्याम सुन्दर दास

-ग्राम-करेरुआ पोस्ट खमरिया, जिला मीरजापुर म०प्र० 卐

रहली के सूर्य मंदिर का उत्कृष्ट शिल्पांकन

-डॉ.मोना जैन

मध्यप्रदेश का सागर जिला पुरातात्विक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। प्रारंभिक पाषाणयुगीन आदिमानवों का यह क्रीड़ा-स्थल कहा जा सकता है साथ-साथ यह ऐतिहासिक युग में प्रमुख साम्राज्यों का भी अंग रहा है। संस्कृति की प्रमुख धारा यहाँ अजर रूप से अविरल गति से प्रवाहित होती रही है। यह भूभाग गुप्त, चंदेल, कल्चुरि तथा परमारकालीन कलावशेषों के लिए विख्यात रहा है। यहाँ की धार्मिक परम्पराओं का सभी अपना महत्व रहा है। पारस्परिक सौहार्द्र धार्मिक उदारता तथा सांस्कृतिक समन्वय यहाँ की परम्परा में हमेशा फलते फूलते रहे हैं। यह बुन्देलखण्ड का हृदय स्थल भी है। श्रृंगार और शौर्य यहाँ की मिट्टी में समाया हुआ है।

मध्यकाल से ही बुन्देलखण्ड के अधिकांश भू-भागों में सूर्य की उपासना प्रचलित रही है। रहली, उमरी, मिडखेरा, छतरपुर और खजुराहो आदि स्थल सूर्योपासना के महत्वपूर्ण केन्द्र थे। इस परम्परा में रहली का सूर्य मंदिर विशिष्ट महत्व रखता है।

रहली सागर से लगभग ४० किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह नगर रहली तहसील का मुख्यालय भी है। सोनार तथा देहार नदी के संगम पर स्थित यह नगर दक्षिण पूर्व में २३° ३५° उत्तर तथा ७९°०० पूर्व में स्थित है। मोटर मार्ग द्वारा यह भोपाल, जबलपुर, सागर तथा बीना से पक्की सड़क से जुड़ा है। बस सेवा भी नियमित उपलब्ध है। नदी के तट पर स्थित होने के कारण मंदिर का प्राकृतिक परिवेश अत्यंत रमणीक और सुरम्य है। नगर के समस्त प्राचीन स्थलों में सूर्य मंदिर सर्वाधिक प्राचीन है। मूर्ति कला की दृष्टि रहली के मंदिर का निर्माण ९वीं १०वीं सदी ईस्वी का माना जा सकता है। वर्तमान समय में यह मंदिर अपने मूलरूप में नहीं है। मूल मंदिर की भव्यता का अनुमान भर लगाया जा सकता है। मंदिर में प्रमुख उपास्य देव सूर्य सहित विष्णु, उमा महेश्वर, लक्ष्मी नारायण, ब्रह्मा शिव, हरिहर, सरस्वती, चामुंडा नागनागिन, सुर सुन्दरियों, दिक्पाल तथा स्थापत्य खंड दर्शनीय है।

प्राचीन काल से हिन्दू धर्म में सूर्य की उपासना का अत्यंत महत्व है। सूर्य की उपासना आध्यात्मिक शांति एवं भौतिक समृद्धि का मूल है, वर्तमान युग में सूर्य के महत्व को वैज्ञानिक परिवेश में परखा जाने लगा है। चिकित्सा के क्षेत्र में भी सूर्य स्नान और सूर्य किरण चिकित्सा अत्यंत लोकप्रिय रहा है।

रहली का पुरातात्विक वैभव पुरातत्व के शोधार्थियों एवं पर्यटकों के लिए सदैव ही आकर्षण का केन्द्र रहा है। यहाँ ठहरने के लिए विश्रामगृह एवं निःशुल्क धर्मशाला की व्यवस्था है। रहली का सूर्य मंदिर राज्य शासन द्वारा संरक्षित स्मारक है। इसकी देखरेख के लिए एक परिचर भी नियुक्त है। इस मंदिर के द्वार दर्शनार्थियों के लिए सदैव खुले रहते हैं।

वर्तमान समय में यद्यपि रहली का सूर्य मंदिर अपने मूल रूप में विद्यमान नहीं है परन्तु मंदिर के स्थापत्य वैशिष्ट्य का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। मंदिर में अर्धमंडप तथा गर्भगृह प्रमुख हैं। गर्भगृह में सूर्य देवता स्थापित हैं। द्वार ललाट तथा शुक नासिका भाग पर सूर्य का अंकन दिखाई देता है। उत्तर, दक्षिण तथा पश्चिम दिशा के बाह्य भितियों पर अश्वारूढ़ आसनस्थ सूर्य, लघु द्वार प्रकोष्ठ में प्रदर्शित है। रिक्त भागों में दिक्पाल, सुर-सुन्दरियाँ, कीर्तिमुख, शार्दूल तथा अन्य अलंकरणों का समायोजन है। कुछ पुरातत्व विद् यह मानते हैं मंदिर में किन्हीं दो भिन्न-भिन्न मंदिरों के स्थापत्य अवशेषों का उपयोग किया गया है। इस तथ्य की पुष्टि नटराज शिव युक्त सिरदल, प्रवेश द्वार का यमुना युक्त भाग, द्वार मूल आदि अवशेषों से होते है। जनमानस में प्राचीन सूर्य मंदिरकी स्मृति सतत् रूप से बनी रहने के कारण इस मंदिर में सूर्य प्रतिमा को प्रमुख अधिष्ठात् देव के रूप में गर्भगृह में प्रतिष्ठित किया गया। इसी कारण यह स्थल सूर्य मंदिर के रूप में विख्यात है। अपनी भव्यता और कलात्मकता के कारण यहाँ की सूर्य प्रतिमा सागर क्षेत्र में अद्वितीय है। मंदिर भूमि से लगभग ४० से0मी0 ऊँचे,चबूतरे पर स्थित हैं। गर्भगृह के चारों तरफ खुला प्रदक्षिणा पथ है। मंदिर पूर्वाभिमुखी है और प्रवेश द्वार अलग-अलग मंदिरों के द्वार अवशेषों से निर्मित है। मंदिर की बाहरी भित्तियों पर चतुर्दिक शैव, वैष्णव तथा शाक्त प्रतिमायें प्रचुरता से दिखाई देती हैं। बाहरी भित्ति के चारों ओर चौकोर स्तंभ पंक्तियों में विष्णु, लक्ष्मीनारायण, हरिहर, उमामहेश्वर, गणेश, सरस्वती, चामुंडा, दिक्पाल, सुर-सुन्दरियाँ तथा आखेट दृश्य उल्लेखनीय है।

रहली के सूर्य मंदिर में प्रतिष्ठित सूर्य प्रतिमा मध्य युगीन शिल्प शास्त्रीय प्रतिमान की सर्वोत्कृष्ट कृति है। इस प्रतिमा में दिव्यता, भव्यता तथा सौम्यता का अद्भुत संयोग दिखलाई पड़ता है। द्विभुजी सूर्य समभंग स्थानक मुद्रा में हैं। उनके दोनों हाथों में पूर्ण विकसित सनाल कमल अलंकृत है। नेत्र उन्मीलित एवं मुख पर ध्यान के भाव दृष्टिगोचर होते हैं। मस्तक के पीछे पद्मदल अलंकृत अंडाकार प्रभामंडल है। वे किरिटमुकुट, मकर कुंडल, मुक्ताहार, कवच, केयूर, कंकण, वक्ष बंध कटिसूत्र, उत्तरीय तथा पैरों में उपानह धारण किये हैं। उनके साथ सूर्य पुत्र अश्विनी कुमार तथा मालाधारी विद्याधर युगल, बीच में योगासनस्थ चतुर्भुज विष्णु सहित दो अस्पष्ट देवता अंकित है। सबसे ऊपर की पंक्ति में आठ ग्रहों का अंकन है। प्रभावली के पास धनुषबाण लिए उषा-प्रत्यूषा प्रत्यालीढ़ मुद्रा में स्थित है। स्तंभ तोरण पर मकरमुख अलंकरण से निःसृत भारवाहक पद्मपीठ धारण किये हुए हैं, जिन पर दायें तरफ चतुर्भुजी लक्ष्मी तथा बायें तरफ सरस्वती ललितासन में प्रदर्शित हैं। मध्य में शार्दूल आरूढ़ योद्धा तथा कटार लिए पुरुष आकृति का आकर्षक

अंकन है। पास में सूर्य के दायें पार्श्व में कलम पकड़े हुए पिंगल तथा बायें पार्श्व में खड्ग लिए हुए दंडी अंकित हैं। सूर्य के पैरों के बीच पृथ्वी स्वरूपा महश्वेता अभय मुद्रा में समभंग खड़ी हैं। पास में दायें तरफ चक्र तथा नकुली पकड़े हुए वरुण ललितासन मुद्रा में अंकित हैं। अंतिम छोर पर पैर मोड़े उपासक पुरुष तथा प्रतिमा अधिष्ठान पर सप्ताश्व रथ को वेग से संचालित करते हुए सारथी अरुण प्रदर्शित है।

सूर्य मंदिर की चारों बाहरी दीवारों पर अनेक देव प्रतिमाओं का अंकन मिलता है। कलात्मक दृष्टि से ये सभी प्रतिमायें अत्यंत उत्कृष्ट हैं। मंदिर की बाहरी दीवार पर नटराज की प्रतिमा अंकित है जो अत्यंत ही आकर्षक है। शिव को नृत्य का आदि गुरु माना जाता है और इसी कारण वे नटराज कहे गये। नटराज की प्रतिमा में मस्तक पर अलंकृत जटामुकुट है। वे कुंडल, केयर, कंकण, यज्ञोपवीत कटिसूत्र तथा नुपूर धारण किये हुए हैं। चतुर्भुजी शिव के दायें हाथ में डमरू तथा बायें हाथ में खट्वांग है। नीचे का हाथ खंडित है और बायाँ हाथ नृत्य मुद्रा में अंकित है। नीचे दायें तरफ नंदी और गणेश तथा बायें तरफ कार्तिकेय अंकित हैं।



अग्नि, सूर्य मंदिर, रहली

द्वार ललाटिका पर अंकित नटराज शिव अति भंग में प्रदर्शित हैं। उनके ऊपरी दायें हाथ में त्रिशूल अंकित है। नीचे का बायाँ हाथ जगहस्त मुद्रा में नृत्य के अनुरूप ही अंकित है। ऊपरी बायें हाथ में खटवांग है। एक हाथ खंडित है। नीचे उनका वाहन नंदी अंकित है।

मंदिर की पृष्ठ दीवार पर उमा महेश्वर प्रणयरत अंकित हैं। चतुर्भुजी शिव ललितासन में है। उनकी बायीं जाँघ पर द्विभुजी उमा बैठी हुई अंकित हैं। शिव के मस्तक पर जटाजूट तथा पार्वती के मस्तक पर रत्न जड़ित केश-सज्जा है। वे कुंडल, मुक्ताहार, केयूर, कंकण, कटिसूत्र अधोवस्त्र तथा नुपुर धारण किये हैं। चतुर्भुजी शिव के ऊपरी दायें हाथ में त्रिशूल तथा बायें हाथ में अस्पष्ट वस्तु है। निचला दायाँ हाथ अभय मुद्रा में तथा बायाँ हाथ देवी के स्तन को स्पर्श करते हुए अंकित है। देवी के बायें हाथ में सनाल कमल है तथा दायाँ हाथ शिव के कंधे पर प्रदर्शित है। शिव तथाा उमा के पैरों के पास नंदी तथा सिंह अंकित हैं। एक एक परिचारक भी दृष्टिगोचर होते हैं।

मंदिर के पृष्ठ दीवार पर दो गणपति प्रतिमायें अंकित हैं। एक में चतुर्भुजी गणेश नृत्य मुद्रा मे प्रदर्शित है। उनके निचले दायें हाथ में परशु तथा ऊपरी हाथ नृत्य मुद्रा में है। ऊपरी बायें हाथ में अस्पष्ट वस्तु है तथा निचले हाथ में एक पात्र में मोदक लिये हुए अंकित है। उनकी सूंड का अग्रभाग मोदक पात्र के ऊपर स्थित है। नीचे उनका वाहन मूषक अंकित है।

दूसरी प्रतिमा भी चतुर्भुजी गणेश की है। वे स्थानक मुद्रा में द्विभंग में खड़े हैं। उनके ऊपरी दायें हाथ में गदा है। ऊपरी बायें हाथ में अस्पष्ट आयुध है तथा निचला हाथ कट्यावलंबित है। वे हार, केयूर, कंकण, कटिसूत्र तथा नूपुर धारण किये हैं।

अनेक पौराणिक ग्रंथों में शिव तथा विष्णु की महत्ता समान रूप से प्रतिपादित की गई है और इस भेद को समाप्त करने के लिए ही हरिहर की कल्पना की गई। मंदिर की उत्तरी दीवार पर अंकित हरिहर की प्रतिमा कलात्मक दृष्टि से अद्वितीय है। स्थापत्य खण्ड पर स्तंभ प्रकोष्ठ के मध्य चतुर्भुज हरिहर का दक्षिणांग शिव के तथा वामांग विष्णु के लक्षणों से अंकित है। शीर्ष भाग में दायीं तरफ जटामुकुट तथा बायीं तरफ किरिटमुकुट अलंकृत है। मुक्ताहार, चक्रकुंडल, केयूर, कंकण, उपवीत, कटिसूत्र, नूपुर, अधोवस्त्र तथा नीचे पैरों तक आवृतमाला धारण किए हैं। ऊपरी दायें हाथ में त्रिशूल तथा बाँयें हाथ में चक्र है। निचला दायाँ हाथ अभय मुद्रा में है तथा बायें हाथ में शंख लिए हैं। नीचे दायें तरफ नंदी तथा बायें तरफ मानव रूप में गरुड़ द्विभंग में स्थित है। एक तरफ अलंकृत शार्दूल सुशोभित है।

त्रिदेवों में ब्रह्मा को प्रमुख स्थान प्राप्त है। परन्तु ब्रह्मा की स्वतंत्र प्रतिमायें कम प्राप्त होती हैं। सूर्य मंदिर की पूर्वी दीवार में ब्रह्मा त्रिमुखी है, समभंग मुद्रा में प्रदर्शित हैं। उनके मस्तक पर जटाजूट तथा मुख पर दाढ़ी है। वे हार, कुंडल, केयूर, कंकण, कटिसूत्र, यज्ञोपवीत तथा अधोवस्त्र धारण किये हैं। चतुर्भुजी ब्रह्मा के ऊपरी दायें हाथ में स्तुक तथा बाँयें हाथ में वेद है। निचला दायाँ हाथ अक्षमाला सहित वरदमुद्रा में है तथा बायें हाथ में कमंडल है। नीचे दायें तरफ हंस तथा बायें तरफ एक उपासक अंकित है।

विष्णु को जनसामान्य में लोकरक्षक, लोकरंजक तथा लोकपालक माना जाता है। मूर्तिकला में विष्णु के दस अवतारों का अंकन मिलता है। विष्णु की वराह, नृसिंह, वामन, बलराम, त्रिविक्रम, विश्वरूप प्रतिमा, हयग्रीव हरिहर आदि की स्वतंत्र प्रतिमायें मूर्तिकला में प्रचुरता से प्राप्त होती है।

रहली के सूर्य मंदिर के गर्भगृह में विष्णु समभंग में प्रतिष्ठित है। चतुर्भुजी हैं, उनके मस्तक के पीछे प्रभामंडल है जिसके दोनों ओर विद्याधर युगल अंकित हैं। वे किरिट मुकुट, कुंडल, मुक्ताहार केयूर, कंकण, उपवीत, कटिसूत्र, अधोवस्त्र तथा नूपुर पहने हैं। उनके ऊपरी दायें हाथ में पद्म तथा निचले

हाथ में गदा है। ऊपरी दायें हाथ में शंख तथा निचले हाथ में चक्र है। एक परिचारिका तथा उपासक अंकित है।

दूसरी प्रतिमा भी चतुर्भुजी विष्णु की है। समभंग मुद्रा में है। प्रतिमा किरिट मुकुट, कुंडल, ग्रेवेयक, हार, केयूर, कंकण, उपवीत, कटिसूत्र, वनमाला तथा नूपुर पहिने है। ऊपरी दायें हाथ में पद्म तथा बायें हाथ में चक्र है निचले दायें हाथ में गदा तथा बायें हाथ में शंख है। नीचे संभवत: गरुड़ प्रदर्शित है।

विष्णु के साथ अनेक अवसरों पर लक्ष्मी को प्रदर्शित किया जाता है। मंदिर में पूर्व तथा पश्चिमी दीवार पर लक्ष्मी तथा विष्णु स्तंभ प्रकोष्ठ के मध्य आलिंगनरत प्रदर्शित है। चतुर्भुजी विष्णु के दायें हाथ में गदा तथा बायें हाथ में चक्र है। निचला दायाँ हाथ कलिका लिए हुये हैं तथा बायें हाथ से देवी को अंक पाश के लिए हुए है। देवी द्विभुजी है। देवी का दायाँ हाथ विष्णु जी के कंधे पर है तथा बायें हाथ में सनाल कमल लिए हैं। विष्णु किरीट मुकुट, कुंडल, ग्रेवेयक, केयूर, कंकण, उपवीत, कटिसूत्र, वनमाला, नूपुर तथा अधोवस्त्र पहने हैं। लक्ष्मी जी के शिरो भाग पर अलंकृत मुकुटाकार केश सज्जा है। वे कुंडल, मुक्ताहार, केयूर, कंकण, कटिसूत्र, नूपुर, उत्तरीय तथा अधोवस्त्र पहिने हैं। गज, शार्दूल तथा मकर मुख अलंकरण दिखाई देता है।

एक अन्य लक्ष्मी नारायण की प्रतिमा है जो अपेक्षाकृत कम अलंकृत है। विष्णु तथा लक्ष्मी पारंपरिक तथा आयुधों से सुशोभित आलिंगरत है। विष्णु अभय मुद्रा में दिखाये गये हैं पास में मानव रूप में गरुड़ का अंकन है।

सूर्य मंदिर की पूर्वी दीवार पर चतुर्भुजी नारायणों समभंग स्थानक मुद्रा में ध्यानस्थ है। चतुर्भुजी देवी के ऊपरी बायें हाथ में गदा तथा दायें हाथ में चक्र है। निचला दायाँ हाथ अभय मुद्रा में है तथा बायें हाथ में शंख है। शार्दूल का अंकन दिखाई देता है।

सरस्वती विद्या की अधिष्ठात्री देवी मानी जाती हैं। मूर्तिकला में सरस्वती का अंकन प्राय: स्वतंत्र रूप से कम मिलता है। सूर्य मंदिर की उत्तरी दीवार पर चतुर्भुजी सरस्वती का अंकन है। चतुर्भुजी देवी के ऊपरी दायें हाथ में अक्षमाला तथा नीचे के हाथ में पुस्तक है। शेष दोनों हाथों में वीणा लिए हुए हैं। देवी के पैरों के समीप मृग सदृश पशु अंकित हैं। देवी के साथ वाहन मृग अंकन अत्यंत विलक्षण है।

सूर्य मंदिर को पृष्ठ दीवार पर चामुंडा का अंकन शिल्प शास्त्रीय लक्षणों से परिपूर्ण है। देवी के मस्तक पर अलंकृत केश सज्जा है। वे सर्प कुंडल, ग्रेवेयक स्तनहार, कटिसूत्र, मुंडमाल तथा नूपुर पहिने हैं। देवी कृश तथा दिग्वस्त्रा हैं। देवी के विशाल नेत्र भयानक रूप से बाहर की ओर निकले हुए हैं। मुख पर क्रूर मुस्कान है तथा तीक्ष्ण दाँत बाहर की ओर निकले हुए हैं। देवी के ऊपरी दायें हाथ में खंडित खट्वांग तथा निचले हाथ में कपाल पात्र लिए हुए प्रदर्शित है। ऊपरी बायें हाथ की तर्जनी विस्मय भाव प्रकट करते हुए ठुड्डी पर है तथा निचले हाथ में खंडित आयुध है। प्रेत तथा पिशाच नृत्योल्लास प्रकट करते हुए अंकित हैं। गज, शार्दूल तथा मरुरमुख अलंकरण है।

सूर्य मंदिर की दक्षिणी दीवार पर चतुर्भुजी देवी द्विभंग में प्रदर्शित है। देवी के सभी हाथ तथा आयुध खंडित हैं। देवी के मस्तक पर केश सज्जा है। वे मुकुट, हार, स्तनसूत्र, केयूर, कटिसूत्र, मुंडमाल तथा अधोसूत्र पहिनी है। नीचे देवी के दायें पैर के समीप वाहन सिंह अंकित है।

रहली के सूर्य मंदिर की दीवारों तथा पथस्तभों पर विभिन्न दिक्पालों की प्रतिमायें अंकित है। कुछ प्रतिमायें कोणक प्रस्तरों पर अंकित है तथा कुछ शिल्पखंडों पर निर्मित हैं। इनमें दिक्पाल इंद्र, वरुण, कुबेर, यम, निऋति, अग्नि तथा वायु का अंकन उत्कृष्ट है।

नवग्रहों का अंकन मंदिर के ऊपरी द्वार भाग उनसे संबंधित वाहनों के साथ प्रदर्शित किया गया है। यद्यपि सूर्य मंदिर की अधिकांश अप्सरा प्रतिमायें खंडित तथा क्षरित है फिर भी कला की दृष्टि से वे अमूल्य धरोहर है। रहली सूर्य मंदिर में आठ विभिन्न अप्सराओं की प्रतिमा प्रदर्शित की गई हैं। इन प्रतिमाओं में अत्यंत आकर्षक हस्तमुद्रा, पादमुद्रा, अलंकरण, केशविन्यास, वस्त्र विन्यास तथा नारी सौन्दर्य की मृदुता, लावण्यता तथा सुकुमारिता परिलक्षित होती है।

मंदिर की दक्षिणी दीवार पर प्रयुक्त शिल्प पट्ट पर राजाओं के आखेट के दृश्य अंकित किये गये हैं। शिल्प पट्ट पर आखेट के लिए गज पर सवार राजा तथा सैनिकों का अंकन अत्यंत कलात्मक ढंग से किया गया है। प्रारंभ में भाला लिए हुए तीन पदातिक सैनिकों के पीछे अश्व पर आरूढ़ सवार अंकित है। अश्व के साथ-साथ तीन कुत्ते भी दौड़ रहे हैं। अश्वारोही नायक के पीछे ढाल तथा तलवार लिए अंग रक्षक पीछे की ओर देखते हुए अंकित हैं। मध्य में विशालकाय हाथी पर तीन आकृतियाँ संभवत: गर्दन पर महावत, बीच में शस्त्रधारी राजा तथा किनारे पर परिचारक बैठे हुए अंकित हैं। दो सैनिक ढाल, तलवार तथा भाले से सुसज्जित हैं। अंत में आमने-सामने खड़े हुए दो सैनिक कटार लिए हुए, युद्ध अभ्यास करते हुए अंकित हैं। एक सैनिक के हाथ में एक वन्य पशु लटका हुआ है।

रहली में सूर्य मंदिर के अतिरिक्त दिगम्बर जैन मंदिर पंढरीनाथ का मंदिर तथा प्राचीन किला आदि अन्य महत्वपूर्ण दर्शनीय स्थल हैं। अंत में हम कह सकते हैं कि नदी के तटवर्ती भू-भाग पर स्थित होने के कारण यह नगर कृषि, उद्योग तथा व्यापार का केन्द्र रहा। यह नगर नगरीय जीवन, आर्थिक सम्पन्नता तथा सांस्कृतिक गरिमा के कारण सदैव से धार्मिक चेतना का केन्द्र बना रहा। यद्यपि रहली का प्राचीन सूर्य मंदिर का कला वैभव अशत: ही उपलब्ध नहीं हैं। संकलित अवशेषों से पुनरचित कला का यह उत्कृष्ट एवं अद्वितीय स्मारक राज्य शासन द्वारा संरक्षित है। प्रकृति के क्रूर प्रहारों से निरंतर जूझता हुआ यह कलादीप कुछ अंशों में अब भी आलोकित है। भावी पीढ़ियों के लाभ के लिए इस धरोहर को सुरक्षित रखना हमारा कर्तव्य है।

-सहा0प्राध्यापक, प्रा0भा0इतिहास सं0 एवं पुरातत्व
शासकीय जे0यो0छ0ग0 महाविद्यालय रायपुर, छ0ग0 卐

बुन्देलखण्ड में प्रचलित लोकोक्तियों में अनुभवजन्य ज्ञान

-डॉ. यशवन्त सिं

जन-सामान्य के बीच मौखिक परम्परा के रूप में प्रचलित साहित्य में 'लोकोक्तियों' का महत्वपूर्ण स्थान है। लोकोक्तियों को लोक यानि जनसामान्य की उक्ति अथवा कथन कहा जाता है। लेकिन यह उक्ति या कथन सामान्य न होकर विशिष्ट होता है। सामान्य कथन तो वार्तालाप होते हैं, जिनका प्रयोग दिन-भर के परस्पर कार्य व्यवहार में किया जाता है। लेकिन कुछ विशिष्ट कथन जो समय विशेष की परिस्थितियों के अनुरूप निश्चित उद्देश्य से कहे जाते हैं, उक्ति कहलाते हैं। अत: वह सुविचारित कथन जो सूत्र रूप में प्रभावोत्पादक ढंग से किसी परिस्थिति विशेष में किसी उद्बोधन के रूप में कहा जाय, तो वह उक्ति कहलाता है। यह कथन यदि जनसामान्य के बीच प्रचलित मिले तो लोकोक्ति हो जाता है।

लोकोक्ति को 'कहावत' भी कहा जाता है। किसी व्यक्ति द्वारा कहा गया कथन जब अपनी अभिव्यक्ति के अनुरूप सत्य का प्रतिपादन करता है तथा उसे अन्य लोग भी अपना लेते हैं, तो उसे कहावत कहा जाता है। अत: लोकोक्ति किसी अनुभव सिद्ध व्यक्ति या पूर्वजों द्वारा समय विशेष की परिस्थिति के अनुरूप कहा गया सत्य वचन या कथन है। जिसमें उनके चिरसंचित अनुभवों का सार समाहित रहता है तथा किसी अवसर विशेष के लिए उपयोगी शिक्षा अन्तर्निहित होती है। व्यक्ति के चरित्र में सुधार लाने, उसके संकटों का समाधान करने तथा उसके हित-लाभ को बनाये रखने का भाव लोकोक्तियों में समाहित रहता है। शिल्प की दृष्टि से लोकोक्तियों की बनावट पद्य व गद्य दोनों रूपों में मिलती है। किसी-किसी लोकोक्ति के साथ उसकी पृष्ठभूमि में घटित घटना का भी उल्लेख मिलता है।

बुन्देलखण्ड के ग्रामीण लोग बात-बात में लोकोक्तियों का प्रयोग करते हैं जिनमें कोई अर्थ गर्भित भाव या विचार निहित होता है। इनमें यहाँ के लोगों का वाक्चातुर्य झलकता है। वास्तव में लोकोक्तियाँ किसी समाज में युगों-युगों से संचित अनुभव सिद्ध ज्ञान की निधि है। जिनको पुस्तकीय ज्ञान के अभाव में उस समाज के व्यक्ति मौखिक परम्परा में सुरक्षित रखते हैं। इसलिए लोकोक्तियाँ सरल, संक्षिप्त तथा सूत्ररूप में होती हैं, जिससे उनको आसानी से याद रखा जाता है। जनसामान्य के बीच लोकप्रियता एवं लोकरंजकता उनका स्वाभाविक गुण है। इनकी जनसामान्य के जीवन की निरीक्षणगत अनुभूति एवं प्रभावशीलता सर्वविदित है। युगों-युगों से मानव समाज ने अपने अनुभवों से जो ज्ञान अर्जित किया है। उस ज्ञान को ये लोकोक्तियाँ सूत्ररूप में सुरक्षित रखती हैं तथा अवसर विशेष में जनसामान्य इनका प्रयोग करके लाभान्वित होता है।

लोकोक्तियों में निहित अनुभवजन्य ज्ञान का क्षेत्र सामान्य जन के दैनन्दिन जीवन के विविध क्षेत्रों में व्याप्त मिलता है। बुन्देलखण्ड कृषि प्रधान क्षेत्र रहा है। यहाँ के लोगों ... जीविकोपार्जन का प्रमुख साधन कृषि कार्य है। इसीलिए लोग... के जीवकोपार्जन के साधनों में कृषि कार्य को श्रेष्ठ माना गया... इसी को लक्षित करती एक लोकोक्ति मिलती है-

'उत्तम खेती मध्यम बान, निषद चाकरी भीख निदान'

बुन्देलखण्ड के लोकजीवन में प्रकृति एवं कृषि विज्ञान से सम्बंधित बहुत सारी लोकोक्तियाँ प्रचलित मिलती हैं। जिनसे मौसम विज्ञान की उपयोगी जानकारी प्राप्त होती हैं। किसान भाईयों को यह पता चलता है कि किस समय में कौन-सा कृषि कर्म करने से अच्छी फसल की प्राप्ति होगी। इस तरह की लोकोक्तियों में घाघ-भड्डरी का नाम प्रमुखता से आता है। घाघ के नाम से प्रचलित एक लोकोक्ति में कहा गया है कि एक क्षण में पुरवाव पवन चले तथा दूसरे क्षण पछुआ पवन बहने लगे, क्षण-क्षण में बवंडर उठे तथा बादल में बादल जाकर मिल जाये तो समझो कि ऐसी अपार वर्षा होगी, जिससे धरती जलमग्न हो जायेगी-

'औआ बौआ बहै बतास, तब होवे बरखा की आस।
जो बादर-बादर में जाय, घाघ कहैं जल कहाँ समाय।।

लेकिन इसके विपरीत यदि दिन में बादल होते हो तथा रात को तारे निकले तो ऐसी हालत में किसान की स्त्री अपनी पति से कहती है कि हे कंत (स्वामी) हल जोतना छोड़कर ऐसी जगह चलो, जहाँ ये छोटे-छोटे बच्चे जी सकें अथवा इनके खाने-पीने का प्रबन्ध हो सके। अर्थात् आगे आने वाला समय अच्छा नहीं होगा, पानी नहीं बरसेगा, अकाल के लक्षण हैं। इसलिए व्यर्थ के श्रम में समय न गँवाकर समय रहते जीविका की व्यवस्था कर लेनी चाहिए-

'दिन को बादर रात को तारे, चलो कंत जहँ जीवें बारे'

इसी से मिलती जुलती एक दूसरी उक्ति मिलती है-

सावन में पुरबइया, भादों में पछियांव।
हरवाहे हर छोड़ दें, लरिका जाय जियाव।।

अर्थात् यदि सावन के महीने में पूरब दिशा से हवा चले तथा भादों के महीने में पछुआ हवा चले तो वर्षा न होने के कारण अकाल पड़ेगा। अत: किसान तू खेत जोतना छोड़ दे, व्यर्थ में श्रम न कर तथा और कहीं पर जाकर जीविकापार्जन करके अपने बच्चों का पालन-पोषण कर।

कृषिकार्य से संबंधित एक लोकोक्ति में कहा गया है कि खेती करने के लिए खेत का क्षेत्रफल भले ही छोटा हो लेकिन उसमें यदि अधिक परिश्रम किया जाय तो राम की कृपा से मनुष्य को कभी घाटा नहीं होता। अर्थात् अधिक परिश्रम से कम खेतों में भी पर्याप्त पैदावार प्राप्त की जा सकती है-

खेती तो थोरी करै, मिहनत करै सवाय।

राम कहें बहि मानुष को, टोटा कबौ न आय।।

यह तो सर्वविदित है कि खेत में खाद डालने से फसल अच्छी होती है। लेकिन खाद को आषाढ़ के महीने में डालने से खेत में फसल खूब होती है-

आषाढ़ में खाद खेत में जावै, तब भरि मूठि राना पावै।

किसान को सूखे खेत में ही जुताई करनी चाहिए, गीले खेत में जुताई नहीं करनी चाहिए। नहीं तो खेत की मिट्टी में दरारें पड़ जाती हैं तथा खेत में डाले गये बीज का अंकुरण भी नहीं होता।

कच्चा खेत न जोतै कोई, नाहीं बीज न अंकुर होइ।

खेती में पहले बुवाई करने वाला किसान आगे-आगे ही रहता है। जबकि पीछे बोई गई फसल बड़े भाग्य से तैयार होती है-

आगे की खेती आगे-आगे, पीछे की खेती बड़े भागे।

खेत में बीज को गहरे बोना चाहिए। इससे फसल अच्छी होती है तथा घर का अन्न भण्डार भर जाता है-

गहिरन जोतै बोवै धान, सोधर कुठिला भरे किसान।

खेत के लिए बीज का चुनाव जमीन की स्थिति के अनुसार करना चाहिए। इससे पैदावार अच्छी होती है-

गेहूँ अच्छा नहर का, चावल अच्छा डहर का।

अर्थात् नहर के किनारे स्थित खेत में गेहूँ की फसल अच्छी होती है। जबकि निचली जमीन पर स्थित खेत में चावल की फसल अच्छी होती है। किसान को इसका ध्यान रखकर बीज का चुनाव करना चाहिए तथा अच्छी फसल प्राप्त करनी चाहिए।

बुन्देलखण्ड के निवासियों में वर्ष की विभिन्न ऋतुओं के अनुसार खान-पान का विधान मिलता है। आयुर्वेद में इसका सम्यक विवेचन मिलता है। किन्तु यहाँ पर बहुत सी ऐसी लोकोक्तियाँ प्रचलित हैं, जिनमें लोगों के स्वस्थ रहने की विधि बतलायी गई है। इन्हें जनसामान्य के 'नीरोग रहने के नुसखे' भी कहा जाता है। एक लोकोक्ति में कहा गया है कि जो व्यक्ति सुबह उठ कर मोटी दातून से दाँत साफ करता है, बासे पानी का सेवन करता है तथा रात्रि के भोजन में दूध पीता है। उसके घर वैद्य कभी नहीं जाता अर्थात् वह कभी बीमार नहीं पड़ता है-

मोटी मुखारी जो करै, दूध बियारी खाय।
बासी पानी जो पियै, तेहि घर वैद न जाय।।

एक अन्य लोकोक्ति के अनुसार-जो व्यक्ति सुबह उठकर बासी पानीस पीता है, भुंजी हर्र का सेवन करता है तथा रात्रि के भोजन के समय दूध को ग्रहरण करता है। वह व्यक्ति हमेशा स्वस्थ रहता है-

नित्रें पानी जे पियें, हर्र भूँज कें खाय।
दूदन ब्यारु जो करें, तिन धर वैद न जाय।।

एक लोकोक्ति में कहा गया है कि जो व्यक्ति ठंड़े पानी से नहाता है तथा गर्म खाना खाता है। वह व्यक्ति भी कभी बीमार नहीं पड़ता है-

ठंडौ नहाय, तातौ खाय, ताके बैद कबऊँ नई जाय।

एक अन्य लोकोक्ति में वर्णित है कि जो व्यक्ति हर्र, बहेड़ा व आँवला के चूर्ण का सेवन घी-शक्कर के साथ करता है। वह व्यक्ति अत्यन्त शक्तिशाली हो जाता है-

हर्र, बहेरौ, आँवरौ, घी शक्कर सों खाय।
हाँथी दावै काँख में, सात कौस लौ जाय।।

लोकोक्तियों में ऋतु विशेष में कुछ वस्तुओं का सेवन वर्जित किया गया। क्योंकि इनके सेवन से शरीर को लाभ होने की बजाय बीमार पड़ने की संभवना रहती है-

चैते गुर, बैसाखे तेल, जेठे मउआ, असाढ़ै बेर।
साउन दुध, भादौ दही, क्वांर करैला, कार्तिक मही।
अगहन जीरौ, पूसै धना, माघै मिसरी, फागुन चना।
इतनी चीजें खैहो जभईं, मरहौ नई तो परहौ सही।।

एक अन्य लोकोक्ति में कहा गया है-क्वांर महीने में करैले का, चैत में गुड़ तथा सावन में पत्तेदार साग का सेवन नहीं करना चाहिए। क्योंकि इससे पास का पैसा खर्च तो होगा ही, साथ ही शरीर में बीमारी भी लग जायेगी-

क्वांर करैला, चेत गुड़, सावन साग न खाय।
कौड़ी खरचे गाँठ की, रोग बिसाहन जाय।।

इस तरह भोजन में पथ्यापथ्य का विधान कर ये लोकोक्तियाँ स्वास्थ्य के नियमों का पालन करना सिखलाती हैं।

बुन्देलखण्ड में शकुन विचार एवं लोक नीति संबंधी बहुत सारी लोकोक्तियाँ प्रचलित मिलतीं हैं। जिनमें अन्तर्निहित भावों को आत्मसात करके व्यक्ति संकटों से दूर रहता है तथा सुखप्रद, आनन्दमयी जीवन व्यतीत करता है। शकुन विचार संबंधी एक लोकोक्ति में भविष्यवाणी मिलती है कि यदि किसी वर्ष के एक महीने में पाँच शनिचर, पाँच रविवार तथा पाँच मंगलवार पड़ जायें तो जानो कि उस वर्ष सब टूटकर जमीन में गिरेगा अर्थात् कोई बड़ा राजा मरेगा तथा अन्न भी मँहगा होगा-

पाँच शनिचर, पाँच रवि, पाँच मंगल जो होय।
छत्र टूटि धरनि परै, अन्न भी मँहगा होय।।

यात्रा प्रारंभ करते समय क्या-क्या दिखलाई पड़ना शुभ माना जाता है। इसी का वर्णन एक लोकोक्ति में मिलता है-

नारि सुहागिन जल घट लावै, दधि मछली सन्मुख सों आवै।
सन्मुख धेनु पियावै बाछा, यही सगुन है सबसे आछा।।

अर्थात् यात्रा शुरु करते समय यदि पानी का भरा घड़ा लिए सुहागिन स्त्री मिले, दही व मछली के सामने से दर्शन हो तथा सामने गाय अपने बछड़े को दूध पिलाती दिखे तो ये लक्षण अत्यन्त शुभ हैं। यात्रा प्रारंभ करने का यही शुभ मुहूर्त है।

इसके विपरीत एक लोकोक्ति में कहा गया है कि यदि यात्रा शुरु करते समय कुत्ता अंग फड़फड़ाने लगे या भूमि पर लोट जाये। तो जिस कार्य के लिए जा रहे हैं, वह सिद्ध नहीं होगा। अतः इसे अपशुकुन समझा जाता है-

स्वान धुने जो अंग, अथवा लोटे भूमि पै।
तो निज कारज भंग, अति ही असगुन मनिये।।

इसी तरह छींक आने से संबंधित एक लोकोक्ति में भड्डरी का कथन है-

सन्मुख छींक लड़ाई भाखै, पीठ पाछिली सुख अभिलाषै।

छींक दाहिनी धन को नासै, बाँई छींक सुख सदा प्रकासै।
ऊँची छींक सदा शुभ जानो, नीची छींक अधिक भय मानो।
आपुन छींक महा दुखदाई, कहैं भड्डुरी ज्योतिषी बनाई।।

अर्थात् सामने के व्यक्ति द्वारा छींकने से लड़ाई, पीठ पीछे छींकने से सुखदाई, दाहिने छींकने से धन-हानि, बाँयी ओर की छींस से सुख, ऊँची छींक से लाभ, नीचे छींक से हानि तथा अपनी एक छींक महादुखदाई होती है। ऐसा भड्डुरी ने ज्योतिषियों के अनुसार कहा है।

बुन्देलखण्ड के लोकजीवन में बहुत सी ऐसी लोकोक्तियाँ प्रचलित मिलतीं हैं, जिन्हें ग्रामीण लोगों का नीतिशास्त्र कहा जाता है। एक लोकोक्ति में कहा गया है कि आलस, नींद से किसान का, खाँसी से चोर का, हँसी-खुशी से सन्यासी का तथा दासी रखने से ब्राह्मण का विनास हो जाता है। अत: इस चारों को इन-इनसे दूर रहना चाहिए।

आलस, नींद किसानें नासै, चोरैं नासै खाँसी।
हँसी खुसी सन्यासी नासै, विप्रै नासै दासी।।

एक लोकोक्ति के अनुसार-ओछे मंत्री की सलाह से राज्य नष्ट हो जाता है। काई पड़ने से तालाब नष्ट जो जाता है। ज्यादा शान साहिबी दिखाने से आपस में फूट पड़ जाती है। घाघ का यह कथन है कि बिवांई पड़ने से पैर नष्ट जो जाता है-

ओछौ मंत्री राज बिनासै, ताल बिनासै काई।
सान साहिबी फूट बिनासै, घघ्घा पैर बिवाँई।।

एक लोकोक्ति में बिना बैलों की खेती करना, बिना भाईयों के झगड़ा करना तथा बिना पत्नी के घर बसाना असंभव माना गया है। जो व्यक्ति ऐसा कहता है, वह झूठा है-

बिन बैलन खेती करै, बिन भैयन के रार।
बिना दुलैया घर करै, चौदह साख लूबार।।

एक लोकोक्ति में यह सीख दी गई है कि धन देकर धरती को बचाना चाहिए। अगर प्राणों पर आ पड़े तो धरती देकर प्राणों को बचाना चाहिए। परन्तु प्रतिष्ठा पर आँच आये तो प्राण देकर भी प्रतिष्ठा को बचाना चाहिए-

धन दै धरती राखिये, धरती दैकें प्रान।
प्रान जायें पत रहत है, तो दै दीजै प्रान।।

एक लोकोक्ति में कहा गया है कि व्यक्ति को एक स्थान पर बैठे न रहकर चलते-फिरते रहना चाहिए। इससे उसे लाभ ही प्राप्त होगा। क्योंकि चलती फिरती बिल्ली बिना भैंस बाँधे दूध घी का सेवन करती है-

चलिये फिरिये बैठ न रहये, करिये गोड़ापाई।
दूध दही नित खाय बिलैया, कब-कब भैंस बिसाई।।

इसी तरह एक लोकोक्ति में व्यक्ति के सात तरह सुखों का वर्णन किया गया है-

पहलौ सुक्ख निरोगी काया, दूजौ सुख कछु घर में माया।
तीजौ सुख कुलवन्ती नारी, चौथौ सुख सुत आज्ञाकारी।
पाँचव सुक्ख राज सम्माना, छठऔ सुक्ख कुटुम्बी नाना।
साँतव सुक्ख धरम रति होई, ता हित स्वर्ग धरनि पर होई।।

अर्थात् व्यक्ति का पहला सुख उसका [illegible]गी शरीर है। दूसरा सुख घर में कुछ धन का होना है। तीसरा सुख शीलवती स्त्री, चौथा सुख आज्ञाकारी पुत्र, पाँचवा सु[illegible] राज सम्मान की प्राप्ति, छठवाँ सुख भरा पूरा परिवार का होना तथा सातवाँ सुख धर्म से लगाव हो तो व्यक्ति को पृथ्वी पर ही स्वर्ग के समान आनन्द की प्राप्त हो जाती है।

इस तरह बुन्देलखण्ड के निवासियों के जीवन में लोकोक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ के अनपढ़ ग्रामीण लोगों का ये मौखिक ज्ञान कोश है। जिनका वे युगों-युगों से संचय करते आये हैं। समय के अनुसार नये-नये अनुभवों से युक्त लोकोक्तियाँ इस मौखिक ज्ञान कोश में जुड़ती रहीं हैं। यहाँ पर लोकोक्तियों का प्रयोग रामायण, महाभारत आदि शास्त्रों की तरह किया जाता है। क्योंकि अनपढ़ लोगों ने शास्त्रों का अध्ययन तो किया नहीं होता। अत: समय विशेष या परिस्थिति विशेष आने पर वे लोग लोकोक्तियों का प्रयोग आसानी से करते हैं। तथा अनेक प्रकार की समस्याओं का समाधान सुगमता पूर्वक कर लेते हैं।

बुन्देलखण्ड में प्रचलित इन लोकोक्तियों में यहाँ के लोगों के रहन-सहन, रीति-निवास, लोक-विश्वास एवं स्थानीय संस्कृति के विविध पक्षों की लोकरंजकता से युक्त सुन्दर अभिव्यक्तियाँ मिलती हैं। जिनमें कृषि, ऋतु, प्रकृति, खान-पान, आचार विचार, यात्रा, शकुन, स्थानीय परम्पराएँ, रिश्ते नाते, जातीय स्वभाव, हानि-लाभ, पशु-पक्षी, स्थान विशेष की विशेषताओं इत्यादि से संबंधित विषयों का अनुभवजन्य ज्ञान संचित रहता है।

ज्ञान का प्रमुख लक्षण यदि लोगों को दृष्टि प्रदान करना, मार्ग की बाधाओं का हटाना तथा जीवन को कल्याणकारी बनाना है, तो बुन्देलखण्ड के ग्रामीण जीवन में प्रचलित ये अनुभवजन्य लोकोक्तियाँ अपनी भूमिका का सदियों से निर्वहन करती आ रही हैं तथा ऐसी आशा की जा सकती है कि आगे भी इनकी उपयोगिता बरकरार रहेगी।

सहायक पुस्तक सूची-

१. बुन्देलखण्ड का लोकजीवन, अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' नमन प्रकाशन, मण्डपम् राठ रोड, उरई (उ०प्र०) द्वितीय संस्करण २००४ ई०

२. बुन्देली लोक साहित्य, डॉ. रामस्वरूप श्रीवास्तव 'स्नेही' रंजन प्रकाशन, बाँकेविलास, सिटी स्टेशन मार्ग, आगरा उ०प्र०, लेखक का वक्तव्य २० दिसम्बर १९७५ ई०।

३. इन्द्रप्रस्थ भारती (लोक संस्कृति विशेषांक), सम्पादक डॉ. रामशरण गौड़, हिन्दी अकादमी, दिल्ली, जुलाई सितम्बर १९९८ ई० अंक।

४. घाघ और भड्डुरी की प्रसिद्ध लोकोक्तियाँ, विवेक मिश्रा, यमुना पुस्तक भण्डार, मथुरा उ०प्र० २००१ ई०।

५. कहावतों में लोकोक्ति, अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद' नमन प्रकाशन, उरई उ०प्र०, प्रथम संस्करण २००७ ई०

६. लोकसाहित्य की भूमिका, डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, साहित्य भवन (प्रा०) लिमिटेड, इलाहाबाद, पंचम संस्करण १९९२ई०।

७. बुन्देली लोक कहानियाँ, शिवसहाय चतुर्वेदी, अन्तर चन्द कपूर एण्ड सन्स, दिल्ली, लेखक का निवेदन, स्वतंत्रता दिवस १९५५ ई०

-एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
मणिपुर विश्वविद्यालय, काँचीपुर इम्फाल ७९५००३

उच्चकक्न की अथाई

-रामस्वरूप पाण्डेय

ठाकरन की गड़ी के बगल में उनकौ बगर हतौ। औऊ से आँगें सुक्के बरेदी कौ घर। ऊकौ नाव तौ सुकदीन हतौ पै सब सुक्के सुक्के कत ते। गाँव भर के ढोर चराउत तौ सो बरेदी कुवाउत तौ। तीन लरकन पै एक मौड़ी भई पान कुंवर। ऊसें सब पनको कत ते। सुक्के बरेदी ठाकुर साब की गइयाँ चराउत तौ। पैलईं गाँव भर के ढोर चराउत तौ। पै गोचर जुत गई और कैऊ जने चराई नइँ देत्ते सो ऊने छोड़ दई। अब वौ गड़ी की गोसली करत और उनकी गइयाँ चराउत। ऊकी घरबाई गोबर डार के कंडा-मंडा पाथत, बगर झारत। ठाकुर साब कें भौत दिनन तक कौनऊँ संतान नई भई। उन्हें बिना मौड़ी-मौड़न कें चैन नई परत्तौ सो उनने अपनौ भनेज राख लऔ। नाव तौ महेन्द्र हतौ पै रज्जू कत्ते। पनको की मताई गड़ी में मठा भाँवे जात्ती सो संगै-संगै पनको जाय। गड़ी में रज्जू के संगे पनको खेलै। हलके से दोई जनें संगै-संगै खेलैं। कभऊँ वे पनको के संगै बगर में खेलैं। पनको के संगै गोबर उठवाँय। दिन भर पनको के संगै खेलवौ बड़े राजा खों अच्छौ नईं लगत तौ, पै वे कछू नई कत्ते। धीरें-धीरें दोई जनें तनक बड़े हो गये। रज्जू स्कूल में पढ़वे जान लगे। गाँव में पाँच तक स्कूल हतौ। रज्जू ने कई चलौ पनको स्कूलै पढ़वे। पनको ने कई हमें तो मताई के संगै काम कन्ने। गोबर डारने, झारने, पानी भरने। लरका आ पढ़त। बिटियाँ कितै पढ़तीं। तुमईं पढ़ौ। रज्जू ने कई-चलौ, वे माटसाब कुन मारत हैं। उतइँ खेलबू। हमलौ दो सिलेटें हैं। हम आदी बरती दे दैहैं। पनको ने कई-हम नईं चलत। वे माटसाब हमें भगा दें तौ, रज्जू ने कई-वे न भगायँ। तुम चलौ तौ। ऐसें पुटय पुटया के रज्जू पनको खों स्कूल लुवा गऔ। चार छै दिना गई सो मास्टर ने ऊकौ नाव लिख लव। रज्जू ने सिलेट दै दई। कछू दिनन मताई बाप ने रोकौ, पै मास्टर घरै आकै बुला लै जाँय। ऐसैं-ऐसैं पनको पाँच तक पढ़त रई। पढ़वे में पनको सबसे होशयार हती। सबरे लरका ऊकी नकल करत्ते। ओई सें गणित के सवाल पूछत्ते। कक्षा पाँच में बा पूरे स्कूल में फस्ट पास भई। रज्जू कौ दूसरौ नम्बर आव। पाँच पास करकें रज्जू अपने घरै मताई नौ चले गये। उनके गाँव हरपुरा में मिडिल तक स्कूल हतौ। वे बीच-बीच में छुट्टियन में पनको सें मिलवे आउत्ते।

एक बेर वे अपनी मताई के संगै साउन खों आय। एक दिना गाँव की जगदम्मा नौ गाँव भर की क्वाँई जिमाई गईं। सबखों गुरकौ सरबत औ गुडला खुआव। एक एक आना पैसा दये। पनको ने अपनौ एक आना मताई खों नईं दव। गाँव में साउन की हाट लगी सो ऊने एक आना में एक राखी लई और चकरी भौंरा लऔ। अपने लिंगा दुकाकें धरें रई। जब रज्जू सावन खों खेलवे आव, सो ऊनें रज्जू खों अकेले में राखी बाँद दई और चकरी औ भौंरा दै दव। ऊकी मताई ने खावे एक खड़पूरी दई ती, सो ऊने नईं खाई। राखी बाँद कें रज्जू खों खावे दै दई। रज्जू ने राखी बंदा कें अकेले में पाँव पर लये। पनको ने भौत रोकौ पै वे न मानै।

भाग सें पनको कौ व्याव हरपुरा में भव। व्याव के एक साल पाछें चलाव भव। पनको हरपुरा में पौंची। पनको खूब बड़ो घूँघट डारै रबैं। एक दिना रज्जू (महेन्द्र) दोरे से कड़े। पनको ने देखौ सो पौर में से कड़के बातें करन लगी। इतने में ऊकी सास आई, सो बातें करतन देखकें पाछें से लौट गई। ऊने भीतर जाकें अपने आदमी सें कई। जा कैसी बऊ आई। आज बा बायरें महेन्द्र रज्जू सें हँस-हँस कें बातें कर रई ती। हमें तौ आग लग गई। बऊ अच्छे चलन की नईं कुआई। हमाव ऊदल तौ सूदौ सादौ है? जा छाकट बऊ आ भाग में बदी ती। बताव कोऊ देख लै तौ का कै? कीसें कयें? अपनी जाँग उगारें अपने लाजन मारैं। आठवीं पास करकें रज्जू अब बाहर पढ़वे गये। देवगढ़ में हाई स्कूल हतौ। जब ऐंतवार खों आवें तो कौनऊँ बहाने ऊदल के दोरैं आकें बैठ जायँ। फिर पीवे पानी माँगें। सो पनको दौर कें लोटा भर कें दै आवै। उतनई में दोई जनें कछू बतकारौ कर लेबें। पुरा मुहल्ला की जनीं मान्सन ने देखौ सो खुसुर-पुसुर होन लगी। जा कैसी बऊ आई। सयाने लोग लरकन सें हँस-हँस के बातें कर रई ती। तनकई सरम न लगी कै कोऊ देख लै तौ का कै। साँसऊँ कौ कलजुग आगव। औ भगवान, लोग लरकन सें हँस-हँस के बतकारौ कर रईती। घुरिया से दाँत काड़-काड़ कें। धीरें-धीरें बात सुलगत रई। लुगान लुगान में हौकें गाँव भर में जेई जेई चरचा। ठकरास के डरन के माँय कोऊ खोल कें नईं कबै।

ऊदल के घर के आँगें खूब लम्बौ चौंरौ मैदान हतौ। आंगे देव मराज कौ चौतरा, बड़ौ नीम, तनक दूर खूब बड़ौ मैदान। सबरे मौड़ी-मौड़ा उतई बचरी खेलबे आउत ते। बिटियाँ मगर कौ तला औ खुल-खुल मुठिया, नागन टापू। बन्न-बन्न के खेल।

महेन्द्र राजा ने एक दिना सबरे लरकन खों जोर कें कई के सबरे कबड्डी तौ खेलतईं हैं, अबकी बेर टूनामेन्ट में कबड्डी खेलबे जाने। पै पैलें खेलकें अच्छे-अच्छे जनें छाँटने आयँ। बस रोज खेल शुरू हो गव। महेन्द्र राजा केप्टन बन गये। ऊदल की पकड़ बेजोड़ हती, औ महेन्द्र राजा अच्छी, चड़ी मारत ते। महेन्द्र राजा ने कबड्डी के सबरे नियम सबकों समझा दये। दिसम्बर में हरपुरा में टूनामेन्ट भव। ऊमें कबड्डी में महेन्द्र राजा की टीम जीती। फिर तहसील में खेलबे गई सो उतै जीती। फिर जिला में गई। उतै बीसन कबड्डी की टीमें आईं तीं। सो एक-एक करकें सबकों जीतत गये। फिर फाईनल भव। ऊमें कलट्टर

साब आय औ एम०एल०ए० साब। फाईनल कौ खेल देखबे भारी भीड़ जुरी। जी बेरां महेन्द्र राजा लौटा की चड़ी मारें सो तारियाँ पिट जाँय। ऊदल की पकड़, ओ हो चिमानों चिमानों झपट्टा मारकें मगरा सी पकड़ मारै। एक नम्बर सें टीम जीत गई। एम०एल०ए० ने जीत की सील दई। हात मिलाव। कलट्टर ने कबड्डी के बस खिलाड़ियन खों सर्टीफिकेट दये। टीम खों एक हजार रुपईया मिले। जीत कें जब गाँव में आये तो भारी धूम-धाम सें जलूस कड़ौ। गड़ी सें कक्का जू आय। उनने सबखों मिठाई बाँटी। साबासी दई।

एक हजार रुपइयन में सबखों खिलाड़ियन की ड्रेस बनी। अब देव मराज नौं रोज लरका जुरन लगे। राजा महेन्द्र अध्यक्ष बने औ ऊदल उपाध्यक्ष। अब खेल कमेटी कौ विस्तार होन लगौ। एक दिना महेन्द्र ने कई-देखौ भैय्या हरौ। अपने गाँव की गैल में बीच में बसकारे के पानी सें कटकें भरका हो गव। चलौ सब जनें अपने-अपने घर सें गेंती फावरे लैकें उयै पूरकें एक सौ कर दयँ। सबने बात मान लई। गेंती फावरे लैकें सबरे लरका आ गये औ एक घंटा में अगल-बगल में पथरा लगाकें माटी पूरकें सीदी सोंसर सड़क सी बना दई। फिर हनुमान जी नौं जाकें सफाई करी। महेन्द्र ने चना, लायची दानें कौ भोग लगवाकें सबखों बाँटो।

एक दिना सबरे मौड़ी मौड़ा खेलकें भग गये। कछू जने रै गये सबरे लरका ऊदल कें गय। ऊके दोरें चौतरा पै बैठ गये। भीतर सें कछू बनबे की बास आई। महेन्द्र ने कई कायरे ऊदल, भीतर का आ बन रऔ? ऊदल नें कई। अबै मताई ने उर्दा दरेते, सो ऊकी चुनो पीस कें मताई ठडूला आ बना रई। घर की तिली कै तेल हो गऔ। फिर सबरने ने कई कायरे अकेलैं खालै का? हमन खों नईं खुआउत। ऊदल नें कई, को रोकें, चलौ भीतर आँगन में। सबरे आँगन में आ गये। फट्टी बोरा बिछा कें सबरे बैठ गये। ऊदल की मताई आई और महेन्द्र रांजा सें कई मोय तौ मालकन कौ डर आ लगत तौ, मन में तौ आ रईती कै ताते-ताते ठडूला और तिली डरी अदरैनी पपइया खुवा देवें। पै संकोच लगौ। काय सें कै अहीर आँय। अपुन ठाकुर औ जे दो तीन जने पुरेत, चौबे, तिवाई के लरका। कुजानें हमायँ खैं कै न खैं?

राजा महेन्द्र ने कई कायरे ऊदल ठाड़ौ का देख रव। ल्या जल्दी सें मौय मौं में पानी आ रऔ। मताई तौ बूड़ी आय उयै कन दो। ल्या जल्दी कर। ऊदल भीतर गव। फिर बायरें कड़कें कई कै, राजा तनक रुक जाव, भीतरै आदे, धना औ मिर्च की चटनी बट रई। बस बटई गई। अबै परस रये। तनक धीरज धरौ। महेन्द्र ने कई बैठौ तिवाई जू, चौबे जू, पुरेत जू। का देख रय? कुन तुमाव जनेऊ आ टूट रव। ऊदल तैं कोऊ खों बताइये न कै हमाये इतै ठडूला खाय। बैसे अईर कें तौ लुचई पक्की खात हौ। जा सुनकें एक एक करकें सबरे बैठ गये। महेन्द्र ने कई, ऊदल तैं ठाड़ौ ठाड़ौ का देख रऔ। संगै बैठ। ऊदल ने कई फिर परसै को? मताई तौ ठडूला काड़ रई। महेन्द्र राजा ने कई-पनको तो है, वा परसै। जा सुनकें भीतर मताई खौं तौ मिरचें सी लग गईं। हराँ के बोली हव, पनको खों खालो। हम सब बातें समज रये। इत्तै सूदे नोईं हैं। पै हम करें तौ का करैं? ऊदल ने पूछी-का मताई का कै रईं हराँ-हराँ कें। मताई ने करें गरें कई-जा आ कै रये कै का देख रये। सबकों परसत काय नइयाँ? ऊदल ने कई रज्जू तौ हमें संगै बैठार रयै। की की मानें? मताई ने कई-उनइँ की मानौ। सबके संगै ऊदल बैठ गव। अब दौर-दौर कें पनको परसन लगी। चौबे कौ लरका बोलौ-काय भौजी, ओई-ओई तरफ सें काय परस रइँ। इतै सें परसो। तिवाई ने कई-अरे ऊ तरफें राजा तौ आ बैठे। पुरेत ने कई-खेल में काय के राजा। अबै तो सबरेई राजा हैं। सबरे हँसन लगे, भीतर सें मताई सुन रई ती, तो बायरें कड़कें बऊ (पनको) सें बोली जा, तैं काड़ ठडूला, मैं परसत। तोय परसबौ तक नइँ आउत। पनको महेन्द्र तरफें हँसकें भीतर चली गई। ठडूला काड़न लगी। महेन्द्र राजा ने कई-ओ मताई, तैं बड़ी ठेड़ी काय खों कड़ आई। तोव का होने? लरकन बिटियन खों करन दै। तैं बैठ जा। मताई नें हँसकें कई-काय मोव परसवौ नइँ सुहात? हमें जादा हँसवौ अच्छौ नइँ लगत। मताई परसन लगी-पै कोऊ न लेवे। सब मनें करें। काय सें सब अफर गये ते। पै मताई हों लगो के हमाय हाँतन सें आ नइँ लै रयै। मताई ने टाठी धर कें कई तौ मैं ओई खों पौंचाउत। सबने कई आहाँ मताई, हम सब अफर गये। खा पी कें सबरे चले गये। खूब चौलें कर रयते। काय राजा कै ठडूला खाय? दस तक तौ हम गिनत गये, फिर खबर नइयाँ, राजा ने कई- जीत की पार्टी तौ आज आ खाई। जिला जीत कें तौ आय।

******

देव महाराज कौ सबरौ मैदान साफ हो गव। उतै कबड्डी कौ अच्छौ पाला बन गव। रोज कबड्डी खिलन लगी। अब राजा महेन्द्र औ ऊदल के नाम से नये लरकन की एक ऐसी पार्टी बन गई कै गाँव में कौनऊँ काम होवे, सबरे लरका जाकें सब सभाँर लेवें। कोऊ कें बरात आवै तो सबरी परसा औंजी कर लेवें। महादेव बनें तो सेवा में लग जायँ। सब काम करें। एक जाँगा बरात में बरातियन ने पत्तल छोड़ दये। बारी हतौ नइँ। अब को उठावै। चाय जौन जात के मान्स बैठेते। पै लरकन ने झट्ट-पट्ट उठाकें सफाई कर दई। गाँव भरे में हल्ला हो गव-ई महेन्द्र ने, अच्छे लरका जोरे। देखौ तौ जा उच्चकन की अथाई। सबरौ धरम करम, क्रिया पंडित कौनें में धर दई। राम-राम।

एक दिना कुँवा पै पानी भरत में अकेलौ पाकें ऊदल की मताई सें परोसन ने कई। जिज्जी, बुरव न मानौ तो एक बात कयें। घर की जाँगा अच्छी बुरई कनेईं परत। कोऊ से नइँ कई। तुमईं से आ कै रय। ऊदल की मताई ने कई-काय का बात है? कनै तो अउतई है। परोसन बोली-एक हम झारवे खों बायरें आये सो हमने देखौ के तुमाई बऊ उन गड़ी के राजा महेन्दर सें हँस-हँस के बतकारौ कर रईती। पैलाँ तो हमने सोची टोकें पै कछू नइँ कई। बताव कोऊ देखै तौ का कै। ऊदल की मताई सुनकें सन्न रै गई। बोली का करें। हम तौ...?

घरै आकें ऊदल की मताई धुन्नानों सो मौ डारें फिरबै। उये मौंगो देख कें पनको ने कई-काय बाई, कछु पिरा रव का? आज मौं उतरो सो है। काय मूड़ तौ नोईं पिरा रव। कव तौ राई बाँट के लगादें, तनक पर रऔ। कऔ तौ पाँव दाब देवें। पै ऊदल की मताई नें कछु नईं कई। धुन्नानी-धुन्नानी फिरत रई। जैसें तैसें उयै दिन बूड़ें बहानौ मिलौ-ऊनें मजे बरतन भाँड़े में से एक भगोंनियाँ ढूढ़ी औ बता बताकें कई-काय ऐसे आ भाँड़े माँजे जात। देखिये जौ सकरौ लगौ औ करौंच लगी। नैंचें कछू धरी। पनको ने जाकें देखौ। ऊ में सकरौ तो नइँ लगौ तो, कौनऊँ चिरइया हग गई ती, बऊ ने कई-बाई हम फिरकें माँजे देत। अब अच्छें माजबू करें। पै ऊदल की मताई तौ मुंडी मारकें रोंन लगी। ओ भगवान हमाय तौ ऊदल बेटा के भाग फूट गऔ। ऐसी बेलच्छन की, बुरय चलन की कुलच्छन बऊ गरें बंद गई। जियै कुछ लाज सरम नइयाँ। चाय जी सें मौ लगकें बतकारौ करत। हमाऔ लरका ऊदल तौ बे मौं को है औ जा चरफार आ गई। पनको अपनी सास की बातें सुनकें ऊसई रै गई। ऊयै कछु समज में नईं आ रई ती के हम पै का कसूर हो गव? सो ऊने अपनी सास सें कई-बाई हमने ऐसौ का कसूर कर दव? सास बोली-का कसूर, अरे गाँव भर में कानौं नइँ दव जा रऔ। हमाई तौ ढोलन पिट रई ढोलन। हम कीसें का कयें? भाग की बात। जा सुनकें पनको कोनें में बैठकें रोउन लगी। रातें ऊने ब्याई नइँ करी। रातें अपने आदमी सें कई कै आज तौ बाई ने हमें बिरा कसूर के चाय जैसीं सुनाँईं। हमसें कुलच्छन कई। बेलच्छन की, बुरय चलन की कई। हम तौ घूँट सो पी कें रै गये। बुरऔ लगौ सो रो लव। साउन कौ मइना आव। पनको कौ भैय्या लुआवे आव? सास ने जल्दी पौंचा दव। जाती बेरां सूदें नईं बोली। पनको ने पाँव परे। बऊ जोऊ गाड़ी में बैठ गई सो कन लगी, अब इतै जो मौं नइँ दिखाइयौ। पनको अपने मायके पौंची। मताई ने छाती सें लगा लव। पूँछी काय बेटा-अनमनी सी तौ लग रइँ। काय कछु बात हो गई। पनको ने कई-कछु न भई। आउतीं बेरां बाई अच्छें नइँ बोलीं।

सावन खों महेन्द्र रज्जू अपने नाना कें आय। अबकें वे पनको खों देवे एक साड़ी लियाय। नानी नें अपने आँगे झोला में साड़ी धरी देखी। सोसन लगी, जा की खों दैवे ल्याव हुइये। साउन के दिना रज्जू पनको के घरै गये। टेरौ, काँ गई पनको? काय, पनको बेन नइयाँ। पनको भीतर सें आई। महेन्द्र रज्जू ने अपनौ हाथ आगें कर दव। हम राखी बदावे आ गये। जबईं हमने राखी बँदाई कछु नइँ दऔ तौ, सो अबकै साड़ी ल्याय। हाँ जल्दी बाँदो राखी। पनको भीतर गईं। आकें महेन्द्र रज्जू खों राखी बाँद दई। रज्जू ने निकार कें साड़ी दई। औ पाँव पर लये। इत्ते में मताई कड़ आई। ऊनें साड़ी देखी सो कई-काय राजा साड़ी का बात सें दै रय। अपुन तौ मालिक आव। हम सब तौ तुमाय कामदार आँय। तुमाय लतरौंदा। उतरन पैरवे बाय। रज्जू बिना कछु कयें चलौ गव। नानी ने साड़ी लै जातन देखौ सो सोचत रई, हे भगवान जा, कौन खों आ दै रव। दूसरे दिना महेन्द्र नाना के इतै सें चलौ गय। पनको साड़ी पैरकें कड़ी सो रज्जू की नानी (कक्को जू) ने देखौ। वे अपने मन में बन्न-बन्न की बातें सोचन लगीं। कन लगीं अब आ पतौ परौ कै महेन्द्र रज्जू काय खों आव तौ। देखौ तौ, ई बिटिया ने कैसो डोरौ डारौ। हम का जानें के जो दिन भर कितै आ जात।

साउन कड़ें चार पाँच मईना हो गये। हरपुरा में पनको खों कोऊ लुआन नइँ गव। ऊदल की मताई ने सब खों रोक दऔ। औ बा बालाँ-बालाँ ऊदल के दूसरी जाँगा बिआव को मिसल भरन लगी। संकोच के माय ऊदल ने कछू नइँ कई। ऊदल कौ बाप बेर-बेर बऊ खों लुआवे की कबै सो ऊकी घरबाई रोक देवै। कबै कै अगर तुम उयै लुबाकें आय तौ हम कुवाँ में गिरकें मर जैं। ऊ कौ नाव न लिऔ।

देव महाराज की जाँगा पै अबै अकेले भादों की चौथ खें गोटें होत तीं। अब रज्जू ने नये-नये कार्यक्रम शुरू कर दये। उन सबरे लरकन ने पइसा जोर कें गणेश चौथ पे गनेश जी धरवौ चला दव। नौ दुरगन में देवी जी धरन लगे। एक बेर रामलीला हो गई। कछु दूर हनुमान जी के मंदिर पै हर मंगल खों कीर्तन सुन्दरकाण्ड। पै लोग लुगान में भीतर-भीतर एकई चर्चा सुलगत रई कै रज्जू महेन्द्र ऊदल की बऊ के पाछें पर गये। वे ऊनौ आउत जात। एइसें उयै बऊ खों मायकें पौंचावने आव। अब बा आ नइँ पा रई। ठकरास के चरटि के मायँ कोऊ कछु खुलासाँ नईं के सकत। ईसें सब जनें इन लरकन के जुराव खों उच्चक्कन की अथाई कन लगे। अब सबरे अपने-अपने आँगे कत कें, अब बा बऊ तो इतै है नइयाँ फिर ई ऊदल के धरै काय ठटानो रत। हमें तो भैय्या, बउअन बिटियन कौ डर लगत। उतई तौ ऊदल के चौतरा पै बिटियाँ नौरता खेलतीं। अबजा उच्चक्कन की अथाई कैसे रोकें? और तौ और जौ सबेई जातन के लरकन सें सुन्दरकाण्ड बचवाउत। कीर्तन में सबरी जातन के लरका हेलकमेल होत। काय की क्रिया पद्धत। अब जा उच्चक्कन की अथाई कैसें मिटै? बड़ी चिन्ता पर गई।

एक दिन देर रात तक सबरे लरका बैठे रये। अखण्ड रामान कौ कार्यक्रम बनाउत रये। राते देर हो गई, रज्जू ऊदल के घरै पौर में सो गव। चौंतरा पै ऊदल औ रज्जू सो रयेते। उतै बगल में खाटन पै ऊदल की मताई औ बाप सो गव। उनै पतौ नइँ चलौ के इतै महेन्द्र रज्जू आ सो रव। वे भुन्सारी राते उठे और आपस में बतकारौ करन लगे। ऊदल की मताई ने कई का करें सबरे जनें हमें खोरी धर रये कै इनके ऊदल ने रज्जू खों इतै लपकाव। अब बऊ नइयाँ तौउ पे इतैई ठटानौ रत। का करें, न कछु कत कौ न सुनत कौ। पैलाँ हमनें बऊ सें बातें करतन सुनौ, फिर बेई बात बगल में नेगुवाँबाई ने कई कै तुमाय दौरें पानी पीवे के बहाने पानी पियत में हँस-हँस कें बातें कर रव तौ। अब एक नई बात सुनी। ऊदल के बाप ने पूँछी का सुनी? ऊदल की मताई बोली-बा गोटिया की बिटिया उन्नन की दुकान पै कछु उन्ना लत्ता लैबै गई तो उतइँ रज्जू ने एक अच्छी धोती लई। हमनें पूछी राजा कीखों आ लई सो कत के अपनी बैन के लाने।

औ हँसन लगे। सुनी है कै अपने नाना के घरै ओई खों देवै गव हुइये। उतइँ से तौ आ वे दोई लगे पगे हैं। मन में तौ आउत कै कोऊ सों कक्का जू के काने बात डार देवै। पै करें का? ठकरास कौ डर लगत। उल्टी चाँट-बाँट बाँदलें तो।

आज महेन्द्र रज्जू पौर में परें-परें जो सबरौ बतकारौ सुन रव तौ। ऊकी आँख खुल गई ती। वे दोई जान रयते कै अकेलौ ऊदल आ परौ। सुनकें रज्जू की झक्की सी खुल गई। बौ सोसन लगौ जौ संसार कैसौ है इन ठलुआ लोग लुगान खों कछू और दूसरौ काम नइयाँ। जा फल्गू भैय्या नैचें नैचें बउंत रत। अरे राम, हम तौ कछु सोचई नइँ सकत। का-का बातें बन रईं। अब का करौ जाय। स्यात् ऊदल हमसें संकोच के माँय कछु नइँ कत। रज्जू चिमानौ परौ रव। कै और का-का बातें होतीं? फिर मताई उठी औ ऊनें पिछौरा तानकें जगाव-कायरे ऊदल, देखत नइयाँ दिन ऊँग आव है। अबै नौ आ सो रव। उठ, दिन चड़े नौ सोंउत रत। ठाकरन के रज्जू के संगे ऐसौ बिगर गऔ। फिर बारा फैरन लगी। तनक देर में देखौ कै रज्जू तौ ढौर, बछेउन खों चारौ डार रव, फिर जौ को आ सो रव। जैसईं जगा, सो महेन्द्र राजा ऐंड़याँई लैकें उठ बैठे? ऊदल की मताई कौ मौं फक्क हो गव। अपने मन में झकबकानी कै कऊँ हमाव बतकारौ सुन न लव होय। सो मौ की मीठीं, चौंचले करन लगीं। काय राजा इतै चौतरा पै नैचें आ परे रये। हमें का पतौ, पलका बिछा देते। अरे राम बिना बियाई के नैंचें आ परे रये। ई ऊदल ने हमें काय नइँ बताई। जौ कैसौ आ है?

एक दिना महेन्द्र ने अकेले में सबरौ बतकारौ ऊदल खों सुनाव। ऊदल ने कई ई मुहल्ला की लुगान कौ तौ जोऊ काम आ है। सबरी आग हमाई मताई औ ई परौसन ने आ लगाई। हमें तो सब पतौ है, पै हम का करें? बिना कौनऊँ बात, ऊये मायके पौंचा के लुआवे नइँ जा रये। हमाई मताई तौ कै रई कै ऊ कुलच्छन खों लुआवे गये तौ हम कुवाँ में गिर कें मर जैं। वे हमाव दूसरौ बिआव करवे कौ बतकारौ करत रत। पै बिटियाँ का कुमार के चका पै आ भुमतीं। हम कछु कत सो सबरे कतकै इयै तनकई लाज शरम नइयाँ। लुगान के बतकारे में आ गव। आँदरौ हो गव आँदरौ। महेन्द्र रज्जू ने कई-तुमें हमाव कौल है, ऊदल! तुम अपने मन की बताओ तुमै कैसो लगत। ऊदल बोलौ-राजा, हमाव तुमसें तनकई छिपाव कपट नइयाँ। कौनऊँ बात होती तौ, हम तुमसें क ाते। हम तुमै अच्छे सें जानत, रज्जू ने कई-तुम हमें का जान, साँची-साँची कइयौ, झूठी नइँ। ऊदल बोलौ तुमाई पनको जब पैलइँ पैल मिली ती। सो ऊने अपने बतकारे में तुमाई चरचा चलाई ती। कै महेन्द्र रज्जू राजा तौ देवता आ है देवता। जब हम हल्के हते सो हमने बगर में अकेलें में राखी बाँद दई। हमनें सोची हती कै इनके ननयावरे में इनकी कौनऊँ बैन तो है नइयाँ, सो राखी बाँद दई। सो उनने हमाय पाँव पर लये। हमें तौ भाई सरम लगी। काँ राजा काँ हम। उनने हमाई दई खड़पुरी खा लई। उनइँ ने हमें स्कूलै पढ़वे पौंचाव। अपनी सिलेट और बरती दई। तुमाय चाय जौन होंय, वे तौ हमाय भैया आ लगत। हम तौ उनसें खूब बातें करें। वे तौ हमाय मायके के आँय। तबसें हम सब जानत। हमें कौनऊँ इतराज नइयाँ। पै ई संसार ने [illegible] सांता [illegible] खों नइँ छोड़ो। तुमाई बुराई सुनकें हमाई छाती फटत। एई पुरा मुहल्ला में कैऊ जने कत-देखौ तौ , जा गुण्डा पार्टी उबरानी। कौनऊँ कत जा उच्चक्कन की अथाई जुरी। न जानें कैसे आदमीं हैं। सबरौ कूरा तौ जे लुगाईं आ फैलाउतीं। जे लोगन के कान भरतीं रईं। ऐ बा हँस रई ती, ए बा मुस्क्या रई ती। जे घूँघट में न जाने का-का देखतीं, का-का सोचतीं। हम तौ इनके बतकारें सें दूरई रत। महेन्द्र रज्जू ने कई-कायरे ऊदल, इत्तौ बतकारौ होत रव, तैंनें हमें कछु नइँ सुनाई। हम तौ आज आ परें-परें सुनत रये। हमाई तौ झक्की सी खुल गई। बताओ, का हम इतै आवौ बन्द कर दयँ। ऊदल बोलो-रज्जू, चीलरन के पाँछें कथरी नइँ छोड़ी जात। हम तौ ईसें नईं कई कै तुमैं भीतर सें दुख हो जै। तुम का सोचौ। आय तौ हमाई मताई, पै हम का करें। हम कछु कत सो हल्ला धरत के बऊ की बातन में आ गऔ। लुगाई को चेरौ हो गऔ। सो हम कछु नईं कत। हम तौ गुर भरे हँसिया हो गए। न पनको की कै पाउत न तुमाई। भीतरइँ भीतर घुनत रत। हम तौ रोज ऊके खबर करकें डवइयाँ भर देत। खूब अच्छे काम करत, मताई के पाव दाबत, धुतियाँ फींचत, सपराउत, तौऊ पै हमाई मताई ऊके पाछें पर गई। बताव अब का करें? रोउत बनें न गाँव, हपा पेट मौ बाँय। तुम बताव का करें। कैसी करें। पै जा पक्की मान लो हम न तौ दूसरौ ब्याव करें और न तुमाव संग छोड़ें। कभऊँ हमें पराव न जानियो। हम साँसी-साँसी कै रये। दोइ मित्र गरे से लिपट कें खूब रोय। जैसें तैंसें शांत भये। रज्जू महेन्द्र ने कई-ऊदल, अब हमाई बात सुनौ। अब हम कछु दंद फंद नाटक रच रये। इन गमारन की अक्कल ठिकानें लगावें खों। अब तुम बीच में न परियौ। हम बिगारें कोऊ कौ नइँ। नाटक करें तुमैं खुद चपेट में लैकें नाटक रचें। तुम चिमाने रइयौ, देखौ मजा।

*****

हरपुरा में चौकी हती। एक छोटो दरोगा रत तौ। चौहान दरोगा को लरका महेन्द्र के संगै पढ़त तौ। महेन्द्र ऊकै बंगला पै जात रत्ते। महेन्द्र औ ऊकौ लरका अच्छे दोस्त हते। महेन्द्र छोटे दरोगा के पास गये। चौहान ने कई-कव बेटा कैसे आये? महेन्द्र ने कई-चाचा जी, आप हमाय एक काम में सहयोग कर दो। चौहान ने कई-कहो बेटा, क्या काम है? मेरे करने का होगा तो जरूर कर देंगे। महेन्द्र ने कई-चाचा जी, हमाव मित्र ऊदल है ऊकी मताई बिना कसूर के मायके सें बऊ खों नइँ बुलाउत। जब कै बात कौनऊँ नइयाँ। परोस में एक सास नें बऊ खों मार-मार कें सड़ कर दऔ। फिर ताते थैंते से जरा दये। गोटिया कौ लरका ऐंसी तेज साइकिल चलाउत है कै एक हल्के से लरका कौ हाँत टूट गऔ। पंचें बंधी। इन्हें धौस दैकें सुदारने। चाव तौ हम लिखित रिपोट दे दैवें। नइँ तो केवल दिखाउटी धौंस दैकें समझा दो। तीनइयन के लरकन खों एक दो घंटा खों चौकी में बुलाकें बंद कर दो। फिर छोड़ देऔ। जौ भौत बड़ौ परमार्थ हो

जै। सबरे सई होजैं। हमाव कौनऊँ व्यक्तिगत अपनो स्वार्थ नोंईं है। न हम कोऊ कौ बुरव करन चाउत। न हमाई कोऊ से दुश्मनी है। हम तौ केवल सुधारवे खों, जौ नाटक खेलन चाउत। आप हमें खुद डाट दियो। चौहान साब ने कई-महेन्द्र हम तुमें जानत। तुम कितने अच्छे काम कर रय। काल हम आकें सबखों सई कर दें। पैलाँ हम तुमें डाटें, फिर ऊदल खों। ऐसौ नाटक करें कै सब सई हो जैं।

दूसरे दिना शाम खों छोटे दरोगाजी चौहान साब सिपाइयन खों लैकें आये। ऊ मुहल्ला के सब आदमी दौर-दौर कें आ गये। सबसें पैलें दरोगा जी ने महेन्द्र कों बुलाव, क्यों जी तुम यहाँ गुण्डा गिर्दी करने क्यों आते हो। धारा १५१ में तुम्हें हम बंद कर देंगे। सारी गुण्डा गिर्दी उतार देंगे। तुम ये मत समझना कि हम बड़े हैं। फिर एक फायल निकाली। कागजों को पढ़ा। गोटिया और ऊके लरका खों बुलआव। फिर चौकीदार सें नेंगुवाँ बाई खों बुलआव। ऊदल के बाप औ मताई खों बुलआव। सन्नाटौ छा गव। सबरे आकें पाँव परकें हाँत जोर के बैठ गये। फिर दरोगा जी गोटिया से गरजे क्यों जी लड़के को गुण्डागिर्दी सिखा रहे हो। इसने किसका हाथ तोड़ दिया है? चलो डाक्टरी होगी। अपने लड़के को बुलाव। क्या नाम है?

गोटिया बोलो-साब मुलाम सिंह नाव। धोकें सें साइकिल लग गई। हमें उयै डॉट दें। दरोगा जी बोले तुमने अब तक क्यों नहीं डॉटा। जादा होशयारी दिखा रहे हो। बुलाव अपने लड़के मुलायम को। देखें साला कितना गुण्डा है? ऐ चौकीदार क्या देख रहा है, जा बुला के ला। हवालात की हवा खिलायेंगे तब सही होगा। कहाँ है जा बुला के ला।

फिर कहा-ऊदल कौन है? ऊदल की माँ को बुलाव। कहाँ है वह? ऊदल आ गव। देखते ही दरोगा जी बोले-क्यों जी तुम जेल खाना चाहते हो? क्या मामला है, तुम्हारी घरवाली कहाँ है? दहेज एक्ट में धर देंगे। जमानत तक नहीं होगी। कहाँ है तुम्हारी माँ, जल्दी बुलाव मेरे सामने। ऊदल की मताई छोड़ काड़ के पाँव परन लगी। बोली हुजूर, मैंनें तो कछु नई करौ। मोव का कसूर है हुजूर। दरोगा जी बोले-सारा कसूर समझ में आ जाएगा। सिपाही ऊदल को चौकी पै ले चलो। दहेज एक्ट में जिन्दगी जेल में सड़ जायेगी। साथ में इसकी माता को भी ले चलो। अदालत में ऊदल की बहू के ब्यान होंगे, क्यों नहीं बुलाते। फिर दरोगा जी ने फायल का अगला पेज खोला- बोले हाँ नैगुवाँवाली कौन है? हाँ बताओ कहां-कहां जलाया है इसने अपनी बहू को। बुलाओ, डाक्टरी रिपोर्ट को। सुना है, इतना मारा है कि दो तीन उठ नहीं सकी। मैं आज सबको ठिकाने लगाने आया हूँ। क्यों चौकीदार कौन है। नैगुवाँवाली, बुलाव। उसकी बहू को बुलाव। सबके ब्यान होंगे। चीफ साहब, इन सबके ब्यान लो। फिर तीनों को चौकी की हवालात में बन्द करो। जल्दी तीनों केस तैयार करो। नैगुवाँवाली आके पाँवन पै गिर परी और रोउन लगी। साब गल्ती हो गई। अबकी बेर छोड़ दो। मैं माफी चाउत। जो जो काव सो करें, केस न बनाऔ। दरोगा जी बोले-आज में किसी को नहीं छोड़ूँगा। तुम लोग ऐसे नहीं मान सकते। महेन्द्र रज्जू कहाँ है ऐ जी तुम्हें एक बार हिदायत देते हैं। समझे क्या समझे। महेन्द्र ने आकें कईसाहब भविष्य में गल्ती नहीं करेंगे। इतने में सबरे मुहल्ला के बड़े-बड़े जुर आय। दरोगा जीसें हा हा बिन्ती करन लगे। सबने अपकी बेर छोड़ दैबे की प्रार्थना करी। सबने कई साब, अबकें छोड़ दो केस न बनाव। हम सब पंचन में होकें एक-एक हजार की मुर्चरका लिखवा लो। आप एक मईना में फिर कें आइयौ। गलती मिलै तौ फिर केस बना लियौ। हम सब फिर कछु न कैहें। एक बेर की हम सबकी हाँत जोरे की मानी जाव। सबने जैसे तैंसे दरोगा जी को पाँव परकें मनाव। और फिर सबके एक-एक हजार के मुर्चरका लिखे। जैसें तैसें एक मईना की मौलत दई। सबने चाय पानी की कई, पै दरोगा जी ने मना कर दई और मोटर साइकिल पै बैठ के चले गये। जैसें तैंसे निपटी।

अब सबई बड़े बूढ़े की पंचायत जुरी। सबने तीनई जनन से कई कै जल्दी से अपनी अपनी गल्ती सुधार लो। दहेज के कानून में जिन्दगी भर जेल में सड़ जैव। घर बरबाद हो जै। गोटिया ने सबके सामने अपने लरका खों डॉटों। ऊदल की मताई ने कई हम कालईं बऊ के लिबउआ पौंचायं देत। नेगुँवाबाई ने कई अब कभऊँ हम बऊ खों ना डाटें। खूब अच्छें राखें। सब चले गये। सबनें राते घरै जाकें अपनी-अपनी गल्ती मानी। गोटिया के लरका की साईकिल बन्द हो गई। नैगुँवाबाई ने जाकें अपनी बऊ खों मनाव धनाव। उयै छाती सें लगा के रोई और कई कै अब मैं अपनी बऊ खों बिटिया की माफिक राखहौं। ऊदल के बाप ने कई कै बा पान कुँवर मायके के नाते से आ रज्जू सें बोलत ती। तु ऊसई लच्छन लगा रइँ तीं। बऊ बुरई नइयाँ। रिपोट हो जै तौ जेल में सर जैव। घर बरबाद हो जै। ऊदल की मताई ने कई-तुम कालईं जाके बऊ खों लुवा लियाव। कइयौ, हमाई बऊ, हम प्रानन की जांगा राखै। अकेले पौंचा दो। पनको बेई रज्जू भैया की साड़ी पैर कैं आ गई।

******

महेन्द्र रज्जू ने अबकी बेर पंचात के चुनाव में ऊदल की पत्नी पान कुंवर खों सरपंच खों खड़ौ करो। हरपुरा सीट महिला सीट हो गई। चुनाव में पान कुंवर जीत गई। राजा महेन्द्र औ ऊदल के सहयोग सें ऊनें अच्छे-अच्छे काम कराय। देव मराज नौ सांस्कृतिक भवन औ स्कूल बन गव। गाँव की गैलें सुधर गईं। सबसें बड़ौ काम भव छुटेलुवा गइयन खों कानीहौत की जाँगा गौशाला बन गई। गौ शाला में गाँव के छूटेलुवा और बूड़े गइयाँ बैलन खों चारौ पानी सानी भुसा कौ इन्तजाम हो गव। गाँव कौ खूब विकास हो गव। सब बउयें बिटियाँ प्रेम से रान लगीं। पान कुंवर अब बहूरानी कुआउन लगीं। सबकी प्यारी हो गई। आज महेन्द्र रज्जू सबकौ प्यारौ, गाँव भर कौ मुखिया बन गव। रज्जू अब बड़े राजा कुआउन लगे, सबके प्यारे सबके हितैषी। उच्चक्कन की अथाई अब गाँव के विकास की केन्द्र बन गई।

-सुभाषपुरम् कॉलोनी, टीकमगढ़, म०प्र० 卐

लोककाव्य आल्हखण्ड:मिथक और इतिहास का द्वंद्व

- डॉ. रामशंकर द्विवेदी

लोककाव्य आल्हा को किसी ने गाथा काव्य कहा किसी ने महाकाव्य कहा, किसी ने इसे राष्ट्रीय ऊर्जा का काव्य कहा, किसी ने इसे ओजस्वी काव्य कहा, कोई इसे उत्साह का काव्य कहता रहा, कोई इसे प्रेरणा का काव्य कहता है। पर, इसमें कोई सन्देह नहीं कि बारहवीं शताब्दी से लेकर आज तक यह काव्य उत्तर और पूर्वी भारत के गाँव-गाँव में प्रचलित है। इसीलिए इसकी बनाफरी, बुन्देली वर्णनाओं के साथ-साथ कन्नौजी, बेसवाड़ी, भोजपुरी, मिर्जापुरी, बृजी वर्णनाएँ लोकमुख में जीवित हैं और ये वर्णनाएँ पीढ़ी-दर-पीढ़ी कालक्रम से आज भी चलती जा रही हैं और आगे भी चलती जाएँगी। लोकप्रियता के कारण आल्हा एक लोककाव्य का रूप धारण कर चुका है, इसने अपने सभी पुस्तककार रूपों को पीछे छोड़कर एक गतिशील, नित्य परिवर्धमान रूप धारण कर लिया है। आल्हा वाचिक परम्परा में जीवित एक ऐसा गाथात्मक महाकाव्य है जिसकी लोकप्रियता आज इस भू-मंडलीकरण के युग में भी बरकरार है और आगे भी रहने की संभावना है।

लेकिन, आल्हा गायकी के बारे में एक तथ्य विचारणीय है, यह गायकी एक विशेष मौसम में ही फड़ो के रूप में होती है। इसकी लोकप्रियता का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि आल्हा गायकी का जब मौसम आता है तब बुन्देलखण्ड, कन्नौज और पूर्वी उत्तरप्रदेश का ऐसा कोई गाँव नहीं होता जहाँ दो-दो, चार-चार के समूहों में ढोलक की थाप पर आल्हा न गायी जाती हो। यह मौसम बरसात का होता है। भुजारियों या कजरियों का मेला, सावन-भादों का महीना यही दोनों मौसम आल्हा गायकी के लिए बड़े उपयुक्त माने जाते हैं। या तो ये कहिए कि आल्हखण्ड की प्रमुख लड़ाइयों में कीरत सागर पर हुई भुजारियों की लड़ाई भी है। जो भी हो, सावन-भादों गुजरने के बाद फिर आल्हा का मौसम खत्म हो जाता है। बरसात में किसान भी खाली रहता है। रास्ते-घाट भी बन्द से रहते हैं और सावन का पर्व भी होता है। इसलिए आल्हा की फड़बाजी के लिए यही मौसम अच्छा समझा जाता है।

आल्हखण्ड का संकलन-

आल्हखण्ड के दो पाठ मिलते हैं। एक पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित वाचिक पाठ, दूसरा छापे का पाठ। छापे और वाचिक दोनों पाठों में पर्याप्त भिन्नताएँ हैं। ऐतिहासिक कथा सूत्र में एक रूपता होते हुए भी उनके दोनों रूपों में पर्याप्त भिन्नता है। ये भिन्नताएँ प्रस्तुतीकरण और कथानकगत क्षेपक दोनों में हैं। शैली और भाषा रूपों में तो हैं ही। बुन्देलखण्ड में वाचिक परम्परा में उपलब्ध पाठों की छानबीन कर बुन्देली के मूल पाठ को ढूँढने का एक महत् प्रयास प्रो.नर्मदा प्रसाद गुप्त ने किया था। इन्होंने बुन्देली अंचल में प्रचलित आल्हखण्ड के पाँच छह पाठों को एकत्र कर उनके प्रामाणिक बुन्देली पाठ निर्धारण का एक स्तुत्य प्रयास किया है। उनके द्वारा निर्धारित पाठ का प्रकाशन आदिवासी लोककला परिषद भोपाल ने किया है। इस पाठ में प्रो0गुप्त ने आल्हखण्ड की पन्द्रह लड़ाइयाँ ही ली हैं।

परिषद के सचिव डॉ. कपिल तिवारी ने लिखा है: मौखिक परम्परा में प्रचलित ऐसे लोकमहाकाव्य जिन्हें सदियों तक पारम्परिक गायकों ने गाया हो और पिछली एक शताब्दी में जिसके मुद्रित रूप विभिन्न प्रकाशकों द्वारा अनेक संस्करणों में प्रकाशित किये गये हों, उसमें पाठ भिन्नता स्वाभाविक है। न केवल बुन्देलखण्ड बल्कि पूरे उत्तर भारत की लोक परम्परा के सबसे प्रभावशाली वीरकाव्य के रूप में आल्हाखण्ड एक विशाल क्षेत्र में लोक बोलियों में जीवन्त लोक परम्परा का भाग है। इसमें बोली के भाषिक संक्रमण के अलावा अनेक जनपदों की सांस्कृतिक परम्परा घुली-मिलती है। ऐसे में आठ सौ वर्ष पूर्व कहे या रचे गये लोक महाकाव्य की भाषिक और ऐतिहासिक प्रामाणिकता निर्धारित करना कठिन काम है। आल्हाखण्ड के बुन्देली पाठ निर्धारण में प्रो0 गुप्त ने इसी कठिन काम को अंजाम दिया है। डॉ. कपिल ने इस पाठ निर्धारण को इतिहास के अन्दर इतिहास का अतिक्रमण बताया है। क्योंकि यह कहना कठिन है कि आल्हा खण्ड की रचना जगनिक ने ठेठ बुन्देली में की थी तो आज से आठ सौ वर्ष पूर्व बुन्देली का ठेठ रूप क्या था अथवा अगर उसने आल्हाखण्ड बनाफरी में रचा था तो उसका भी तत्कालीन रूप क्या था। फिर बुन्देलखण्ड में ही वाचिक परम्परा में उपलब्ध उसके रूपों का अगर संकलन किया जाए तो उसमें भाषिक भिन्नताओं का इतना अधिक घटाटोप छाया हुआ है कि उससे बुन्देली पाठ निश्चित करना एकदम कठिन काम है। प्रो0 नर्मदा प्रसाद गुप्त के इस पाठ को पाँच छह उपलब्ध वाचिक परम्परा में उपलब्ध पाँच छह पाठों के आधार पर एक नया पाठ तैयार करना कहा जा सकता है। इससे अधिक कुछ नहीं। उनके पाठ का वाचिक रूप कहीं नहीं मिलता है। दर-असल बात क्या है लोक की भावना किसी 'रीति' किसी पाठगत 'शुद्धता' या 'सीमा' को स्वीकार करती ही नहीं है। प्रो0 गुप्त का पाठ तो किसी बोली के निकष पर पाठ निर्धारण की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया से गुजरा हुआ पाठ है। यह लोक की वाचिक परम्परा से आगत, उसमें प्रचलित पाठ नहीं है। भाषा के शास्त्र के आधार पर निर्धारित एक जड़ पाठ है। गतिशील पाठ नहीं। फिर भी आल्हखण्ड के जितने भी पुस्तकाकार पाठ मिलते हैं उन्हें सामने रखकर बुन्देली पाठ के भाषा रूपों के अनुशीलन की दृष्टि से यह पाठ बहुत महत्वपूर्ण है। आल्हा खण्ड के संपादन, पाठ निर्धारण के संबंध में इतना वैज्ञानिक और गम्भीर कोई दूसरा काम हुआ तो इसकी मुझे जानकारी नहीं है। पर, इस पाठ निर्धारण, विभिन्न लड़ाइयों के संकलन, आल्हखण्ड के संपादन का सूत्रपात कैसे हुआ इसकी भी ऐतिहासिक छानबीन जरूरी है।

आल्हा का सबसे पुराना पाठ कन्नौजी वर्णनो का मिलता है। इस संदर्भ में ऐतिहासिक तथ्य इस प्रकार है: इस दिशा में प्रथम प्रयास अंग्रेज विद्वानों द्वारा किया गया। १८६५ ई0 में चार्ल्स इलियट (फर्रुखाबाद के कलक्टर) ने फर्रुखाबाद के चार पुराने अल्हैतो में से एक के द्वारा 'आल्हा' का पाठ लिपिबद्ध करवाया

था, जिसे मुंशी रामस्वरूप ने दिलकुशा प्रेस फतेहगढ़ से १८७२ ई0 में प्रकाशित किया था। यह आल्हा की कन्नौजी वर्णना (बरजन) थी। जार्ज गियर्सन ने बिहार (भोजपुरी) और बिन्सेन्ट स्मिथ ने बुन्देलखण्ड (बुन्देली वर्णना) में 'आल्हा' के कुछ भाग लिपिबद्ध करवाये थे जो इण्डियन ऐटिक्वेरी (बाल्यू १४, पृष्ठ २०९, २५५) एवं लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया (वाल्यू ९(१) पृष्ठ५०२) में प्रकाशित हुए थे। (आल्हा, प्रामाणिक पाठ, प्रो0 नर्मदा प्रसाद गुप्त, आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल,पृष्ठ १२)।

यहाँ एक तथ्य ध्यातव्य है कि अंग्रेजों को क्या पड़ी थी जो वे आल्हा के पाठों का संकलन, प्रकाशन, उनका गद्य में अनुवाद करते? आखिर उन्होंने 'आल्हखण्ड' में इतनी दिलचस्पी क्यों ली? अभी कुछ वर्ष पहले केशव वंशज श्री द्वारिकेश मिश्र ने ठेठ बुन्देली में झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई पर 'आल्हा' छंद में एक महाकाव्य की रचना की थी। उसकी भूमिका भी प्रो0 नर्मदाप्रसाद गुप्त ने लिखी थी। पर स्वयं कवि ने अपने प्राक्कथन में आल्हाखण्ड के संकलन के संबंध में एक महत्वपूर्ण तथ्य की ओर इंगित किया था। उनका कहना था कि १८५७ के स्वातंत्र्य समर, जिसे अंग्रेज 'गदर' या सैनिक विद्रोह भर कहते थे, के कारणों, उसकी प्रेरक परिस्थितियों की छान-बीन करते समय अंग्रेजों के हाथ यह तथ्य लगा था कि जिन क्रान्तिकारियों ने महारानी लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे आदि का साथ दिया था जिसकी आग पूरे उत्तर भारत समेत पश्चिमी भारत में भी फैल गयी थी, उसके मूल में अन्य अनेक तथ्य होते हुए भी यह तथ्य विशेष रूप से रेखांकित करने योग्य हैं कि जो क्रान्तिकारी प्राणपण से इस संघर्ष में योग दे रहे थे उनकी जवान पर आल्हाखण्ड की कुछ पंक्तियाँ रहती थीं। वे 'आल्हा' लोक महाकाव्य से बलिदान की प्रेरणा लेते थे। जब अंग्रेजों को इस तथ्य का पता चला तब उन्होंने यह जानना चाहा कि आखिर इस काव्य में ऐसा क्या है, जो देशभक्ति की प्रेरणा के साथ-साथ शत्रु के विरुद्ध संघर्ष करने को उकसाता है? इसी भावना से प्रेरित होकर चार्ल्स इलियट जार्ज ग्रियर्सन और बिन्सेन्ट स्मिथ ने इसके विभिन्न बोली पाठों का संकलन कर उसे छपवाया।

आल्हा के प्रकाशित पाठों को प्रो0 गुप्त ने दो प्रकार का बताया है। एक व्यावसायिक पाठ, जो आर्थिक लाभ के उद्देश्य से रचे गये एवं विभिन्न प्रकाशकों द्वारा छापे गये। इनमें मटरुमल अत्तार का आल्हा निकला और आल्हा प्रेमियों में छा गया। इसी आल्हखण्ड की रंगत का अनुसरण करते हुए चावड़ी बाजार दिल्ली से कई आल्हखण्ड प्रकाश में आ चुके हैं। डॉ.गुप्त ने मटरुमल के आल्हा के विज्ञापन का एक अंश उदघृत किया है: 'हमने बड़े ही परिश्रम से उत्तम तुकबंदी, शुद्धभाषा व जोशीली कविता में बनवाई हैं, जिसकी हरेक लड़ाई काबिले तारीफ है।'

इन आल्ह खण्डों पर टिप्पणी करते हुए डॉ. गुप्त का कहना है, व्यावसायिक आल्हा ग्रंथों की भाषा खडी बोली के शब्दों के मिश्रण से आधुनिक हो गयी है। उनकी घटनाएँ काल्पनिक और वर्णन अत्युक्तिपूर्ण हैं। केवल आल्ह छंद और ओजपूर्ण शैली तथा आसानी से उपलब्ध होने के कारण उनका प्रचार अधिक है। (वही, पृष्ठ १२)

दूसरे प्रकार के आल्ह खण्डों के प्रकाशन की परम्परा वह है जो विभिन्न अल्हैतों द्वारा अपने पाठों को लिपिबद्ध कर प्रकाशित करवाये गये। इनमें अंग्रेजों द्वारा संकलित प्रकाशित पाठों के अलावा पहला पाठ है श्री नारायण प्रसाद मुकुन्दराम द्वारा सम्पादित एवं खेमराज श्री कृष्णदास द्वारा बम्बई से प्रकाशित आल्ह खंड। इसके बाद इसी पाठ का सम्पादन नारायण प्रसाद सीता राम ने किया।

इसके अलावा 'आल्हा' के संकलित और प्रकाशित पाठों की एक परम्परा और मिलती है जिसे अल्हैतों द्वारा अपने द्वारा गाये जाने वाले पाठों के लिपिबद्ध रूप कहा जा सकता है। या तो इन्हें स्वयं अलहैतों ने लिपिबद्ध किया है अथवा उनके किसी शिष्य ने इन आल्हखण्डों की हर अल्हैत के पास एक विस्तृत परम्परा मिलती है। इन पाठों में विषय वस्तु का विस्तार, अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनाएँ मात्रा के विविध रूप मिलते हैं। इन पाठों में प्रक्षिप्त अंश भी बहुत हैं।

आल्ह खण्ड की लोकप्रियता-

विविध भाषायी क्षेत्रों में आल्हगाथा की व्यापकता, इसके प्रचार-प्रसार की प्रचुरता इसकी लोकप्रियता का एक बहुत बड़ा प्रमाण है। एक लोकगाथा का इतने समय तक लोकमुख में जीवित बने रहने का अर्थ है कि इस गाथा को, इसकी रोमांचकता को, इसके पात्रों को, उनकी आन-बान-शान को, उस गाथा की विभिन्न घटनाओं को, उसकी युद्ध वर्णनाओं को लोक ने स्वीकार किया, अपनी आस्था की उस पर छाप लगायी। आल्हा खण्ड ने एक विशेष मौसम में हिन्दी भाषी जनता का मनोरंजन तो किया ही, उन्हें अपने जीवन संघर्ष में दृढ़ता के साथ खड़े होने की शक्ति भी दी। उन्हें लड़ने का साहस दिया, उन्हें जीने की रसद दी, पाथेय दिया, उन्हें अपने समय को अतिवाहित करने के लिए एक लोक काव्य दिया।

इस लोकगाथा की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसे संगीत के साथ गाया जाता है, अल्हैत खड़े होकर इसे अपनी स्मृति से गाता है, कुछ लोग इसे दुहराते जरूर हैं पर गायक एक ही होता है, श्रोता समूह होता है। आल्हा अकेले में मौन होकर, मन ही मन गाया जाने वाला काव्य नहीं है। यह तो समाज का, समूह का काव्य है।

कुछ समीक्षकों ने आल्हखण्ड की लोकप्रियता रामचरित मानस से भी अधिक मानी है लेकिन उनका यह कथन लोककाव्य आल्हा के प्रति पक्षपात के अलावा और कुछ नहीं है।

रामचरितमानस जीवन का काव्य है वह हमारे सम्पूर्ण राग को छाप कर चलता है। वह हमारे जीवन के, हमारे सम्पूर्ण संवेगों को वाणी देता है। उसमें सारे रस हैं, रस से भी परे उज्जवल रस, शान्त रस, भक्ति रस सब कुछ है। राम, सीता, लक्ष्मण, भरत और प्रतिपक्षी चारित्रों की तुलना में आल्हा के पात्र उतने उदात्त नहीं हैं। आल्हा सिर्फ युद्ध का, क्षोभ का, उत्तेजना का, विरोध का, प्रतिशोध लेने का काव्य है। फिर भी अपनी रोमांचक वर्णनाओं के कारण यह लोकप्रिय है और रहेगा।

आल्हखण्ड:शोध की अपेक्षा-

आल्हखण्ड के छपे और मौखिक सैकड़ों पाठ मिलते हैं। इन सभी पाठों के संकलन और उनके अनुशीलन की आवश्यकता है। जो पाठ संकलित हो चुके हैं उनके किसी शोध पीठ में संग्रह करने की अपेक्षा आज भी बनी हुई है। तो पहली आवश्यकता है आल्हखण्ड के प्रकाशित रूपों के संग्रह की। दूसरी जरूरत है वाचिक परम्परा में सुरक्षित और लिपिबद्ध

पाठों के प्रकाशन की। तीसरी जरूरत है लोकमुख में एक लोक गायक से दूसरे लोक गायक में घूमने वाले पाठों के लिपिबद्धीकरण की। उसके बाद प्रश्न उठता है इन सभी आल्हखण्डों के तुलनात्मक अध्ययन का।

एक बहुत बड़ी अपेक्षा आल्हखण्ड में आए नामाभिधानों के सूचीकरण की है। इसके अन्तर्गत स्थानों, व्यक्तियों, प्रकृति, नदी, मौसम, पहाड़ों, वनों, शकुन, अपशुकुन, सैन्य सामग्री, युद्ध साज-सज्जा, वाहनों आदि के नाम आ सकते हैं। आल्हखण्ड का भौगालिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, लोकसंस्कृति, परम्पराओं, लोकविश्वासों के आधार पर अध्ययन किया जा सकता है।

आल्हखण्ड के अध्ययन की एक और दिशा है, उसके भाषाशिल्प, प्रतीकों, कहावतों, मुहावरों, उसके तभव, देशज रूपों का अध्ययन। उसमें स्थानीय, आंचलिक शब्दावली का अकूत भण्डार विद्यमान है जिसके भाषाशास्त्रीय, व्याकरणिक, भाषा वैज्ञानिक, साहित्यिक अध्ययन की आवश्यकता है। दर असल आल्हखण्ड की अटूट वाचिक परम्परा और इसकी लोकप्रियता के कारण इस पर गंम्भीरता से काम नहीं किया गया है। परमाल रासो, महोबा समय, पृथिवीराज रासी के संदर्भ में हिन्दी साहित्येतिहासिकारों ने जहाँ-तहाँ इस पर विचार भर किया है। जब पृथिवीराज रासों की प्रामाणिकता पर ही प्रश्न उठते रहे हैं। तो आल्हखण्ड को कौन प्रामाणिक मानेगा? फिर भी लोक परम्परा में प्रचलित इस लोकगाथा के अनुशीलन की आवश्यकता आज भी बनी हुई है।

आगे आल्हा गायन के कुछ पाठ दिये जा रहे हैं जिससे इस गाथा के विविध रूपों की एक बानगी देखने को मिल सकती है, प्रसिद्ध इतिहासकार बी0स्मिथ द्वारा संकलित आल्हा का बनाफरी रूप-

नगर महोबा मैं देखो न, देखो ना किरतुआ ताल।
रानी पद्मिनी का देखो ना, पूज्यो ना मनियाँ देव।
एडी महावर छूटो ना, लागो ना चुनरिया दाग।
तोही न चहिये चौड़ामन कर डारो निरासिन राँड़।
लै लै सरापैन चौड़ामन जर कै खाक हुइ जास।।
दीन्ही जुवाबैं तब चौड़ा ने बेला सुन बात हमार।
कुसगुन व्वालति है ग्वांडा मा कुछ मो से कहो न जाय।
फते गुसैयाँ ने मोरी कीन्ही तोही बुरा लाग कस आज।
स्याही सुपेती का मैं मालिक संभर में हीसा तिहाव।
हुकुम दीन्ह है पृथ्वीराज ने धर ल्याऊँ पद्मिनी नारि।।

सागरी पाठ-यह पाठ लोकनाथ सिलाकारी द्वारा संग्रहीत किया गया था। उसका रूप इस प्रकार है-

पाती लिखी मल्हनदे रानी, नैनन बहे नीर की धार।
स्वस्ति श्री आल्हा की लिखि कै, लिखी बात सब ब्योरेबार।
सात लाख दल लैकें महुबो, घेरो आय पिथौरा राय।
तुम बिन बिपदा हम पै पर गई, बेटा हम को होउ सहाय।
बीतै अवधि डाँड लय पृथ्वी, चाहौ मरो बनाफर राय।
बिलखि बिलखि चन्द्रवलि लिखती, बीरन बेंदुल के असवार।
आन राखियो चंदेले की, तुम बिन कौन सकै निरबार।
पत राखौ मल्हना माता की और राखियो धरम हमार।।

अल्हैती पाठ-यह पाठ स्व. शिवराम सिंह द्वारा गायी जाने वाली आल्हा का है:

बारह सौ चालीस मनि ईश मास बुधवार।
करयो कोप चंदेल पर संभिर सम्भिरवार।
सुतिया गाँसन गाँसो महुबे को जैसी कागा घेर लेय बाग।
सुतिया गेर लेय गरदन की जिभिया गैरे बतीसी दाँत।
सूपा करहरा औ पचपहरा दाबै उरमिल नदी कौ घाट।
बारीगढ़ ज्यौराहा टीका मऊ ताला दाबैं दमौरा क्यार।
कोऊ दल मेलो ताला रिहुलिया कोऊ किसवाही ताल की।
कोऊ दल मेलो कल्यान सागर पै कोऊ दल नगर की पार।

भोजपुरी पाठ-

भोजपुरी क्षेत्र में आल्हा की विभिन्न वर्णनाएँ प्रचलित हैं। इनका उल्लेख डॉ.कृष्णदेव उपाध्याय और डॉ.सत्यव्रत सिनहा ने किया है। उनमें से एक का पाठ यहाँ दिया जा रहा है।

नाम रुदल के सुन के सोनवां बड़ मंगन होय जाय।
लौंड़ी लौंड़ी के ललकार मुँगिया लौंड़ी बात बनाय।।
रात सपनवाँ में सिव बाबा के सिव पूजन चली बनाय।
जौने झपोला है गहना के कपड़ा कइले जाव उठाय।।
खुलल पिटारा कपड़ा के जिन्हके रास देल लगवाय।
पेन्हल घाँघरा पच्छिम के मखमल के गोट चढ़ाय।
चोलिया मुसरुफ के जेह में बावन बन्द लगाय।।
पोरे पोरे अँगुठी पड़ि गइल सारे चुनरियन के झंझकार।
सोभे नगीना कनगुरिया में जिन्हके हीरा चमके दाँत।।
सात लाख के मँग टीका है लिलार में लेली लगाय।
जूड़ा खुल गइल पीठन पर जइसे लोटे करियवा नाग।।
काढ़ दरपनी मुँह देखे सोनवाँ मने मन करे गुमान।
मरजा भइआ राजा इंदरमन घरे बहिनी राखे कुआर।।
बइस हमार बित गइले नैनागढ़ में रही बार कुआर।
आग लगाइबि एह सूरत में नैना सैंवली नार कुआर।।
अरे त लागल कचहरी इन्दरमन के बंगला बड़े-बड़े बबुआन।
ओहि समन्तर समन्तर लौंड़ी पहुँचल इन्दरमन कन गइल बनाय।।

कन्नौजी पाठ- इस अंचल में आल्हा के अनगिनत रूप प्रचलित हैं। जितने गाँव हैं आल्हा के उतने ही पाठ हैं। गेयता और संगीतात्मकता कन्नौजी आल्हा की अपनी विशेषता है। इसे 'समस्वर' और 'द्रुतगतिलय' में गाया जाता है। वाचिक परम्परा में विद्यमान उसका एक अंश यहाँ उद्धृत है:

जत साँगड़ा है दंगल में, जहँ चुचुआत फिरै असवार।
पैदर के संग पैदर अभिरे औ असवारन ते असवार।।
झुके सिपाही महुबे वाले, रहिगओ डेढ़ कदम मैदान।
खेंचि सिरोही लइ छत्रिन नें दल में झुके बाँकुरे ज्वान।।
मिले बखौरा हैं छत्रिन के कल्ला मिले बछेरन क्यार।
छप-छप, छप-छप तेगा बाजै बोले खटक-खटक तरवार।।
ढाल ते ढाल अड़ी ज्वानन की नहियें दाँव सिरोही क्यार।
तीर तुपक तरवार साँगड़ा, ऊपर बरछिन की है मार।।

अवधी का पाठ-अवध अंचल में प्रचलित आल्हा का एक रूप यहाँ दिया जा रहा है। आल्हा इस क्षेत्र में विशेष लोकप्रिय है। वह जन जीवन का एक अंग बन गया है।

कजरी बन के हाथी सजिगे, सजिगे राजस्तानी ऊँट।
सजिगे बर्धा मकनापुर के, सजिगेये नये जवाँ रंग रुट।।

सज गई तोपें हैं चरखिन पै, सजिगे सेनापति सरदार।
सजगे रथ रब्बा जौ लड़िया घुँघरू बजै बैलनवन क्यार।
सजगे मारु बाजा वाले, सजगे घोड़न के असवार।
सजगे खच्चर बोझा वाले, सजगे ज्वान छड़ी सरदार।।
चरमर चरमर पनहीं बोलै, झण्डा आसमान फहराय।
जंग का बिल्ला बाँधे योद्धा रहे मूँछें पै हाथ फिराय।।
ब्रह्मा, मलखे, आल्हा, ताला, देवा और उदयसिंह राय।
ढिगैं जाय मल्हना रानी के पावन पड़े मनै हरषाय।।
आशिष दीन्हीं रानि मल्हना ने पूजिन भुजा तिलक दे माल।
बोली मल्हना जावौ बेटा, तुम्हरो होय न बाँका बाल।।
पीठ दिखइयो मत बैरी को, चहै तन धज्जी धजी उड़ जाय।
सुनत बतकही रानी मल्हना की कहन लगे उदयसिंह राय।।

ऊपर उद्धृत पाठों में आल्हा के विविध क्षेत्रीय रूप देखने को मिलते है। इन रूपों में तत्तद क्षेत्रों की संस्कृति, लोकाचार, प्रथाएँ, बोलियों की प्रचुर राशि विद्यमान है। इस शब्दावली के आधार पर इन पाठों की समय सीमा की पड़ताल की जा सकती है। यह हमारी लोक सम्पदा है इसके संरक्षण, सूचीकरण और लिपिबद्धी करण की आवश्यकता है। सबसे पहले तो इनके जो रूप लिपिबद्धमिलते हैं। उनके तुलनात्मक अध्ययन की पहल की जानी चाहिए।

-१२६०, नया रामनगर,
पाठक का बगीचा, उरई (उ0प्र0)卐

बुन्देलखण्ड में बेरोजगारी

-पं.ओमप्रकाश तिवारी

मध्यप्रदेश के भौत बड़े क्षेत्र में फैलो जौ बुन्देलखण्ड जीके लिंगा हीरा और अनेकन खनिजन को भण्डार धरती में दबो है, खेती के लाने भारी, मोटी, दुमट, कारिया ज्यादा उपजाऊ धरती है, उद्योग, धन्धन के लाने आबादी सौऊ ऐनई है, तोऊ जो क्षेत्र बेरोजगारी, गरीबी, भुखमरी से जूज रओ ई को कारण जानवे और दूर करवे के उपाय अवै तक नई करे गये। दरसल ई क्षेत्र को मान्स, पढ़ो लिखो कम है, और जागरूक सोऊ नइयाँ, ईसें वो इन समस्यन से छुटकारो नईं पा रओ। ईके संगे-सँगे कछू औरऊ कारण सोऊ हैं, उनपै विचार करवो भौतऊ जरूरी है जी से इन समस्यन को अन्त हो सके।

इतै को आदमी घरेलू बीमारी से ग्रसित है जिये अंग्रेजी में 'होमसिकनिस' कई जात। कजन्तकीदार उये बायरें जावे को मौका मिलत तो वो अपने गाँव, घर खों छोड़कें जावे तैयार नइयाँ, और अगर कछू दिनन खो चलो जात, तो पैसा टका कमा के इतईं लौट आऊत और ऊ पैसा सें न काम धंधो करे न कौनऊँ रूजगार। वायरे जावे से नशा की आदतें, और केऊ रोग ले कें जरूर आउत, जीसें ऊको तथा ऊके परवार को जीवन नष्ट जरूर होजात। और बीमार रैवे से कौनऊ दीन को न रै। साव सई से ऊदों-सूदों करजा लै कै, फिर ओई गरीबी बेरोजगारी में फस जात।

इते के गाँवन में जो गाँवदारी के धंधे जैसे दोना, पातर, बनावे बॉस को सामान बनावों, माटी के वासन बनावो और बॉस, स्याई, किरमिच, खजरी से टिपइयाँ, खड़ाऊँ, पिरियाँ, बारा-झाड़ू बनावें को काम धंधो होत तो, चामरे से पनईयाँ बनत्ती, लोय कौ सामान, लकइया को सामान बनत्तो, वे सब बंद हो गये चायजा कैलो के उनें कैसऊ कै सहारो न देके सब व्यापारियन ने हथया लय, जी से गाँवन में पलवे वारे साधन बंद हो गये और इसें जुड़ लोग, बेरोजगार हो गये, जो भौतऊ बड़ो कारण है ईपै न ध्यान सरकार ने दओ ने समाज ने ईसें जा समस्या विकाराल हो गई। ईके लाने इन धंधन खों बढ़ावा देने आये तो गाँव की बेरोजगारी जरूर दूर हुये।

ईके संगे-संगे इतै की जमीन बिना सिंचाई के डरी है लोगन नो जमीन तो है लेकिन पानी नइयाँ। पार-टैरियाँ खूबऊँ हैं कजन्तकीदार उन पार-टैरियन के लाने, छोटे-छोटे बाँध बंधान बना के ताल, तलैया, बना दई जायें, तो धरती में पानी को स्तर भी बढ़ लै जीसें कुँअन में पानी हो जै, और उन ताल तलैया सें सिंचाई खों पानी भी मिल जै, सो जों कऊ हो नई रओ। सरकारी काम बिना जाँचे पड़ताले कराये जात जीसे कछू लाभ सूदो जनता खों नई होरओ कजन्तकीदार बुन्देलखण्ड में सिंचाई के साधन तैयार करा दये तो इते की धरती भौतऊँ उपजाऊ है जी से इते दालुदूर दूर हो जे।

ई क्षेत्र में खनिज सम्पदा के भरे पूरे भण्डार होवे की संभावना है लेकिन ऊके दोहन के लाने कौनऊ उपाय नई करे गये, कल-कारखाने नई लगाय गये, जी से इते की एक बड़ी आबादी बेरोजगारी से जूझ रई, कजन्तकीदार कारखाने लगवाके इते के खनिज को निकार कै उनके उत्पाद सामान बनाये जायें, बाहर भेजवे के उपाय करें जायें तो क्षेत्र को विकास कोऊनई रोक पा रओ, लेकिन दुर्भाग्य जो है कै ईको पूरो-पूरो फायदा इतै की जनता खों न मिलकै बायरी व्यापारियन खों मिल रओ, जैसे इतै गोरा पथरा, ग्रेनाइट को पथरा, बजरी, रेत, गिट्टी को पथरा भौतऊ है लेकिन ईको फायदा व्यापारी लैरओ, इनखो वायरे भेजवे के कारखाने ऐई क्षेत्र में लगा दये जाये तो वे सामान कमखर्चीले सस्ते बनें और इतै की जनता खो काम धंधो मिले, जीसें उनें घर पेई काम मिल जै सो उने बायरें न जाने आये और बेरोजगारी मिट जै।

इतै पढ़ाई लिखाई की भी नौनी व्यवस्था नइयाँ इतै के नौजवानन खों न तो पढ़ाई-लिखाई को चस्का है, और न दिलचस्पी, काय के मताई बाप बढ़े लिखे नइयाँ सो वे ऊकी कदर नई जानत और कदर न जानवे से वे अपने लरका बच्चन खों ऊँची शिक्षा के बारे में सोचई नई पाउत। कौनऊ ऐसी व्यवस्था सोऊ नइयाँ के इनें आगे बढ़ाओ जाये। काय कै, बिना पढ़े लिखे, ऊँची शिक्षा लये बिना नौकरी चाकरी सोऊ नई मिलत जीसें बेरोजगारी फैली है। कैवे को मतलब है कै जा क्षेत्र में उन्नत खेती की सोऊ परपाटी नइयाँ, और न उद्योग धंधे है न ऊँची पढ़ाई लिखाई की व्यवस्था है गाँवदारी के धंधे बंद है, कल कारखाने है नइयाँ, सिंचाई के साधन है नइयाँ, तो बताओ लो कैसे बेरोजगारी दूर हुये। इन सबके लाने प्रयास करवे की जरूरत है तबई बेरोजगारी मिटहै।

-ग्राम ज्यौरामौरा तहसील पृथ्वीपुर जिला टीकमगढ म0प्र0 卐

बुन्देली लोक रागिनी सैर में हरदौल चरित्र

-डॉ. श्रीमती गायत्री वाजपेयी

बुन्देलखण्ड में सैर साहित्य का प्रचलन लोकरागिनी के रूप में अत्यन्त प्राचीन है। सैर शोभधर छन्द का अपभ्रंश है जिसमें बाइस मात्राएँ होतीं हैं तथा बारह एवं दस के बाद विराम होता है। इसके चार चरण होते हैं।[१] सैर छन्द काव्य प्रभाकर के राधिका व कुंडल छंदों से साम्य रखता है, इसमें प्रवाह की प्रमुखता होती है, इसलिए इसे प्रावाहिक छन्द की श्रेणी में परिगणित किया जाता है। सैर छंद में चार चौक तथा बीच में एक लावनी हरिगीतिका या झूलना रखा जाता है, जो कवि की स्वेच्छा पर निर्भर करता है। इसके लिए कोई अनिवार्य नियम नहीं है। पूर्व में चार चरण वाली सैरै लिखी जाती थीं। सैर साहित्य की नींव डालने वाले झाँसी निवासी भग्गीदाऊ जू ने चार चरणवाली सैर लिखी है। बुन्देलखण्ड में लोकरागिनी सैर को लोकप्रियता प्रदान करने का श्रेय पं.गंगाधर व्यास को ही जाता है, क्योंकि इन्होंने परम्परागत चार चरणवाली सैरों के स्थान पर तीन चरण एवं एक टेक रखकर सैर बनाई तथा शीर्ष पर दोहा, सोरठा अनिवार्य एवं वैकल्पिक रूप से किसी एक छन्द लावनी, हरिगीतिका या झूलना रखकर झुमका बनाने की सर्वथा नवीन प्रणाली का उन्मेष किया, जो अति लोकप्रिय हुई। लोकरागिनी में निबद्ध सैर फड़ साहित्य की अभिव्यंजन शैलियों में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

बुन्देलखण्ड में साहित्यिक दृष्टि से इस विधा का अपना विशिष्ट महत्व है इसमें जहाँ लोकरंजन की महत्वपूर्ण सामग्री है वहीं विद्तजनों के चिंतन मनन के लिए प्रचुर सामग्री भी उपलब्ध है। सैरों में् सभी विषयों एवं रसों की सफल अभिव्यंजना हुई है। पौराणिक चरित्र श्रीराम एवं श्रीकृष्ण की लीलाओं के साथ शास्त्रीय विषयों एवं लोकाख्यानों पर भी सैरें लिखी गई हैं। पं.गंगाधर व्यास जी द्वारा 'भरथरी चरित्र' एवं उनके शिष्य दशानन्द द्वारा हरदौल चरित्र की रचना अत्यन्त सरल, सहज एवं हृदयग्राही भाषा में हुई है। यहाँ पं. गंगाधर व्यास के प्रिय शिष्य दशानन्द कृत 'शैर हरदौल चरित्र' का विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत है। बुन्देलखण्ड में धर्मवीर लाला हरदौल का चरित्र अपने महान त्याग, बलिदान एवं कर्तव्य परायण के लिए प्रख्यात हैं। वे एक साधारण मानव होते हुये भी अपने कर्तव्य पालन के अद्वितीय कृत्य से देवत्व को प्राप्त हुये। इस संबंध में 'शैर हरदौल चरित्र' की भूमिका के ये शब्द विशेष रूप से उल्लेख- 'उनका महान त्याग और कर्तव्य परायणता इतिहास में एक आदर्शमयी घटना है। यह ठीक है कि कोई सुधा पीकर अमर होता है, लेकिन बुन्देल वीर श्री हरदौल जू गरल पीकर सदा के लिए अमर बनकर आज घर-घर में पूजा के पात्र बन गये। उसी अमरत्व के कारण आज मंगलकार्यो में देशवासियों में गृह देवियों द्वारा उनके गीत गाये जाते हैं।[२]

बुन्देलखण्ड लाला हरदौल के जीवन वृत के संबंध में इतिहास में जो तथ्य प्राप्त होते हैं उसमें उनका नाम हरदेव या हरिसिंह देव प्राप्त होता है। ओरछा के दरबारी कवि आचार्य केशव अपने ग्रंथ 'वीरसिंह देव चरित' में अवश्य इनका उल्लेख 'पुनि हरदौल बुद्धि गंभीर' कहकर हरदौल नाम की प्रामाणिकता सिद्ध करते हैं। पं. गोरेलाल तिवारी ने भी अपने 'बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास' नामक ग्रन्थ में इनका नाम हरदौल बतलाया है उनके मतानुसार हरदौल ओरछा नरेश वीरसिंह के द्वितीय पुत्र थे उनकी माता का नाम गुमान कुंवरि था और वे इन्हीं रानी से उत्पन्न चार सगे भई हरदौल भगवतराय, चन्द्रभान और विसुनसिंह थे तथा एक बहिन कुंज कुंवरि।' नाम की ही भाँति हरदौल की जन्मतिथि भी इतिहास में विवादग्रस्त है। ओरछा में फूलबाग की बैठक और राम राजा मंदिर के चौक में बने लगभग चार फीट ऊँचे स्तंभ में सं. १६६५ वि अंकित है तो 'ओरछा रिकार्ड दस्तूरात' के पृष्ठ २५५ के आधार पर उनका जन्म सं. १६६५ माघबदी२, शनिवार रात्रि ९ बजे निर्धारित है। वहीं वीरसिंह देव चरित जिसका रचनाकाल सं. १६६४ है, और इस ग्रंथ में हरदौल का उल्लेख है। अत: इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि हरदौल का जन्म सं. १९६४ से पूर्व का ही है। इन्हीं सब तथ्यों को ध्यान में रखते हुये डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त जी ने हरदौल की जन्म तिथि सं. १६५६ वि. के आसपास स्वीकार की है।[३] जन्म की ही भाँति उनकी मृत्यु की तिथि भी विवादित है। ओरछा की बैठक और स्तंभ में मृत्यु तिथि सं. १६८८ खुदी है वहीं पं. गोरे लाल तिवारी के अनुसार सं. १६८५ है।[४]

लाला हरदौल की बलिदान गाथा जो लोक व्याप्त है उस पर इतिहास मौन है इसका उल्लेख जनश्रुतियों एवं किंवदन्तियों में प्राप्त होता है। लोक में प्राप्त वर्णनाओं के आधार पर ऐसा माना जाता है कि ओरछा नरेश जुझार सिंह की रानी चम्पावती अपने देवर हरदौल से अत्यधिक प्रेम करती थीं। हरदौल भी उन्हें माता के समान मानते थे। महाराज जुझारसिंह जब मुगल दरबार या मुगल सेना में रहते थे उस समयावधि में हरदौल ही ओरछा का राजकार्य संभालते थे। अपनी सत्यवादिता, न्याय प्रियता वीरता, आदि गुणों के कारण वे अत्यन्त लोकप्रिय थे। इस कारण ईर्ष्यालु दरबारियों और मुगल प्रतिनिधि ने षड़यंत्र कर जुझारसिंह को हरदौल के विरुद्ध भड़काया तथा देवर भाभी के पवित्र रिश्ते को अनैतिक बताया परिणाम स्वरूप राजा के मन में अपने भाई के प्रति दुर्भाव पैदा हो गया और उन्होंने रानी के पतिव्रत धर्म के परीक्षार्थ रानी के हाथों हरदौल को विष दिलवाया। रानी ने हृदय पर पत्थर रखकर अपने प्रेम की पवित्रता प्रमाणित करने के लिए हरदौल को विषमिश्रित भोजन करवाया। हरदौल ने अपने अग्रज के शक को निर्मल सिद्ध करने हेतु हँसते-हँसते विषयुक्त भोजन किया और भाभी के आत्म सम्मान एवं अपने पवित्र प्रेम की रक्षा करते हुए प्राणोत्सर्ग कर दिया। इस संबंध में डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त का यह कथन विशेष उल्लेखनीय है- 'हरदौल अपनी भौजी के पवित्र प्रेम की पवित्रता सिद्ध करने के लिए बलिदान हो गए। वास्तव में यह बलिदान

एक तरफा त्याग नहीं है, वरन् उसमें दोनों ओर के कई आदर्शों का संगम है। रानी का पतिव्रत और देवर के प्रति वत्सल भाव तथा हरदौल का भौजी से प्रेम, उसके धर्म की रक्षा का संकल्प और अपने प्रेम की पवित्रता में खरे उतरने का उत्साह। तात्पर्य यह है कि हरदौल का प्राणत्याग वैयक्तिक प्रेम का प्रतीक मात्र नहीं है, वरन् उसमें भारतीय संस्कृति के आदर्श का पूरा उत्कर्ष है। वह नारी और पुरुष के पवित्र प्रेम का ऐसा गुलदस्ता है जिसकी सुगंध कभी बासी नहीं होती।[५]

पवित्र प्रेम की सुगन्धि को लोकरागिनी सैर जैसी अत्यत लोकप्रिय विधा के माध्यम से चहुँओर बिखेरने का कार्य किया। बुन्देली वृहतत्रयी के सुविख्यात कवि पं. गंगाधर व्यास के कृपापात्र शिष्य श्री दशानंद जी ने। जिसका उल्लेख भूमिकाकार श्री गोकुल प्रसाद (मोहन) राजनगर की इन पंक्तियों में हुआ-

सुकवि दसानंद ने लिखी, श्री हरदौल चरित्र।
सरस काव्य भाषा सरल, भूषित भाव पवित्र।।[६]

भारतीय संस्कृति की पावन परम्पराओं का निर्वहन करते हुये कवि दशानंद जी ने सर्वप्रथम विघ्न विमोचन, मंगलकरन गिरजा सुत श्री गणेश जी एवं वीणापाणि वाणी की अधिष्ठात्री देवी शारदा की स्तुति की है-

दोहा- *गिरजा नंदन को सुमर, शारद को कर ध्यान।*
शैर बना हरदौल के, कीजत चरित बखान।।

सोरठा- *कीजत चरित बखान, भवो ओरछे जोन विध।*
जहर हलाहल जान, दवो भाई ने भाई को।।[७]

इसी क्रम में कवि ने हरदौल के पारिवारिक जीवन वृत, मातृतुल्य भाभी के प्रति उनके स्नेह, भाभी का उनके प्रति वात्सल्य भाव, षड़यंत्रकारियों द्वारा राजा जुझारसिंह को भड़काना, राजा का संशयग्रस्त हो क्रोधावश में रानी के समक्ष जा उनसे हरदौल को अपने हाथों विषपान करा अपने पवित्र प्रेम एवं पातिव्रत धर्म को प्रमाणित करने हेतु हठ करने संबंधी घटनाओं का उल्लेख अत्यन्त सरल, सहज एवं भावपूर्ण भाषा में किया है-

दोहा- *नगर ओरछे में भये, राजा वीर सिंह देव।*
तिनके कुँवर जुझार सिंह, कियो सो सब सुन लेव।।
जुगल पुत्र जिनके रहे, लघु भ्राता हरदौल।
जेठे नृपत जुझार सिंह, बई पाप की बौल।।

सं. *अवतंस वंश बुन्देलखण्ड में हरदौल भये बलवान ते।*
राजा जुझारसिंह के लघु भ्रात पुत्र समान ते।
रानी के अति प्रिय प्रान से लाला के प्यारे प्रान ते।
जो चुगल ने चुगली करी सो सकल हाल बखान ते।।

*****

छंद- *रिस भरी राजा के हिये झट उठ सभा से उस घरी।*
रावर में यह बोले लला विष दैकें मारो हरबरी।
लघु भ्रात निज तुबतात ऐसी चूक का उनसे परी।
रानी की माने किस तरा, होनी हती सो ना टरी।।[८]

होनहार अत्यन्त प्रबल होती है कहा गया है 'भवितव्यता हि द्वाराणि भवन्ति खलु सर्वत्र' अर्थात् भवितव्यता के सब जगह दरवाजे होते हैं। संत शिरोमणि तुलसीदास जी ने तो स्पष्ट उद्घोष किया है-

तुलसी जसि भवतव्यता, तैसी मिलइ सहाइ।
आपुनु आवइ ताहि पै, ताहि तहाँ लै जाइ।।[९]

होनी होकर रहती है यह शत प्रतिशत सत्य है। महारानी चम्पावती ओरछा नरेश को यह समझाने का भरसक प्रयत्न करती हैं कि उनकी शंका निर्मूल और निराधार है। अपने लघुभ्राता के प्रति उनका यह दुर्भाव भावी विनाश का आमंत्रण होगा। अपयश तो फैलेगा ही राजपाट भी संकट में पड़ जायेगा, लेकिन रानी की इस समझाइस का राजा पर कोई असर नहीं होता है। सैरकार कवि दशानंद जी लिखते हैं-

दोहा- *होनहार अत प्रबल है, तुमें न अबै दिखात।*
राज काज महाराज सब, इन बातन मिट जात।।

शैर- *मिट जात राज काज नाथ पाप के किये।*
लघु बंधु अबै भारत सोचत नही हिये।
नुकसान नाथ काहै अरु का कह लिये।
का दयो दुःख कैसो जो बने विष दिये।
विष दये लहौ दुःख बहुत भोगने परै।
है कुटिल नृपत चित्त माँझ एक न धरै।
देवो जहर ललै फेर फेर बात बोई करै।
कह बार-बार मार नहीं पाप को डरै।
डरता न जरा राजा करता अनीत है।
मालूम होत तेरी लाला सें प्रीत है।
मत दे जबाब हमको न बता नीत है।
दुख मारे कौ पातक नइ तुम पै बीत है।
बीते विशेष राजा यह हिये विचारौ।
होके निसंक रानी अस वचन उचारौ।
दुज से सिवाय मेरे है देवर वारौ।
है सुत समान साचौ लघु बंधु तुम्हारौ।
निज बंधु हमें उजर नही जौ हुकम करौ।
मैं बार-बार बरजो चित एक न धरौ।
बिलखात रात बीती भवो भौर लख पूरौ।
नावन को बुला नेवते को हुकुम अनुसरो।
अनुसरौ हुकुम नावन झट पहुँची जाकैं।
पर पाय प्रथम मुजरा रानी कौ सुनाकै।
व्यंजन अनेक भावी तुम काज बनाकैं।
रावर में लला दर्स देव हम को आकैं।[१०]

तत्सम, तद्भव, देशज एवं विदेशज शब्दावली का सुष्ठु समायोजन सैरकार ने इस सैर में किया है। प्रसादगुण सम्पन्न इन पंक्तियों अनुप्रास एवं पुनरुक्ति प्रकाश अलंकारों का प्रयोग हुआ है। बुन्देली के क्रियापदों का प्रयोग भी सौन्दर्य वृद्धि में सहायक है। करुण रस की सरस, सहज एवं स्वाभाविक योजना हुई है।

राजा की हठधर्मिता से पराभूत रानी अपनी विवशता एवं लाचारी पर विसूरती हुई अपने पुत्र तुल्य देवर को भोजन हेतु रनिवास में आमंत्रित करती हैं और अपनी वत्सलता की करुण चीत्कार को अन्तःकरण में दबाते हुये अपने पातिव्रत धर्म का पालन करते हुये विषमिश्रित बहुव्यंजन पकाती है।

उधर हरदौल भी रानी माँ, का आमंत्रण पाकर हर्षाभिभूत हो उठते हैं। नियत समय पर अपने सहयोगियों सहित वे रनिवास में पहुँचते हैं। सैरकार श्री दशानंद जी ने इस प्रसंग का बड़ा ही भावपूर्ण वर्णन किया है-

दोहा- *आकै दरशन दीजिये, कुवरावर ले सात।*
नेवतौ भौजी को सुनौ, प्रफुल्लित भये सब गात।।

सोरठा- *प्रफुल्लित भये सब गात, गये अखाड़े में लला।*
कुवरावर लै साथ, मल्लयुद्ध बहु विध कियो।।

शैर- *कर मल्ल युद्ध सबने पय पान किया है।*
पोसाग होय जल्दी जौ हुकम दिया है।
सामान आन ड्योढ़ी पर मगा लिया है।
भई छींक छुअते कपड़ा सोउ डगा दिया है।
इत रानी असनान करे तपी रसोई।
रच बरा बरीदार कड़ी चाँवर सोई।
सुंदर शिकार मछरी मृग लला अलोई।
बरनन करें कहाँ लो ना बाँकी कोई।
बाँकी न कोई सब में विष दवो मिलायकें।
असुमन से गयो रानी को तन अनायकें।
घर-घर फेर नाइन से कओ बुलायकें।
मत देर करो लाला से कहौ जायकें।
जाकें कहो लला से कै जल्दी आवैं।
हो गई रसोई नाहक न देर लगावैं।
गई नाइन झट जहाँ लला बैठे रावें।
भोजन को होय चलवो भावी जू बुलावै।
बुलवायो तुम्हें लाला भावी ने हर वरी।
कपड़ा मगाय लाला ने जल्द उस घरी।
पौशाक पैर पगड़ी जो शीश पै धरी।
भइ बाँय छींक कर सें तरवार गिरपरी।
तरवार गिरत चौचर कुँवरावर में मची।
असगुन बड़ी विशेष भवो सबै जा जची।
उठ चले लला बैठे कछु जात ना बची।
होना है वही जो कुछ करतार ने रची। [११]

करुण रस का सांगोपांग निरुपण इस सैर में हुआ है। वस्तुत: लाला हरदौल और महारानी चम्पावती की लोकगाथा में करुण रस की ही प्रधानता है। लोक विश्वासानुसार किसी भी कार्य के शुभारम्भ में छींक का आना, अस्त्र-शस्त्रों का हाथ से छूट जाना आदि अपशकुन माने जाते हैं। सैरकार ने इस प्रसंग में बाँयी छींक के आने एवं हरदौल के हाथ से तलवार गिरने आदि का उल्लेख किया है।

विधि के विधान को स्वीकार करते हुये विभिन्न अपशकुनों को नजर अंदाज कर हरदौल रनिवास पहुँचते हैं। रनिवास का वातावरण, माँ तुल्य भाभी की विकलता, उनका रुदन, मुख से शब्द न निकालना आदि दशा को देख वे भाभी से शपथपूर्वक इस अधैर्य का कारण जानना चाहते हैं। विवश रानी हरदौल से सारा वृतांत बताती है। हरदौल के प्रति उनका वात्सल्य उमड़ पड़ता है। रोती और विलाप करती हुई महारानी उन्हें बारम्बार कंठ से लगाती है, मुख मण्डल निहारती हैं तथा बार-बार अपने भाग्य को कोसती हैं।

हरदौल रानी से सम्पूर्ण वृतान्त सुनकर तथा माँ तुल्य भाभी की स्थिति भली-भाँति जानते हुए विधि के विधान की सर्वोपरिता स्वीकार कर रानी से भोजन परोसने का आग्रह करते हैं। राजा के संशय को मिटाने के लिए सहर्ष विषयुक्त भोजन ग्रहण कर प्राणोत्सर्ग करते हैं। रानी मरणासन्न, हरदौल द्वारा सहस्त्र गौ एवं मुहरें आदि दान कराती हैं। गंगाजल पान एवं भस्म आदि का लेप कराती हैं। हरदौल अन्तिम श्वास राम नाम स्मरण के साथ लेकर स्वर्गारोहण करते हैं। उनके ही साथ उनके परम सहयोगी मित्र, सेवक एवं अश्व आदि भी अपने प्राणोत्सर्ग करते हैं। महल में हा-हाकार मच जाता है। जिसका भाव विह्वल कर देने वाला वर्णन सैरकार ने इस प्रकार किया है-

दोहा- *भस्म रमा सन्यास ले, वरही आसन आन।*
बैठे लाला राम जप, गये स्वर्ग तज प्रान।।

सोरठा- *गए स्वर्ग तज प्रान, विकल गिरी रानी धरन।*
लगे लोग चिचियान, महलन में खलबल मची।।

शैर- *जप राम नाम सुर्गधाम पहुँचे जाके।*
भौजी गिरी विलोक झमा धरनी खाके।
सिर धुनत धरन मरतन हरदौल लला के।
खलबल परो महलन में रये रुदन मचाके।
खलबल के सुनै नौ सै कुँवर उठकै धाये।
भौजी समेत लाला की देख दशा ये।
व्यंजन निकार विषमय सब जबरई खाये।
मालिक कौ मरो जान आन प्रान गवाँये।।
दये गवाँ प्रान दो सै इक्का उतइ मरे।
है जाहर जिन कइयक मैदान सर करे।
जूँठन को थार भंगी खा प्रान पर हरे।
घोड़े पचास ठिये देत धरन में परे।
धरनी में डरे मरे बाज मय सवार के।
अरु दल सिंगार हाथी चिक्कार मार के।
दये छोड़ प्रान धरनी खातन पछार के।
मर गवो महाँवत हन कटार धर्म धार के।
निज धर्म धार खासे सब मरे कहारा।
चीते वो बाघ कुत्ता भये भौंकत पारा।
मैना सुआ मुनइयाँ पिंजरन के मझारा।
सब तड़प-तड़प मर गये न लागी बारा।
पसु पंछी की सुनि अत भइ दशा ई तरै।
नर नारन कौ बरनन हम कौन विध करें।
संगन समेत दाह क्रिया भइ जिस तरै।
फीकी रजास हो गई हरदौल के मरै।
हरदौल के मरै से अति करुणा छाई।
रैयत उदास ओड़छे की देत दिखाई।
जेठी बहिन लता की सो दतिया व्याई।
सरनाम नाम जग में रह कुंजाबाई। [१२]

रनिवास में हरदौल सहित उनके सहयोगियों, पशु पक्षियों आदि का यह आत्म बलिदान बुन्देलखण्ड के इतिहास में अद्भुत

मिसाल है। जिसकी करुण गाथा बुन्देलखण्ड तक ही सीमित नहीं है, वरन इसकी अनुगूँज देश के कोने-कोने में भी सुनाई पड़ती है। ओरछा के रनिवास में सामूहिक प्राणत्याग की इस घटना के संबंध में डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त जी ने लिखा है-'कहा जाता है कि हरदौल की मृत्यु पर एक मेहतर और कुत्ता ने अवशिष्ट भोजन खाकर प्राण दे दिये थे, इसीलिए हरदौल के चबूतरे के साथ उन दोनों के स्मृति चिन्ह भी बनाये जाते हैं। मेहतर की चौंतरिया (चबूतरे का छोटा रूप) तो पहचान बन गई है, सम्भवतः इसी कारण उच्च और निम्नवर्ग दोनों एक सी श्रद्धा रखते हैं और सभी हरदौल की पूजा करते हैं। एक घटना यह भी प्रसिद्ध है कि सात सौ साथियों ने प्राण त्याग कर उनका अनुसरण किया था।[१३]

बुन्देलखण्ड के इतिहास एवं लोक में यह मान्य है कि हरदौल की बहिन कुंज कुँवरि ने अपनी पुत्री के विवाह का निमंत्रण ओरछा पहुँचाया था तथा भान्जी के विवाह में भात लेकर आने का आग्रह किया था जिसे राजा जुझार सिंह ने अस्वीकार कर दिया था। तत्पश्चात् कुँजकुंवरि ने स्वयं आकर अपने प्रिय भाई हरदौल को उसी जगह पर जाकर निमंत्रण दिया था। जहाँ उनका अंतिम संस्कार किया था। हरदौल ने भी दुःखी बहिन को भान्जी के विवाह में भात लेकर आने का वचन दिया था। और अपने वचनों की रक्षा हेतु वे अदृश्य रूप में समय पर अनेक सोने चाँदी के आभूषण, वस्त्र घोड़े एवं गाड़ियों पर लदे बहुमूल्य सामग्री के साथ भात देने पहुँचे थे। जिसका बड़ा ही सरस वर्णन सैरकार दशानन्द जी ने इन शब्दों में किया है-

दोहा- *जर जावे वा राजसी, बने तो राखो लाज।*
जियतन पै गाजै परे, मरे सुधारै काज।।

सोरठा- *मरे सुधारै काज, तुमही लौ आसा हमें।*
उनपे परी न गाज, जिहर दवो जिनने तुमें।।

शैर- *दै जहर तुम्हें हमको कर दवो निरास है।*
अब जायं कहाँ लगरई तुमही लौ आस है।
तुम ब्याह करौ चल कै भनेजन को खास है।
हो के सनाम करियौ बैकुंठ बास है।।
बैकुंठ वास खास होत धर्म करै सैं।
करनी ना कछू बाँटे का जियत मरे सैं।
समझाय कही कुंजा ने कई तरे सैं।
बिन वीरन में हाय लगौ की गरे सें।।
कीके गरै लगौगी ये कइ बखान कैं।
हरदौल वचन बोले अति विकल जानकैं।
वह पार करे धर दयो जिन ठान-ठान कें।
तुम जान धरै कर हैं हम व्याह आन कैं।।
हम ब्याह करै कुंजा को भवन पठायो।
इत नगर शाह लाला हरदौल बुलायो।
करवे खाँ काज मुहरन कौ हड़ा बतायो।
जो लगत होय चीकट सो जल्दी ल्यायौ।।
जल्दी मँगाय जोरे सौ कीमत भारी।
कोइ तीन खाप मिसरू अरु झूना सारी।
जरतारी पोसाक बनी दुलै न्यारी।
जेवर जड़ाऊ जिसमें मन मानिक भारी।।
जेवर जड़ाऊ जल्दी से त्यार कराकै।
सौ गाड़न में चाँवर अरु दार भरा कै।
घी अस्सी मन अब्बल से अब्बल ताकै।
मुहरें हजार बोरन में धरी मँगाकैं।।
शक्कर असल बनारस की आज्ञा पाकैं।
मँगवाय साठ गाड़न में भर दई ल्याकैं।
मुहरें हजार साठ लईं नगद खिंचाकें।
भये तैयार मरे संग जहर जितने खाकें।[१४]

हरदौल द्वारा मृत्यु पर्यन्त भाँजी के विवाह में भात लेकर जाना, बहिन के आग्रह करने पर प्रेमपूर्वक उनसे गले मिलना आदि घटनाएँ उनके देवत्व का प्रमुख आधार है। सैरकार ने इस चमत्कारी घटना का वर्णन करते हुये लिखा है-

दोहा- *व्याह भनैजन को करन, लाला दतियै जात।*
गज रथ घोड़ा पालकी, किड़विड़ परी दिखात।

सोरठा- *किड़विड़ श्रवन सुनात, नजर न आवै काहुकी।*
जौन गाँव हाँ जात, जिंमीदार भेंटे लिये।।

शैर- *भेंटे मँगा मँगा के धर देत सामने।*
मुजरा करावो जाहर रैयत तमाम ने।
देव दरस आन धन्नू घरी करी रामने।
समझाय कहा सबसे मालिक मुदामने।।
मालिक मुदाम काहू को ना दिखात है।
हरदौल बड़ी खातिर कर कर के कात हैं।
भूमिआ हो बसौ सुख सैं सबसे बतात हैं।
ना लेत भेंट धर्म काज करन जात हैं।
कर धर्म काज दतिया में पहुँचे जाई।
जातन सगी भनेंज लला खेलत पाई।
हाथी से उतर गोदी में लियो उठाई।
मुहरें हजार दई बड़ी खुशी मनाई।।
नाँई नकीब भेजे देव खबर जताई।
जाहर करो के ओड़छे से चीकट आई।
सुनकर अवाई भाई की उठ कुँजा धाई।
कऊँ होवो हाय वीरन तौ देव दिखाई।।
दीजे दिखाई आई हो मिलवे के लाने।
जोलो न मिले तौलो ना नैन जुड़ाने।
बिन भेंट करें मोखाँ न चीकट चाने।
छाँड़त न बान कठिन ठान कुँजा ठाने।।
ठानै है ठान आन मिलो वीरन बारौ।
जो धर्म काज अपने हाथन सौ सम्हारौ।
बिन भेंट करें गात ना जुड़ात हमारौ।
धर धीर हिये लाला अस वचन उचारा।।
हरदौल कहें किलपी काये मरी जात है।
छाँड़त न तोह वही बान परी जात है।
साधत न काज बीती जो घरी जात है।
कहूँ भूतन से भेंट बैंन करी जात है।।
भूतन से भेंट बैन नहीं जात है करी।

कर हाय खा पछार धरन धाय गिर परी।
जब जान लई तात बहिन जात है मरी।
चल खंभा ढिंग आतुर हरदौल उच्चरी।।[१५]

करुण रस का पूर्ण परिपाक हरदौल एवं कुँजा के वार्तालाप में हुआ है। भाषा भावानुकूल है। तत्सम, तद्भव एवं देशज शब्दों का खुलकर प्रयोग हुआ है। बीच-बीच में विदेशज शब्दों का छौंका भाषा को सहज सौन्दर्य प्रदान करता है।

हरदौल लोक गाथा का अत्यन्त मार्मिक एवं हृदय द्रावक प्रसंग है हरदौल व कुँजा की प्रेम पूर्ण भेंट। सैरकार ने इस चमत्कारी प्रसंग की मार्मिक अभिव्यक्ति इन शब्दों में की है-

दोहा- *खंभा ढिंग कुँजा गई, छुअत उठो चर्राय।*
भले बैन वीरन मिले, लीनों कंठ लगाय।।

सोरठा- *भेंटो कंठ लगाय, चरन छुये हरदौल ने।*
खुसी न हृदय समात, जैसी कुँजा को भई।।

शैर- *कुँजा ने वीरन मिलवे की खुसी मनाई।*
दवो हुकुम लेव चीकट कौ नेग कराई।
मुहरें हजार जोरन पै लला धराई।
तौलो बरात चामिल से सज कै आई।।
सज कैं बरात लोग लैन चले शहर के।
आनंद उमंग दतिया में नारी नर के।
दौरे कहार काँवर में शरबत भर के।
जलपान कियो सब मिल महमान उतर के।।
तरकै बरात बैठी दतिया में आनके।
चहुँ ओर शोर हो रये डंका निसान के।
भर रहे शब्द जहँ तहँ गनकन के गान के।
जनवासो दवो खासो कर मान पान के।।
कोई आसमान बीच धूम छावो भारी।
सज साज बाज टीका की करी तैयारी।
घूमस रायंद चलत बाज इच्छा चारी।
चल मंद मंद पहुँची ड्योढ़ी पै सवारी।।[१६]

हरदौल को देवत्व प्रदान करने वाला दूसरा प्रसंग है। उनकी भाँजी के विवाह में वर के आग्रह पर साक्षात् प्रकट होकर दर्शन देना। इस संबंध में डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त ने लिखा है-'बहिन और भाई की प्रेमभरी भेंट और वर के आग्रह से हरदौल का दर्शन देना, दोनों प्रसंग चमत्कार पूर्ण हैं। इन्हीं का प्रभाव जन-जन पर छाया हुआ है। इनके अलावा हरदौल की विदाई के समय कुंजा का सभी के विवाहों में इसी प्रकार सहायता का वचन लेना सबसे अधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हुआ है। इस दृष्टि से हरदौल सामाजिक हित से बँध जाते हैं और उनके देवत्व का प्रमुख आधार यही लोकमंगल की भावना है।[१७] सैरकार श्री दशानंद जी ने दूल्हा के अनुरोध पर प्रकट होकर दर्शन देने की घटना का चमत्कारिक वर्णन किया है। बारात द्वार चार के लिए आ गई है समुचित स्वागत सत्कार एवं सम्मान के पश्चात् विप्रजनों द्वारा शुभ मुर्हूत का शोधन कर भाँवरें पड़ गयी हैं। बारात भोजन के लिए मण्डप के नीचे बिराज गई है। विविध प्रकार के रीति रिवाजों का निर्वहन करते हुये ज्यौनार परोसी जाने लगी है। तरह तरह के व्यंजन, मीठा, मिष्ठान पत्तलों में परसे जा रहे हैं। सभी की पत्तलों में गड़ये द्वारा घी परसा जा रहा है घी की धारा निरन्तर चल रही है। लेकिन परसने वाला दिखाई नहीं दे रहा है। सभी बाराती और दूल्हा इस दृश्य को देखकर विस्मय विमुग्ध हो रहे हैं। तभी दूल्हा उठ खड़ा होता है और संकल्प लेता है कि घी परसने वाले के दर्शन होने पर ही भोजन ग्रहण करेगा अन्यथा अपनी कटार से ही अपना प्राणोत्सर्ग कर देगा। दूल्हा के संकल्प की रक्षार्थ हरदौल सभी को दर्शन देते हैं। सभी मुदित मन भोजन करते हैं।

विवाहोपरांत हरदौल एवं कुंजा के वार्तालाप का वर्णन भी सैरकार ने किया है। जिसमें कुंजा हरदौल से सभी के मांगलिक कार्य विवाह आदि में सहायता करने का वचन लेती है। सैर दृष्टव्य है-

दोहा- *दयो दायजौ विविध विधि, शोभा वरन न जात।*
मान सहित पुन भेंट कर, कीन्हीं विदा बरात।।

सोरठा- *कीन्हीं विदा बरात, चामिल में पहुँची तहाँ।*
सोधन कर शुभ स्यात, वर दुलहिन भीतर गये।।

शैर- *भगनी से लला कहत भये मौका पाकैं।*
हरदौल कही देव विदा खुसी मनाकैं।
कुँजा ने कही कौन काम करने जाकैं।
कछु दवो न हमें वीरन कब मिलहौ आकैं।।
आकै करो है कारज अपनी भनैंज कौ।
प्रन पाल दवो पूरा निज कुल की पैज कौ।
राजा जुझार सिंह ने कर कर के पैज कौ।
हमको हतो भरोसौ मालिक की फैज कौ।।
मालिक की फैज सब ही को पार लगावै।
वरदान माँग लेव जौन तुमखाँ भावै।
कुँजा ने कही कोउ कभी बाह ना आवै।
जो कोई काज अपनी कन्या कौ करावै।।
कन्या के ब्याह में सहाय करन आइवौ।
आवै ना मेह आँधी ईकौ बचाइवौ।
सामान बनैं तीको तुम थार पाइवौ।
तुमको प्रथम मनावै कीरत बढाइवौ।।
कीरत बड़ै तुम्हारी दतिया में सवाई।
खुस हौकें कहीं चलतन में कुँजा बाई।
दिल्ली में जाय बादशाह दई दिखाई।
पलका उठाय पटको उपचीर मचाई।।
उपचीर देख बादशाह का भवो खटका।
है कौन देव मेरा जो पलका पटका।
मैं अबै करौ जौन काम होवै अटका।
मुँह दरश देव हो न सकत आन प्रगट का।।
हो प्रगट कहा मेरा हरदौल नाम है।
औड़छे धनी जाहर जग में सनाम है।
लघु बंधु घट, जुझार सिंह किया काम है।
विष दैके हमें पठै दवो स्वर्गधाम है।।
दवो स्वर्गधाम राजा मन पाप धारकैं।

इकछत हो राज करहै अब हमें मारकैं।
हम इतै आये काज भनैंजन को सार कै।
अब उचित होय कीजे सो तुम विचारकैं।।
करकै विचार जहाँ तलक अदल तुमारा।
सर नाम नाम जाहर रये बना हमारा।
उठ चरन परे शाह हाल सुनक्र सारा।
नाहक जुझार सिंह तुमै विष दै मारा।। [१८]

सैर के अन्त में वर्णित घटना का उल्लेख भी किंदन्तियों एवं काव्य ग्रंथों आदि में मिलता है। मुगल बादशाह शाहजहाँ को पलंग से गिराने की घटना, ओरछा नरेश जुझार सिंह द्वारा किए गये कुकृत्य से शाहजहाँ को अवगत कराना तथा शाहजहाँ द्वारा उनको यह वचन देना कि वह उनकी यश स्थापना हेतु जगह-जगह चबूतरे, बनवायेंगे, दिल्ली में हरदौल के नाम का चाँदी का चबूतरा बनवाना एवं ओरछा की हर प्रकार से रक्षा का वचन देना आदि घटनाओं का उल्लेख सैरकार ने किया है। ओरछा नरेश जुझारसिंह के प्रति मुगल बादशाह शाहजहाँ का आक्रोश, दिल्ली से हरदौल का ओरछा आगमन राजा जुझारसिंह को तंग करना, किसी भी शासक का गद्दी पर न बैठ पाना मन्त्रियों द्वारा विचार विमर्श करना तथा किसी भी शासक का गद्दी पर हरदौल की कृपा से ही बैठ पाना आदि का उल्लेख सैरकार ने इस सैर में किया है-

दोहा- *विष दैके मारा तुम्हें, जिसकी करता याद।*
राजा करते आपके, जो होती औलाद।।
सोरठा- *जो होती औलाद, आज औडछे धनी कौ।*
कर देते बरबाद, तुमरे सुत को राज दै।
शैर- *दै राज में कसूर कछू किया आपना।*
पछतात बादशाह कहत कर विलापना।
बोला वजीर जो था सो हुआ जापना।
तब बादशाह दिल्ली में करी थापना।।
थापना करी बनवा चाँदी को चौंतरा।
मित्रत मनाई बादशाह सैकरों तरा।
राखियौ दया मेरी रैयत पै सौतरा।
दिल्ली से किया कूच आम ओड़छे तरा।।
औड़छे आन कुछ दिन ऐसे बरते।
पटकत है पाँव गद्दी के ऊपर धरते।
राजा जुझारसिंह जी बड़े जबरते।
मारा है तिनै पेर पेर मरते मरते।।
मरते है तुरत गादी पै जौन थपा है।
मंत्रन नें मंत्र कीनौ जौ कारन का है।
जौलौ न कृपा कीनी हरदौल लला है।
तौलौ न सिंहासन पै बैठ आसन पाहै।। [१९]

उपर्युक्त सैर में वर्णित घटनाओं पर यदि विचार किया जाये तो दो घटनाएँ प्रथम हरदौल का पवित्र प्रेम की रक्षार्थ प्राणोत्सर्ग द्वितीय भाँजी के विवाह में सहायता करना उनके व्यक्तित्व को गौरव के उच्चतम शिखर पर पहुँचा देते हैं और वे लोक में पूजनीय बन गये हैं। विवाह में सर्वप्रथम निमंत्रण उन्हें ही दिया जाता है। तथा बाद की घटनाएँ उनके गौरव व महत्व को क्षति पहुँचाने वाली हैं। हरदौल जैसे त्यागी, बलिदानी महापुरुष के व्यक्तित्व से ये घटनाएँ मेल नहीं खाती हैं। लोकमन भी इन्हें सहज स्वीकार नहीं पाता है। इस संबंध में डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त का मत यहाँ विशेष रूप से उल्लेख्य है-'वस्तुत: इस प्रकार की घटनाएँ प्रेत की शक्ति और प्रभाव दिखाने के लिए कल्पित की गई हैं। हरदौल के चबूतरे तो उनके लोकादर्शों के प्रतीक हैं। उनको लोक ने श्रद्धा और पूजा भाव से प्रतिष्ठित किया है, किसी बादशाह या राजा की आज्ञा से नहीं। ...लोकमानस अच्छों-अच्छों की परवाह नहीं करता। वह तो केवल उन्हें ही पूजता है जो उनके अपने होते हैं, उससे हिलमिल कर एक हो जाते हैं और उसके लिए निछावर हो जाते हैं। हरदौल ने कोई धर्म नहीं चलाया पर धर्म उनके पीछे-पीछे चला, कोई ग्रन्थ नहीं लिखा पर उन पर अनेक ग्रन्थ लिखे गए और कोई राक्षस नहीं मारा पर द्वेष का राक्षस अपने आप मर गया। सही तो यह है कि हरदौल देवत्व के पीछे नहीं चले, पर देवत्व उनके पीछे चलकर बड़प्पन पा गया। आज भी गाँव-गाँव में हरदौल के चबूतरे हैं और घर-घर में गूँजते हैं उनके लोकगीत।'[२०]

ओरछा के दीवान लाला हरदौल की यह करुण गाथा आज भी जन-जन के अन्त:करण को करुणाई और नेत्रों को नम कर देती है। लोकोपकारी लाला हरदौल की यह चमत्कारी गाथा न केवल गीतों से गूँजती है वरन साहित्य की अनन्य विधाओं में भी इसकी अनुगूँज सुनाई पड़ती है। सैर प्रणेता कवि श्री दशानंद जी ने भाभी देवर के पवित्र प्रेम की इस गाथा को लेखनी बद्ध कर कवि कर्म की सार्थकता सिद्ध की है। कृति की अन्तिम सैर प्रस्तुत हैं जिसमें रचनाकार ने काव्य गुरु गंगाधर व्यास की कृपा दृष्टि, अपनी अल्पज्ञता हेतु क्षमा याचना, रचनाकाल, कृति की विशिष्टता, सहयोगी रचनाकारों व गायक कलाकारों के प्रति कृतज्ञता एवं सम्पूर्ण कृति में एक सौ दस सैरों, इक्कीस दोहा, पन्द्रह सोरठा तीन छंद प्रयुक्त होने का उल्लेख किया है-

दोहा- *श्री दीवान हरदौल कौ, रहो सुजश जग छाय।*
कवि कोविद गुनवान सोई, गाथा कहत बनाय।
कीरत श्री हरदौल की, मन प्रसन्न के हेत।
कवि कोविद गुनमान्य के, वाचन हित लिख देत।।
शैर- *बिन काज किया जैसा फल तैसा पाया।*
हरदौल भये सनाम सुजस जग में छाया।
दुज गंगाधर मुरसद की हम पै दाया।
रच दशानंद शैरन सब हाल बनाया।।
सब हाल कहौ सासे सी ढरन ढारकै।
हो भूलचूक कवि जन लीजो समार कैं।
दीजो न दोस लघु मत मेरी विचार कैं।
पद बंद दशानंद कहत बार-बार कैं।।
कहो बार-बार गनियो न मम कसूर है।
है सुचि श्रवन नछत्र भवन भरत भूर है।
शशि आद अंत गृह षट संवत जरूर है।

ऋतु अति पवित्र वरषा सावन शुकर है।
है कृष्ण पक्ष परमा गुरुवासर रावै।
उपजै अनन्द सुन्दर जो सुनै सुनावै।
जो कन्या के काज में इनै मनावै।
आवै न कभी आँधी न मेह सतावै।।
सज्जन सुजान खुसी होत इनखाँ सुनकैं।
नित नई कथन प्रानन से प्यारी उनकैं।
बनवाई मिसर भूरे नें हिरदै गुनकैं।
कहं चगन व्यास शिवप्रसाद मौरा चुनकें।।
चुन-चुन के सत ऊपर दस शैर सरस कये।
दोहा इक्कीस सोरठा पन्द्रा प्रसिद्ध रये।
दो छंद प्रथम बंदस कर आदि में दये।
अरु एक छंद जहाँ लला जहर खात भये।।
कर ठीक लिखे चगन व्यास चतुर लिखैया।
सर नाम छत्रपुर में शैरन को गवैया।
कह ऊदल सिंह ठाकुर रम गुल्ले भैया।
इस भाँत भयो पूरन हरदौल सवैया।।

दोहा- जैसी प्रतिपाई हती, तैसी लई उतार।
भूल चूक जाँ कहुँ परै, बुध जन लेव सुधार।।[21]

इस प्रकार १७ वीं शताब्दी के इस दैदीप्यमान नक्षत्र ने अपने शौर्य, पराक्रम, निश्छल प्रेम, त्याग, बलिदान एवं कर्तव्य निष्ठता के कारण बुन्देलखण्ड के इतिहास में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित, करवाया है। मातृ तुल्य भाभी के आत्म सम्मान के रक्षार्थ उनका आत्मोत्सर्ग एवं बहिन के प्रति उनका निश्छल प्रेम व दायित्व बोध ऐसी आदर्शमय घटना है जिसने उन्हें अमरत्व प्रदान कर दिया है यही कारण है कि उन पर अतुल साहित्य लिखा गया है, और लिखा जा रहा है। उनके मंगलगीत 'बुन्देला देशा के हो लाला मोरों भलो है लछारौ नाऊँ' गाँव-गाँव और घर-घर में गुँजायमान हो रहे हैं।

सन्दर्भ-

१. कवि गंगाधर और उनका काव्य-डॉ.राधा वल्लभ शर्मा पृष्ठ ७६
२. शैर हरदौल चरित्र श्री दशानंद भूमिका
३. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास-डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ ३१४
४. बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास-श्री गोरे लाल तिवारी पृष्ठ १४४
५. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास-डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ ३१७
६. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद भूमिका
७. वही पृष्ठ ०१
८. वही पृष्ठ ०२
९. दोहावली-गोस्वामी तुलसीदास दो क्रमांक ४५०, पृष्ठ १५४
१०. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद पृष्ठ २, ३
११. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद पृष्ठ ३, ४
१२. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद पृष्ठ ७, ८
१३. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास-डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ ३१८
१४. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद पृष्ठ ११, १२
१५. वही पृष्ठ १२, १३, १४
१६. वही पृष्ठ १४, १५
१७. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास-डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ ३१९
१८. वही पृष्ठ १९, २०
१९. वही पृष्ठ २०, २१
२०. बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का इतिहास-डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त पृष्ठ ३१९, ३२०
२१. शैर हरदौल चरित्र-श्री दशानंद पृष्ठ २१, २२

-श्री कृपा निकेत, आदर्श नगर,
हायर सेकेण्ड्री स्कूल क्र.1 के पीछे छतरपुर ☫

लाम गीत

-पं. राजकुमार पुजारी

छोड़ तुम्हें हम जात लाम पै, घरै चैन में रइयो।
अगर जरूरत परै देश खों, मौढ़ै पौंचा दइयो।।

सूकी रोटी नौन मिर्च सें, लगा आपनी खइयो,
ठंडो पानी पी मटका को, चैन से समय बितइयो,
बिना बुलाये चलीं मायके, कभउँ न अपने जइयो,
अपने मन खों अपने बसमें, करें हमेशा रइयो,
साँच खों आँच कभऊँ न आवै, सत खों राखे रइयो।१।

अगर जरूरत...

तोय भरोसे पै छोड़त हों, अपने बाप मताई,
पानी न डुल पाये पेट को, बेरा आखिरी आई,
जो कऊँ इनखों खबर आए तो, तुम समझायें रइयो,
आए जात वे लौट लाट कें, बातें ऐसी कइयो,
सेवा माई बाप की मन सें, करत हमेशा रइयो।२।

अगर जरूरत...

दो-दो चुटियाँ रोज मुढ़ी के वारन में तुम करियो,
ओठन खों लाली सें रचियो, माँग सिन्दूरी भरियो,
जब हम आजैं लौट लाम से, मोतिन माँग भरा दें,
चार-चार चूरा हाथन में, सोने के डरबा दें,
हँस हँस के दिन काढ़त रइयो, मन समझायें रइयो।३।

अगर जरूरत...

भारत माता के लानै जो, कऊँ रन में मर जावै,
तो न करियो सोच कछू तुम, नाव अमर कर जावै,
पतौ परै कै मरे लाम पै, मंगा लाश तुम लइयो,
तपना मोरो ऐई गाँव की, लगा भूम पै दइयो,
प्रानन प्यारी अबकै बिछुड़े पुनर्जनम मिल जाइयो।४।

अगर जरूरत...

-पुजरयाना पृथ्वीपुर, टीकमगढ़ म०प्र० ☫

बतकाव-

डॉ.रामकुमार वर्मा:जितनौ जानो मानो नौनौं लगो

-वीरेन्द्र शर्मा 'कौशिक'

ऊ दिनों (वर्षों पैलां) हम दोई जने (पत्रकार-लेखक दम्पत्ति) जिज्जी-जीजाजी के इतै इलाहाबाद उनसें मिलवे गए ते। उते हम दोई जने घूमवे फिरवे काजें पाँच-छ: दिनन के लानें गये ते। एक दिना मोय ध्यान आई कै काय ना अपने पूर्व परचित विद्वान सुकवि-साहित्यकार प्रो.डॉ.रामकुमार वर्मा सें मिल आयें। हमने जिज्जी (स्व.गायत्री दुबे) सें पूँछी, जिज्जी हम दोऊ जनें तनक अपने पूर्व परचित मित्र के इतै जाओ चाऊत। हो आयें?

'वे को आयें? तनक हमें बताकें तौ जाव? जीजा जी (स्व. रघुवीर दुबे) नें धर पूँछो?'

'वे इतै इलाहाबाद यूनिवर्सिटी में हिन्दी के प्रोफेसर हैं, जिनको नाव डॉ.रामकुमार वर्मा है। जब हम म0प्र0 के नगर टीकमगढ़ में पढ़ाऊत ते, तबईं कुण्डेश्वर आएते और हमाए मैमान बने ते।'

'अच्छा-अच्छा! ठीक है हो आऔ। जीजा जी ने तुरतईं हमें जावे की स्वीकृति दै दई।

फिर का! हम दोऊ जनें उनके घरै पौंचे। हमें देखतनईं आदरणीय डॉ.वर्मा बोले-'अरे-अरे! वीरेन्द्र कबै आए तुम, बहू रानी राजेश्वरी सोऊ हैं तुमाए संगे।'

'हाँ सर, बे हमाए संगे न रैं तौ कीके संगे फिरें?' हा, हा कर हँसत भए वे जोर सें पुकारे अरे ओ...की अम्मा। जल्दी तौ आऔ देखौ अपने इतै मेहमान दम्पत्ति आए हैं।

जैसई गुरुमाता बतौर अम्मा जी आई हम दोइअन नें उनके चरण रज सिर पै धारण करी औ ई तराँ बतयान लगे-'नइँ-नइँ! अम्मा जी! हम तौ अपुन दोऊ जनन के चरण सेवक आँय, मेहमान नौंई। अगर मैं १९५३-५५ के सत्र में उरई के बजाय इलाहाबाद में पढ़त होतो तौ जरूर आदरणीय डॉ.वर्मा कौ शिष्य हो तो। बैसे साँसी कई जाय तौ शिष्य बतौर तौ मैं होंऊँ हों। आज हम दोऊ जनें अपुन के इतै एइसें आये ते कै ई मंदिर में अपुन दोऊ देव-देवी जनों के साक्षात दर्शन पा सकें और ऊमें हम दोइ जनें पूर्णत: सफल भी होगए। हमें आदरणीय डॉ.साहब की चिठिया सोऊ मिली ती-

हिन्दी विभाग, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी, १८/७/१९६३

प्रिय वीरेन्द्र कुमार जी,

आपकी चिठिया और लेख लौटवे पै मिले आपने इत्ती अच्छी शैली में जौ लेख लिखो है कै जान परत है जैसें संजय धृतराष्ट्र सें कथा कै रए होंय। आपने इतने लौ सवाल पूँछे हैं कि उनकौ जुआव दैवे में हमें सोई एक लेख लिखने परहै।

अपनोंई-रामकुमार वर्मा

ई चिठिया के शब्दन खों पढ़ मोय ऐसो लगो कै जौन लेख तब लिखो बौ तनकई सी जानकारी भरौ हतो सो हम आज कछु और सवालन के जुआव चाऊत सो कृपया अनुमति दैवे की कृपा करें।
'अच्छा तो पूँछ लेव जो पूँछने होय, फिर का? हमने तुरतइँ पूँछवो शुरू कर दऔ-

प्रश्न- अपुन नें पैलऊ पैल साहित्य की कौन सी विधा में लिखवौ शुरू करो तो?

उत्तर- मोय जाँ तक ध्यान आऊत मैंने कविता करवौ सन् १९२२ में शुरू करो तो। ई की प्रेरणा और पूरौ प्रोत्साहन राष्ट्रीय सुकवि साहित्यकार श्री माखनलाल चतुर्वेदी 'भारतीय आत्मा' सें मिलो तो। वे मोय भौतइँ भौत चाऊत्ते।

प्रश्न- अपुन कौ जनम कबै और कितै भऔ तो? संक्षिप्त वंश परिचय सोऊ देवें।

उत्तर- हमाऔ जनम, वीरेन्द्र भैया! वीर प्रसू बुन्देलभूमि के सागर (म0प्र0) के गोपाल गंज मुहल्ला में १५ नवम्बर, १९०५ में भऔ तो। हम श्री छत्रसाल, जोन बड़े अच्छे साहित्यकार और वैद्य हते, के वंशज आँय।

प्रश्न- अपुन कविता, कहानी, नाटक, निबंध, संस्मरण आदि विविध साहित्य विधाओं में पारंगत रचनाकार हैं। इन सबमें अपुन की सर्वप्रिय विधा कौन सी है?

उत्तर- देखौ भईया! अपुन खुद जौ तौ जानतई हुइऔ कै माता-पिता की अपनी सबई संतानें एक सी प्यारी होतीं सो हम का कैदें? हाँ, साहित्य संसार सें हमाई सबई रचनाओं खों स्नेह-सम्मान मिलो है। सो अपुन सोई इये साँचो जानों और मानों।

प्रश्न- अपुन की पैली रचना कौन सी आय? कबै लिखी ती?

उत्तर- मोरी पैली रचना कहानी-'सुखद सम्मेलन' हती। वा सन् १९२३ ई० में लिखी ती। ऊ बखत हमाई उमर सत्रा वरष की हती।

प्रश्न- अपुन की साहित्य साधना अनुपम और अनूठी है। इपै कीकौ प्रभाव जादा है। बताऔ।

उत्तर- हमाई साहित्य साधना पै तुलसी, कबीर, कालिदास, आस्कर वाइल्ड, इब्सन आदि की शैली कौ प्रभाव भौत है। जे सब रचनाकार मोय भौत भाऊत हैं।

प्रश्न- अपुन के लिखवे कौ बखत कबै है?

उत्तर- हमाए लिखवे कौ बखत दस बजे रात के बाद या सबेरें पाँच बजे के बाद है।

प्रश्न- अपुन खों सबसें पैलां कौन सी रचना कौ मानदेय मिलो तो।

उत्तर- मोय अपनी सबसें पैली रचना-'वीर हम्मीर' जीपै पैलो पारिश्रमिक तीस रुपइया मिलो तो, जी पै मोय, जा खुशी भई ऊसें मोरौ मन फूल कें कुप्पा हो गओ तो। सन् १९२३ में मिली रकम तीस रुपइया आज मोय तीस हजार सें जादा लगत।

प्रश्न- मुलक मिले पुरस्कार और सम्मानन में अपुन खों कौन सौ प्यारो और अच्छो लगत।

उत्तर- सन् १९३६ ई० में मिलो ओरछा कौ 'देव पुरस्कार' हमें सबसें प्यारौ औ नौंनों लगत।

प्रश्न- अबै लौ प्रकाशित अपुन की सैकरन रचनान में सें कौन

सी रचना जादा प्यारी औ नौनीं लगत?

उत्तर- कविता में 'एकलव्य' औ नाटक में 'चारु मित्रा' नौने औ प्यारे लगत।

प्रश्न- रूस भी हो आए हैं अपुन! का कैसो लगो उतें जाकें?

उत्तर- रूस में हम दो बरस रए। उतै भौत सौ अनुसंधान करो औ का का बताएँ अपुन खों? भौतइँ नौनों लगो तो उते।

अंततः मैं कऔ चाऊत कै डॉ. रामकुमार वर्मा सें मिलकें मोय ऐसो लगो जैसें उनें अपनी मातृभूमि बुन्देलखण्ड के प्रति भौतई स्नेह औ सम्मान हतो। काए न होय एई वीर प्रसू भूमि मेंई तौ उनकौ जनम भऔ तौ जैसो कि हम पैलईं उनसें पूँछ चुके हैं। इतै हम अपनी सबसें पैलाँ कुण्डेश्वर की भेंट की जा बात सोऊ दुहराओ चाऊत- 'ऊ दिना कुण्डेश्वर की ऊ भेंट में वे अपनी मातृभाषा बुन्देली में ही बड़ी देर तक बातें करत रए। आज हमें जब ऊ दिना की बात ध्यान आउत, तौ सोच कें रै जात कै एक हम हैं जोन अपनी बोली खों कितनी उपेक्षा की नजर सें देखत। प्रायः हर बुन्देलखण्डी बुन्देली में बोलवौ गवाँरपन समझत। जोऊ कारन है कै गद्य साहित्य तौ ईमें बिलकुलइँ नइयाँ जबकि राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त, मुंशी अजमेरी जी, वृन्दावन लाल वर्मा, ब्रजवासी पं. बनारसी दास चतुर्वेदी, वृन्दावन दास जी इसे (बुन्देली) अन्य अनेक बोलियाँ और भाषाओं से भी अधिक सरल और मधुर मानते हैं। पं. बनारसी दास चतुर्वेदी और कृष्णानन्द गुप्त। तौ इतै तक दावा करत कै बृजभाषा सहित कैऊ बोलियाँ और भाषायें तौ सरसता और मधुरता में 'बुन्देली' कौ पानी तक भरें। ईमें कौनऊँ आश्चर्य नइयाँ। अपने एई बुन्देली प्रेम के कारनन डॉ.वर्मा साहब ने प्रयाग विश्व-विद्यालय में अनुसंधान और शोध कार्य हेतु अलग से बुन्देली विभाग ही खुलवा दऔ तो।

-१४३, कुरेचा नाका, मऊरानीपुर, जिला झाँसी उ0प्र0 卐

लोकनाट्य की परंपरा

-अजीत श्रीवास्तव (एडवोकेट)

नाटक या लोकनाट्य ऐसी रचना होती है जो दर्शक तक पहुँचने से पूर्व निर्देशक और अभिनेता की सीढ़ी तय करके पहुँचती है। नाटकों में कथावस्तु, पात्र, संवाद, वातावरण, भाषा और उद्देश्य होता है। यह आमजन या दर्शक के दिल-दिमाग पर स्पंदन करता है और एक स्थायी तनाव उसके ऊपर छोड़ जाता है। नाटकों में 'दर्शक' एक स्थायी पात्र है, तत्व है तभी सम्पूर्ण नाटक खेला जा सकता है। दर्शक 'राजा' देख अपने को राजा गरीब देख गरीब बनकर उस पात्र को जीने लगता है। तभी कहा जाता है कि नाटक की रचना 'माध्यम' होती है कृति नहीं।

यह शोध का विषय है कि नाटक या लोकनाट्य में प्रथम या अर्वाचीन कौन है। हमारा बुन्देलखण्ड भी इस रस रंग में समृद्ध रहा है, बनारस, झाँसी की रामलीलाएँ एक सनातन रूप ले चुकी हैं। रामलीला/रासलीला को भव्य नाट्यशालायें बनी। महोबा के ईश्वरीप्रसाद खरे ने 'रामविजय तरंग नाटक' मंचन को ही रचा जिसकी प्रस्तुतियाँ आज भी हो रही है। उस समय के मदनभट्ट ढ़पलावादक प्रसिद्ध हुये, वहीं सत्तीदीन 'राम', मैय्यादीन लक्ष्मण (सगे भाई), बद्री तिवारी 'रावण रज्जन' हास्य कलाकार माता प्रसाद खरे 'पेटूराजा' एवं संतोष पटैरिया प्रसिद्ध कलाकार रहे।

टीकमगढ़ में जंग बहादुर मर्दन सिंह द्वारा रामलीला का संयोजन प्राचीन समय में होता रहा। इसमें दामोदर जी 'परशुराम' बन प्रसिद्ध हुये। इसके बाद स्व. रामचरण नापित 'लिललिल' ने महेन्द्र सागर तालाब पर काफी अरसे तक इस परंपरा को जीवित रखा। तालाब के बीच में बनी पक्की लंका इमारत कहते हैं, हनुमान द्वारा जलाई जाती थी। प्रभुसिंह गौर ने भी किले के मैदान में लंबे समय तक रामलीला कराई। वह 'परशुराम' बनते थे तो शमशेर खाँ 'रावण' बन लोकप्रिय हुये। वर्तमान में 'बबलू महाराज' बीच शहर में दशहरा पर केशव, बाल्मीकि, मानस के प्रभावी डायलॉग सहित लीला कराते हैं। इस लीला में पात्र डॉक्टर, इंजीनियर, नौकरी पेशा युवा होते हैं।

बुन्देलखण्ड में बाबा बारात के विदा होने पर रात्रि जागरण सुरक्षा की दृष्टि से एक पात्रीय नाट्य ही है जिसमें महिला पुरुष बन कौतुक क्रिया कर मनोरंजन करती है। वहीं धोबी जाति का कांडरा भी प्रसिद्ध है। अब स्वांग जो वेश भरने की प्रक्रिया है गाँवों में खूब प्रसिद्ध है, राई के बीच भी खेला जाता है। चंद्रहास, गोपीचंद एवं हास्य प्रसिद्ध हैं। चारों ओर से दर्शक खुले में इसे देख आनन्दित होता है। देवर भाभी, नौबहार, मूसल की मार, एक फूल दो भौंरे प्रसिद्ध स्वांग रहे हैं।

लोकनाट्य की दूसरी प्रसिद्ध विधा नौटंकी रही है जो गाँवों में आज भी लोकप्रिय है। यह स्वांग की सुधरा रूप है। इसमें नाटक के तत्व भी है। नौटंकी कलाकेन्द्र लखनऊ प्रसिद्ध केन्द्र रहा है। नौटंकी एक संगीत नाटक होता है, कुछ प्रसिद्ध नौटंकियाँ, लैला मजनू, हरिश्चन्द्र, अमरसिंह राठौर, सुल्ताना डाकू, गहूला प्रसिद्ध रही है। नौटंकी में पात्र तबील दोहा, गजल, वार्ता, लावनी, कब्बाली, गीत, ख्याल, दौड़ जैसी विधाओं का संगीत सहित प्रयोग होता है। यह लोकजन को सम्पूर्ण मनोरंजन देती है।

रासलीला तो कृष्णकथा पर आधारित होती है, वहीं 'भगत' या भगतें भक्तिप्रधान मंच प्रदान करतीं हैं। बुन्देलखण्ड में श्री गुणसागर सत्यार्थी जी की खोज अनुसार 'पंडवा' होता था जिसे पुरुष प्रस्तुत करते थे। पंडवानी छत्तीसगढ़ की तीजन बाई द्वारा प्रदर्शन होता है। यह महाभारत पर आधारित होता है। यूँ तो एक पात्रीय हाव भाव युक्त 'आल्हा' में भी नाटकीय तत्व होते हैं जो जोश, वीरता, रोमांच से भर देता है।

इस प्रकार कह सकते हैं कि नाटक और लोकनाट्य दोनों दर्शकों के लिये ही बने हैं। क्योंकि नाटकीयता से प्रत्येक मनुष्य प्रभावित हो जाता है। वह शारीरिक और मानसिक रूप से जुड़कर स्वस्थ मनोरंजन पाता है। नाटक एवं लोकनाटक में काम का प्रभाव पड़ा है पर आज भी लोग इसको देखना सुनना पसंद करते हैं।

-राजीव सदन, नायकों को मुहल्ला, टीकमगढ़ (म0प्र0) 卐

ललित निबंध-

लबरन की बात

-आचार्य दुर्गाचरण शुक्ल

अपनी बुन्देली भाषा में एक कानात है कै बूड़े बारे एक समान। सो हम जा बात खौं साँसी नहीं मानत। हम जानत हैं जा बात कौनऊँ लबरा ने चला दई है। बूढ़े बड़न की बातें अनुभव से उपजी होती हैं। बूढ़न के बिना सभा अधूरी है। बूढ़न के बिना परवार अधूरो है। सो हम नइँ मानत कै बूड़न की बातें और लरकन की बातें बराबर की होती हैं। हमतौ अबै मानत नइयाँ कै हम बूढ़े हो गये। पै हमाये संगी साथी रोज-रोज जोई गाऊत रत कै अपन तो सब बूढ़े हो गये हैं। जब संजा-सबेरें घूमन जात हैं तौ हम उनन खों जई समझाउत कै तुम बूढ़े नइयाँ अबै तुम कैसे बूढ़े हो गये? अपन सबके पुरखा तौ साधारण में सौ-सवासौ साल चल जातते। तुम बूढ़े काँ सें हो गये?

एक हते ऋषि जू जो पैलें रए ब्रह्मचारी सिच्छक, फिर उनने करी नेतागिरी सो जमे जमाये नन्द बंस खौं उखारकें मट्टी में मिला दऔ। कींच में परे चन्दरगुपत खौं उठाकें जा देस की चक्कर बरती राजा बना दऔ। फिर जौ सब छोड़-छाड़कें दूर चले गये और अपने कैऊ बिआऔ करे। नाव बदल लऔ और बे बन गये चाणक्क सें बाच्छान (चाणक्य से वात्स्यायन)। उनने लिखौ अरथ सास्तर और काम सास्तर। उनने बताऔ है सो सुनौ कै १६ बरस की उमर सें जुवानी सुरू होत है और ७० सालानौं पूरी जुआनी रतहै-आ षोडष सप्तति पर्यन्तं यौवनम्। सो तुम सबतौ अबै जुआन हौ पै बे मानत नइयाँ। नइँ मानें का कर सकत। हमें जरूर लगन लगत है कै भइया बुड़ापे में और बालहट में कछु साँठ-गाँठ तौ हो गई। अब सुनलो-

एक दिनाँ हमाये संगै, संजा-सबेरे घूमबे बारे मिसराजू महराज बड़े भुनसारे पधारे बोले-'पण्डत जू! हमें आज समासी रातखौं एक सपनौं दिखानौ। सपने में हमें दिखानौ एक आदमी। खूब भक्क सफेद उन्ना पैरें है। अच्छी बड़ी-बड़ी माला गरै में डारै है और बौ अपनइँ कैसे हाथ हला-हला कें कछु पढ़ रऔ है। महराज बुरौ जिन मानिऔ एक बात आपसे अलग हती, ऊ आदमी को मौं अपन जैसौ नइँ हतौ गधा जैसो हतौ। अपन तौ पंडत हौ सब कछु जानत हौ सो बताऔ बौ को हतौ?' जा कहकें मिसरा जू खूब जोर सें खिल खिलान लगे।

मिसरा जू तौ हँसी में डूब गये और हमें कछु और दिखानौं सो हमने मिसरा जू खौं टोकौ 'सुनो यार तुमाऔ जौ सपनौं साधारण सपनौं नइयाँ। जौ सपनौं तो तुमाये बड़े पुन्नन को फल है।' 'पुन्नन को फल है सो गधाजू के दरसन भये सपने में?' मिस राजू बोले और फिर खिल-खिलान लगे। अब हमें उनकी हँसी नौनी लगी सो फिर टोकौ 'मिसरा जू तुमें दूसरे की बात सुनने नइयाँ तौ पूँछत काय हौ?' अब मिसरा जू सान्त होकें बोले 'हाँ पन्डतजू महराज! अपनकौ बोलबौ होय, मोरे कौन से पुन्न हते जिनके परताप सें सपने में गधा महराज के दरसन भये।' हमने देखो कै मिसरा जू नीचे-नीचैं मुसक्यारये। हमने बात सँवारी धीरें सें ठहरकें हमने कही 'मिसराजू माराज! हम फिर कैरए कै अपन के बड़े पुन्न हैं। जे दरसन मिले हैं। जा बात हम नइँ कैरए बिसकरमा महराज नें जा बात बिसकरम सासतर में बतायी है कै रिगबेद कौ सेत बरन है, दो हाथ हैं, गरे में माला पैरें हैं और मौं गधा कैसौ है बे प्रेम से पढ़ाई कर रए हैं- (ऋग्वेद: श्वेतवर्ण: स्यात् द्विभुजो रासभानन:। अक्षमाला युत: सौम्य: प्रीतश्चाध्ययनेरत:-हिमाद्रि कृत चतुरवर्ग चिन्तामणि से विश्वकर्म शास्त्र के वचन)। जा बात सुनी सो मिसरा जू सान्त हो गये। कछु गुनन लगे। सोच की गैराई सें उबरे और बोले' पंडतजू हमें तो अब बात समझ में आ गई। हम तुमें रोज-रोज बेद पढ़त देखतते, मन में आउततौ कै हमऊँ बेद देखें। काएसें कै हमऊँ उन रिषियन की सन्तान हैं जिनने वेद गाये हैं और जिनकी तुम सन्तान है। सो ई बात कौ बिचारत-बिचारत हम रातकें सो गये सो पुरखननें हमें साकछात बेद के दरसन करा दये हैं। मिसरा जू फिर हँसन लगे 'हमें तौ पतौ नइयाँ कै तुमाये इन बेदन में गधा आव है कै नइँ आव है। हम तौ इतनौ जानत हैं-गरज परत है तब गधा खौं दद्दा बनावनें परत हैं।' हम पैलेई से उनकी हँसी से हैरान हते, फिर दुबारा हँसी से हमें गुस्सा आ गई। मिसरा जू! जामें गलती का है? अपनी बुन्देली भाषा में दद्दा, दादा, दाऊ जे सब सबद अपन सें जेठे बड़न के लानें कहे जात हैं और जा बात जग जानत है कै घोड़ा गधा जानवर आदमी सें पहले भये हैं। फिर जब घोड़ा पुजत है तौ गधा में का बुरौ है। बात इतनी है कै गधा है सीधौ, गधा की बोली है खरी-खरी। देखो भइया सीधें खों सब गिरसबें के लानें बैठे हैं, टेढ़े सें सब दूर भगत हैं। बाँदा राजापुर बारे अपने तुलसी जू नें साँची सुनाई है-

'टेढ़ जान संका सब काहू। बक्र चन्द्रमा ग्रसै न राहू।।' सो बिचारे सूधे साधे गधाखौं गिरसई तौ लऔ। गधाखों नीच बना दऔ। जौ लबरा पंडतन कौ काम है। उनन नैं कै दई कै गधा कौ बोलबौ असगुन उन राँड़ कोइल कौ कूकबौ सगुन है। जब दुनियाँ जानत है कै गधा नें कभऊँ काऊ के चैनुअन कौ नइँ मारौ है। सीधो साँचौ साधू सौ सुभाव है जाकौ। और बा दुस्टा कोइल सुआरथ के लानै कौआ के छौवनखौं (चैनुअन खौ) मारबे बारी बाल हत्यारी है। सो दुनियाँ में भलौ चाहौ तौ खर-खरी बानी ना बोलौ। जादां सूदे साँचे न दिखाऔ। नई तौ दुनियाँ के जेई लबरा तुमाई गधा कैसी दुरदसा कर दें हैं।'

बाततौ पूरी हो चुकी ती, पै पूरी हो ना पाई। बीच में हमाये गैरे मीत लालाजू लठिया टेकत आ टपके, बोले, पंडतजू! बिचारे गरीब गधा की अब कितनी और दुरदसा करावनें है? बा बिचारे गधा की जिन्दगी में बचौ का है? 'करम जली भई जिन्दगी, पग-

पग ठोकर खाय। दुनियाँ कौ अबै सें सात आठ साल पैलें होस आव है। पतौ चलौ है कै संसार भर में गधा की कैउ जातें खतम हो गई हैं। गधा भौत कम हो गये हैं। भलो होय उन अंग्रेजन को जिनै गधा के बचाबे को जतन करौ। उनन नें अपने देश में गधा के लानें अभयारन्न (अभयारण्य) बनाऔ है। दुनियाँ के गधन की गिनती कराई है तब पतौ चलौ है कै दुनिया में चार करोड़ दस लाख गधा बचे हैं। इनमें सबसे जादाँ जातें हैं यूरोप में। और सबसे जादाँ कौनऊँ देश में गधा हैं तौ बौ अपने परोसी चीन देस में हैं। (एक करोड़ दस लाख गधा) पंडतजू तौ जा गणत सें का अनुमान कर रए? जा देश में जादाँ गधा होत बौ देश का मूरख होत? चीन मूरख है? यूरोप मूरख है? अब अपनइँ बताऔ?

जे लाला लू खूब पढ़े गुने हैं और अबैनौ जा उमर में पंडतई रत हैं। हम सब जनैं उनखौं 'पढ़का पंडत' नाव धरै हैं। कौनऊँ नई किताब छपी, लाला जू नें देखी और गिरसी। वे ऐसें नइँ पढ़त जैसे अपन सबरे पढ़त हैं। लाला जू परकें पढ़त हैं। उनके भारी डील-डौल सें बिचारी किताब कौ भुरता बन जात है। वे कैसेऊँ पढ़ें पै बे खूब मन लगाकें पढ़त हैं। उनखों गधा भौतई प्यारौ है। जब वे काऊ सें बातें करें, तौ उन बातन में बगदाद के नसरद्दीन साहजू और उनके गधा की चरचा न आबै तौ समझलो कै अबै लाला जू की बात पूरी नइँ भई। बे लाला जू अब आगे बोले, कहान लगे-

'पण्डतजू अपनखौं तौ गधा छू गऔ तो असुद्द गये पै बगदाद के कवि बिदवान, जानकार गरीबन के मीत उतै के तानाशाह कों खरी-खोटी सुनाबे बारे बे हेकड़ीदार नसरुद्दीन साहजू तौ अपने गधा खौं खूब सपराउत ते उतर फुलेल लगाउतते सौ महराज उनकौ बौ गधा सुद्ध-सुद्ध, सही-सही, खरी-खरी बातें बताउत्तौ। और महाराज अबै काल परौं की बात है, हमने जा बात खुद पढ़ी है कै अमरीका के पेसीडेंट साब बराक ओबामा खौं हलके में उनकी मताई नें गधइया कौ दूद पिबाऔ तौ। अब अपन गदइया के दूद कौ गुन बिचारौ?

मिसर की रानी हतीं किलियोपैट्रा। बे गदइया के दूद सें सपरत हतीं सो उनने खूब लम्बी उमर पायी और बराबर ज्वान बनी रइँ। ऐसाई हाल अबै दो सौ साल पैलें नैपोलियन बदसाय की बैन के संगे भऔ। बा सोउ गदइया के दूद सें सपरत हती। महराज! जै बातें झूठीं होंए तौ बताऔ? अपन सब तौ गधाखौं असुद्ध मानत हौ। मूरख मानत हौ और ऊखों जानें का-का कत हौ?

अब जा बात मूड़ के ऊपर से निकर गई। उपाध्याजू के चेलाखों जे बातें सुनबौ भारी पर गऔ सो बोल परौ। 'सुनौ हो मिसराजू! इन लालाजू की बातें सौ टंच साँची हैं पै आदी हैं अधूरी हैं। देखों! ईमें हम पण्डतन कौ का दौष है हम पन्डत तो छाती ठोक कें कैरए और हजारन साल सें कत आरए कै गधा कऊँ से असुद्ध नइयाँ। गदा नीच नइयाँ, गधा अछूत नइयाँ।'

गधा बेद में है। गधा बेद की बानी कौ मरम जिनने खौलो है उन गिरन्थन में है। पुरानन में है। और ग्यानी बिग्यानी मुनियन के बचनन में है। गधा आगे की बातन खौं ऊपर आसमान खौं देखकें बताबे बारे जोसी महराज के पत्तरा में है और गधा घास फूस पेड़ पौदा बनस्पत के गुनन के जानकर रिषियन के गिरन्थन में हैं। पै इनमें कौनऊँ ऐसे परमान कऊँ नइँ मिलत है जिनसें कोउ कह सके कै गधा असुद्ध है गधा नीच है। जा बात तो काऊ लबरन की चलाई है। जा बात लबेद है। बे बिचारे लबरा गधा कौ मतलब तौ जानत नइयाँ, उनइँ नें बघारीं हैं जे उल्टी सीधी बातें।

महराज बिकरमाजीत राजा की सभा में नौ रतन हते। उनमें एक हते अमरसींग जू महराज। सौ उन माराज ने तब की भाषा संस्कृत में गधा के नाँव खोजे थे। उननें बताऔ है कै गधा कौ एक नाव है 'रासभ'। रासभ कौ मतलब होत है सबद की जोत, ऊँचे सुर सें सबद सुनाबे बारौ, उपदेश दैबे बारौ, जो मतलब है। और जोई मतलब बेद में आऔ है। दूसरौ गधा को नाम है 'गरदभ'। ईकौ मतलब होत है खरी-खरी बानी बोलबे बारौ। ऐसेई गधा कौ एक और दूसरौ नाम है 'खर'। खर कौ मतलब है- तीखौ, तेज, बोलबे में जीकौ मौ पूरौ-पूरौ खुलत है। ऐसेई नाँव हैं गधा के। जिनकौ मतलब जो जानहै बेई तौ मानहै। अब लबरा तौ जानत नइयाँ।

इतैई बुन्देलखण्ड में एक बाबाजू हतै स्वामी सुराजानन्द। बे गधा की निन्दरा नैकऊ नई सुन सकत ते। उनने गदहा सबद संस्कृत भाषा कौ सबद बताऔ है। बै कहतते गदहा अर्थात् गदम् हन्ति, गदहा। जो गद मानें रोग खौं हरन करै बौ है गदहा। काएसें कै गधा रोग दोष दूर करत है।

बे महाराज सुराजानन्द जू सुनाउते कै एक हते माण्डूक रिषी उनकी घरवारी को नाव हतौ 'इतरा'। इतरा कें ऊकें भऔ एक बेटा। सो बाकौ नाव धरौ 'ऐतरेय'। ऐतरेय मनइँ मन में बिसनू भगवान कौ भजन करत रत्ते। काऊ से बोलत नइँ हते। ना काऊ की बे सुनत ते। सो उनके बाप ने मताई और बेटा दोउन कों घर सें बायरें निकार दऔ। कायें से कै बौरा और बैरा खों अपने घरै को राखत जासें माण्डूक ने अपनौ दूसरौ बिआऔ करलऔ। दूसरे बिआऔ सें उनके भये चार बेटा। चारउ बिदवान भये। सो एक दिनाँ इतरा नें अपने बेटा ऐतरेय सें रो-रो कें कही कै बेटा तुमाये पछाऊँ तुमाये बाप नें तुमायी और हमायी जा दुरगत करी है। तुम बोलत नइयाँ। तुम सुनत नइयाँ। सुनकें ऐतरेय जू हँसन लगे। उनने मताई खौं ग्यान दऔ। कायेसें बे ना तौ बौरा हते और ना बैरा हते। उनें बिसनु भगवान नें दरसन दये और कई कै जाऔ बेटा जग कराऔ, गिरन्थ लिखौ। सौ उनने लिखौ बेद पै गिरन्थ। जी गिरन्थ कौ नाव है ऐतरेय ब्राम्मन (ऐतरेय ब्राह्मण)। ऐतरेय ब्राम्मन में गधा की तारीफ करी है।

एक कथा है कै सूरज देवता की एक सुन्दर बिटिया हती सौ ऊकौ बिआऔ हतौ सो ऊमें जा सर्त लगी कै जो दौड़ में सबसे आगे आबै बईखों जा कन्या दई जैहै। सबरे देवता दौरे। इन्द्र, अगिन, और असुनीकुमार आद देवता दौरे। अपने अपने बाहन पै बैठ कें दौरे। दौर में जीते असुनीकुमार। असुनीकुमार को बाहन हतौ गधा। सो गधा ऊ दिनाँ सें ऐसौ थक गऔ कै आज नौं घोरन

सें पाछें चलन लगौ। असुनीकुमार जू हते देवतन के बेदगुनी। सो उनने गधा कौं बरधबे को बल जादाँ दे दऔ सो गधा घोड़ी में और गधइया दोउअन में बच्चा पैदा कर सकत है। और घोड़ा में जो दम नइयाँ (ऐत० ब्रा० ४/९)

गधा है सान्त सुभाव कौ, गधा है बलवान और बुद्धमान। घोड़ा है बुद्धमान चंचल तेज और किरोधी सुभाव कौ। सो गधा है सान्ति कौ पसू और घोड़ा है जुद्ध को जानवर।

बा जुग में गधा के गुन जाने ते रावन महराज नें और जा जुग में गधा के गुन समजे हैं प्रभू ईसा नें। रावण महराज कौं सब जानत हैं और सब मानत हैं कै बे बेद के बड़े पंडत हतै। बे लबेद के जानकार हते। तन्त्र मन्त्र में गुनी और जोतिस के जानकार हतै। लोग तो जानों कत हैं कै उनने बेद को सबरौ ग्यान अपने कब्जा में कर लऔ तौ। भगवान जानैं। लोग तौ जौउ कहत हैं कै उनकें १० मूड़ हते औ दसऔ मूड़ गधा कौ हतौ। जाकौ मतलब जौ है कै उन माराज कें १० मूड़ के बराबर अकल हती। १० जनें जित्तौ सोसत हैं उत्तौ वे सोचत्ते औ उन १० में से १ मूड़ जौ गधा कौ कहौ जात है सो बाकौ मतलब जौ हतौ कै ९ बार बिचार करबे के बाद बे दसइँ बार सान्त मन सें बिचार करत्ते जामें तेजी नइँ होत्ती सो जौ बिचार उनखौं हारे पै जिता देत्तो। कहत हैं कै जब रावन महराज रामजू सें लराई हार गये तो बे मरती बेराँ रामजू सें गरजकें बोले- 'देखौ रामजू! तुमने हमाये जियत हमाई लंका में पाँव तौ नइँ धर पाऔ? औ अब तुम ठाड़े-ठाड़े देखौ, हम तुमाई नगरी बैकुन्ठ में तुमाये सामने जा रये हैं। रोक सकौ तौ रोक लो? ऐसौ है जौ गधा कौ मूड़। हारे खौं जिता दऔ।'

बाइबिल में गधा कौ भौत बार नाव आऔ है। पुरानी हिबरू भाषा में गधा के लानैं खुबइँ आदर है। बा इजराल देस में गधा ग्यानी गुनी धनी मानी जनन कौ प्यारौ बाहन बन गऔ तौ। उतै के नामी ग्रामी जज्ज तौ सुपेत गधा पै बैठकें अदालत जान लगेते। सबई की पसन्द उतै गधा की सबारी बन गई ती। सो अबैनों कछू कछू चल रई है। यूरोसलम की पवित्तर जातरा में जातियन के लानें साँचौ संगी सखा सहाय करबे बारौ तौ उतै आजनौ गधा है। अब पूँछौ के जाकौ कारन का है? तो जाकौ कारन है गधा के गुन। जिन गुननखों जानकें प्रभू ईसामसी नें गधा खों अपनो बाहन बनाऔ औ गधा कौ मान बढ़ाऔ।

कछू-कछू जनैं जा सोउ कहत हैं कै गधा तौ और पैलईसें आदर सम्मान पा रऔ तौ। जा देस में नई दुनिया भर में बेदन सें पैलें गधा की इज्जत हती। तभईं तौ टोना-टोटका तंत्र-मंत्र की जो बातें पैलें चलत्तीं बे बेद में आयीं हैं। सो तभईं की कालरात्रिजू देवी हैं। दुनियाँ खतम हो जात तौ परलय होत। परलय होत तब जे देवी जू कालरात्रि महारानी अपनी देह में सबखों लीन कर लेतीं। उन देवी कौ बाहन है ग्यानबान, बुद्धमान गधा। आजनौं पंडत हू चंडी के पाठ में इनइँ देवी कालरात्रि खौं पैलें मनाउत हैं और उनकी बिनती करत हैं। और गाँव के गदेरे अपने डेरा में गधा कौ पूजत हैं। शक्तियामल, गिरन्थ में कही गई कै गधा की पूजा और गधा की बिनती करबे सें शीतला माता खुस हो जाती हैं। सीतला माता के खुस होबे सें रोग दोष दूर हो जात हैं। जा बात दुनियाँ भर में पैलें दुनियाँ भर में चलत रई है। सीतला देवी को बाहन सोऊ गधा है। सो गधा पुजत रऔ है।

अबैनों पढ़ंता पंडत लालाजू सान्ती सें बैठे ते, सुनरये ते। अब वे लठिया के सहारें ठाड़े हो गये। पंडतजू सें बोले-अपन तो सब जानत हो औ मानत हौ, लोगनखों समजाउत हो। गधा बुरऔ नइयाँ तौ फिर जा कानौत काँसे बनी 'गधन खेत खाऔ पाप न पुन्न'। ऐसौ दो कौड़ी कौ गधा काये हो गऔ अपने जा बुन्देलखण्ड में? ई कानौत कौ मतलब है गैरौ। लबरन नें ऊकौं मतलब समजौ नइयाँ।

देखौ भइया पाप औ पुन्न का होत? बुरे करमन कौ फल होत हैं पाप और अच्छे करमन को फल होत है पुन्न। पुन्न और पाप के करमन सें मानुस कौ जनम-मरण कौ चक्कर चलत है पुन्न करहौ तौ सरग में जैहौ पाप करहौ तौ नरक में जैहौ, इतईं फिर आवनें परहै। जा चौरासी के चक्कर में चक्कर काटनें पर है। जेई चौरासी लाख जौनें फिर भोगनें परहै। जा चक्कर सें छूटबे कौ उपाय है कै ऐसे करम करौ जो न पाप होबै औ न पुन्न होबे, तौ ऐसे करम करबौ तो बड़ौ कठन है। ऐसे करम कहाउत निसकाम करम। कायसें कै कई गई है कै अग्यान सें बँदत हैं। ग्यान के बिना मुकती नइँ मिलत है। अब बताऔ का होय? ग्यान बाँधत है (ग्यानं बन्ध:-शिव सूत्र और न ज्ञानेन बिना मुक्ति:) फिर का करै आदमी? ऐसौ करम करै जो न पाप होए न पुन्न। निस्काम करम करबै, गधा महराज खौं खेत खान देबै। जौ है उत्तम करम। जो ना पाप है ना पुन्न है। जा है भीतर की बात। जा असली बात खौं भूल गये। सुनौ लालाजू गधा ऐसौ जानबर नइयाँ जो कछु सिच्छा न देत होए जौ कछु काम में न आउत होय। गधा तौ सबकी निस्काम सेवा करत रत है।

हमायें एक मीत हैं बड़े ग्यानी हैं जा बुन्देलखण्ड के जाने माने पंडत परवार में जनमें हैं और खूब ऊँचे पद पै रये हैं। और अब वे दोई जनें निसकाम करम करतरत हैं। एक दिनाँ उननने हमें एक बड़ी गुपत बात बताई है कै महाग्यानी भरतरी जू (भर्तृहरि जू) जो बिकरमाजीत के बड़े भइया हतै, जो कबि हतै और सबद बिरम्ह के महाग्यानी भये हैं जिननें (वाक्‌पदीय) जैसौ महा गिरन्थ लिखौ है, नीत सतक, सिंगार सतक, बैराग सतक तीन सतक लिखे हैं उन जैसौ सबद ग्यानी निसकाम करबेबारौ अबै नौं दूसरौ कोऊ नइँ भऔ है सो उनकौ रहस हम तुमैं बता रए हैं। **भरतरी महराज को गुरु गधा हतौ।** उननें गधा सें तीन बातें सीखीतीं-

पैली बात-लगातार काम करबौ। दूसरी बात-घाम की ठन्ड की कौनऊँ परवाय न करबौ। तीसरी बात-जो खाबै खौं मिल जाए ऊखौं संतोष सें पा लेबौ। उनने जेई बातें पालन करीतीं। तासें बे अदभुत सबद जोगी बन गयेते। ईकौ परमान नीतसतक में देखलौ। जा बात जिन हमाये मीतनें बतायी है उननें अपनौं नाव छिपाऔ है कायसें बेऊ गधा के हितू हैं। उन महराज नें एक बात और बताई कै जा बुन्देलखण्ड में गधा की गायत्री लिखी गईती। जा बात कौ परमान उननें जो दऔ है कै जा बात खुद आचार्य

महीधर नें अपने भास्य में लिखी है। उननें कही है (गर्दभदेवत्या गायत्री कुश्रिदृष्टा–यजु0 ११/१३)।

जे कुश्रि रिषी जू अपने बुन्देलखण्ड में पढ़ेते इके गुरु हते बाजश्रवा। बाजश्रवा रिषी कौ अपने बुन्देलखण्ड में आसरम हतौ। इनकौ दूसरौ नाव हतौ उद्दालक। कतहैं कै जितै जिला जालौन में उरई कौ कस्बा है। उतै उद्दालकजू कौ आसरम हतौ। आसरम में कुश्रि रिषी अपने गुरु बाजश्रवा सें पढ़त हतै।

गुरुजू ऐसे हतै कै कछू पूँछौ नइँ। बे जिअत सरीर सें ब्रह्मरूप हो गये ते। सूरज के घामें ने उनें सुका दऔ तौ सो माई चमुण्डा देवी नें इनके सरीर खौं अपने मूड़ पै धर लऔ तौ। सो ऐसे सदा समाध सुख में लीन रैबेबारे हते इनके गुरु उनके चेला हते जे कुश्रि रिषीजू। जिननें जा गधा की गायत्री लिखी है (यजु0 ११/१३) जी कौ देवता है गधा और छन्द है गायत्री। जा रिचाखौं बड़े-बड़े जग्गन में पढ़ौ जात है।

सो लालाजू सुनलई? ऐसौ गधा कैसे हो सकत असुद्ध, जो गधा को असुद्ध कये बौ हुहै असुद्ध। ग्यानी तौ कोउ गधाखौं ना असुद्ध केहै और मूरख केहै।

अब एक बात बची अपन की। अपने देस में गधा कौ कौऊ दूद नइँ पिअत, ना कौऊ गधा के दूद सें सपरत। जा बात के लानें तौ जई कई जा सकत है कै अपने बड़े बूढ़न नें तो सब अच्छी बातें समझाइँ हैं सई सई समझाइँ खूब देख परख कें समझाइँ हैं। अब फिर हम तुम उन बातन खौं मानें चायें ना मानें। जा में गल्ती अपने ग्यानी पुरखन की तौ है नइयाँ।

अपने पुरखन में भौत पैलाँ एक रिषी भये सुश्रुत महराज उननें बताऔ है कै गधा कौ माँस बलबरधक होत है। बायरोग नास करत और अगनखों बढ़ाउत है (माँस वर्ग ४६/३४) गधा कौ दूद मीठौ गरम बलकारक होत (दुग्धवर्ग ४५/१२) गधा कौ मूत कड़ुआ खारौ कफ और बातखौं दूर करबै बारौ, बबासीर पेट के रोग और अरुचि कौं मिटाबे बारौ पाण्डु रोगकौं हटाबै बारौ दिल खौं हितकारी है। बिसखौं उनमान कौं दूर करबे बारौ (मूत्रवर्ग ४५/१)। जा तरासें हजारन बरस पैलें सुश्रुत नें अपने गिरन्थ में गधा के माँस, दूद, मूत सबके गुन खोजकें लिखेते। गधा के गुनन की गैरी खोज करीती। गुनन कौ अमली करबौ बताऔ तौ। अब अपनइँ नें नइँ मानी हैं। और दूसरन नें मानी जैसे-चीन देस के रैबे बारे गधा को माँस खा रये हैं गधा की हड्डी सें दवाई बना रए हैं। इटली के रैबे बारे रोज एक हजार गधा मारकें पइसा कमा रये है तौ को रोकत हैं काऊखौं। गधइया कौ दूद पिबाउत हैं। कायसें कै अब जाँच हो गयी है कै गदइया कौ दूद मताई के दूद के जैसोई गुनकारी है। दूद उन बच्चन कौं जिनखौं प्रोटीन की इलर्जी होत है उनकौं जादाँ फायदा करत है। सो भइया जा तरासें गधा तौ अपनौ पूरौ हितू है। अपनेई समाज में कछू लबरा है जिननें गधा की बदनाम फैला दई। बोलो लाला जू अपनखौं लबरन की बात माननें है?

लाला जू हँस कें बोले-'कै अपनखौं लबरन की बात नइँ मानने। अपन तौ सई-सई बात जितै मिलत है उतै की मानत हैं। भइया पंडतजू जौ अपनौ देस है अच्छौ बगैचा जामें मेंड़ पै कछू किरकिचयाऊ के फूलन जैसे लबरा होंए तौ बेऊ अच्छे लगत हैं। होरी आबे बारी है सो गाँव के लरका तौ उइँ लबरन के लानें अबई सें नौनौ गधा ढूँढ़न लगे हैं। जा बात सबई खौं नौनी लगी और सब खिल-खिलान लगे।'

-नूतन बिहार कॉलोनी, टीकमगढ़ म0प्र0 卐

मूसर सें का डरने

-कल्याण दास साहू 'पोषक'

उखरी में जब! सिर दै दव है, मूसर सें का डरने।
जीने जनम लियौ धरती पै, उयै एक दिन मरने।।

देसी नौंन भिदौ रग-रग में, जी खों नहीं लजाने।
लातन के भूतन खों अब नइँ, बातन सें समजानें।।
शिवा, छत्र, राणा, साँगा सी, कर्री छाती करने। जीने जनम...

अच्छे-अच्छे तीस मारखाँ, पानी-पानी होजें।
ऐरा-गेरा नत्थू-खैरा, कान चाप कें सोजें।।
अगर! चोंटिया लई काऊ नें, तुरत बकौटो भरने। जीने जनम...

जी पातर में खारय दुस्टी, बइमें करवें छेदौ।
ऐसन के लानें हाँतन में, लयँ रव सदाँ पबेदौ।।
हँस चाल में उड़ रय कउआ, जिनके पंख कतरने। जीने जनम...

तीस दिनाँ की दाँती, किलकिल, इकदिन कभउँ निजानें।
दगाबाज खों मजा चिखाने, तबइँ चैन मिल पानें।।
मसक मार देने बैरी में, मूँग पेट पै दरनें। जीने जनम...

धरकें लात जुबान खेंच लो, होस ठिकाने कर दो।
घुमा-घुमा मारौ पथरा सें, खोज मिटाकें धर दो।।
आने फिर! औकात असल पै, फैंटा कसकें लरनें। जीने जनम...

जो-जो बाँदे होंय ईरखा, रैसल उनें दिखादो।
बुरय काम कौ बुरव नतीजा, चोखौ सबक सिखा दो।।
जैसे खों तैसौ बन जानें, तबइँ पार अब परने। जीने जनम...

दोई पलीतन तेल देत जो, रइयो उनसें बरकत।
सदाँ फटे में टाँग अड़ावें, नोंन जरे पै भुरकत।।
वे काऊ के मीत नहीं हैं, बात हिदय में धरने। जीने जनम...

दारू लुखरन में खोओ ना, पथरा गड़े उखारौ।
खल के लानें लेव डेंडका, थापर नहीं उबारौ।।
'पोषक' घी सीदी ऊँगरी सें, निकरौ है न निकरने। जीने जनम...

-किले के पास, पृथ्वीपुर, जिला टीकमगढ़ म0प्र0 卐

पहाड़ सिंह की पिरतिग्या

-पं. रतिभानु तिवारी 'कंज'

भुन्सरया तरा डूब गवतौ। विरछन पै वन के पखेरू ऊँचे सुर में बोलन लगेते। कुकरा ने बाँग दैके भोर होबे की मुनादी पीट दइती। साधू-संतन की जमात सपरबे खों बेतवा कोदीं जान लगीती। बाबा जू ने संख बजाकें अपनी धूनी चेता लइती। धरती के आँचर में अँदयारौ दुकन लगौ तौ। तनक देर में भुंसारे की बेरा हो गई और सूरज कौ उजयारौ चौघेराँ फैल गव।

एइ समइया पै ओरछा के सासक महाराज पहाड़सिंह बुन्देला हात में गड़ुआ लैकें दाँतुन करवे राजमहल की ड्योढ़ी पै पधारे और दातुन करन लगे। इतेक में ओइबेराँ एक कवि राजमहल के नैचें आकें ठांड़ौ हो गव और दूनर होकें दोइ हाँत जोरकें बिन्ती के भाव सें गुहार लगाई-

पड़ी हैं पिसाचन बीच, जोतत हैं आठों याम
सुधहू न लेत पापी, तृन हूके खाने की।
कान्हजू की कामधेनु, करतीं हैं बिलाप रोय
कपिला की जात कहूँ भाग नहीं जाने कीं।।
रोज उठ करत अरज, भोर भये भानु जू सौं,
फौज चढ़याबै केसौराय के घराने की।
वीर वीरा सिंहा के, प्रबल पहाड़ सिंह
तेरी राह देखती हैं गउयें गौंड़वाने की।।

कवी की गुहार सुनकें महाराज पहाड़सिंह बोले खुलकें कऔ का बात है? कबी ने कमर झुकाकें बिन्ती करी-महाराज दिया तरें अंदयारौ है, गौंडवाने में गइयन खों हर में जोतवे कौ बैजाँ अनुआ करौ जारऔ है, कोउ सुनबे बारौ नइयाँ कछु अलफतिया अरयाकें बोलत और सलाह देबे बारे राजा के मंत्रियन की हाँ में हाँ मिलाउत। जीसें कव बौऊ अनूतरें सुनाउत। अथौली बेरा गइया जब हर में से ढीलीं आतीं तब वे रमाँकें आँखन सें असुआ ढारन लगतीं और सार में थान पै कसी भूकीं ठांडी रतीं। ई अत्याचार सें छुटकारौ पावे के लानें गौड़वाने की कामधेनु आप कोदीं आसाभरी हेरन सें हेर रईं हैं।

सारौ हाल सुनकें राजा पहाड़सिंह की आँखन में क्रोध के तिलगा परचन लगे, उनके करेजे में दमार सी लग गई। और दुख से छाती दरारी होन लगी। राजा ने दातून के फका फारकें फैकें, अपनों मौं धोकें रामराजा खों पिरनाम करौ और हाँत में जल लैकें ओइ बेराँ प्रतिज्ञा करी कै जब तक गौंडवानों न जीतलें तब तक न अन्न खैहें न पानूँ पियें।

राजा की प्रतिज्ञा सुनकें मंत्री, सेनापति और दरबारियन ने गौंड़वाने खों जावे की तैयारी करी। हाथी, खच्चर, ऊँट और बैलन पै रसद और दूसरौ सामान लादकें महाराज पहाड़सिंह, दरबारी मंत्री और सेनापति के संगै सेना ने ओरछा सें गौड़वाने खों कूच कर दव।

ओरछा सें पाँच-सात किलोमीटर चलकें सेनापति के हुकुम सें सेना ने पड़व डार दव। उतई बरिया तरें बैठकें सेनापति और चतुर मंत्रियन ने राय मसबिरा करौ कै गौंड़वानों इतै सें भौत दूर है, ऐसे में राजा भोजन न करें तो सेना कैसें भौजन करै। जब सेना भोजन न करै तो भूंकी प्यासी सेना गडवांत और पगडण्डी गैलन में निगत-निगत गौंड़वाने कैसें पौंचे। सेना शरीर सें टूटजै और आधी सेना तौ गैल मेंइँ रैजै। ईसें कछू ऐसौ उपाय करौ जाय जी से राजा साब औ सेना भोजन करें। मंत्री खों मनमें कछू उमजी औ ऊनें हाँत जोर कें सीस झुकाकें महाराज सें बिन्ती करी, हुजूर इतराजी माफ करी जाय, अगर आप भूँकें प्यासे रैहौ तो सेना भूँकी प्यासी रैहै, ईसें सेना कौ हैयाव टूट जैहै और गौंड़वाने तक निगत-निगत पौंचवे में भारी परेसानी हुइयै। ईसें हजूर सें प्रार्थना है कै इतइँ गोबर कौ नकली गौड़वानौ बनाकें जुद्ध सें ऊपै विजय प्राप्त करी जाय और विजय पाकें भोजन करौ जाय फिर सेना खों आँगे चलाव जाये।

मंत्री कौ विचार सबखों नोनों लगौ, आस-पास और ऐंगर के खिरक खेरे सें गोबर जोर कें गोबर कौ नकली गौंड़वानों बनाव सेना के दो भाग करे एक भाग गौंड़वानें कोदी औ एक भाग ओरछा कोदी। फिर राजा ने गौंड़वाने पै धावा बोलौ, दोइ तरफ से जुद्ध भव। अंत में राजा ने गौड़वानों जीत लव। जीत की खुशी में राजा मंत्री और सेनापति के संगे सबने भोजन करौ। जेबा खाई करकें सेना आगें चली। निंग-निंग के पड़ाव डारत कछू दिनन में सेना गौड़वाने के मैंड़े पै पोंच गइ।

गौड़ राजा खों जब खबर लगी कै ओरछा की सेना गौड़वाने पै चढ़ाई करबे राजधानी के मैडे पै आगइ सो गौड़ राजा ने अपने सेनापति खों जुद्ध के लाने सेना तैयार करवे को हुकुम दव। दोइ राज्यन की सेना जुद्ध खों तैयार होकें अपने-अपने मोरचा पै डट गई तुपकंयन ने तोपें संभारी औ तलवार बाजन ने तलवारें संभारी।

गौंड़ राजा ने सेना खों मातृभूमि की असीली धराई और जुद्ध कौ नगाड़ौ बजा दव। जुद्ध शुरू भव और दोइ तरफ के सैनिक वीरता सें लरन लगे। तोपें गरजन लगीं और तलवारें खनक उठीं। लराई में ओरछा की सेना ने गौड़वाने के सैनिकन खों उन्नासौ फींच दव, जर के बकोड़े सौ छील दव, कैउ सैनिकन के सरीर डंगरा से फूट गए, कंदौरा से उकल गय और सेना कौ बण्टाढार होन लगौ। कछू सैनिक काँखन लगे, कछू कूलन लगे, कछू हयान लगे, बड़े-बड़े मुछारिया अरर्कें गिरन लगे। जो वीर मूँछे ऐंठकें अकड़ रयते उनकी हुलिया बिगर गई। अंत में ओरछा के राजा पहाड़सिंह ने गौड़वानों जीत लव। गौंड़वानें में ओरछा की विजय पताका फैरान लगी। अपनी हार सें गौड़राजा हिरदेशाह कौ मौ भटा सौ भुंज गव। अपनी जीत की खुशी में ओरछा के सैनिक हालफूल सें बमकन लगे और महाराज पहाड़सिंह को चेहरा गदूल के फूल कैसौ खिल गव।

ओरछा की सेना ने गौंड़ राजा खों गिरफ्तार कर लव अपनी हार मानकें गौंड़ राजा हिरदेशाह ओरछा के राजा महाराज पहाड़सिंह के ऐंगर आय तब पहाड़सिंह हिरदेशाह सें बोले जा पाप की छितरिया तुम अपनी मुड़ पै न धरौ और गाय खों हर में जोतवे की प्रथा बंद कर दो। ओरछा नरेश की बात सुनकें हिरदेशाह दोइ हाँत जोर कें बोले महाराज हमाए राज्य में गइयन खों हर में जोतवे को जो अलरयाव

भव ऊके लाने हम आप से माफी माँगत। आज से ई तराँ के कौनउँ अनुआँ कौ आपखों उरानो न मिलै। आज सें हम गइयन खों हर में जोतवे के काम से छुटकारौ देत और आप खों वचन देत के गौंड़वानों राज्य ओरछा राज्य खों हर साले भरमोंसरा चौथ दैबू करें। राजा पहाड़सिंह ने गौंड़राजा की बात मान कें उनखों बंधन सें मुक्त कर दव। रातकें पलीता के उजयारे में संधिपत्र पै दस्तखत भए और पहाड़ सिंह की सेना वापिस ओरछा आबे खों लौट परी।

महाराज पहाड़सिंह ने ओरछा लौटकें गौड़वानों जीतवे की यादगार में जितै गोबर कौ नकली गौड़वानो बनाकें जीतौ गव तौ ओइ स्थान पै बलबुद्धि, वीरता और पराक्रम की उनार और राम भक्त की चिनार श्री हनुमान जी की मूर्ति की स्थापना कराई। उतै एक मंदिर और एक भव्य बावरी बनवाई। बाबरी के चौघेरां बड़ी-बड़ी दालानें बनवाइँ। आजकल वौ स्थान छारद्वारी के नाम से जानों जात है जो ओरछा में लक्ष्मी जी के मंदिर से सात किलोमीटर की दूरी पै स्थित है। इतै सैकरन दर्शनार्थी रोजउँ हनुमान जी के दरसन करवे आउत। आबै उतै कैउसाल में पूज्य संत श्री त्रिलोकी महाराज की अगवाई में अखण्ड रामधुन जारी है।

आज भी बुन्देलखण्ड के गाँव-गाँव में अथाई और कोंड़े पै ओरछा के शासक महाराज पहाड़सिंह की वीरता के किस्सा सुनाय जात और वीरता के बीत गाय जात-

होकर निशंक शत्रु सागर में कूँद पड़ा।
प्रबल पहाड़सिंह बाँकुरा बुन्देला था।।

-बुन्देली धाम नेगुवाँ, टीकमगढ म0प्र0 卐

बुन्देली लघुकथा-

नशा में नसा रय हते

-राजीव रामदेव 'राना लिधौरी'

एक बेर एक गाँव में किसान ने खेत में एक माटी कै घैला में महुआ की कच्ची दारू बनाई। अंधियारौ हो गओ सौ ऊनै सौसी के काल भुन्सारे ई घैला को घरै लै जैहें। रात में कौन भड़या लै जैहें। सौ ऊनै वौ घैला उतईं धरौ रान दऔ औ धरै चलो गऔ।

अब जब रात भई सो उतईं खेत में एक मुसरया चौंखरौ राततौ, ऊये भूख लगी सो ऊने इताँय-उताँय हेरौ सौ जो घैला धरौ हतौ वो दिखा परौ सौ चौखरे ने एगरें आके ऊ घैला के भीतरें तको। पै अंधयारौ हतौ सो ऊखौं कछु न दिखानौ। ऊनै और भीतरैं तकवे की कोशित करी, सौ ऊकौ संतुलन बिगर गऔ औ छपाक सें घैला के भीतरैं गिर परौ। ऊमें दारू भरी हती सौ चौंखरे ने पैलां तो एनई डटकैं छक कें दाऊ पी फिर ऊपर निकरवे की कोशिश करन लगो, पै ऊ निकर न पा रऔ हतौ। घैला तनक बड़ौ औ गैरौ हतो। जब चौखरों कोशित करकें हार गओ तो अपने प्रानन कौ सोस परो सो ऊनैं जान बचावे कै लाने चिल्लाओ जोर सें बचाओ-बचाओ-

संजोग सें ऊतईं एक बिलैया बिलू मौसी निकर रईती, सौ ऊनें चौंखरे की आवाज सुनी सौ इते उते हेरो सौ ऊकौ उतई पास में एक घैला धरौ दिखानों, ध्यान से सुनो सौ उतइँ सें आवाज आ रई हती। बिलू मौसी हराँ-हराँ घैला कें ऐंगरे आई औ ऊ मैं भीतरे ढूँक के हेरो, सौ ऊ में एक चौखरों डरो हतौ, जो जिन्दा हतो और फरफरा रऔ तो औ जान बचावे के लाने जोर सें चिल्या रऔ हतो। अब बिलैया के मौं में पानी आ गऔ। बिलैया ने सौसी के जो तौ भौत मौटो चौखरो है आज तौ लगत हमाऔ अफर के भोजन होने है लगत भगवान आज हमसें भौत खुश है।

चौखरे ने बिलैया खों देखो तो ऊकी जान में जान आयी ऊने बिलैया सें कई बिलू मौसी हमें बचा लौ हम इते मरे जात हैं। बिलू मौसी ने कई हमें तो इनइँ करीं भूख लगी है आज कछु खाबै कौ डौल नइँ भऔ। सो हम तुमें ई घैला सें निकार तो लैहें पै तुमें खा सोई लैहें। अब चौंखरे जू खौं बड़ी गट्ट बीत गई एक तरफैं कुआँ हतो, तो दूसरी तरफै खाई हती, का करै।

चौखरे ने कछु सोच विचार कै बिलैया सें कई कि हमें तो आज मरने है सो काय ना हम तुमाये काम आ जावें तुमाओ पेट भर जैहे। हमें कछु पुन्न मिल जैहे। तो हमाओ दूसरो जनम सुधर जैहे। स्वर्ग में नोनो इस्थान मिल जैहे। तुम तो पैला हमें ई घैला सें बायरें काड़ लो।

बिलैया ने चौखरे की पूँछ तान के ऊये घैला सें बायरें निकार लओ औ कई के अब तें झट्टई से अपने भगवान को नाव लैले। कछु प्रार्थना करने हो तो वा सोई करले। चौखरे ने बिलू मौसी से कई तुम इतैक औलात काय मचा रइँ। तनक आराम से हमे खइयो। देखौ हमाये अंग से दारू की कितैक बुरई बसांद आ रई ऐसौ करत हैं, हम पैलाँ ऐंगरे की नदियाँ में सपर खौर के आत हैं, तनक भगवान कौ नाव जप लैं, फिर तुम हमें खा लइयौ।

बिलैया ने कई ठीक है पै तुम वादा करौ कऊँ भग न जइयौ। चौखरे ने कई हम वादा करत हैं हम तुमायें ऐंगरे इतईं आ जैहें। तुमें विस्वास न होय तो तुम सोई हमाये संगे चलो उतईं ठाँड़े रइयो। बिलइया ने कई ठीक है हम सोई संगे चले चल रये। सो दोई नदिया के ऐंगरे पौचे बिलइया एक तरफ ठाँड़ी रै गई औ चौखरे जू ने गदबद देत भई नदिया में छलांग लगाई औ दूसरे किनारे पै पौच गऔ। बिलइयाँ ने चौखरे खों आवाज दई के जौ का करौ। तुमने हमाये संगे बेईमानी करी है तुमने वादौ करो हतौ के सपर-खोर कें हमाये ऐंगरे वापिस आ जैहो।

का तुमें जानवरन कै नियम कानून नई पतौ के हम जानवर वादे के पक्के होत हैं। हम कोनउँ आदमी जात थोरें हैं, जोन वादो करकें निभात नइयाँ, बेईमानी करत हैं। फिर हममें औ आदमन में का अन्तर रै जैहे। चौखरे ने कई कै हमें सबरे नियम कानून पतौ हैं पै का करें जब हमने तुमसै वादो करो हतो सो हम दारू के नशा में हते। हमें कछु नइँ पतौ के हमने का कई हती। जब हमने नदिया में सपरो सो हमाओ सबरौ नशा उतर गऔ। एक शराबी की बात को मानत है। सबई जानत हैं का तुमें नई पतौ। इतनी कै कें चौखरो तो भग गऔ। बिलइया मौसी नदिया की ई तरफन सै ऊये तकत रै गई। का करती सोसन लगी चौखरे नें बात तो सौ आने साँची-साँची कई है।

-नई चर्च के पीछे, शिव नगर कालोनी, टीकमगढ म0प्र0 卐

बुन्देली त्रयी के आसुकवि-शिवदयाल कमरिया उर्फ शिबूदा उर्फ पजन

-डॉ.के.एल.वर्मा 'बिन्दु'

बुन्देलखण्ड में बुन्देली लोक साहित्य में बुन्देली त्रयी के तीन ठौ कवि जाने जातै। ईसुरी, गंगाधर व्यास औ ख्याली राम ऐसेई इतै बुन्देली के आसुकवि सोऊ हो हुआ गये, जो पढ़े लिखे तौ नाव चारे खौ हतै, पै हतै बुन्देली के अनहोने साँचे सूदे होनहार हीरा, काय कें जे सबई के सब हालऊँ तुरतइँ फुरतइँ बुन्देली रचना रच रचू कें सुना सुनू देत्तै। इनमें पुछी करगुवाँ गाँव के श्री शिवदयाल जू कमरिया उर्फ शिवूदा उर्फ पजन के नाव से जाने जातै, पुछीकरगुवाँ निवाड़ी तहसील जिला टीकमगढ़ में बसौ गाँव है। दूजे कवि हतै श्री भूपत सिंह यादव लल्ला कवि गाँव कठऊपारी तहसील निवारी टीकमगढ़ के हतै और तीसरे कवि हतै स्यावरी गाँव के श्री राम सहाँय जू कारीगर स्यावरी तहसील मऊ जिला झाँसी में आउतते। जे कवि ईसुरी की जनम भूम, मेढ़की की बगल में हतै इनकौ मेड़ों डाडौ एकई कऔ जातै। कारीगर जू कविता तौ नौंनी करतऊ हते इन कौ कंठ सोऊ मिठास भरौ गुर सो गुरयात तौ जे फड़वाजी में फड़न में रच कें गाकें फड़न खों जीत लेत्ते इनको नाँव बुन्देली के प्रखर कवियन में जानो जात्तौ। इन सब कवियन से परचय उनकी रचनन खों सुन सुनू कें अपनेइँ आप होत रऔ काय के कबीर ने कई कै-

जिन खोजा तिन पाइयाँ, गहरे पानी पैठ।
हों बौरा डवन डरा रऔ किनारे बैठ।।

साँच बात आय जो कौउ खोजत सो ओई पाउत, बिना नदी के कूदे तैरवौ नइँ आउत आय, जोग कओ कै संजोग, जो कभऊँ सोचौ नइँ हतौ जौ कछु हो हुआ जै, जौ सब चार जनन की किरपा, और सरसुती मइया की माया-छाया से सब कछू हो हुआ गऔ। सन् १९६५ के असाढ़ में मोऔ तबादला पुछी करवाँ मिडिल स्कूल में हो गऔ, मैं उतै गाँव में जाके री खैराती वैना 'चचा' के मकान में दो रुपया मइना भाड़े के मकान में रै कैं मोड़ी मोड़न खों पढ़ाउन लगो। श्री खैराती चचा भौतइँ ईमानदार, सूदे साँचे, बुन्देली के जानकार फागन के सौकीन आला के चहेते रंगरस में पारगंत पारखी भले मानुस हतै वे कभऊँ उवौरी की नामी गामी फाग नइँ छोड़त तै। असाढ़ कौ मइना हतौ उनके घरे शिवूदा कौ आला गवत रत्तौ। मैं सुनत रहत तौ ओ गुनत रत्तौ कै जौ आला कितनौ नौनों है चचा से सुन सुन कें लिखत रत्तौ।

शिवूदा कमरिया जू कौ जनम पुछी करगुवाँ जैसे हल्के से गाँव तहसील निवाड़ी ज़िला टीकमगढ़ में भऔ तौ पुछी करगुवाँ गढ़ कुढार के पड़ौस में बसौ है इनके पिता जू कौ नाँव पारीछत कमरिया औ माता जू कौ नाँव अमानबाई हतौ, बे हल्केइँ से हुनगारु हतै, फागुन के मइना में फागन के गावै के बेराँ फागन खों हालऊँ रच रचू कें सुना सुनू देत्ते। इनके लाने गाँव वारे बताउत्ते कै वे जनम सें आँदरे हते और आला और फागन खों सुना सुनू कें सूरदास घाँइँ रचत्ते जन मानस में, सौ वे सबरे हाँय गायकी सें छाये रत्ते, जे खुदइँ सारंगी बजाउत्ते औ इनके संगी गोरे लाल जू तबला बजाउत्ते। कऔ जातै के ईसुरी के जैसे धीरे पण्डा हतै ऊसेई शिवूदा के गोरेलाल जू हतै जे रचत्ते वे सुनत्ते, जे सुर सारंगी पे भरत्ते, वे तबला थाप दै दै इन खौं होसला बढ़ा-बढ़ा रचवे खों उक्साउत रत्ते। शिवूदा हतै भौतईं स्वाभिमानी, अभिमानी नइँ, वे नई-नई आल्हा की लराइन खों रच-रच के संगी साथियन खों सुनासुनू कें उनके संगें मौज मस्ती कर आनन्द विभोर होत रत्ते, सुनवे वारे सुनत्ते, गुनवे बारे गुनत्ते और रसिया रस सिक्त हो हो के अपने अनहोने ही में पूरौ पूरौ अधिकार भरौ अभिमान करत तै, काय के वे हते बुन्देली के अनहोने हीरा, असाढ़ के लगतनइँ चार छः गाँवन में शिवूदा को आला गुवन लगत्तौ, तबला, ढुलक, नगरिया गड़गड़ाउन लगत्ती, जे पढ़े लिखे हतै नइँ लिखवो जानत नइँ हते, सो उनको पूरो के पूरौ आला मौखातइँ हतौ। जे सुनाउत रत्ते सुनवे बारे घोक-घोक याद करत रत्ते गाँव में कैऊ जने दार, भात, कड़ी में ... बारे होतइँ सौ वे इनकी हँसी सोऊ उड़ाउत रत्ते पै शिवू दा उने भगा भगू देत्ते, अपनी गायकी उन्हें सुनाउतई नइँ हतै, एक बेर की घटना कई जातै के शिवू दा अपने घर में गोरे लाल जू के संगे मिलकें आला गा रये ते, असाढ़ कौ मइना हतौ खूबइँ पानू बरस रऔ तौ उरब्रतियाँ चुचा रइँ, होय न होय कौनऊँ गाँव कौ उचक्का दुको-दुको अपुन खों सुन सुनू रऔ, सो अब आला बंद कर दो अपुन खों इनन खों सुनाउनें नइयाँ, सो भइया उने तो साँसऊँ आला बंद कर दऔ, दुके सुनइया मन मसोस के भग भगू गये।

त्रिभुज के तीनऊँ कौनन कौ जोग दो सम कोनन के बिरोवर कऔ जातै ऐई बात शिवू दा के आला के लाने सोऊ लागू होत है। काय के इन आला में ओज, प्रसाद, मधुर तीनऊ गुन कोल-कोल के भरे धरे, औ फिर गायकी के सुर सें ऊ भौतइँ अनहोनी लगत तौ सुनवे में जो जादुई असर से इनके आला की गायकी की घुमक दतिया, झाँसी, टीकमगढ़ जिलन में जोर-सोर सें घुमकन लगी ती, कायके ईसुर ने इनै ईसुरी सी रचवे की कला तौ दइअई हती धीरे पंडा सी सुर लहरी, गायकी सोऊ कंठ भर दई ती ईसें जे दो में एक बन गयेते, सो सब कोऊ शिवू दा खों सुनन चाउत्तौ। शिवू दा हते मनमौजी, अक्खड़ फक्कड़, औघड़ दानी, मस्ती में आउत्ते तौ खूबइँ गाउत ते, खूब सुनाउत ते, रंग रस बरसाउत ते मौज उड़ाउत्ते। कजंतकीदार कोऊ आला औ सुर की कदर नइँ करत्तौ वे नइँ गाउत्ते, सबकौ तरसाउत ते औ अपनी मरजी के मालिक, नेक नइँ डराउत्ते। एक बेर की घटना कई जातै कै शिवू दा खों दतिया दरबार कौ बुलउआ आला गावे के लाने आऔ सो भइया शिवूदा औ गोरेलाल दोई जने दतिया दरबार में आला गावे जा पौंचे। दतिया दरबार खचाखच भरौतो, महाराज सिंहासन पै बिराजे ते। सभासद सब जने अपने-अपने आसनन पै बैठेते, शिवूदा ने सारंगी पै सुर सादौ, गोरेलाल जू ने तबला में ताल ठोकी, सारदा की वन्दना

के पीछू शिवू दा ने पिराथना करी के महराज कौन सी लराई गाकै सुनाऔं, कैउ, आवाजें आई जो तुमैं सुनाउने होय सो सुनाव, शिवूदा ने फिर कें गुजारिस करी जो अपन की मर्जी होय ओई सुनाऊँ, बेई बात फिर कू गूँजी जो तुमैं अच्छौ लगै बौई सुना सुनू देव। शिवूदा बोलई तौ उठे-लिखवे वाय औ सुनावे वाय खों तौ अपनो लिखो अपनो गाऔ सबई नौनों लगत। मताई खों सबई मोड़ा-मोड़ी पियारे होत। जो हुकुम होय सो सुनाओं, फिर वेई बात, तुम तौ गाऔ औ सुनाव, जा बात शिवू दा खों छाती में गदकौ सो दै गई, हीरा हुज्जत में समै गुजर गऔ, सन्नाटो खिचो रऔ, शिवू दा बोले-गोरेलाल ताम-झाम उठाय, जिने जोऊ पतौ नइयाँ का सुनने सो अपुन खों कछू नइँ सुनाउने, कछू नइँ गाउनें चलौ इतै सें चलौ, औ वे तो बिना आला गाँय बैरंग पुछीकरगुआँ लौट आये, दिन डूबे घरे आकें बियाई करी औ गोड़े तान तून कें सो गये। ऐसे आन-बान सान के धनी हते शिवू दा।

कवि की कविता में, कवि की आतमा कऊँ हँसत तौ कऊँ विहँसत है कितऊँ पिसत कितऊँ रिसत, कऊँ सोने की चमक चमकाउत दिखाई देतई जो उजारु जन-जन के मानस में वास कर करु कें रस विभोर करवे कौ जादुई असर करत। ये पत्थर से हिरदे में रस बरसाउतये कऔ जातै पत्थर से निकरी पानू की धार रस भरी होतै। कवि की भाव भूम से निकरी भावना मानव मूल्यों के सास्वत सुरन खों झंकृत कर करुँ के रस बरसा उठत ये, उतै माया ममता दया परोपकार जैसे मानवीय गुण फैल भदइयाँ काँस से फूल उठतये, जो प्रसाद शिवूदा के काव्य में हतौ, आला और आला गायकी के सुर में हतौ, सोने में सुहागा को रूप इतै समानो तौ, जीसें इनै सम्मान मिलो तो मान मिलो तो।

कऔ जातै के शिवू दा कमरिया जू के एक लरका हतौ सो ऊ लाड़ पियार में बिगर बिगरु गऔ कै खुन्सन के मारें काऊ ने गाँव के अचड़न पचड़न में फाँस फूसै दऔ सो खुन्स में इनको लरका अनहोने अनुआ कर बैठे। गाउन की लराई में काऊ की हत्या हो हुआ गई औ पकरौ गऔ शिवू दा कौ लरका ऊखों टीकमगढ़ राज की जेल में बन्द कर कर दऔ ऊ बेरा सन (१८७४ ई० से १९०६ ई०) में टीकमगढ़ के राजा महेन्द्र प्रताप सिंह जू देव बब्बा जू हते। लरका जेल में हतौ शिवू दा परेसान सो उनने गोरेलाल कौ लै लूकै टीकमगढ़ किले के मैदान में पौंचकें घास फूस की झुपड़िया तान तून कें रैन लगे। भुन्सारे से सारंगी के सुर तबला की थाप आला की जोस भरी गाथा खों जे गाउन लगे, बब्बा जू किले की खिरकी से सुनन लगे, गुनन लगे। कैऊ दिन गुजरे एक दिन बब्बाजू से रऔ नई गऔ सों उनने ऐसी सुरीले बुन्देली के गायकन खों दरबार में बुला बुलू लओ। काय के बब्बाजू बुन्देली खों पिरानन से पिआरी मानत ते। शिवू दा आला गाउन लगे बब्बाजू ने इनके रैवे की खावे की व्यवस्था करा करु दई। जे पिरेम से रन लगे। एक दिना बब्बाजू ने खुस होकें आवे औ गावे की बात शिवू दा सें दै पूँछी। शिवू दा ने गरम लोहा कूट लऔ तुरतइँ बिन्तवाई कर करु कें सब कानियाँ कै दई सो बब्बाजू ने दया करकें शिवू दा के लरका खों जेल से छोड़ वे कौ हुकुम सुना दऔ, शिवू दा कछू दिनन रये पै उतै जोन पण्डा हतो जो इनें खावे खों देतौ ऊने रासन पानू देवे में कन्जूसी कर दई जा बात शिवू दा जान गये सो उनने गोरे लाल से कई के चलो अब इतै रैने नइयाँ कायके-

मन मारे लागे मिले, पंडा ने करौ हतफेर
चलो इतै रैने नई परौ सेर में फेर

औ शिवू दा लरका खों छुड़ा छुडू कें सब ताम झाम समेट कें पुछी करगुआँ आ गये। शिवू दा को आला अबै सोऊ पुछी करगुआँ में गव रऔ, गायक राम कुमार कमरिया नइँ रये संरक्षक खैराती बैना चचा नइँ रये कैऊ और गावे वाय नइँ रये जो बचे हैं वे हैं श्री प्रभुदयाल जी खरे जिननौ जो आला बचो खुचौ है बेई बुढापे में अपनी छाती से चिपकाएँ बचायँ गाउत रत, गुनगुनाउत रत, औ सुनाउत रत, वरना तो अब लुप्त होवे खौंऊ है-

शिवू दा के आल्हा के अंश

वन्दना- *भुजा चार तौ अरे सुन्दर तन औ तिलक चन्द्र एक दंत।*
जिनको ध्यान अरे हिरदै धरें मूरख भये गुणवन्त।
तुमै मना लेऊ माँ सारदे तुम सब देवन की सरताज।
संकट सेवकन पै परत तुमई बचाउत लाज।
अहपत पशुपत औ कमलापति हर दिन रहत सहाय।
नगर झलोकर की भूरा मल निस दिन रहत सहाय।
रामचन्द्र चतुर्भुज गुरु औ धारा के वन्दी छोर।
कालीजर के लीलाधर औ पन्ना के जुगल किशोर।

मनियाँ देव कौ सपनौ-
ऊँचे गुरज के ढापन पै उर ठाड़ी कुँवर हरनाम।
नजरे कर रई चौगिर्दी वेटी हेरें नजर पसार।
कैतौ मार में बगुला चुने, कै तौ फूले भदइयाँ काँस।
मै तोय पूँछो बाँदी उर बसी जे बन्जारे कितै खों जाय।
सीस नवाके अरे बेटी से बाँदी बोली बचन उचार।
न तो मार में बगुला चुने न फूले भदइयाँ काँस।
मेले मवाली अरे साँवर के बेटी ताल किरतुआ पार।
कत कनवजिया अरे महुवे से डोला लैजें राजकुमार।
सुनके बोली बाँदी की बेटी गिरी धरन मुरझाय।
घरी दौक में अरे चेतन भई, गदबद दै गई रावरन माँय।
बैठे मतारी मलना देव औ माताके पौंच गई पास।
बारा बरसे वादो रई तेरयें लियाऐ कुँवर उदराज।
मोय बुलाकें अरी बाँदी से फजीहत करी तला की पार।
ऐसो न जनमों कोऊ महुवे में मोरी पवनी देय कराय।
धरी कजरियाँ रे रावर में मोरी धरी धरी मुरझाय।
आदी रात के अरे बारा बजे उर चन्द्रवल राजकुमार।
लेकें कटरिया रे बूँदी की बेटी डिगर चली तहँ वार।
दै परकिरमा अरे मन्दिर खों बेरी चरनन सीस नवाय।
जोर हतुलिया ठांड़ी भई बेटी अरज करी बिलखाय।
जब जब संकट ऊदल परे तब तब देव तुम भये सहाय।
आज साँकरो अरे मोपै परौ संकट में होव सहाय।
लाज राखियो अरे खेरे की मोरी अरज सुनो महराज।
तोरे भरोसे रे तोरे बल अब आ जाबे आल, उदराज।

भई आवाजै जे मंदिर से बेटी सोच करो जिन वे काज।
ताल किरतुआ की बंदिया पै बुलवा लेव आल उदराज।
आ गई खातरी रे बेटी खों औ मन मानो भरो विश्वास।
मनिया देवता मंदिर से बेटी ढ़िगर चलौ तहँ जाय।
पवन निकर गई मढ़िया से पत्थर परो रऔ मढ़माय।
देर लगी न देवा खों छिन में कनवज पौचौं जाय।
बनौ बंगला जा ऊदल कौ ऊपर लाल धुजा फैराय।
कलस धरौ तौ कंचन कौ, सोने सो करे सरके दुआर।
बरादरी कौ बंगला बनौ, साकू के जड़े किवार।
बगले झझरी चौ गिरदाँ जिनमें काँच आगरे बार।
संग मरमरी पथरा जरे जीमें फूल रई फुलवार।
अतर पुतो है खम्भन पै, झौंका उड़े पवन के साथ।
तनो चंदेवा मखमल पै, झौंका उड़े पवन के साथ।
कारी पीरी धौरी झालरें औ बैजनी लाल गुलनार।
पलका डरौ रे साकू कौ ओ रेसम की बुनी निबार।
गिलम गलीचा रे मुल्तानी तामें दरी आगरे बार।
चार गेडुआ रे मिसरु के सो पलका में धरे किनार।
आदी रात के अमला में इन्दी फानुस के उजयार।
सोबै लाड़लौ जसराज कौ, बगलन धरी ढाल तरबार।
नींद छमासी रे ऊदल की ऊपर धौरौ पिछौरा डार।
सोवत सपनौ मनियाँ दऔ तुम सुन लेव धवल उदराज।
जाके धनी पै संकट परौ ऊदल चाकर सोवे खों धिक्कार।
बाग बगीचा सब कटवा लये औ मौं लोटा भदइयाँ आम।
पुरैन कटा लई कीरत की पृथ्वी करा रऔ मन के काम।
जहाँ रसोइयाँ रे देवला की भूरा तुरत पछाड़े गाय।
जहाँ बैठकें गरुये आला की, ताकी ईंट दई खिसकाय।
तोरे अखाड़े नाहर आला के चौड़ा ने ठसा दई साँग।
ठाकुर पूजा की चौतइयाँ पै घोंटे भंगेरे भाँग।
काँ गई राधा काँ गई रुकमन का गई द्रोपदी नार।
कोता के अरजुन, काँ गये जिनने सरग भेज दये बान।
वे जरजोधन अरे काँ गये, ऐसौ कै रऔ राव चौहान।
रानी मलनदे रे दुल्हन बनी दूला वनौ सावरी राय।
परत भाँवरे रे कीरत पै ऊदल सोंप दायजो जाय।
राज चन्देलौ गइया भऔ नाहर हो रऔ पिथौरा राय।
ताल किरतुआ की बदियाँ पै राजे जवरन हारे खाय।
जो नइँ चलते हो महुवे खों, ऊदल फिर पाछे पछताय।
नाँव छोड़ दौ मैं तुमरों जियत जिन्दगी लेव न नाव।
बैठ ऊदल के कंठ गऔ देवा औ समझा दई मन बात।
काज संवारन रे चन्देल कौ भइया चलौ हमारे साथ।
__**
चली दुलइया रे ऊदल की कर कर के सोलऊ सिंगार।
वारऊ आभूसन तन राजे कमर किंकिंन की झन्कार।
पायल ठनकी छिड़िया, मनियाँ बैठौ तीर कस जाय।
दै परिकरमा सुआमी खों उर चरनन तर सीस नवाय।
पाँव पलौटे रे सेवा करे रानी भौत भौत सुक वाय।

हात जोर के ठाँड़ी भई रानी अरज करी मुसकाय।
सोवत बाते तुम कीसे कई, सुआमी मोसें कऔ समुझाय।
फेर जुआवे ऊदल कये रानी सुन लौ कान लगाय।
पैली पावन अकती दूजी भई बरसात, तीजौ सावन सिर आय।
महुवे चलवे खो बरया करी हमारी चाय।
ताल किरतुआ की बंदिया पै मोय बुलाऔ विरप कुमार।
आसौ के सावन महुवे करें, कजली खुटे किरतुआ पार।
राजा करन के पारे में मुरगा दीनी पैली बाँग।
उठौ लाड़लौ जस राज कौ जोनों बोले काग।
सिया ढिरइया खों संगे लऔ, भानेज कुड़रिया बार।
लाखन की रावरन खों चल दऔ बगलन ढाल तरबार।
लगो पंचमम लाखन कौ भाई हालऊँ भई जगनार।
तीनऊँ सूरमा ड्यूढी पौचे, नै नैकें करे जुहार।
छड़ीदार खों ललकारो औ तालन मियाँ लये बुलवाय।
पाँचऊ सूरमा जुर बैठे ड्यिोढी पै करे सलाय।
सीस नवाके लाखन खों ऊदल विनय करी सिरनाय।
आसों को साउन वरनौ है, कजली बटै किरतुआ पार।
इतनी सुनकें ऊदल की सीआ बोलौ वचन उचार।
खबर बनाफर पावें न, न सुन पावें भूप जै चन्द।
आदी रात से चल दी जौ अपने कर के जे छर छन्द।
डारौ उकावे उरहट की कजली बटे किरतुआ पार।
जो न पौचे हम मौका पै राज हमारो निच्चै हार।
पढ़ी दुलइया लाखन की माई बाँचे पोथी पुरान।
करम लिखन्ते के तौ वावरे है दल खोटेराव चौहान।
____**_
नाऊ विरतिया फेरे न क्यों धरवाऔ नारियल हात।
काय सुत करा मानन करौ काये लगुन धराई हात।
तेल काय खों चढ़वाऔ, काये कंकन बाँदौ हात।
बाँद मोरिया सोने की सिर सैरौ झोका खाय।
नेक करे सब हमने मिलके मन ही मन मुसकाय।
बागो पैरो केसरिया तापै जड़तारू जड़त करार।
वनरावन ऊबन गये मोरे बाबुल पौर दुआर।
टीका पर सब विध करे बम्मन बेद पढ़े बहुभाँत।
गाँठ जुराके फेरा फिरे संगे परी भाँवरे सात।
दिन दस बीते गोने लए जूझन चले महुविअन साथ।
सीस झुका के चरनन झुकरई बेर बेर चरनन में माथ।
डोला फदाँ के वेदरदी मोरो काय खों ल्याय चलाव।
छोड़ अकेली चले रन जूझन कैवौ कंत स्वभाव।
मजा चलाये के देखे नइँ सिजिया पै दिना दो चार।
जूझन महुविअन अरे संगे चले नाहर कस वादे हतआर।
जो तुम जात हो महुवे खों मोरौ डोला करौ तैयार।
आँगू हतनियाँ तुमरी चले पाछू डोला चले हमार।
ऐसौ कहेगो चन्देला लाखन लियाय कबीला सात।
नटुआ नइयाँ न तौ बेड़िया रानी सत्य सुनो मम बात।
बैठी रइओ सतखन्डन सुक चावौ डबन के पान।

जीत जिगरिया घर वावरे तोरी भरा दों मुतिअन माँग।
जारों बारों रे तुये सत खन्डा औ पानन पै परे तुसार।
तोरे अकेले के जियरा बिन मोखों सूनौ लगे संसार।
सोर बरस की उमर उठानी, नये जीवन उठत मरोर।
सुआमी तुमारे जिउवरा बिना मोखो गासी कड़े करेजो फोर।
देय धरे कौ संसार में और करे न संग रस भोग।
वारी वेस में छोड़त वर ने भाँवर परे को संजोग।
बेंदी फूल रई माथे पै पाँव पोस छब देत।
पिअर चंदी है हरदी की ऐंड़न माहुर मन हर लेत।
गोरे कपोलन तिल राजे, मानो भोरा लेत पराग।
अरुण कमल पै छब छाजत निरखत भूल जात वैराग।
घरी घरी सें दिन घाटे, स्वामी तारे गिन-गिन रैन।
तोरे अकेले जिअरा बिन, मोखो परे न पल भर चैन।
जल की सोभा कमल है, दल की सोभा पील।
धन की सोभा धरम है, गुन की सेवा सील।
रुचि सें राँधे फीके लगे सुआमी बिन साँभर के साग।
नारी की सोभा जौनौ है कंता जौ नौ रये सुहाग।
रजनी सूनी रे चन्दा बिना कमलन बिन सूनौ ताल।
सूनो बगीचा कोयल बिन (रैन) (झुण्ड) बिन कर छाल।
हिरदौ सूनौ रे विद्या बिना पानू बिन सूनौ निवान।
हीरा बिना सूनौ सूनौ सवै सूनी डरी रेत खदान।
सुन सुन करुना लाखन रानी की बोले उदल महोबे वार।
गंगा उठा लई ऊदल ने, माथे धरी नमन तरवार।
लाख दुहाई मोय जस्स राज की माई दिवला दूद हराम।
जैसेई लाखन लयें जात हों, ऊसोई पौचा दो तुमारे धाम।
आ गई खातिरी रानी खों भारी मोनो मन विसवास।
उठी दुलइया लाखन की, दाखिल हो रई जाँ रनवास।

____**_**_

कारी बदरिया कौ सुमरन करौ औ लौंका के बल जाय।
आज बरस जा रे कनवज में कंता एक रात रुक जाय।
कारी बदरिया लगें भिआवनी घुमड़ घटा छाराय।
पिआ बेदरदी मानें न चाये महुवे लौं बरसत जाय।
दिया की सैलन रातव दओ, औ अदरातें चनन की दार।
होत भुन्सरा पिरचे दये घोड़े मजल न डारे लार।
राजा करन के पारे में मुरगा जैसेई दीनी बाँग।
उठौ लाड़लौ जस्स राज कौ जोनो वोले कारे काग।
तंग खैच दये घोड़न के ऊपर दये गाजिया डार।
सुमरन करके सारद को पाँचऊ सूर भये असवार।
खुलौ फाटकौ कनवज कौ पौचों निकर गये सरदार।
घोड़ा छारकन डारत भये औ महराज महोवे वार।
सूरज फिर की खाई न औ जमुना की दावी कगार।
टेरे खेंपटा ढिरिया ने तुरतै करौ नवारौ तियार।
झेल विलम विल्कुल नइँ होने हमखों जाने पैले पार।
सुन केवटा दौरे हाजिर हो रये अल के पास।
मुजरा करके ऊदल से मल्हा बोले वचन प्रकास।
आज नवारो लगहें न तुम खो प्रात लगा दें यार।
रुमझुम बुदियाँ बरसें मेहा ढुरका ढुर के चले वयार।
पाखर भी जें बूँदा चुचाये घाटन ठाड़े महोबे वार।
हुकुम के चाकर कदमन के जीवन चरनन कौ आधार।
लायक हमारी है नइयाँ हम खों देवे रास वरदास।
सुनत उदलसी मुसका गऔ हँस के डारौ जेव में हात।
सकल खेवटन खो बुलवा कें ऊदल दई असरफी सात।
बाढ़त आवे नदी जामने, डूबत जावे नदी कछार।
मन में संका करे कनबजिया ऊदल कैसे उतरिये पार।
कारो पानी रे जमना कौ भयानक भँवर नीर दिखाय।
हेड़ा उठत है डेड़न में जालम मगर मच्छ उतराय।
कहे डिरइया लाखन मामा सुनो कनबजा वार।
रती भान के शहजादे नाती वैन चक्र वे क्यार।
वारा रानी के तुम लाड़ले, तेरा के पिरान आधार।
नगर कनबजा की गलिअन से मामा कभऊँ न निकरे वार।
बाग बगीचन में घूमत रये देखी नइँ नदी की धार।

आल्ह मनउआ

हरसिंह जोधा कनवज गऔ उर जहाँ आल रनधीर।
मुजरा करके पाती दई उर ज कही महोबे मीर।
सुनत बनाफर थर्रा गऔ, उर तिरछे करके नैन।
हर सिंग तरफ हेर के, बोलौ तुरत बनाफर वैन।
पहुनई करवे खों आए हो हरिसिंह करौ करत की आय।
लुआवे, बुलावे को चंदेले से हमसें कछू परोजन नाँय।
देस निकारो दओ चन्देल ने उर कुटुम सहित परवार।
कमी करा दई कागज पै उर कड़वा दये राज से बाट।
खोदन खोदन मोरि बसई फिरै उर गलिन गलिन असवार।
रोम न कसको परमाले कौ मोय भर दुपरै दये निकार।
तीन दिना लौ जबै फिरत रये मोरी नेंके न पूँछी बात।
पानी उठाऔ कीरत कौ अव का नगर महोवे जात।
जेठ मास के भर दुपरे तें उर संगे हती रनवास।
खबर न भूलौ वा दिन की वारौ इँदुल मरौ पिआस।
ब्याई बमुरिया टिमरो की जाँ रनवासन मारे घाम।
आवै जावे को चंदेल से हर सिंग कौन हमारौ काम।
ग्यान मान सें बिगरत है उर मंत्री बिन बिगरे राज।
जती कुसंगत में बिगरत है, बिगरे सुरापान से लाज।
दाता बिगारे रे सुमन ने उर कायर ने बिगारे नूर।
सबा बिगारी कूरन ने उर कायर ने बिगारे सूर।
दूद बिगारे रे बछला ने उर मछली ने बिगारे नीर।
पुष्प बिगारे भौंरा नें उर प्रमदा ने बिगारे फकीर।
गाँव बिगारे रे दंडी ने उर काई ने बिगारे ताल।
महिल भूपत की चुगली से राजा बिगर गये परमाल।
पिरथीराज सें रारी है उर करौ जुद्ध कौ ठाट।
सूर बिसा लौ लरबै खों लिआ लिया के लाहौरी हाट।
मेला बटेसुर कौ नामी है जाँ भौतेरे सूर विकाँय।
चतुर पारखी पारखी खों पठवा दों सो लै आवे सूर विसाय।

दमरी दमरी के दो दो मिले उर पैसा के सोरा विकाय।
चतुर पारखी माहिल है, इक दो रुँगन में मिल जाय।
कारौ कसौ न मैं कम्मर में न कनबज सें करौ पयान।
गमन महोवे करहो ना हमखों गुरु गोरख की आन।
लाख दुहाई जस्स राज की उर देवला कौ दूद हराम।
चंदेले ढिंग जेहो ना जानै तुलसी सीताराम।
सुनके वानी अल्लन की हरसिंह वोलो वचन उचार।
भली विचारी दादा आलदेव हमखों छोड़ दओ मजधार।
दैंके नगाड़े गढ़ कनवज में और छोड़ धरे हतयार।
चन्देलन की रियासत कौ दाना मोरे सिर पै मार।
मौजें करत रऔ कनवज में खाऔ दूद और भात।
पान बिदा को अब मिल जावे मैं अब लौट महोबे जात।
नौन ऊजरों करो परमाल कौ उर खटगन खेल खिलाय।
समर साँभरी सें निरभय करें पाछे रियासत रय जाय।
जीवन जाकौ जा सिंसार में और जगत सराहत जाय।
लाज सरम जिन खौं नइँ जे नर जिअत मरे सम आँय।
बदौ पलैचा मोरौ छूटै नइँ उर न करौ अन्न जल पान।
नगर कनवजा बिलमो ना मोय बच्छ राज पिता की आन।
अब उठ मिल लेंव दादा आलदेव उर निगा करें रऔ साफ।
जियत रये तौ फिर मिलबूँ नई सुरलोक में हुये मिलाप।
हरिसिंह ठाड़ौ मिलवे खों अल्लन उठो मिलौ न जाय।
घोका विचारी मन में करैं अल्लन इक आवें इक जाय।
टपटप असुआ टपकन लगे और रऔ धरन तन हेर।
खाई कूप के दुपचे परौ भई गत साँप छछूदर केर।
सुन सुन वानी हरसिंग की दिवला मरौ डवरिअन नीर।
लइयाँ पइयाँ उठ सिजरा से उर आई आल के तीर।
दै परिकरमा हरीसिंग ने और चरनन सीस नवाय।
वाँय पकर के हरसींग की दिवला लीनौ कंठ लगाय।
कहत दिवलदे गरुये आल से, बेटा वचन करौ परवान।
टटुआ चारक हते परमाल कें टूटौ फूटो हतौ समान।
बूढ़ी हथिनियाँ अंदरु हती जामें हती टाट की झूल।
पाँच गवाँ के ठाकुर हते बा सुद गई भूप खों भूल।
नदी नरमदा कौ करको चारे उर जमना की घरें कगार।
राज करा दये चंदेल खों बेटा जानत जग सिंसार।
जी की करनी जी के संगै, अपनी करनी अपने हाँत।
इन्द्रचाप के चंदेल खों बेटा कैसो कनारो खात।
जा दिन बनाफर जनमन लये उर उल्लन आई दूब।
नाचत आई मलनादेव, उर मरमाल दान दये खूब।

अन्त में मैं हिरदै से श्री प्रभूदयाल जू खरे एवं श्री अमर पाल सिंह जू बुन्देला पुछी करगुवाँ कौ रिनी हौं, इन दोई जनन ने आला के भूले बिसरे अंस सुना सुनू के लिखवा दये, अवै इनै और आला के अंस याद हैं पै सुनाउत सुनाउत बिसरन लगत, बुढापौ संग नई देत, सौ बुन्देला जू उने कुरेद-कुरेद सुरत कराकर करु देत ऐसेई दोऊ जनन के मेल जोल सें लिखाये अंस आलेख में लिखे गये सों में उनका भौतई भौत आभारी हों।

–१६३, कला निकेतन, नीरजा नगर जे के रोड भोपाल म०प्र०卐

बुड़की

–प्रभु श्रीवास्तव 'पीयूष'

आ गई है सकराँत मकर की, बुड़की है दिन भर की।
कोउ लेत कूँडा देव जाकें, कोउ जटाशंकर की।
भीमकुंड कछु चले ओरछा, कोउ लेत पुसकर की।
कोउ लेत तिरबेनी जू में, कोऊ पौड़ी हर की।
ऐसौ जोग जुरै जो जाकें, लयँ गंगासागर की।
मन चंगा तौ गंगा सी प्रभु, कुइया अपने घर की।१।

पंडित बड़े भोर उठ जावें, बाँकी बनक बनावें।
सपरें कभउँ, कभउँ मों धोकें, गागव तिलक लगानें।
हर घर में सकराँत सुनाकें, खिचरी तिली उगावें।
जजमानन जब पाँव परै सो, वे मन मन मुसकावें।
लड़ुआ, लुचइँ, ठडूला, गुजियाँ, अनचलते लै आवें।
बड़े प्रेम सें बसयाउर प्रभु, खाबें और खुआवें।२।

मचलीं कुंडेसुर के लाने, मेला देखन जाने।
पुरा परौसन जब सब जारइँ, फिर कैसें मन मानें।
लोटा भर जल चड़ा शंभु के, चरनन शीष नवानें।
मिल आयें गिरजा जिज्जी सें, जाकें एइ बहाने।
पइसा टका धरें रओ अपने, अबै हमें नइँ चाने।
रुखी सूखी हाँ कै दो प्रभु, जनम-जनम जस मानें।३।

बिरजीं वे बुड़की के लाने, हमें ओंडछें जाने।
बेत्रवती कलजुग की गंगा, मल मल तिली नहाने।
दरसन करें राम राजा के, चरनन फूल चढ़ाने।
फूल बाग में बैठ मजे सें, लड़ुआ खुरमा खाने।
मिल आहें भइया भौजी सें, सपनन हमें दिखाने।
अबै घूम फिर लैन देव प्रभु, जे दिन नइँ मिल पाने।४।

दै गइँ पुरा भरे में डुड़की, लेंयँ ओडछें बुड़की।
ठानी ठान बात नइँ मानी, दै दै हारे घुड़की।
कोड़ा काड़ ठंड में रस की, भरी गगरिया लुड़की।
बे गइँ सो नइँ परी जरूरत, तेल तिली उर गुड़की।
बेघर बार फिरत प्रभु ऐसें, जैसें हो गई कुड़की।५।

–चित्रांश कालोनी, वर्मा शेल पेट्रोल पंप के पास टीकमगढ़ म०प्र० 卐

वीरांगना चम्पावती

-सोम त्रिपाठी

बुन्देलखण्ड की किवदंतियाँ पर आधारित कहानियों और नाटकों में महानी चम्पावती का चरित्र एक ऐसी वेबस नारी के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो अपने सतीत्व को प्रमाणित करने के लिए अपने पुत्र समान देवर हरदौल को विष दे देती है। लेकिन लक्ष्मणसिंह गौर ने अपनी पुस्तक 'ओरछा का इतिहास' में चम्पावती और हरदौल की आयु में अत्यधिक अंतर देखकर, चम्पावती ने विष दिया, इसे नकार दिया है। इतिहास के साधन, सामग्री और प्रमाण जो लेख रूप और भौतिक अवशेषों के रूप में हैं, से भी यह प्रमाणित नहीं होता कि महारानी चम्पावती ने विष दिया था। स्लीमन ने १८१७ में लार्ड हास्टिंग्स के बुन्देलखण्ड आगमन के समय हैजा फैल जाने पर, हैजा के नए देवता के रूप में हरदौल की पूजा की परम्परा प्रारम्भ होने का उल्लेख किया है[१] इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया में जुझारसिंह ने विष दिया था का उल्लेख है।[२] ओरछा स्टेट गजेटियर में सबसे पहले चम्पावती के चरित्र पर संदेह होने पर जुझारसिंह के आदेश से चम्पावती ने हरदौल को विष दिया था, इस बात का उल्लेख किया गया है। इस तरह १९वीं शताब्दी में हरदौल की कथा किवंदती के रूप में अस्तित्व में आई। यह श्रद्धा, भक्ति और विश्वास का विषय होने के कारण इसमें निरंतर चामत्कारिक कथाओं का समावेश होता रहा।

चम्पावती का जन्म मैदवारा के जागीरदार हरिसिंग परमार के घर १५७२ ई0 में हुआ था। उनका बचपन का नाम पार्वती था। १५८८ ई० में उनका विवाह ओरछा के महाराजा मधुकरशाह के पौत्र जुझारसिंह के साथ हुआ, तब परम्परा के अनुसार ससुराल में उनका नाम चम्पावती रखा गया, इसीलिए पार्वती की जगह चम्पावती नाम प्रचलित हो गया।

१६०८ ई० में हरदौल के जन्म के बाद उनकी माँ गुमान कुँअरि का निधन हो गया था, ऐसी स्थिति में हरदौल के पालन पोषण का भार चम्पावती के कंधों पर आ गया। उस समय ओरछा का राजा रामशाह जहाँगीर की कैद में था। जहाँगीर ने उसे २२ नवम्बर १६०९ (२५ शा-आ-वन १०१४ हिज़री) को इस शर्त पर छोड़ा कि वह वीरसिंह देव को ओरछा का राज्य सौंप कर चंदेरी चला जायेगा।[३] वीरसिंह देव ओरछा के किले में जनवरी १६१० ई० में लगभग आये होंगे। इस अवधि में उनका परिवार दतिया में रहा और यहीं पर हरदौल का जन्म हुआ था।

लोक में प्रचलित है कि हरदौल का जिस समय जन्म हुआ, उसी समय चम्पावती के पुत्र विक्रमाजीत की पत्नी कमल कुँअरि के भी लड़का पैदा हुआ था। चम्पावती ने हरदौल को दूध पिलाने का दायित्व कमल कुँवरि को सौंपा। रिश्ते में हरदौल कमल कुँअरि के ककिया ससुर लगते थे, इसलिए जब हरदौल को उनके पास लाया जाता था तब परम्परा के अनुसार पहले सूचना दी जाती थी कि 'काका जू पधार रहे हैं'। कमल कुँअरि सम्मान सहित घूँघट डालकर खड़ी हो जाती थीं और हरदौल को गोद में लेकर दूध पिलातीं थीं। वात्सल्य का इससे बड़ा उदाहरण कहीं देखने को नहीं मिलता। चम्पावती ने हरदौल को अपने बच्चे की तरह पाला पोषा। हरदौल भी चम्पावती को माँ की तरह पूजते थे। चम्पावती ने हरदौल को विष दिया यह जुझारसिंह को कलंकित करने का एक प्रायोजित षडयंत्र मात्र है, इसके अलावा कुछ नहीं।

बुन्देलखण्ड पहाड़ी और जंगली इलाका होने के कारण हमेशा बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित रहा है। १५७७ ई० में अकबर ने नरवर-करैरा के रास्ते ओरछा पर आक्रमण करने का दुःसाहस किया था। सतारा नदी के किनारे हुए युद्ध में मुगलों को भयंकर हानि उठानी पड़ी। नुकसान बुन्देलों का भी हुआ था मधुकरशाह का लड़का होरलदेव मारा गया था, लेकिन मुगल ओरछा नहीं जीत पाये थे। मजबूर होकर उन्हें बराबरी का समझौता करना पड़ा था। इस समझौते में अकबर को न तो डोला मिला था और न ही हर्जाना।[४] १५९२ ई० में वीरसिंह देव को बँटवारे में बडौनी का हिस्सा मिलने के बाद उसने मुगलों के सीमावर्ती इलाकों को जीता और अकबर के प्रिय मंत्री अबुल फजल का वध कर दिया था, परन्तु अकबर की सेना उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाई थी।[५]

उक्त स्थिति को शाहजहाँ अच्छी तरह जानता था इसीलिए उसने १६३५ ई० में ओरठा पर आक्रमण करने के लिए बुन्देला राजपरिवार की फूट का फायदा उठाकर देवी सिंह को आक्रमण करने का आदेश दिया। देवीसिंह का साथ देने के लिए ओरछा के राजा जुझारसिंह के भाई भगवान राव और पहाड़सिंह भी साथ में आ गए क्योंकि ये दोनों उत्तराधिकार की दौड़ में असफल होने के बाद देवीसिंह के साथ मुगल सेवा में पूर्व से थे। शाहजहाँ ने देवीसिंह को ओरछा का राज्य देने तथा भगवन राव और पहाड़सिंह के मनसब देने का लालच दिया था। शाहजहाँ ने प्रतीकात्मक रूप से अल्पवयस्क औरंगजेब को युद्ध की कमान सौंपी थी। औरंगजेब ने सुरक्षा की दृष्टि से युद्ध क्षेत्र से दूर चाँदपुर सुनारी में और मुगल सेनापति खान दौरान ने भाण्डेर (इंदरगढ[६]) में पडाव डाल कर, युद्ध करने के लिए देवीसिंह आदि को आगे भेज दिया था।

कुम्हेडी के पास ग्राम जुझारपुर के मैदान में जुझार सिंह और देवीसिंह की सेना में युद्ध हुआ जिसमें जुझार सिंह की पराजय हुई। इस पराजय का मुख्य कारण बुन्देल राज परिवार के लोगों की गद्दारी थी। इस कारण मजबूर होकर जुझारसिंह को बुन्देलखण्ड त्याग कर मुगल सीमा के बाहर गोलकुंडा भाग जाने का निर्णय लेना पड़ा।[७]

जुझार सिंह अक्टूबर १६३५ को ओरछा से धामोनी,

चौरागढ़ होता हुआ गोलकुंडा की ओर रवाना हो गया। दूसरी ओर खान दौरान को जब जुझारसिंह के भाग जाने की सूचना मिली तो वह पीछा करने के लिए मुगल शासित प्रदेश करैरा, चंदेरी होता हुआ सिरोंज पहुँचा जहाँ अब्दुल्ला खाँ फिरोज जंग और खानजहाँ सैयद मुजफ्फर खान (करैरा के जागीरदार) उसका इंतजार कर रहे थे। उसने मुजफ्फर खान को विजित प्रदेश की व्यवस्था देखने के लिए ओरछा भेज दिया और स्वयं अब्दुल्ला खाँ को साथ लेकर धामोनी होता हुआ चौरागढ़ को रवाना हो गया। खान दौनार जब चौरागढ़ पहुँचा तब एक चौधरी ने सूचना दी कि १५ दिन पूर्व जुझारसिंह अपने परिवार को लेकर २००० घुड़सवार, ४००० सैनिक और ६० हाथियों सहित दखिन की ओर चला गया है। यह खबर सुनते ही वह तेज रफ्तार से जुझार सिंह का पीछा करने के लिए चल पड़ा।

जब खान दौरान जुझारसिंह के काफले के करीब पहुँचा तो जुझार सिंह ने शीघ्रता से चम्पावती के नेतृत्व में हाथियों पर लदा खजाना और राज परिवार की महिलाओं को गोलकुंडा की ओर रवाना कर दिया और स्वयं मुकाबला करने के लिए रुक गया। स्थिति की गंभीरता को देखकर रानी चम्पावती ने राजपरिवार की समस्त महिलाओं को शास्त्रों से सुसज्जित कर एक महिला सैन्य टुकड़ी का रूप दिया और गोलकुंडा की ओर चल पड़ी।

जुझारसिंह का उद्देश्य था कि जब तक चम्पावती का काफिला गोलकुंडा सीमा में न पहुँच जाये तब तक खान दौरान को रोका जावे। इसीलिए वह पूरी ताकत के साथ युद्ध करने लगा लेकिन जब दोनों सेनायें युद्ध कर रही थीं उसी समय खान दौरान के जासूसों ने चम्पावती के रवाना होने की खबर दी तो उसने चम्पाती को पकड़ने के लिए अपना बड़ा लड़का सैयद मुहम्मद को ५०० घुड़सवार और कुछ अधिकारियों के साथ भेजा।[८]

गोलकुंडा कुछ ही दूर रह गया था तभी चंपावती ने पीछे मुगल घुड़सवारों को आता हुआ देखा। महिलाओं ने तलवारें निकाल कर मुकाबला करने के लिए मोर्चा संभाल लिया और बहादुरी से युद्ध करने लगीं। सैयद मुहम्मद की टुकड़ी राजपरिवार की महिलाओं के सामने टिक नहीं पा रही थी तभी खान दौरान अपनी सेना के साथ वहाँ आ गया। अब मुकाबला बराबरी का नहीं था, परन्तु परिणाम की चिंता किये बगैर वे सब युद्ध करतीं रही जब तक घायल होकर जमीन पर न गिर पड़ी। इस युद्ध में चम्पावती को भाले के दो गहरे घाव लगे जो बाद में उनकी मृत्यु का कारण बने।[९]

महिलाओं के साथ युद्ध में जीत हो अथवा हार दोनों परिणाम शर्मनाक होते हैं। इसीलिए मुगलों का दरबारी इतिहास अब्दुल हमीद लाहौरी ने बादशाहनामा में इस युद्ध को मुगल सेना के बचाओ अभियान के रूप में वर्णन किया है। उसने लिखा है मुगल सेना ने राजपरिवार की सारी महिलाओं को बचा लिया इसके पहले कि वे हिन्दस्तान की परम्परा के अनुसार जौहर करें। लाहौरी के उक्त कथन में बजन नहीं है क्योंकि आक्रमण होने पर और वो भी रास्ते चलते, सबसे पहले मुकाबला करके अपना बचाव किया जाता है न कि जौहर और न आपस में एक दूसरे का कत्ल।

Ref.-

1.Rambles and recollection of an Indian official. By-W.H. Sleeman. P.210. 211,212,303
2.Imperial Gazetteer of India. Vol. 7 P.243
3.Tuzak-I-Jahangiri.Translated by Majar David Price. 4th year of reign.
4.Akabar nama of Shekh Abu-L-Fazl.Translate by- H.M.Elliot.
5.Murder of Abu-L-Fazl. By-Asad Big "Asad" Qazvini Translate by-H.M. Elliot.
6.Old Map of Datia. M.P.Tourist Road Atlas. Pub.-Indian Map Service. Jodhpur.
7.The History of India. By- H.M.Elliot. Vol-7 Section15.
8. Massir-Ul-Umara, Vol. 1 P.102
9. The History of India By-H.M.Elliot. Vol. 7 Section 15.

-विवेका चौक, बड़ा बाजार, दतिया (म०प्र०) 卐

पुरानो समय

–नवल किशोर सोनी 'मायूस'

जब अपने तपने जीवन को पल पल हतो सुहानो।
को जानें अब कितै बिला गओ है ऊ समय पुरानो।।

पैल आदमी कउँ जैबे खाँ घर सें जब निकरत ते।
गाँव पुरा में सबइ जनन सें राम रहीम करत ते।
तन तन सी बातन पै होकें कोउ न कभउँ रिसानो। को जाने...

मिलकें मनत हतीती सबरें होरी ईद दिवारी।
हतो ऐंन सुख चैन पैल की रीत लगत ती प्यारी।
जनी मांस सब प्रेम एकता को पैरत ते गानो। को जाने...

डेड़ रुपइया में बोरा भर मिलत हती ती पिसिया।
चाराना में बनत हते चोखी चाँदी के बिछिया।
चार विसी में बनत हतो तो फिरमा गोप तिंदानों। को जाने...

अड़के रतते पैल किबारे लगत हते नाँ तारे।
बने रात ते एक दूसरे के घर के रखवारे।
कोउ काउ के घर में घुस गओ जो नाँ कभउँ सुनानो। को जाने...

हितुवा हते सबइ के पैलाँ सबरे मुखिया माते।
साँसे मन से पालत ते सब जीसें जैसे नाते।
स्वारथ बैर कपट छल सबखाँ हींगइ घाँइँ बसानों। को जाने...

नारी होत लक्ष्मी घर की पैलाँ सब जानत ते।
बिटिया बैन मताई बिरोबर ऊखाँ सब मानत ते।
कुड़पन करत काउ के संगै कोउ न कभउँ दिखानो। को जाने...

लाँच घौंच को नाँव हतो नाँ कउँ ती झीना झपटी।
लूट पाट सें दूर रात ते माँस हते नाँ कपटी।
कभउँ जात नाँ हते कचारी सूनो रत्तो थानो। को जाने...

कउँ नाँ तो 'मायूस' धिंगानो नाँ कौनउँ बदमासी।
बनी रात्ती सबके घर में रोजउं पूरन मासी।
करुणा क्षमा दया को सबके मन में हतो खजानो। को जाने...

–कोतवाली के पीछे, छतरपुर म०प्र० 卐

नाटक-

बुन्देलखण्ड गौरव महाराजा छत्रसाल

-डॉ.सुश्री शरद सिंह

दृश्य आरम्भ

धुबेला स्थित महाराज छत्रसाल की समाधि का दृश्य

पार्श्व से पक्षियों का मधुर स्वर उभरता है।

पल भर को फेड इन

स्पॉट लाईट में मंच पर सफेद रंग की बुंदेली शैली का धोती-कुर्ता पहने एक प्रौढ़ आयु के बुन्देलखण्ड का प्रवेश। फेड आउट।

बुन्देलखण्ड - (चैन की सांस लेता हुआ) आहे ! कितनी अच्छी लगती है यह शान्ति......न कोई युद्ध न कोई कोलाहल...शान्ति के वातावरण में ही विकास के बीज प्रस्फुटित होते हैं और मनुष्यता पल्लवित होती है.....

(आत्मकथन) ये चिड़ियाँ कितने मधुर स्वर में गा रहीं हैं ...कितना सुन्दर जीवन है इनका....आजादी से उड़ो, आजादी से गाओ.....आजादी से घूमो.....लेकिन मनुष्य ने अपनी आजादी को कितना कठिन बना रखा है.....अब तो फिर भी ठीक है वरना पहले बात-बात पर युद्ध शंखनाद और तलवारों की खनक सुनाई देने लगती थी...प्रत्येक मनुष्य यह क्यों नहीं समझ पाता है कि जो सुख शान्ति में है वह लड़ाई-झगड़े में नहीं! महाराज छत्रसाल के समय लगभग हर समय अशांत वातावरण रहा लेकिन उन्होंने इसका असर-अपनी प्रजा पर नहीं पड़ने दिया.. ..उन दिनों भी तो किसान अपनी लहलहाती फसलों को देख कर गीत गाते थे और मस्ती से झूमते थे ...

वायु के कुछ तेज गति से चलने का प्रभाव

(चौंक कर) अरे, ये कौन हैं जो इस एकान्त में चले आ रहे हैं? क्या ये दोनों भी वीर बुन्देला महाराज छत्रसाल की समाधि के दर्शन करने आ रहे हैं? .....नहीं तो धुबेला में इस ओर, भला कोई क्यों आएगा? .....लेकिन नहीं! .....इनके उन्मुक्त हाव-भाव को देख कर लगता तो नहीं है कि ये इतिहास को जानने के लिए उत्सुक हैं ...जरा सुनूं तो कि ये दोनों आपस में क्या बातें कर रहे हैं?

आधुनिक वेशभूषा में मनोज और माया का प्रवेश

दोनों परस्पर बातें कर रहे हैं-

मनोज - तुम तो बेकार ही परेशान हो रही हो.....अब हंसो भी. ..देखो! कितना अच्छा वातावरण है यहाँ का....किसी का डर नहीं, कोई रोक -टोक नहीं ...बस, मैं और तुम हैं यहाँ...

माया - अच्छा-अच्छा, अब ये रोमांटिक बातें छोड़ो! मेरा तो मन ही खराब हुआ जा रहा है, जब से तुमने बताया है कि तुम बैंगलौर जा रहे हो .... मनोज ! क्या जरूरत है जाने की?

मनोज - जाना जरूरी है माया! वहाँ मुझे कोई अच्छी-सी नौकरी मिल जाएगी....फिर हम दोनों शादी कर लेंगें और वहीं बस जाऐंगें।

माया - (अधीरता से) नौकरी तो यहाँ भी मिल सकती है....और शादी करके हम यहीं बस सकते हैं...क्या कमी है हमारे बुन्देलखण्ड में?

मनोज - (व्यंग से) कमी? अरे, रखा ही क्या है यहां....न कोई इतिहास, न कोई भूगोल.....न नौकरी, न चाकरी....देखो अब इस विषय पर कोई बहस मत करो! मैंने जो तय कर लिया है, सो कर लिया है। बस, अब तुम खुशी-खुशी मेरा साथ दो!

माया - (अनमने स्वर में) जैसा तुम ठीक समझो!

मनोज - ये बात हुई न माया! ओ के, चियर अप! अब मुस्कुरा भी दो! देखो, ये कितनी बड़ी इमारत है.....

माया - ये क्या है? कोई महल है?

मनोज - पता नहीं ..मैं भी पहली बार धुबेला आया हूँ ....वो देखो....वहाँ बोर्ड पर कुछ लिखा है।...चलो, पढ़ते हैं...ऊ..हं. .हाँ..यहाँ लिखा है (पढ़ते हुए) महाराज छत्रसाल की समाधि...

माया - (चौंक कर) अरे, तो यही है महाराज छत्रसाल की समाधि! ग्रेट ! (प्रसन्न होकर) मैं तो इसे देखना चाहती थी.....मेरे नाना जी इसके बारे में मुझे बताया करते थे...

मनोज - महाराज छत्रसाल? कौन थे वो?

माया - तुम्हें नहीं पता?

मनोज - ऊहूं! नहीं पता। नाम भर सुना है।

माया - ज्यादा तो मैं भी नहीं जानती हूँ लेकिन मेरे नाना जी ने मुझे बताया था कि वे महान योद्धा थे।

मनोज - वाह! चलो! हम एक महान योद्धा की समाधि की दीवार पर अपना नाम लिखते हैं...(हंस कर) हमारा नाम भी अमर हो जाएगा....

माया - हमारा नाम? कैसे लिखोगे हमारा नाम? ये कोई पेड़ थोड़े ही है कि उसकी छाल खुरच कर तुम हमारा नाम लिख लोगे।

मनोज - ये देखो...इस चाकू से दीवार को कुरेद कर उस पर लिख दूंगा...

माया - क्या लिखोगे?

मनोज -मनोज प्लस माया.....

माया - (झेंपकर) धत् !

मनोज जेब से छोटा-सा चाकू निकाल कर समाधि की दीवार पर नाम लिखने लगता है।

बुन्देलखण्ड - (चौंक कर) अरे...अरे...ये क्या? ये प्रेमी जोड़ा इस स्मारक की दीवार पर चाकू की नोंक से क्या लिख रहा है?. ..आहे ! यह जोड़ा तो अपना नाम लिख रहा है ताकि उनके नाम सदियों तक यूं ही बने रहें...और जो भी मुझे देखने....मुझे जानने आए.... वह इन दोनों के नाम भी पढ़े...शायद ये अपना नाम अमर करना चाहते हैं...(व्यंग से हँस कर) हुहं !....क्या ऐसे भी कोई नाम अमर होता है? इससे तो एतिहासिक और पुरातात्विक धरोहर ही खराब होती है ..नाम तो अमर उन लोगों

के होते हैं जो अपनी मातृभूमि के लिए और अपनों के लिए अपने प्राणों पर खेलने से भी नहीं हिचकते हैं।

एक बार फिर फेड इन। स्पॉट लाईट में बुन्देलखण्ड मंच के मध्य में।

(लम्बी सांस भर कर) जब भी मैं इन ढहती हुई दीवारों को देखता हूँ तो मुझे सुनहरे दिन याद आने लगते हैं...जब यहाँ चहल-पहल हुआ करती थी....नाच-रंग, जोशीली बातें और राजनीति की बिसातें...सब कछु था यहाँ....चलिए, मैं आपको अपने बारे में बताता हूं...

मैं बुन्देलखण्ड हूँ...मैं पहले जैजाकभुक्ति के नाम से पुकारा जाता था....इससे भी बहुत पहले एक आदि भू-भाग के रूप में मैंने अपनी कन्दराओं और वनों में आदिमयुग के उन मनुष्यों को जीवनयापन करते देखा है जिन्हें इतिहास में प्राकैतिहासिककालीन मानव के रूप में जाना जाता है। वे मनुष्य जंगली जानवरों का शिकार करते और कन्द-मूल-फल से अपना पेट भरते... वे मनुष्य इतने बुद्धिमान थे कि उन्होंनें अपने जीवन के अनुभवों को गुफाओं और शैलाश्रयों की भित्तियों पर चित्रित किया।

हाँ, मैनें वह युग भी देखा है...लेकिन नहीं! मैं अपने बारे में कोई और चर्चा करूं इसके पहले इस मनोज नाम के युवक को रोकना होगा....वरना यह तो इस स्मारक की दीवार को खुरच कर ख़राब कर देगा।

फेड आउट। मनोज समाधि की दीवार पर नाम लिख रहा है और माया पार्श्व में खड़ी है।

(मनोज से) ठहरो मनोज! ठहरो!....रुक जाओ...इस तरह इतिहास के साक्ष्य को बरबाद मत करो!

मनोज - (घबरा कर) कौन? कौन है?....

माया - (घबराए हुए स्वर में) यहां तो कोई नहीं है मनोज.... ये आवाज किसकी थी?

मनोज - लगता है कि चौकीदार हमें छिप कर डरा रहा है। (अपनी आवाज में रौब डालता हुआ)

चौकीदार, ये क्या मजाक है? तुम्हें जो कहना है वो सामने आकर कहो!

बुन्देलखण्ड - (तनिक हंसकर) मैं चौकीदार ? नहीं मनोज! मैं चौकीदार नहीं, मैं तो बुन्देलखण्ड हूँ ..इन स्मारकों को सहजने वाला, इतिहास को अपने सीने से लगाए हुए विकास के नित नए आयामों को देखने वाला....मैं बुन्देलखण्ड हूं..वही बुन्देलखण्ड जिसके अचंल में तुम दोनों रहते हो...।

मनोज - (आश्चर्य से) बुन्देलखण्ड? नहीं, यह नहीं हो सकता! यह झूठ है? बुन्देलखण्ड भला बोल कैसे सकता है?

बुन्देलखण्ड - (तनिक हंसकर) क्यों नहीं बोल सकता, मनोज ? जब भूमि अन्न उगा सकती है, हवा गतिमान हो सकती है, नदी प्रवाहमान हो सकती है तो मैं बोल क्यों नहीं सकता? हाँ, यह अवश्य है कि मैं हर किसी से बात नहीं करता.....तुमसे भी बात नहीं करता....किन्तु मुझे लगा कि तुम्हारे जैसे युवा को अपने अचंल के इतिहास और उसका महत्व ज्ञात ही नहीं है..इसीलिए मैं बोल उठा।

मनोज -(घबरा कर हकलाते हुए) ति हा स..म..मह...त्व...

बुन्देलखण्ड - हाँ, इतिहास और का महत्व....जानते हो ये स्मारक किसका है?

मनोज - जी...जी...महाराज छत्रसाल का.....

बुन्देलखण्ड - कौन थे महाराज छत्रसाल? कुछ जानते भी हो उनके बारे में?

मनोज - जी....

बुन्देलखण्ड - हाँ, हाँ, बताओ! बोलो!

मनोज - जी नहीं, ...कुछ खास नहीं जानता....बस, यही सुना है कि वे एक राजा थे।

बुन्देलखण्ड - (तनिक हँस कर) बस?

माया - मैं जानती थी....लेकिन अब भूल गई हूँ...बचपन में मेरे नाना जी मूझे उनके बारे में कहानियाँ सुनाया करते थे।

बुन्देलखण्ड - (दुखी स्वर में) यही तो..तुम युवाओं को अपने को, अपने गौरवशाली इतिहास औ वीर पूर्वजों के बारे में तो कुछ पता नहीं है...उस पर शान से कहते हो कि यहाँ क्या रखा है?....इस भूमि को छोड़ कर चले जाने की बात करते हो..!

माया -हमें क्षमा कर दीजिए....(उत्साहित स्वर में) आप हमें महाराज छत्रसाल के बारे में बताएगें ? मैं वादा करती हूं कि अब मैं कभी नहीं भूलूंगी.....

मनोज - हाँ, और मुझे भी उनके बारे में ज्ञान हो जाएगा.... सचमुच मैं अपने अज्ञान के लिए शर्मिन्दा हूँ।....प्लीज, बताइए न हमें!

माया - हाँ, प्लीज़!

बुन्देलखण्ड - ठीक है माया, ठीक है मनोज ! मैं तुम दोनों को उस वीर योद्धा के बारे में अवश्य बताऊँगा जिसने मुझे एक राज्य का आकार दिया....एक गौरवशाली इतिहास दिया....उस वीर राजा के बारे में तुम दोनों को अवश्य बताऊँगा....

...तुम लोगों के आने से पहले मैं यही सोच रहा था कि महाराज छत्रसाल कितने कुशल शासक थे कि उनके समय में निरन्तर युद्ध चलते रहने पर भी उन्होनें अपनी प्रजा की सुख-शान्ति पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ने दिया।

मनोज - यह तो बहुत कठिन काम था।

बुन्देलखण्ड - हाँ, लेकिन महाराज छत्रसाल किसी भी कठिनाई के आगे घुटने टेकने वाले इंसान नहीं थे। वे जानते थे कि उनका बुन्देलखण्ड राज्य तभी संकटों से बचा रह सकता है जब उसे एक अच्छा शासन प्रबंध दिया जाए।

(पॉज़)

छत्रसाल का राज्य चालीस परगनों में बँटा था। जिनकी देखभाल का दायित्व उनके जागीरदारों और मैमारदारों को सौंपा गया था। ये जागीरदार अपनी जागीरों की देखभाल करते तथा अपनी प्रजा की सुख-सुविधा का ध्यान रखते....इसके साथ ही ये अपने राजा के प्रति उत्तरदायी होते। राजा के द्वारा नियुक्त जासूस जागीरदारों और ममौनदारों की गतिविधियों की सूचना राजा को

निरन्तर देते रहते .....यदि कभी भी, किसी भी गड़बड़ी की सूचना राजा को मिलती तो वह तुरन्त हस्तक्षेप करता। कोअरा, सैयदनगर, मऊ, महौनी आदि परगनों का उल्लेख जालौन गजेटियर में आज भी देखा जा सकता है। इसी तरह ममौनदारों और जागीरदारों के बारे में स्वयं महाराज छत्रसाल ने अपने पत्रों में चर्चा की थी।

मनोज - इन जागीरदारों का चयन कैसे होता था?

बुन्देलखण्ड - जागीरदार आमतौर पर राजपरिवार से संबंधित अथवा विशेष कृपापात्र लोग होते थे जबकि ममौनदार वे लोग होते थे जिन्हें उनकी सेवाओं के बदले ईनाम के रूप में गाँव या खेती की जमीन दे दी जाती थी। ये श्रेणी में जमीनदार से नीचे होते थे और राजा को जमीनदार की अपेक्षा कम कर देते थे।

इनके अलावा एक और पदाधिकारी होते थे जिन्हें पदरखिया कहा जाता था। इन पदरखियों को ईनाम में मिली भूमि के बदले राजा को कोई कर नहीं देना पड़ता था। वैसे इनका मुख्य कार्य मंदिरों की देख-भाल करना होता था। धार्मिक अवसरों और उत्सवों में इनका उपस्थित होना आवश्यक था। ये धार्मिक मेलों की व्यवस्था भी सम्हालते थे। महाराज छत्रसाल के समय प्रत्येक धार्मिक स्थलों पर मेले लगते थे..और कार्तिक के दिनों में स्त्रिया भोर होने से पहले ही जाग कर निश्चित भाव से निकल पड़ती थीं कार्तिक गीत गाती हुईं....

लोकगीत गायिका और सह गायिकाओं का प्रवेश

आ जैहों बड़े भोर दहीरा लै के, आ जैहौं बड़े भोर ।।टेक।।
नें मानो कुड़ंरी धर राखो, मुतियन लागी कोर ।
नें मानो मटकी धर राखो, सबरे बिरज कौ मोल।
नें मानो चुनरी धर राखो, लिखे हैं पपीहरा मोर।।टेक।।
नें मानो गहने धर राखो, बाजूबंद हमेल।
चंद्रसखी भज बालकृष्ण छब, छलिया जुगलकिशोर।।टेक।।

लोकगीत गायिका और सह गायिकाओं का गमन

बुन्देलखण्ड -महाराज छत्रसाल के राज्य में अपराधियों को कठोर से कठोर दण्ड दिया जाता था...इसीलिए उनके राज्य में अपराध करने का साहस किसी को नहीं होता था.....उनके राज्य में स्त्रियाँ, बूढ़े और बच्चे सभी निश्चिंत हो कर कहीं भी आ-जा सकते थे...इस व्यवस्था को बनाए रखने के लिए एक उच्चकोटि का मंत्रिमंडल राजा की सहायता के लिए था। मंत्रिमडंल में राजा के विश्वासपात्र और योग्य व्यक्ति रखे जाते थे। छत्रसाल ने भी अपने मंत्रियों के रूप में योग्य व्यक्तियों को रखा था। किन्तु अंतिम निर्णय स्वयं महाराज छत्रसाल ही लेते थे।

भूमि पर दो प्रकार के कर लगाए जाते थे। एक को मनियावन कहते थे और दूसरे को कनकूती। मनियावन फसल की अनुमानित पैदावार या बोए गए बीज के मूल्य के आधार पर वसूला जाता था, जबकि कनकूती खड़ी फसल के आधार पर लिया जाता था। इन दोनों करों के बारे में पन्ना गजेटियर में भी लिखा गया है। चाहो तो तुम लोग पढ़ सकते हो।

माया - हाँ, हम लोग जरुर पढ़ेंगे लेकिन अभी आप हमें और बताइये न!

बुन्देलखण्ड - महाराज छत्रसाल ने जहाँ एक ओर मराठों की युद्ध नीति अपनाई, वहीं दूसरी ओर मुगलों की शासन व्यवस्था अपने राज्य में लागू की। शासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए कई विभाग स्थापित किए और उन विभागों में अलग-अलग कर्मचाारियों की नियुक्ति की, जैसे सरकारी कागजातों की देखभाल करने वाले को किताबी कहा जाता था। राजकीय व्यय का हिसाब रखने वाले को बुतायती कहा जाता था। इसके साथ ही शासन के आय-व्यय का ब्यौरा रखने का काम जो कर्मचारी सम्हालता था वह बख्शी कहलाता था। शासन के विभिन्न विभागों में काम करने वाले मुंशी दफतूरी कहलाते थे। राजा के व्यक्तिगत सचिवों को खासकलम कहते थे। इन्हीं के द्वारा राजा व्यक्तिगत और गुप्त पत्र-व्यवहार करता था। राज्य के सभी गोपनीय मामलों की जानकारी खासकलम को होती थी, इसलिए इस पद पर सबसे विश्वसनीय लोग रखे जाते थे। एक दिलचस्प बात बताऊँ तुम लोगों को.....खासकलम नामक सचिवों के पास राज्य की मुहरें रहती थीं। महाराज छत्रसाल की मुहर में एक विशेषता थी। उनकी मुहर में "नहीं" लिखा होता था, जिसका अर्थ एकदम उल्टा अर्थात् "हां" समझा जाता था। यह महाराज छत्रसाल की विशेष सावधानीपूर्ण व्यवस्था थी, जिससे यदि मुहर लगा पत्र किसी गलत व्यक्ति के हाथों पड़ जाए तों वह संदेश को समझ न सके। छत्रसाल के पत्रों में संदेश के ठीक ऊपर एक चेतावनी भी लिखी जाती थी -

जानहे सो मानहे,
न मानहे सो जानहे

यानी जो इस संदेश को समझ कर संदेश का मान रखेगा उसका भी मान बना रहेगा ओर जो संदेश को नहीं मानेगा उसे दण्ड भोगना पड़ेगा। महाराज छत्रसाल ने डाक व्यवस्था पर भी समुचित ध्यान दिया था। पूरे राज्य में जगह-जगह पर डाक चौकियाँ बनाइ गई थीं। हरकारों के द्वारा चिट्ठयाँ एक चौकी से दूसरी चौकी भेजी जाती थीं । एक हरकारा एक दिन में लगभग चालीस मील तक डाक पहुँचाता था।

माया - (आश्चर्य से) एक दिन में चालीस मील तक ?

बुन्देलखण्ड - हाँ ! एक दिन में चालीस मील तक डाक पहुँचाता था। ये हरकारे या तो पैदल जाते थे या घोड़ों का इस्तेमाल करते थे...एक गीत भी इस बारे में...

गीत गाती हुई लोकगीत गायिका का प्रवेश...

ई पूनो गओ रऔ, ऊ पूनो आओ
कोई तो उनसे जा के कै आओ
हमसे रहो न जाए रे, बलम मेरो हरकारो...
अम्मा ने का सोची, बाबा ने का सोची
हमने सोई सोच ने पाई री, बलम मेरो हरकारो...
भैया ने ना सोची, बहना ने ना सोची
भौजी लों सोच ने पाई री, बलम मेरो हरकारो...
जो कोनऊ न सोचे सो जाने का बूझे
कोना को पीर सुनाऊं री, बलम मेरो हरकारो...

लोकगीत गायिका का गमन...

बुन्देलखण्ड - छत्रसाल की राजस्व व्यवस्था भी बड़ी चाक-चौबन्द थी। उनके राज्य की वार्षिक आय लगभग डेढ़ करोड़ थी। राज्य की मालगुजारी के अतिरिक्त युद्ध के हरजाने के रूप में मिलने वाला धन और पन्ना के हीरे की खदानों से भी राजस्व प्राप्त होता था। राजस्व का अधिकांश भाग सैन्य व्यवस्था पर खर्च करना पड़ता था। छत्रसाल की स्थाई सेना में ४२ हजार पैदल और १२ हजार घुड़सवार थे, इनके अलावा छोटी-बड़ी ३०० तोपों का एक लश्कर अलग से था। सात हजार सैनिक बीस तोपों सहित राजधानी पन्ना की रक्षा के लिए हर समय तैनात रहते थे। इसी तरह तीन हजार सैनिक और बीस तोपें जैतपुर में तैनात रहती थीं... क्योंकि राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से जैतपुर का किला महत्वपूर्ण था। इसी किले में मुहम्मद बंगश को पराजय का मुंह देखना पड़ा था।

(पाँज़)

जागीरदार आरै मैमारदार भी छोटी-छोटी सेनाएँ रखते थे, जिन्हें संकटकाल में आवश्यकता पड़ने पर बुलाया जाता था। छत्रसाल की सेना में घुड़सवारों के अतिरिक्त ऊँठों और हाथियों की सेना भी शामिल थी। महाराज छत्रसाल ने अपनी सेना में जाति-धर्म का भेद किए बिना सभी को स्थान दिया। उनकी सेना बुन्देले, सेंगर, परिहार, पवांर, धंधेरे, गोंड, ब्राम्हण वैश्य, अहीर और मुस्लिम भी थे... जैसे हरीकृष्ण मिश्र, मांधाता चौबे, हलसाह मिश्र,लच्छे रावत, गंगाराम चौदा, हरजू मल्ल वैश्य, पम्बल ढीमर, नंदन छीपी, राजमणि दौआ, फौजे मियां, नाहर खां, अली खां और ईसफ खां आदि महत्वपूर्ण सेना नायक थे। चाहे शासनप्रबन्ध हो या सैन्यप्रबन्ध...महाराज छत्रसाल के लिए प्रजा का हित सर्वोपरि था। इस संबंध में महाराज छत्रसाल ने स्वयं ये दोहे लिखे थे :-

छत्रसाल, जन पालिबो अरिहिं घालिबो दोय ।
नहिं बिसारियो धारियो धरा-धरन कोउ होय ।।

लोकगीत गायक का प्रवेश ...

छत्रसाल, जन पालिबो, अरिहिं घालिबो दोय ।
नहिं बिसारियो धारियो, धरा-धरन कोउ होय ।।
रैयत सब राजी रहै, ताजी रहै सिपाहि ।
छत्रसाल तेहि राज कौ, बार न बांको जाहि ।।
होत बड़प्पन सो बड़ौ, छतामते की बात ।
ज्यों पारस के परस तें, सुबरन होत कुधात ।।
कुलवारो एकहि भलो, अकुल भले नहिं लाख ।
तुलत न शेर सियार सम, छत्रसाल नृप भाख ।।

लोकगीत गायक का गमन।

माया - मैंने कहीं पढ़ा था कि महाराज छत्रसाल ने कवि भूषण की पालकी को कांधा दिया था....क्या ये बात सच है?

बुन्देलखण्ड - हाँ, माया! ये बात सच है...

मनोज - (निवेदन के स्वर में) पूरी बात बताइए न!

बुन्देलखण्ड - बताऊँगा, अवश्य बताऊँगा.....लेकिन आज अब मैं थक गया हूँ...अब मैं शान्तिपूर्वक विश्राम करना चाहता हूँ...

माया - ठीक है....तो फिर कल बताइएगा.....

बुन्देलखण्ड - तो माया और मनोज! अब तुम दोनों महाराज छत्रसाल को नमन करो और मण्डन कवि की इन पंक्तियों को सुनो जिनमें उनके स्वरूप का सुन्दर वर्णन किया गया है...ये पंक्तियां मुझे बहुत प्रिय हैं...

एक बार फिर लोकगीत गायक का प्रवेश....

वौ देत जनम जौ जन्म के पालवे को,
गरीबन मांझ मानो चम्पत के लाल कौ।
वौ देत मुक्त जौ देत नौऊं रिद्धि सिद्ध,
दोनोंहू दरिद्रमार करत विहाल कौ।।
वौ देत करम जौ भरम भगाय डारे,
मण्डन कवि कहत यश भारी बड़े भाल कौ।
वो है त्रिभुवनपति जौ है बुन्देलापति,
हमें ईस को भरोसो के भरोसो छत्रसाल कौ।।

गीत समाप्त होते-होते फेडइन।

पर्दा गिरता है

-एम-१११,शांतिविहार,रजाखेड़ी, सागर (म.प्र.)卐

गीत

-सुरेन्द्र तिवारी

खिंचगई अटारी, नई फटफट कसाई,
जब से सरपंची आई।।

अब लौ साँनत ते जे गार।
गुम्मा पाथे कई हजार।।
जी कौ लओ, न चुका उधार।
सबरे फैल हते व्यापार।।
अब कर रये दिन दूरी जबरन कमाई। खिंच गई...
पैलाँ हती इकारी दूयांय।
हातन पाँवन में ती चांय।।
मों सें बिड़ी दता के राये।
मुइंया हती चुखी सी सांय।।
फूल गओ शरीर मों पै सुरखी सी आई। खिंच गई...
भटा गकरियाँ सूकी खाँई।
आँखन तरें परी ती झाँई।।
कूलत ते डुकरन की नाँई।
सत्या हती नई सबयांई।।
मालपुआ रोज छनें, देहिया चिकनाई। खिंच गई...

-प्रमुख, आकाशवाणी, छतरपुर म०प्र० 卐

संस्मरण-

अपनों अपनों भाग

-डॉ.गौरीशंकर उपाध्याय 'सरल'

ई संसार में हर कोउ अपनों अपनों भाग संगै लैकें जनमत। कछुअन खों तौ जनमइँ सें सुख सम्पदा बारे घर में जनम मिलत और कछुअन खों दीन हीन दो रोटी के कौरन खों तड़पत बिलखत बारे में जनम मिलत है। हाँ जा बात सोऊ सोराआना सई आय कै कछु मान्स पुरुसारथ से अपने हाँतन अपनों भाग बना लेत औ कछु आलस कुसंगत अनाचार ईर्ष्या औ अहंकार के फेर में पर कें अपनों बनो बनाव भाग बिगार लेत। कैऊ पैरियन की कमाई धमाई धन संपत उर साख घूरा में मिला, कौड़ियंन के मुँहताज हो जात।

ऐसई एक परबार की बिथा कथा हम तुम सबन खों बताउत सो सब ध्यान दइयो। अपनी जा बुन्देली भूँम सूरवीरता भाव कला साहित्त संगीत में भलईं नाम कमाएँ रई, पै धन संपत के मामले में भौतईं गरीब रई। कारन इतै के कैई जिलन की भूँम कंकरीली-पथरीली ऊबड़-खाबड़ तौ हैई, सिंचाई के साधनन के बिना ऊसरा बनी रै गई। जीमें टीकमगढ़, महरौनी, ललितपुर, भडावरा और मऊरानीपुर जिलन की जाँगा तौ नेठम बेकार हती। सो इतै के भले मान्सन खों अपनी रोजी-रोटी, धंधे-पानी के काजैं अपनो घर दोर छोड़ कें अंत के गाँवन में जाकें बसनें परौ। ऐसई टीकमगढ़ जिला के कछू परबार भेलसा (विदिशा), रायसेन, हुसंगाबाद आदि जिलन में जा बसे। इनइँ में से कछु परवार जो रायसेन जिला के बाड़ी बरेली में बसेते वे जादातर जिझौतिया पंडित हते। पैलें तौ दो चार परवार गए फिर उनें खुसहाल देखकें लैमडोरी लग गई और कैऊ परवार जा बसे।

बुन्देली में जा कानांत सोऊ कई जात कै 'मोरे मन कछु और है कर्ता के कछु और'। सो जइ गत हमाई भई कै हम तौ एम0ए0 की पढ़ाई करन चाउत्ते, पै नौकरी कन्नें परी। नौंकरी में हमाई तैनाती बरेली केईं एक स्कूल में हो गई। उतै अपनी ताँई के लोगन सें परचौ भव तब बड़ी खुशी भई। सबसे बड़ी खुसी जा बात सुनकें भई कै बरेली में रतनलाल नाहर के बाद दूसरे नम्बर के धनीमानी बड़े आदमी हमारीअई बिरादरी के हते जो टीकमगढ़ के जैरौन से जाकें उतै बस गएते। उन सबसें मिलकें हमाऔ घरउअन सें बिछुड़वे कौ रंज हराँ-हराँ कम हो गव। उतै के बिरादरी और आन बिरादरी के लोगन नें हमाई जो मदद करी बाए हम ता उम्र नइँ भूल सकत। जिनमें भगवानदास धन्नूलाल बिदुंआ, अनोखे लाल पटेल (मैरी) और धनसींग काछी (कामतौन) के अहसांनों के बोझ सें तो मैं आजीवन बोझिल बनौ रैहों। दो साल बाद हमाऔ तबादलौ रायसेन हायर सेकेन्ड्री कौ हो गव। सो हम रायसेन में पुरानी तैसील की एक लम्बी चौंड़ी अटारी पै किराये सें रैंन लगे।

रायसेन में रऊतन हमें डेड़ सालई भईती कै एक दिना बरेली सें आए एक भले आदमी हमसे मिलवे चले आये। राम -राम श्याम श्याम भई। आव भगत करकें हमने उनसें बरेली के लोगन की कुशलक्षेम पूँछी। कछू देर नाँए-माँए की बातें भईं। फिर कछु ठैर कें बोले-मास्टर साब-लच्छमी जू ठौर बल्दत रत एकई जाँगा कभूँ ठैरी नइँ रत। आज इतै तौ काल उतै। जब हमने पूँछी सो कैसें। तब वे बोले- जिला टीकमगढ़ के कैऊ परवार जेरौंन सें बरेली आय बसेते। तिन में से एक परवार भौत फलौ फूलौ हतौ। सो बेई बड़भागी समझे जाएँ। फिर बोले, वे दो भइया हते। बड़े बढ़प्पन से सजे और छोटे छनकुआर चंट हते। बरेली में आन कें वे एक टूटे-फूटे किराये के घर में रये, फिर बाए खरीद लऔ। जब वे ऊ घर की पुरानी दीवारें गिरवा रयेते। तबईं एक दीवार जब भरभरा कें गिरी तब ऊके संगै कछु मोहरें का टपकीं, उनको भाग खुल गऔ।

तब उनने पास के कामतौन गाँव में खेती की जाँगा खरीदी। खेती की आमदनी सें उनकी माली हालत सुधरन लगी। सो उनने गल्ले की खरीद औ बेचवे कौ काम चालू कर दऔ। कछुअई दिनन में उनैं ई काम में जादाँ आमदनी दिखानी। तब बिन्नें अपनी आढ़त की दुकान खोल लई। ऐई बीचाँ उनकौ बटियार जब खेत जोत रऔतो। तब उऐ हर के फार की नौंक सें ऊपर उतरा आऔ एक चमकदार छोटौ ककरा दिखा परौ। काम के बीचाँ वाकी बइअर (जर्नी) ने मेंड़ पें चंगेर में परे मौड़ा के करकें धर दऔ। संजा कें हरवाई बंद कर बैला ढील कें जब वे दोई जनें चंगेर के ढ़िगा आए तब उनने देखौ कै ककरा पथरा की चमक कैऊ गुनी बढ़ गई। दोऊअन में सला भई कै पंडित जू खों दै दो सो वे भगवान के सिंघासन में धर दें। घर आकें मईंदार रोटी खा पीकें अपने मालिक के घरै जा पौचों। उनसें मिलकें बोलो मरॉज-हमें खेत में एक चमकदार उम्दा पथरा को हल्कौ सौ टूँका मिलौ सो जाए भगवान के सिंगासन में धर दियो। जा कै कें ऊनें पंडित जू खों वो चमकीलौ पथरा कौ टूँका थमाऔ औ अपने घर खों चल दऔ।

बड़े मालिक के छोटे भइया भौतईं छनकुआर हते औ चंट इत्ते कै ढूड़े न मिलै कोऊ। सो ऊ पथरा के टूँका की चमक के संगे उनकी आँखन मैऊ खुशी चमक उठी। वे जान गए कै जौ कौनउँ हीरा जवाहर हो सकत। बड़े भइया सों सलासूद कर वे सुनार कें जा पौंचे। जाँच के सुनार ने उनकी शंका सही बताई। तब उनने भोपाल जावे की बात मन में ठानी। सो बरेली से भोपाल जावे वारी पैली मोटर सें रबाना हो गए। उतै जौहरी नें तीस चालीस हजार कीमत आँकी। तब उनके मन में और जाँदा लालच आ गव। कै बम्बई में जाँदा रकम मिल जै। सो बम्बई चले गए और सस्ते के जमाने में सत्तर हजार में बेंच कें घर खौं चल दये।

जा कानांत सबई साँची मान्त कै लुगाईअन के पेट में कौनउँ बात नइँ पचत। सो ऐसऊ ई मामले में भव। मईदार की जर्नी ने दूसरी लुगाईअन सें दै कई फिर लोगन खों पतौ चलत-चलत पुलिस खों खबर लग गई। पुलिस तौ ऐसे मामलन की जानकारी खों उधारई

बैठी रत। खबर लगतनईं थानेदार पंडित जू के घरे जा पौचौ, मइँदार सुनार बुलाये गए। पोल पट्टी लाख दबाएँ न दबी। पुलिस के हथकंडन के आँगू अच्छे-अच्छे पानू माँग जात औ पुलिस सब उगलवा लेत। सोई मामलो कौ पुलिस ने पूरौ खुलासा कर लऔ। लेकिन बाप बड़ौ न भइया सबसें बड़ौ रुपइया। फिर का बात कैसी भई राम जानें। इत्तौ जरूर भव कै पुलिस सान्त होकें बैठ गई और पंडितजू ने मइँदार खों बिनईं टका पइसा लय अपनों खेत लिख दऔ।

अब जब लक्ष्मीजू नें छप्पर फार कें दौलत नई तौ सुख भोगवे में को चूकत। सो दोऊ भइयन ने मिलकें बीच बजार में हवेली बनावे और आढ़त की दुकान खोलवे लम्बी चौड़ी जांगा खरीद लई। फिर सई महूरत सुदवा कें नीं भरवाई जान लगी। नीं खुदत-खुदत एक जाँगा गेंती घलवे की चोट से घनी टंकार सुना परी। छनकू भइया नें सुन्तनई ऊ जाँगा की खुदाई कौ काम रुकवा दऔ, और जाँगा खुदाई कौ काम होत रऔ। दूसरे दिनाँ मजदूर सैंनन-सैंनन एक दूसरें खों बताउन लगे कै इतै कछु माल हतौ जो रातइँ में उखार लऔ गव। बाद में आलीशान हवेली बन कें ठांडी हो गई। इतेकई नइँ बरेली से कछु कोस दूर संतरन कौ बगीचा लग गऔ।

जा कानांत भी झूठी नइयाँ कै 'माया तोरे तीन नाम परस, परसा, परस राम' सो आढ़त की दुकान और संतरों के बगीचों की आमदनी के संगे हवेली के निवास से वे पंडित जू सें सेठ जी कहान लगे। नौकरन चाकरन की भीड़ बढ़ गई। संतरन कौ बगीचा तौ ऐसौ फूलौ फूलौ कै असफेर में ऊ जैसौ कोऊ न हतौ। तई सें सेठ जी के इतै नाते-रिस्तेदार, संत-महंत और नामी-गिरामी नेतन की भीर जुरन लगी ती। आए दिन कौनउँ न कौनउँ जलसा, भंडारौ, हवन-कीरतन होंन लगौ। हर साल बाफलन की गोटन की चाल चल परी जी में मुफ्तखोरन और चापलूसन की पाँचऊ उँगरिया घी में डूबी रबैं।

पै जितै सौभाग उतै दुरभाग अपनी बाट हेरें रत बाए मौका भर मिल पाए, फिर तौ बानें जानीं। जब जाँदा धन संपत जुर जात तब लक्ष्मी दूसरौ ठिकानौ ढूंढवे संपतबारे की मती फेरन लगत। ऊखों भोग विलास और मद में डुबै कें अनाचारी, दुष्टी, पापी, बेईमान और हत्यारौ तक बना देत। जई बात ई परवार के संगे भई। दोसी को हतौ जा तौ राम जानें, मूल रंग- पंचमी के दिनाँ बड़े भइया के लरका नें छोटे भइया के लरका खों खून की होली खेल कें मार दऔ। तब कुलक्ष्मी ने ऊ फलते फूलते परवार खें माटी में मिला दऔ। धन दौलत और सुखी जीवन की लक्ष्मी रुठकें अंत जा पौंची। संगे भाई एक दूसरे के बैरी बन गये। मान सम्मान धूरा में मिल गऔ। तई सें सई कई कै 'धन के धिगाने का नईं कर सकत।' कीके भाग में का कैसौ लिखौ कोऊ नईं जान सकत।

-सिविल लाइन, झाँसी (उ0प्र0) 卐

बुन्देली में पाये जाने वाले अपभ्रंश भाषा के शब्द और उनके अर्थ

-संतोष कुमार पटैरिया

अपभ्रंश भाषा का सबसे पहले उल्लेख, राजा हर्ष (सन् ६०६-६४८) के समकालीन महा कवि वाण के हर्ष चरित में मिलता है,जिसमें अपभ्रंश के लिए भाषा शब्द प्रयोग किया गया है। अवहठ्ठ भाषा भी लगभग यही है। अपभ्रंश का शाब्दिक अर्थ बिगड़ा होता है किन्तु तद्भव शब्द का स्वतंत्र अस्तित्व है। अपभ्रंश के बहुत से शब्द वर्तमान में बुन्देली में है। बूडन्त, पठन्त (भेजना) आदि उदाहरण है। अपभ्रंश शब्द कोश तैयार करने के कार्य में इसकी कई विशेषताओं से भी अवगत हुआ। अपभ्रंश के बारे में अति संक्षिप्त विवरण व कुछ शब्द प्रस्तुत हैं। स्वरूप दृष्टि से अपभ्रंश में काफी साहित्य लिखा है। अपभ्रंश के तीन भेद हैं पश्चिमी, दक्षिणी और पूर्वी अपभ्रंश। छठवीं शताब्दी के भामह लिखते हैं-शब्दार्थों सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं चतदद्विधा संस्कृतं प्राकृतं चान्यदपभ्रंश इति त्रिधा। अपभ्रंश में लिंग भेद प्राय: समाप्त है। प्रथमा, द्वितीया, सम्बोधन में विभक्ति प्रत्ययों का प्रयोग नहीं किया गया। क्रिया के अन्त में इ लगाकर लगभग तीनों कालों में प्रयोग किया गया है।

तिहुअन-त्रिभुवन, **कात्रि**-कैसे, **कव्व**-काव्य, **सुअण**-सज्जन, **पसंसइ**-प्रशंसा करेंगे, **निरुढि गए**-प्राप्त कर ले, **मझु**-मेरे, **विसहर**-सर्प, **आमिञ**-अमृत, **विमुक्कई**-वर्षा करता है, **मित्त**-मित्र, **मुज्झु**-मुझे, **वैहोरि**-बैरी, शत्रु, **ण**-न, **ए**-है, **भेअक**-दुर्जन, **ई**-यह, **णिच्चइ**-नित्य ही, **कमण**-किस प्रकार, **मणवञो**-व्यक्त करूँ, **लावञो**-भर दूँ, **महुअर**-भ्रमर, **कव्वकलाउ**-कलाविज्ञ, **छइल्ल**-रस ले सकता है, आनन्द ले सकता है, **उअआर**-उपकार, **मइल्ल**-मलिन होता है, **सक्कय**-संस्कृत, **मम्म**-मर्म, **बऊना**-वाणी/भाषा, **जम्पञो**-रचना करता हूँ, **सञो**-सहित, **जम्मिअइ**-जन्म हुआ, **नाह**-नाथ, **जम्पइ**-बोलते हो/बोलोगे, **फुर**-स्फुट, **लद्ध**-लब्ध/प्राप्त किया हो, **विपअकम्म**-विपत्ति कर्म, **रहसें**-गुप्त, **दव्व**-दान, **पुञ्जिओ**-एकत्र किए हुए को, **जस्सअज्ञने**-धनार्जन में, **इअरो**-और, **पत्थावे**-प्रस्ताव से, **पुण्डु**-पुण्य, **देवहा**-देवलोक, **बलिराए**-बलिराजा, **निञ**-निज, **खत्तिअ**-क्षत्रिय, **खअ**-संहार, **सूअ**-सुत, **कक्कस**-कर्कश, **बेंअ**-वेद, **बित्ते**-धन से, **एक्कत्थ**-एक साथ, **पुव्व**-पूर्वकाल, **कन्न**-ऋण/कर्ज, **सुरतान**-सुलतान, **गरुअ**-गुरु, **रिउ**-शत्रु, **आखराउल**-इन्द्र, **निट्ठ**-कनिष्ठ, **मेइनि**-पृथ्वी का, **सामिञ**-स्वामी, **बूडन्त**-डूबते हुए, **हाहासद्द**-हाहाकार, **नएर**-नगर, **धुअ**-अधिक, **चप्परि**-बलात्, **पारक**-समझने वाला, **कइकुल**-कविकुल, **सन्त**-शान्त, **कोहे**-क्रोध से, **लेहेन**-लाभ, **तेतुली**-उस समय, **रज्जहनीति**-राजनीति, **विअक्खन**-चतुर।

-रत्नम् ज्वेलर्स, सराफा बाजार, महोबा उ0प्र0 卐

बुन्देलखण्ड की लोककथा परम्परा

--डॉ.सीमा तिवारी

लोककथा लोकमुख में रहती है, उसके लिए वक्ता श्रोता दोनों ही अनिवार्य हैं। कथा का कहने वाला एक होता है। लेकिन श्रोता कई हो सकते हैं। लोककथा कहने का रिवाज गाँवों में होता है। दादा-दादी, नाना-नानी अपने बच्चे को कथायें सुनाते हैं। कथा की रचनाप्रक्रिया की दो-तीन स्थितियाँ प्रमुख हैं। पहली स्थिति कथा से लोककथा होने के लिए लोकमुख में आना पड़ता है और लोकमुख में वही कथा आ पाती है, जिसमें लोकत्व होता है। लोकत्व लोकतत्वों से बनता है और उन्हीं से कथा को लोकप्रियता मिलती है। लोकतत्वों में सबसे प्रमुख लोकोपयोगिता है।

लोक के लिए जो कथा उस समय उपयोगी होती है वह लोक द्वारा ग्रहणीय होने से लोकमुख में आ जाती हैं फिर लोक के साँचे में ढलकर लोकथा बन जाती है। कथा की पृष्ठभूमि लोकानुभवों द्वारा बुनी जाती है, अतएव सहज, स्पष्ट, रंजक और असरदार होती है। लोकथा की जड़ उसी अंचल में रहती है और उसी अंचल की जमीन से पोषक तत्व ग्रहण कर वह कथा में नया स्वाद भर देती है।

लोककथा की भाषा और शैली इतिवृत्तात्मक होती है। उसमें शिल्प-अलंकरण सहजता से आ जाते हैं। लोककथा किसी खास वर्ग, जाति, समूह और धर्म के लिए नहीं होती, उसमें तो लोकहित निहित रहता है। अधिकांश लोक कथाओं के अंत में कहा जाता है जैसे: उनके दिन फिरे वैसई सबके फिरें। ये पंक्तियाँ लोकत्व की प्रतीक हैं।

श्री शिवसहाय चतुर्वेदी ने लोककथा को ग्राम्य कहानी नाम दिया था। श्री कृष्णानंद गुप्त ने लोक कथा के तीन प्रकार माने हैं: 1. गाथा, 2. कहानी, 3. दृष्टान्त। लोककथा में कथा की सभी विशेषताएँ वाचिकता लिए हुए निहित होती हैं।

बुन्देलखण्ड में लोककथाओं के लिए किसा कहा जाता है। मेरी समझ में यह मध्ययुग की देन है क्योंकि किस्सा अरबी का शब्द है और उसी से उसका बुन्देलीकरण किसा हुआ है। बुन्देली में फारसी, अरबी आदि विदेशी शब्दों को बुन्देलीकरण के बाद ही अपनाया गया है।

बुन्देलखण्ड में किस्सा प्रारंभ करने के पूर्व कहा जाता है: किस्सा सी झूठी, बातें सी मीठी, घरी-घरी को विसराम, जाने सीताराम। शक्कर को घोड़ा, सकरपारे की लगाम, छोड़ दे दरबार में चला जाये, छमाछम-छमाछम। ई पार घोड़ा, ऊ पार घास, न घोड़ा घास खाये, न घास घोड़ा खाये। इत्ते के बीच में, दो लगाई घींच में, तऊ ने आये रीत में, अब धरे कड़ोरे कीच में, झट आ गये बस रीत में। हंसिया सी सीधी, तकुआ सी टेड़ी, पहला सौ कर्रो, पथरा सो कोंरो, हाँत भर ककरी, नौ हॉत बीजा, होय-होय खेरे गुन होय। जरिया को काँटो, बारा हाँत लामों, आदो छिरिया ने चर लओ, आदे पै बसे तीन गाँव, एक ऊजर, एक खूजर, एक में मान्सई नइयाँ, जीमें मान्स नइयाँ, ऊमें बसे तीर कुमार, एक ठूंठा, एक लूला, एक के हाँतई नइयाँ, जी कें हाँत नइयाँ ऊनें रचीं तीन हंडियाँ, एक ओगू, एक बोगू, एक के ओठई नइयाँ। जीके ओठई नइयाँ ऊमें चुरोये तीन चाउर, एक अच्चो, एक कच्चो, एक चुरोई नइयाँ, जौन चुरो नइयाँ ऊमें न्यौते तीन बामन, एक अफरो, एक डफरो, एक खों भूखई नइयाँ।

जो कोऊ इन बातन खों झूठी माने, वो राजा को डांड देवै उर समाज खों रोटी। न कैवे बारे खों दोष, ने सुनवे बारे खों दोष तो ऊखों जीने किसा बनाकें ठाड़ी करी। दोष तो ऊखों सोई नइयाँ, काये से कें ऊने तो समव काटवे के लाने बनाकें ठाड़ी करी। कैता तो कैतई रात, सुनता सावधान चईये।

लोककथा का प्रारंभ इसी तरह की लच्छेदार बातों से होता है। कई कथाओं के बीच-बीच में दोहा भी कहे जाते हैं। जैसा कहा जाता है कि किसा भी झूठी, किस्सा में चाहे कितना भी झूठ हो, लेकिन वक्ता की कथन में कुछ ऐसा जादू होता है कि श्रोताओं में वह सच के तने पर खड़ी होती है, सच के बीच में उगकर। इसी सच के बीज के लिए लोककथा की सार्थकता होती है। दादी-नानी की कथायें बाल मनोविज्ञान पर आधारित होती हैं। हर लोककथा का अपना उद्देश्य होता है।

चोंखरे जू की दूनानार

एक अनौखा चूहा था, वह कभी शांत नहीं बैठता था। एक दिन वह किसी के घर में गया तो उसने देखा कि घर के चूल्हे पर पतीली रखी है कुछ पक रहा है लेकिन आग बुझी हुई है। सो वह फूँक मारकर आग जलाने लगा। उसी प्रयास में उसकी मूछों में आग लगी फिर शरीर में और वह खाक हो गया। घर की मालकिन ने उसे जला देखा तो उठाकर गंगा जी में फैंक दिया। चूहे के कारण गंगा जी का जल पीले रंग का हो गया। वहाँ एक साँड़ हर दिन गंगा जी में पानी पीने आता था जब वह पानी लगा तो पीले रंग के पानी को देख उसने गंगा जी से पूछा कि कल तक तो आपका जल स्वच्छ था आज पीला कैसे हो गया?

गंगा जी बोलीं- *चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड़।*

और वह साँड डूँडा हो गया। वह किसी पीपल के पेड़ तले बैठता था। जब वह आया तो पीपल नू पूँछा अरे साँड़ तुम आज डूँड़े कैसे हो गये? **साँड़ बोला-**

चौखरे जू की दूनानार,
गंगा पीरी डूँड़ा साँड।

और वह साँड़ डूंडा हो गया। वह किसी पीपल के तले बैठता था। जब वह आया तो पीपल ने पूँछा अरे साँड तुम आज डूड़े कैसें हो गये? साँड़ बोला-

चौखरे जू की दूनानार,
गंगा पीरी डूंडा साँड़, उखटा पीपल।

इतना कहते ही वह पीपल का पेड़ सूख गया। वहाँ एक कोयल बैठती थी, जब वह आई तो उसने पीपल से पूँछा अरे अभी तग तो तुम हरे-भरे थे और आज सूख गये? क्या कारण है...?

पीपल बोला-

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल।

और वह कोयल कानी हो गई। कोयल हर रोज एक बेरी के बेर खाने आया करती थी, आज जब बेरी के बेर खाने लगी तो बेरी ने उसे टोका-अरी कोयल तू कल तक तो भली चंगी थी आज कानी हो गई, ऐसा क्या हुआ?

कोयल बोली-

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया।

इसके कहते ही बेरी के बेर कड़वे हो गये। उस बेरी के बेर खाने बरेदी आया करते थे, सायँकाल जब बरेदी बेर खाने आया और उसने पहला बेर चखा तो वह कड़वा था फिर दूसरा भी। बरेदी बेरी से बोला कि तेरे मीठे बेर मैं वर्षों से खा रहा हूँ लेकिन आज बेर कड़वे हो गये क्यों? **बेरी बोली-**

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया, बैरा बरेदी।

बेरी के इतना कहने पर वह बरेदी बधिर हो गया। सायंकाल जब वह मवेशी लेकर गाँव को लौट रहा था तो पनिहारियों ने बरेदी से कहा कि तुम अपनी गायें एक तरफ हाँक दो हमें आने-जाने में दिक्कत होती है.. लेकिन बरेदी ने नहीं सुना। वह बेचारा बहरा जो हो गया था। फिर परिहारियों ने उसके पास आकर ऊँची आवाज में बोला तो वह सुन पाया, उसने मवेशी एक तरफ कर लिये। परिहारिनों ने बरेदी से पूछा कि तुम बेहरे कैसे हो गये? **बरेदी बोला-**

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया,
बैरा बरेदी, पदू पनिहारी...।

और वे पनिहारिनें जोर की आवाज से पादने लग गईं। जब वे पानी लेकर राजा के दरबार से निकलीं तो उनकी यह हरकत देख राजा बोले कि ये कितनी बेशर्म स्त्रियाँ हैं...? ऐसा क्यों हो रहा है, परिहारिनों में से एक कहने लगी-

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया,
बैरा बरेदी, पदू पनिहारी, उचकना राजा...।

और राजा अपनी गद्दी से उछलने लगा। यह दृश्य देख दरबारी बड़े हैरान थे। राजा को बैचेनी हो रही थी वे रनिवास में गये रानी ने उन्हें ऐसी हरकतें करते देखा तो वे पूँछने लगी कि आपको क्या हो गया? **राजा बोले-**

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया,
बैरा बरेदी, पदू पनिहारी, उचकना राजा, उचकनू रानी..

और रानी उचकने लगीं। रानी के पास हर रोज एक नाइन आती थी उसने रानी को उचकते देखा तो वह पूँछने लगी.. हुजूर आप ऐसा क्यों कर रही हैं, आपके मिजाज ठीक हैं कि नहीं? **रानी बोली-**

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया,
बैरा बरेदी, पदू पनिहारी, उचकना राजा,
उचकनू रानी, नक्टी नाइन ।

इतना कहते ही वह नाइन नकटी हो गई। रात में घर पहुँची तो उसके पति नाई ने उससे पूछा क्यों री तुझे क्या हो गया है..? यहाँ से तो अच्छी भली गई थी। **नाईन बोली-**

चौखरे जू की दूनानार, गंगा पीरी डूँड़ा साँड,
उखटा पीपर, कानी कोयल, करई बेरिया,
बैरा बरेदी, पदू पनिहारी, उचकना राजा,
उचकनू रानी, नक्टी नाइन, नकटा नउवा...।

और वह नई नकटा हो गया। इस तरह से एक चूहे की वजह से कितने लोग प्रभावित हुए।

संदर्भ-

१. बुन्देलखण्ड की लोक कथायें: शिवसहाय चतुर्वेदी, सं. प्रो. बलभद्र तिवारी
२. बुन्देलखण्ड की संस्कृति और साहित्य:डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त
३. चंबल की संस्कृति और साहित्य: डॉ. ओमप्रकाश चौबे
४. बुन्देली लोक काव्य भाग-१, २ एवं ३ : प्रो बलभद्र तिवारी बुन्देली पीठ डॉ. हरिसिंग गौर विश्वविद्यालया, सागर
५. बुन्देलखण्ड का इतिहास: गोरेलाल तिवारी

-सागर म०प्र० 卐

बुन्देली चौकड़ियाँ

-नारायण दास सोनी 'विवेक'

मो मन रूप बसंत धरो है, गलन-गलन बिखरो है।
लगत उमंगन के झुमका में, फूलन रंग भरो है।
मादक सांस करोंदी लै रई, सब मदहोश करो है।
'नारायण' हिरदे कौ सब रस, महुअन में बगरो है।१।

फेरत पींठ माव कौ मइना, मनुआँ करत कही ना।
लगत बसंत बैर बैरन भई, मन में नइयाँ चैना।
'नारायण' मन रंग फूलन में, भौंरा बन गये नैना।
मन उमंग सें उपजीं तितलीं, कोयल बन गये बैना।२।

ऐसी रस भीनी हैं बतियाँ, झरें गुलाबी पखियाँ।
ओंठ हलत बज उठत सरंगी, चमकें मोतिन लरियाँ।
कानन रस घुर जात सुनें सें, लखें जुड़ाती अखियाँ।
हसें जिया डौले 'नारायण' लग नइँ जाँय नजरियाँ।३।

सूरत अलंकार सें नौनी, है जग में अनहौनी।
उपमा लाख चीज न कौनऊँ, दीखै ईसें नौनी।
मूरत रस सिंगार सजीवर, ऐसी लगै सलौनी।
गानें से का इयै सजौ तुम, पागल भये का 'सोनी'।४।

जो तुम नग हीरा हो जाते, सोनें में जड़ जाते।
पेंती बिच राते मुदरी में, संगै होम कराते।
नाक दमकते जड़े पुंगरिया, आँखन आँगूँ राते।
कान झूलते झुमकन झूला, बेंदी माथें सुहाते।५।

-राजमहल के पास, टीकमगढ़ म०प्र० 卐

अद्भुत व्यक्तित्व के धनी रामजीलाल चतुर्वेदी

-डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया

जीवन में कुछ लोग अपने विशिष्ट गुणों और व्यक्तित्व के कारण अविस्मरणीय बन जाते हैं। उनकी याद अक्सर आती है। स्व. रामजीलाल चतुर्वेदी कुछ ऐसे ही विशिष्ट गुणों और स्वभाव के व्यक्ति थे। गौरवर्ण, औसत कद-काठी, सिर पर लम्बे सफेद बाल, गले तक लकटते दाढ़ी के बाल, गले-सिर पर पीला गमछा, कुरता-पाजामा, पावों में चप्पल अथवा कपड़े के साधारण जूते, यही था रूप रंग और वेशभूषा। सुबह हुई और घर से बाहर। दरबारी स्वभाव, कभी यहाँ बैठे, कभी वहाँ। दुकान हो, खेल का मैदान हो, मंदिर हो, बाग-बगीचा हो, कहीं भी किसी के साथ, किसी समय बैठने-बतियाने, बहस करने में कोई परहेज नहीं। सबके साथ मेल, सबके साथ एक रस, सभी विषयों में रुचि। खेती-पानी, पढ़ाई-लिखाई, नौकरी-चाकरी, राजनीति-भ्रष्टाचार, पाखंड-बेईमानी, स्वार्थ, जीवन-मरन, गर्मी-सर्दी। सभी में रुचि, सभी में पारंगत। समय की कोई कमी नहीं। घर से निश्चिंत। वे सबके नन्ना थे। चौबे जी, चतुर्वेदी जी, रामजी, नन्ना जी आदि नामों से उनकी शहर में और शहर के बाहर भी पहचान थी। साज सजावट से पूरी तरह लापरवाह।

वे स्वभाव से फक्कड़ और मस्तमौला व्यक्ति थे। कभी भी, कहीं भी किसी भी जरुरतमंद के साथ मदद के लिए कहीं भी जाने को तैयार। घर में खाना खा रहे हैं, गाँव से सौंजिया आ गया बीमार बेटा लेकर। तुरंत हाथ धोकर अस्पताल जाने को तैयार। पहले उससे खाने-पीने को पूछा और चल दिये। कुरता-पाजामा पुराने हैं, फटे हैं। जूता टूटे और मुड़े हैं। गमछा बेतरजीब है। हैं तो हैं। क्या फर्क पड़ता है। अस्पताल जाकर डॉक्टर से मिलाना, दवा दिलाना और घर रवाना करने के पूर्व किराये-भाड़े की व्यवस्था के बारे में जानकारी देना। जरूरत हो तो मदद करना। उनका खजाना उनके जेब में रहता था। उनकी खेती गाँवों में तीन-चार जगह थी। वहाँ के मजदूरों किसानों, व्यापारियों से उनके पारिवारिक संबंध थे। शिक्षक थे। शिक्षकीय जीवन के अधिक वर्ष गाँवों के स्कूलों में बीते। इससे गाँव के लोगों से परिचय और घनिष्ठता सबकी मदद के लिये चौबे जी हाजिर। खाद नहीं मिल रही, बीज की किल्लत है, बिजली नहीं आ रही, बिजली के बिल बहुत आ रहे हैं जैसी समस्याओं से लेकर वे ग्रामीणों के साथ अधिकारियों के आफिस में हाजिर। पूरे प्रकरण की वकालत। समाधान मिलने तक संघर्ष। अधिकारी न सुनें तो धरना प्रदर्शन, आन्दोलन और अखबार बाजी से परहेज नहीं। अखबार वाले भी तो उनके अपने प्रिय थे। अधिकारी उनके जुझारू स्वभाव से दहशत खाते थे। इसी में चौबे जी अपना काम भी सिद्ध करनें में संकोच नहीं करते थे।

हफ्तों घर से गायब हैं। गाँवों में रहना, खाना-पीना, खेती-पानी देखना। बिना किसी भेदभाव के बिना जाति-पाँति का विचार किये किसी के घर भी खाना-पीना, सोना-रहना। सूखी रोटी, दाल हो या पूड़ी-सब्ज़ी सब में मजा लेना। सबसे रिस्ते बनाना, साला-बहनोई, साली-सरहज, भइया-भौजाई, चाचा-चाची, दद्दा आदि। ब्राह्मण और शिक्षक होने के नाते सभी के आदरणीय और विद्वान। ज्ञान में तो कमी थी ही नहीं। पोथी-पुराण, कथा-वार्ता में सभी में दक्ष। घरवाले भी उनकी प्रायः चिन्ता नहीं करते थे। यदि पूछो-चौबे जी कहाँ हैं, कब आयेंगे। उत्तर मिलता, पता नहीं, गाँव गये हैं जाने कब आयें। उनकी मर्जी।

उनका जुझारूपन परोपकार में ही नहीं सामाजिक समस्याओं के हल करने में भी पूरी लगन से जुटता था। चौबे कालोनी की पार्क की सफाई हो, कन्या महाविद्यालय में कमरों का तथा बाउन्ड्री का निर्माण, अम्बेडकर की प्रतिमा की स्थापनाओं में वे जिलाधिकारी से लेकर विधायक, सांसदों के पीछे पड़ जाते थे। जब तक काम पूरा न हो चैन नहीं। इसका आशय अधिकारियों, नेताओं की चमचागीरी नहीं, अधिकारपूर्वक उन्हें उनके कर्तव्यों-दायित्वों की याद दिलाकर।

वे निर्भीक और स्पष्टवादी व्यक्ति थे। प्रगतिशील विचारों के कट्टर समर्थक थे। किसी भी सभा, सोसायटी, संस्था के आयोजन सम्मेलन में अपनी बात निर्भीकता से रखते थे और आयोजकों अथवा मंचस्थ नेताओं, अधिकारियों की दुर्बलताओं, कारनामों पर प्रहार करने में नहीं चूकते थे। कोई उनकी बातों से सहमत हैं अथवा नहीं, इसकी चिन्ता कतई नहीं करते थे। ऐसे कई अवसर आये जब उनके वक्तव्यों ने अप्रिय और असहज स्थिति पैदा की। निंदा-आलोचना भी झेली। पर वे अपने में मस्त। खरी बात अबदुल्ला कहें, सबके चित्त से उतरे रहें। अच्छे-अच्छे लोग सोचते थे-चौबे जी जाने किसकी छीछालेदर कर दें। परन्तु उनका आशय किसी का अपमान करना नहीं होता था। नेता, साहित्यकार, समाजसेवी, अधिकारी कोई भी हो वे वक्तव्यों आयोजनों के बाद पूरी मान मर्यादा और सम्मान के साथ उनसे व्यवहार करते थे। मन में न ग्लानि, न मलाल, न दुर्भाव। बुजुर्ग साहित्यकारों आदि को सदैव यथोचित आदर करते थे। किसी की बुराई और दुतकार पर गाँठ बाँधना उनकी प्रवृत्ति में नहीं था। आज बहस हुई, कल उसके साथ हँस-हँस कर बातें कर रहे हैं।

वे उच्चकोटि के कवि, लेखक और साहित्यकार थे। इन्होंने पचासों दीर्घ गीतों की रचना की। हिन्दी में, बुन्देली में। वे अंग्रेजी, हिन्दी, संस्कृत, उर्दू के अच्छे जानकार थे। गद्य-पद्य दोनों में लिखते थे। हर विषय के साथ गंभीरता से न्याय करते थे। संबंधित विषय की सामग्री जानकारी एकत्र करना विषय-विशेषज्ञों से परामर्श करना और फिर सप्रमाण लिखना। उनके

कई लेख अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं किन्तु दुर्भाग्य से बहुत कम प्रकाशित हुए। वे संग्रह करने में लापरवाह थे। उनके चंगेर जैसे कालजयी पचासों गीत कहीं संग्रहीत नहीं हैं। उनकी याददाश्त अदभुत थी। घंटों अपनी रचनायें सुनाते थे। अनेक विद्वानों ग्रंथों के संदर्भ तत्काल उद्धृत करते थे। भाषा कोई भी हो। भाषा से परहेज नहीं किन्तु सटीक संदर्भ। कई बार उनसे प्रयास करके गीत लिखाने की चेष्टा की किन्तु उनकी उदासीनता से सफलता न मिली। वे सब उन्हीं के साथ चले गये। जो स्थिति मनोज जी के साथ हुई, वही उनके साथ। लापरवाही ने केवल साहित्य के प्रति थी, अपितु स्वास्थ्य के प्रति भी। डॉक्टरों ने उन्हें सचेत किया कि हार्ट की कुछ समस्या है। अत: खाने-पीने, परिश्रम करने में सावधानी रखें, परहेज करें, नियमित दवा खायें, परन्तु उन्होंने डॉक्टरों के निर्देशों का अपेक्षित पालन नहीं किया। उसका दुष्परिणाम सामने हैं। वे असमय दुनिया से चले गये। मीठा खाने के बड़े शौकीन थे। जो भी हो, जहाँ भी हो सब स्वीकार।

वे बड़े सभा चतुर और विनोदी व्यक्ति थे। जहाँ जिस सभा में होते अपनी बातों से, वक्तव्यों से गीतों से, बहसों से घर जाते थे। उनके निष्कर्ष अकाट्य होते थे। रचनायें अवसरानुकूल और प्रभावशील होती थीं। गरीबी, बीमारी, शोषण आदि की रचनाओं में ऐसा चित्रण करते, कि वे श्रोताओं में गहरे तक प्रभाव डालती थीं। लोगों से हँसी-मजाक कर वातावरण को हलका-फुलका बनाये रखते थे। चुप बैठना उनके स्वभाव में नहीं था। खूबी यह थी। वह दूसरों पर ही नहीं, अपने पर अपने परिवार पर, अपने कारनामों पर भी हँसते-हँसाते थे। महाराजपुर के मंदिर से मेहतर से मिलकर मूर्तियाँ कैसे चुरवाकर, जैन संतों के साथ कैसा दुर्व्यवहार कर दंडित हुए, मरे कुत्ते को कैसे घसीटा और लोगों ने कैसे सामाजिक बहिष्कार किया, कैसे अपने स्कूल के प्राचार्य के खिलाफ लड़कों को भड़काया, कैसे हैरान किया, प्राईवेट स्कूल के मालिक के प्रति शिक्षकों में कैसा विषवमन किया, आदि घटनायें वे हँस-हँसकर स्वयं मजा लेते थे और लोगों को भी लोट-पोट करते थे। कभी-कभी वे हँसी मजाक श्लील-अश्लील का भी ध्यान नहीं रखते थे। मनो विनोद में मर्यादा कैसी। वे अन्याय और स्वार्थ के विरोधी थे, पर अपना काम साधनें में कोई परहेज नहीं करते थे। उनका मानना था कि संसार में कोई भी व्यक्ति शत-प्रतिशत ईमानदार नहीं है। थोड़ा-बहुत अनीति, अन्याय, भ्रष्टाचार, स्वार्थ-सायास सभी करते हैं। वे कहते थे कि काम बनाने में कोई बुराई नहीं है। कभी-कभी चाहे-अनचाहे सब करना पड़ता है। अपने ड्राइंग रूम में वे अम्बेडकर का चित्र लगाते थे और पोर के अन्दर पूजा घर भी था। परम्परा तथा रीतिरिवाजों, अंधविश्वासों, तंत्र-मंत्रों का वे समर्थन नहीं करते थे। उसे अज्ञान और पोंगा पंथी कहते थे। किन्तु घर-परिवार में हो रहे किसी कार्यक्रम का विरोध नहीं, बल्कि पूरा सहयोग और भागीदारी करते थे। मठ मंदिरों-मूर्तियों, पूजा-पाठ में उनका विश्वास नहीं था किन्तु मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा, चर्च सभी के कार्यक्रमों में पहुँचकर भाग लेते थे। कहते थे बिजली चोरी सभी करते हैं, टैक्स सभी बचाते हैं। यह सब छोटी बातें हैं। किसी गरीब के पक्ष में झूठी गवाही देने में बुराई न मानकर खुलकर वर्णन करते थे। पक्के सिद्धांत वादी थे। मार्क्सवाद के कट्टर समर्थक। अगर किसी मार्क्सवादी साथी ने कुछ गलत किया तो शीर्षस्थ व्यक्ति का पानी उतारने में भी उन्हें संकोच न था। तमाम मार्क्सवादी, प्रगतिवादी उनसे बचते, झिझकते थे।

वे अनेक विषयों के ज्ञानी व्यक्ति थे। जब कभी कोई साहित्य संबंधी उलझन होती तो चौबे जी समाधान ढूढ़ते में मदद करते। मेरे पड़ोसी और साहित्यिक मित्र थे। हम दोनों रोज घंटों बैठते, बतियाते, बहस करते, चोंच लड़ाते। उनका अभाव हर पल खटकता है। ऐसा व्यक्तित्व दुर्लभ है।

-१०८, सागर पैराडाइज, जी-३, गुलमोहर, भोपाल ३९卐

दो बुन्देली गजलें

-प्रेम प्रकाश चौबे

(१)

झूठी सौं रोजई खा रए है,
गंगा जी करबे जा रए हैं।

जौन-जौन आधीन है उनके,
उनपे जुलम खूब ढा रए हैं।

जंग छिड़ी जब हते जेल में,
'सैनानी पिंसन' पा रए हैं।

भली हती जा देह मल्ल सी,
दारु पी कें विनसा रए हैं।

'प्रेम' जमानौ नओ आ गओ है,
गीत पुरानौ ही गा रए हैं।

(२)

हम ने मानी बेई बुला रए,
चल कै मनों तुमइँ तौ जा रए।

तुमरी रोटी है मैंनत की,
बे तौ बैठे-बैठे खा रए।

बहुएं बिटियें संगे लैकें,
उनखों भेंट चढ़ाबे जा रए।

उनखों भोग विलासई चानें,
हमें मुक्ति के पाठ पढ़ा रए।

'प्रेम' पढ़े बन रहे चूतिया,
आँखन बारे सोई अंधरा रए।

-वार्ड नम्बर ५, ब्राह्मण मोहल्ला, कुखाई विदिशा

'रामधुन' एक विलुप्त होती लोक परम्परा

-डॉ. ओमप्रकाश चौबे

सृष्टि के आरम्भ से ही भक्ति का उन्मेष मिलता है। मनुष्य के जन्म के साथ जब शिशु को माँ की गोद मिलती है तो माँ की शरण में आते ही शिशु के लिए माँ आराध्य हो जाती है और अराध्य के प्रति समर्पण भावना, आस्था और श्रद्धा का ही एक रूप शक्ति का पर्याय बनता, यहीं से भक्ति का बीज आरंभ होता है। जिस तरह प्रकृति हमें जीवन के जीने के लिये अनिवार्य है। प्रकृति हमारी माँ है, चाहे ऊँची-ऊँची पर्वत मालाएँ हों, चाहे नीचे लहराता अपार महासागर हो, हरीतिमा से भरपूर हजारों वृक्ष हों, या पृथ्वी तल को चूमती भुवन-भास्कर की प्रखर किरणें हों। कल-कल करती नदी की धार हो, मलयानिल का संगीत हो, दसों दिशाओं में पहुँचता पवन निनाद हो, काले बादलों के बीच चमकती बिजली हो, चाँद की चाँदनी हो, शीतल झरना हो। सभी प्रकृति रूपी माँ की गोद में लीला करते शिशु की तरह है, वही तो भक्ति है और यही भक्ति आनन्द का पर्याय बनती है। ऋग्वेद में प्रकृति को भूःभुवः स्वः कहा है। इसनें सर्वव्यापक प्रकृति में मनुष्य को बाँधा है।[१] भूःभुवः और स्वः अथवा पृथ्वी अंतरिक्ष तथा धौं लोक तीनों का निर्माण किया है। मनुष्य संसार के एक ऐश्वर्य और प्रकृति की भक्ति का अभेद अंग है।

दुःख से त्राण पाने के लिए आनन्द का निकेतन चाहिए। आनन्द का यह निकेतन ईश्वर है, सच्चिनानंद परमात्मा है। सत और चित दोनों का विश्रामस्थल वही है। साधक को समस्त संसार धोखा दे दे और देता ही है, परन्तु परमात्मा कभी धोखा नहीं देता। इसलिए दुःख से बचने का साधन एक मात्र आनंद स्वरूप ईश्वर है। इसी के साथ रहना, इसी के गुण गाना, इससे हटकर अन्यत्र कहीं न जाना इसी में तल्लीन और मग्र होकर निर्द्वन्द्व विचरण करना आनंद है। यही भक्तिमार्ग है।[२]

प्राचीन भारतीय संस्कृति और मानवीय जीवनमूल्यों के संरक्षण में रामकथा का अप्रतिम अवदान है। हमारे देश में रामकथा का अनंत विस्तार मिलता है। भारत का शायद ही कोई भाषाई प्रदेश ऐसा हो जहाँ रामकथा ने लिखित कलेवर न ग्रहण किया हो। उच्चादर्शों और सत्य की स्थापना में रामकथा समग्र विश्व की जीवन कथा बनती चली गई।

श्रीराम, रामकथा के नायक हैं उनके आदर्श आज भी जन-जन में समादृत हैं। एक पत्नीव्रत का पालन करने, धर्म व मर्यादा की रक्षा करने उन्होंने जो मर्यादा पुरुषोत्तम के नाम का वरण किया है, वह स्तुत्य है। उनका लौकिक रूप तथा जीवन चरित्र आदर्श समन्वित है। राम का आदर्श चरित्र ही उनको बहुपक्षीय ऊँचाई तक ले जाता है। राम के उदात्त ब्रह्मणत्व से 'मानस' गौरवान्वित है। ऋषियों, मुनियों के अतिरिक्त असुरों ने भी राम के पूर्णत्व को स्वीकार किया है। मर्यादाओं के अपने आचरण से प्रतिष्ठित करने वाले विश्व के एक मात्र परम-पुरुष पुरूषोत्तम का जन्म इस अंचल में बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है।[३]

भारत भूमि के महनीय गौरव पतित पावन मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम का चरित्र लोकसाहित्य में अपनी समग्रता के साथ अभिसिंचित हुआ है। श्रीराम की लीला का गान लोक में विविध रूपों में होता आया है। बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचलों में श्रीराम कथा गायन का एक रूप प्रायः समस्त बुन्देलखण्ड में 'रामधुन' के रूप में आज भी गाया जाता है। वर्तमान में रामधुन की परम्परा लुप्त हो रही है। लेकिन रामधुन में लोक ने रामचरित को जिस ढंग से रचा है, वह रूप बड़ा हृदयस्पर्शी है। संकलनकर्ता को रामधुन के कुछ अंश प्राप्त हुए हैं उनसे लोक की रामकथा का चित्रण स्पष्ट हो जाता है। रामकथा गायन के इस रूप (रामधुन) में जिस प्रकार का धर्माचरण मिलता है, आज उसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती, परन्तु यदि उसका शतांश भी व्यवहार में हो तो देश का कल्याण हो सकता है।

रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम,
अल्ला ईश्वर तेरे नाम, सबको सन्मति दे भगवान...
भीर पड़ी भक्तों ने पुकारा, आन हरो प्रभु कष्ट हमारा,
दशरथ के ग्रह जन्में राम...
ठुमक चले जब चारों भइया, मगन मई कौशल्या मैया,
भरत-शत्रुधन, लक्छमन राम...
दुष्टों ने जब यज्ञ नसाया, विश्वामित्र लेंन तब आया,
मुनि को सौपे लछमन राम...
तुरत सुबाहु ताड़का मारी, गौतम नार अहिल्या तारी,
मुनि के कीनें निर्भय काम...
जाय जनकपुर धनुष को तोड़ा, जनक सुता से नाता जोड़ा,
सुन्दर जोड़ी सीताराम...
राजतिलक की भई तैयारी, कैकई ने सब बात बिगारी,
तात वचन वन गबने राम...
जटा जूट मुनि भेष बनाये, पृथ्वी भार हरन प्रभु आये,
दशरथ छोड़े सुत बिन प्राण...
लखन सहित दोई भ्राता पहुँचे, गंग तीर भ्राता दोई पहुँचे,
अवधपुरी भई मृत्यु समान...
गंग के पठ पार करो मेरे भैया, मेरी तो है काठ की नैया,
धोकर चरण चढ़ाऊँ राम...
भरद्वाज मुनि आश्रम आये, पूछत ठौर हरस उर लाये,
व्यापक सब जग जीवन राम...
मिल निशाद प्रभु शीश नबाई, मुदित हरस पूंछी कुशलाई,
लक्षमन दोनों निरगुन राम...
आप भरत पूंछी कुशलाई, सीता सहित लखन दोई भाई,
विकल प्राण बिन लक्षमन राम...
चित्रकोट की भई तैयारी, चले भरत तीनों महतारी,

अवध को लौट चलो प्रिय राम...
भरत भ्रात तुम रोको नाहीं, दुख और सुख जानो परछाई,
चरण खड़ाऊ दीनी राम...
अनसुईया उपदेश सिखायो, नारी धर्म सीता को बतायो,
मुनि आश्रम से कीन पयान...
रावण ने जब बैर बढ़ायो, कपट मृगा ने प्रभु को बहकायो,
लेकर धनुष चले भगवान...
रावण भेष बदलकर आयो, धोखे से सिया रथही चढ़ायो,
हा रघुनंदन हा प्रिय राम...
ऋष्यमूक पर भूषण पाये, सीता हरण नंदन प्रभु पाये,
हनुमत भेंटे लक्ष्मन राम...
सबरी मिल प्रभु मुक्ति बताओ, वाली त्राष सुग्रीव सताओ,
कौंन सुतंत्र मित्र के काम...
सुनहु सखा सिय पता लगाओ, बन्दर भालु चहु दिश जावो,
हनुमत तुम तो हो बलवान...
घोर युद्ध वानर निश्चर को, चंड प्रचंड बाण रघुवर को,
मार दिया रावण अभिमान...
विजय लंक पा आये अवधपुर, भेंटे भरत सकल पुरवासी,
कहें तुलसी सबके प्रिय राम, पतित पावन सीताराम।।

अर्थ-रघुकुल शिरोमणि, अयोध्यापति श्रीराम पतितों का उद्धार करते हैं, आपके अनेक नाम हैं-अल्हा ईश्वर। हे राम आप सबको सन्मति दें। एक समय ब्राह्मण, गौ, देवता और संतों का कष्ट हरण के लिए भगवान ने मनुष्य रूप में अवतार लिया। एक बार आपने अपने भक्तों के कष्ट निवारण हेतु उनकी पुकार सुनकर महाराज दशरथ के यहाँ जन्म लिया। महाराज दशरथ के चारों पुत्र जब बालरूप में चलना सीखते तो उनकी लीलायें देख माता कौशल्या प्रसन्न होतीं वे चारों पुत्र भरत, शत्रुघन, लक्ष्मण और राम थे। उस समय राक्षसगण ऋषि-मुनियों को यज्ञ नहीं करने देते थे। उन ऋषियों के कष्ट निवारण हेतु विश्वामित्र ने अयोध्यापति महाराज दशरथ से राम-लक्ष्मण को माँगा था, महाराज दशरथ ने राम-लक्ष्मण मुनिराज को सौंप दिये। आपने वहाँ जाकर मारीच, सुबाहु तथा ताड़का का वध किया, गौतम ऋषि की शापित पत्नी को शापमुक्त करके उसका उद्धार किया। ऋषि-मुनियों को राक्षसों से निजात दिलाकर आप मुनि के संग मिथिला (जनकपुरी) गये। जनकपुरी के धनुष यज्ञ में भाग लेकर धनुष तोड़कर जनकनंदनी सीता से स्वयंवर रचाया, आपके साथ सीता जी की बड़ी सुन्दर जोड़ी बनी।

अयोध्या में आपका राजतिलक होना था, उसकी पूरी तैयारी हो गई, लेकिन माता कैकेयी ने महाराज से दो वचन माँगकर (भरत को राजतिलक तथा राम को चौदह वर्ष का वनवास) बात बिगाड़ दी। महाराज दशरथ की आज्ञा से राम-लक्ष्मण सीता सहित चौदह वर्ष को वनवास को गये। वनवास जाने से पूर्व आपने जटा-जूट, बल्कल धारण किये। आपके वनगमन के पीछे पृथ्वी को असुरों के भार से मुक्त करने का उद्देश्य था। लेकिन वन जाते ही महाराज ने पुत्र शोक में अपने प्राण त्यागे।

आप गंगा तट पर पहुँचे। गंगा पार करने के लिए केवट से आग्रह किया। केवट ने कहा-हे नाथ! मैं आपको गंगा पार नहीं करा सकता, क्योंकि सुना है कि आपके चरण स्पर्श से पत्थर की शिला नारी (अहिल्या) बन गई थी। इसलिए पहले आपके चरणों की रज धोऊँगा, तभी आपको अपनी काठ की नाव में बैठाऊँगा।

केवटराज ने प्रभु के चरण धोकर उन्हें गंगा पर कराया। वहाँ से प्रभु भरद्वाज मुनि के आश्रम गये, मुनि आपके दर्शन पाकर बहुत प्रसन्न हुए। हे राम! आपकी व्यापकता सर्वत्र है। निषाद राज से आपकी भेंट हुई उन्होंने शीश झुकाकर आपकी कुसलक्षेम पूँछी।

अयोध्या से भरत, शत्रुघन तीनों मातायें गुरु समेत समस्त पुरवासी चित्रकूट पहुँचे तथा आपसे वापस अयोध्या चलने का आग्रह किया। श्रीराम ने कहा कि पिताश्री के वचन का पालन करना मेरा धर्म है इसलिए मुझे अपने धर्म का निर्वहन करने दो। भरत को आपने लौटते समय अपनी खड़ाऊँ दे दी।

वहाँ से राम, लक्ष्मण, सीता अत्रि मुनि के आश्रम पहुँचे। माता अनुसुइया ने सीता को नारी धर्म के उपदेश बतलाये, फिर मुनि के आश्रम से वापस आये। लंकापति रावण ने श्रीराम से बैर बढ़ा लिया। उसने मारीच को स्वर्णमृगा बनाकर राम को भ्रमित किया वे उसके पीछे गये। रावण ने साधुवेष बनाकर धोखे से सीता का अपहरण कर लिया, सीता को पुष्पक विमान में बैठाकर लंकापुरी ले गया, सीता आपका स्मरण करती जाती थीं।

सीता का पता लगाते हुए आप दोनों भाई ऋष्यमूक पर्वत पर आये वहाँ जटायू द्वारा तथा सीता जी के वस्त्राभूषणों से ज्ञात हुआ कि रावण ही सीता का अपहरण करके ले गया है। वहीं आपकी भेंट अंजनी सुत पवनपुत्र हनुमान से हुई। शबरी भीलनी से मिलने प्रभु उसके आश्रम गये, शबरी को नबधा भक्ति प्रदान की। किष्किंधा में वानर राज बालि अपने भाई सुग्रीव को त्रास दे रहा था, उसकी पत्नी का बलात अपहरण कर लिया था। श्रीराम ने बालि का उद्धार करके सुग्रीव को स्वतंत्र करा दिया। किष्किंधा का राजा बना दिया। श्रीराम ने सुग्रीव से सीता का पता लगाने को कहा, सुग्रीव के आदेश पर वानर भालू सीता का पता लगाने को कहा। सुग्रीव के आदेश पर वानर भालू सीता का पता लगाने गये। श्री हनुमान समुद्र पार करके लंकापुरी गये। सीता का पता लगाया, अशोक वाटिका में सीता से भेंट करके पवनसुत वापस आये।

श्रीराम ने वानर, रिक्ष की सहायता से समुद्र पार करने हेतु एक सेतु का निर्माण कराया। समस्त वानरी सेना सहित श्रीराम लंकापुरी गये। श्री राम ने राक्षस कुल सहित रावण का वध किया। लंका विजय पश्चात् वहाँ का राज विभीषण को सौंपकर सीता-लक्ष्मण सहित अवधपुरी लौटे। तुलसीदास कहते हैं कि राम सबके प्रिय हैं। इस तरह से इस छोटी सी रामधुन में रामकथा का सार रूप में वर्णन है।

मेरी छोटी सी है नाव, तुमरे जादू भरे पाँव,
मुझे डर लागे राम, कैसे बिठाऊँ तुमें नाव में।

जबकी पत्थर से बन गई नारी, ये तो लकड़ी की नाव हमारी,
इससे पालूं परवार, ये है रुजगार,
सुनो-सुनो जी सरकार, कैसे बिठाऊँ...
चाहे लछमन भले वान मारें, लेकिन गंगा के पार न उतारों,
मेरी विनती बारम्बार, सुनो-सुनो सरकार, कैसे बिठाऊँ...
पहले चरणों की रज को छुड़ाऊँ, पीछे नईया में तुमको बिठाऊँ
मेरा सन्देह होवे दूर, गरजे तुमको मन्जूर,
सुनलो-सुनलो हजूर, बैठो हमारी नाव में...
बड़े प्रेम से चरणों को धोबे, पाप जनम-जनम के धोबे,
खुशी होवे मन में, सूरज डूबे छड़ में, बैठे रहो हरी नाव में...
केवट लेलो कछू उतराई, जो कछु पल्ले में आई हमारे,
तेरा होगा बेड़ापार, तेरी होगी जै-जैकार कैसे बिठाऊँ...
जैसे तुम हो खिवैया, तैसे हमें हैं, भाई-भाई से लेना सरम है,
मैनें कीनी गंगा पार, जब मैं आऊँ तुमरे द्वार,
करना भव सागर से पार, कैसे बिठाऊँ...

अर्थ-रामधुन का यह प्रसंग श्रीराम, लक्ष्मण, सीता को गंगा पार कराने का है। प्रसंग में केवट एवं श्रीराम का वार्तालाप है। रामधुन का यह लोकरूप बड़ा सजीव लगता है।

केवट श्रीराम से कहता है-हे नाथ! मेरी यह छोटी सी नौका है, यह काष्ठ की बनी है और मैंने सुना है कि आपके चरण रज में जादुई प्रभाव है। रज के स्पर्श से पत्थर की शिला नारी बन गई थी, यह सोचकर मुझे बड़ा डर लगता है कि यह नाव जिससे मेरे परिवार का पालन होता है, अगर कहीं स्त्री बन गई तो मेरे परिवार की आजीविका ही चली जावेगी। सो हे प्रभु! पहले मैं आपके चरणों की रज को धोकर छुड़ाऊँगा, उसके पश्चात् ही आपकौ नाव में बैठाऊँगा। इससे मेरा सन्देह दूर होवेगा। अगर आपको मेरा प्रस्ताव स्वीकार हो तो बतायें। मेरे इस निर्णय से क्रोधित हो श्री लक्ष्मण जी भले ही मुझे बाण मार दें, लेकिन मैं आपको गंगा पार नहीं उतार सकता। मेरी आपसे यह बार-बार विनती है।

प्रभु की स्वीकृति पर केवट ने बड़े प्रेम से उनके चरण धोये, इसके पीछे केवट का उद्देश्य जन्म-जन्मान्तरों के पाप धोने का था। केवट जब श्रीराम की चरण रज धो रहा था तो वह बहुत प्रसन्न था। संध्याकाल था, केवट ने सबको नाव में बैठाकर गंगा पार उतारा। श्रीराम ने कहा केवट नाव उतराई ले लो। केवट बोला हे दीनानाथ! जिस तरह से आप संसार के समस्त प्राणियों को भव सागर से पार उतारने वाले हैं अर्थात् खेवनहार हैं, उसी तरह में भी तो लोगों को नाव से पार उतारता हूँ, इस नाते हम भाई-भाई हुए और भाई से मजदूरी लेना तो बड़े शर्म की बात है। हे नाथ, मैंने जिस तरह आपको गंगा पार किया है मैं जब आपके द्वार आऊँ तो आप भी मुझे इस भवसागर से पार उतार दें।

कलि में कामधेनु रामायण,
ज्ञान विराग सींग दोई सुन्दर, अर्थ आँख समझावन,
चारों मुक्ति के चारों खुर हैं, पुँछ परम पद पायन,
चारों वन में चार पदारथ, दया दूध दरसायन,
बच्छा सन्त पिये निशि बासर, सदा रहे पछियावन,
शिव ने दोई सनकादिक दोई, याज्ञबल्क मुनि भायन,
निकसी धेनु निगम वन चरबे, काग भुसुण्ड चरायन,
तुलसीदास गोबर के आशिक, सदा रहत पछियावन,
कल में कामधेनु...

अर्थ-इस कलिकाल में रामायण कामधेनु के समान है। इस कामधेनु के दो सींग ज्ञान तथा बैराग्य के प्रतीक हैं एवं पूँछ परम पद प्रदान करने वाली है। इस कामधेनु के चार थन चार पदार्थों के प्रतीक-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष हैं। इससे दयारूपी दूध प्राप्त होता है। इसके दुग्ध का पान करने वाले सन्तजन हैं जो सदैव इसके पीछे लगे रहते हैं। इस कामधेनु रूपी रामायण का दोहन शिव, सनकादिक एवं याज्ञबल्क ने किया है। यह विशिष्ट धेनु चरबन करने को निकली है, उसे कागभुसुण्डी चराते हैं। तुलसीदास तो गऊ के गोबर में ही मग्न हैं, वे इसके लिए इसका पीछा किया करते हैं।

वन राम चले वन लखन चले, वन चली जानकी माय हो।
छायी बदरिया साहुन की...
आगें आंगे राम चलत हैं, पीछे लक्षमन भाई,
जिनके पीछें चलत जानकी, शोभा बरनी न जाई।
राम बिना मोरी सूनी अयोध्या, लक्षमन बिन ठकुराई,
सीता बिन मोरी सूनी रसुइया, कौन करे चतुराई।
वन राम चले ...

श्रीराम ने वनगमन का ध्येय असुरों का विनाश था। उन्होंने अन्याय तथा अनीति का अंत कर धर्म की स्थापना की। लेकिन इस पूरी प्रक्रिया को सूक्ष्मता से दृष्टिगत करने पर रामकथा के अनेक सरोकारों का उद्घाटन होता है।

श्रीराम, अनुज लक्ष्मण एवं सीता सहित वनगमन कर रहे हैं। इस समय श्रावण की बदली छायी है। जाते समय श्रीराम आगे चल रहे हैं, उनके पीछे लक्ष्मण तथा सीता जी सबसे पीछे हैं। श्रीराम के जाने से अयोध्या सूनी हो जावेगी, लक्ष्मण के बिना यहाँ की ठकुराई सूनी है, सीता के जाने से अयोध्या की रसोई सूनी रहेगी।

बुन्देली रामधुन में रामकथा के समस्त प्रसंग वर्णित रहते हैं। वर्तमान में यह लुप्त प्राय लोक परम्परा है। इसके पुनर्जीवन हेतु लोकसाहित्य के अध्येताओं, लोकगायन से जुड़े लोगों तथा लोककला के मर्मज्ञों को ध्यान देना होगा वरन् हमारी यह अमूल्य लोकनिधि एक दिन विलुप्त हो जावेगी।

सन्दर्भ-

१. ऋग्वेद ६/४९/२३
२. भक्ति का विकास-मुंशीराम शर्मा चौखम्बा विद्याभवन- वाराणसी १९७९ पृष्ठ ६४
३. बुन्देली लोकगीतों में श्रीराम जन्म-डॉ.हरिमोहन पुरवारः बुन्देली बसंत अंक ८ पृष्ठ २५ सं. डॉ. परमार

-श्रीराम कालोनी, गोपालगंज, सागर (म०प्र०)

लोक का जादू

-डॉ.अशोक त्रिपाठी

'जादू' शब्द कानों में पड़ते ही रोमांच हो आता है। जादू देखना और देखकर उसकी अनुभूति में खोना अपने आप में रोमांचकारी है ही। 'लोक का जादू' तो और भी विस्मयकारी है। जी हाँ, मैं जिस लोक और जादू की बात कह रहा हूँ, वह अलौकिक है। हुआ न विरोधाभास, लोक और अलौकिक? लेकिन वास्तव में इनमें कोई विरोध है ही नहीं। विरोध का आभास भले ही हो रहा हो, लोक की बहुतायत अनुभूतियाँ मुझे अलौकिक जान पड़ती हैं। यदि लोक इतना महान न होता तो हमारे आराध्य श्रीराम, श्री कृष्ण इतनी धूल-मिट्टी, इसकी आव ओ हवा में रचते-बसते क्यों? मानना पड़ेगा कि लोक, अलौकिक है।

अब बात करते हैं जादू की। हम और आप सबने बहुत से जादू देखे, सुने और पढ़े होंगे। जादू, जादू है। साहित्यिक भाषा में इसे इन्द्रजाल कहते हैं। छोटा जादू, बड़ा जादू। जैसा जादू, वैसी टिकिट। लेकिन में जिस जादू की बात कर रहा हूँ, उसमें कोई टिकिट नहीं। अब एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कैसा जादू? अब यहाँ भी विरोधाभास हो गया। जादू है भी, और नहीं भी। लेकिन मैं आपको आश्वस्त करता हूँ कि एक ऐसा भी जादू होता है। और यह भी कि लोक और जादू दोनों में विरोधाभास देखने वालों को निराश नहीं होना पड़ेगा। यह बात अलग है कि रीतिकालीन कवि बिहारी की विरोधाभासी काव्योक्तियों में कोई न कोई गंभीर व्यंजना अवश्य होती है। यथा-

नेह न नैननि को कछु, उपजी बड़ी बलाय।
नीर भरे नित प्रति रहें, तऊ न प्यास बुझाय।।

खैर, हमारा उद्देश्य विशद साहित्य की मार्मिक व्याख्या करना नहीं है। हम तो कहना चाहते हैं कि अनेक साहित्यकारों ने अपने-अपने ढंग से लोक की जादूगरी को चित्रित किया है। आवश्यकता इस बात की है कि हम जरा ठहरकर उस चित्रण को देखें-समझें।

एक समस्या यह भी हो समती है कि आज की भौतिक उपलब्धियों की दौड़ में किसी को ठहरने की फुर्सत कहाँ है? कोई 'शार्टकट' रास्ता हो, तो उस पर चला जा सकता है? दूसरी बात यह है जादू का आनंद साहित्य की आँखों से नहीं लिया जा सकता। इसके लिए 'फुटपाथी-कैनवास' चाहिए।

'लोक का जादू' इन्हीं सम्भावनाओं पर निर्भर है। हमने बड़े बुजुर्गों से सुना और समझा है कि पहेलियाँ बुझाने में लाल बुझक्कड़ को महारत हासिल थी। वे अपने इसी मिजाज के कारण लोक के सच्चे जादूगर सिद्ध होते हैं। उनके द्वारा बूझी गई बुझौअलें आश्चर्य हैरत और संतुष्टि प्रदान करती हैं। ऐसा लोक में ही संभव है-

लाल बुझक्कड़ बूझकें, और न बुझे कोय।
पैर मथानी बांध कें, हिरना कूदो होय।।

आप सोच रहे होंगे कि मैंने आपको लोक का जादू दिखाने की बात कही थी, और अब केवल बातों में ही उलझाए हूँ। हाँ, तो अब दिखाता हूँ लोक का जादू-

हाँ, तो साहबानों, कद्रदानों, तमाशबीनो, अपनी-अपनी आँखें बंद करिये। अब अपने आप को खड़ा जानिए एक फुटपाथ पर। रोड पर, सड़क पर या फिर गड़वांत[१] पर। आँखें खोलिए, और देखिए- एक २५-३० साल का जवान, फुटपाथ के किनारे-किनारे उलटा लेटकर चल रहा है। उसके हाथ में एक नारियल है। चेहरे पर उत्साह और शरीर में फुर्ती है। मटमैली बनियान और आसमानी रंग का पैजामा पहने है। बाल सीधे सपाट खिंचे हुए जिन पर तेल की पर्याप्त चिकनाई झलक रही है। वह दण्डवत प्रणाम की मुद्रा में अपने दाहिने हाथ को आगे बढ़ाकर नारियल को धरती पर रखता है। उठकर नरियल तक उकड़ूं[२] चलता है। रखे गये नारियल के पास से पुनः आगे की ओर उलटा (पेट की तरफ से) लेटना है। फिर हाथ बढ़ाकर नारियल को आगे रखता है। वह बार-बार इसी क्रम को दोहराते हुए आगे बढ़ता जाता है।

आप एक नजर उसकी ओर डालते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। आगे चलने पर आपको ५०-५५ वर्ष का प्रौढ़ आदमी दिखता है, जो पहले मिले जवान की तरह ही पेट की तरफ से लेटकर आगे बढ़ रहा है। उसके हाथ में भी नारियल है। अब आप उसकी ओर गौर से देखते हैं, कुछ अनुमान लगाते हैं। उसके चेहरे से झलकती तटस्थता को देखकर आप पुनः मंजिल की ओर बढ़ने लगते हैं। लगभग १०० मीटर चलने पर आप कुछ देखकर ठिठक जाते हैं। यह क्या? एक ४०-४५ साल की औरत भी उलटा लेटकर चल रही है। उसके हाथ में नारियल नहीं, नारियल की आधी खोपरी[३] है। वह खुले बालों की जूड़े की शक्ल में बाँधे है। साड़ी की काँछ[४] लगाकर बचे छोर को वक्षस्थल की तरफ से पीठ की ओर डालकर कमर में मजबूती से लपेटे है। उसके मुख पर थकान किन्तु अंगों से संकल्प की आभा झलक रह है। वह अपनी धुन में मस्त हैं। राह चलते पैदल राहगीरों या दौड़ते वाहनों से उसे कुछ लेना-देना नहीं। आप उसकी नजर बचाकर थोड़ी देर उसकी ओर देखते रहते हैं, फिर स्वयं ही लज्जा का अनुभव करते हुए आगे बढ़ जाते हैं। आपका मन नहीं मानता एक बार पीछे की ओर मुड़कर पुनः उस स्त्री को देखते हैं और अपने मन में कुछ गुणा-भाग लगाने लगते हैं।

लेकिन यह क्या? एक विदेशी (श्वेत) युगल उस लेटकर चलती हुई स्त्री को देखकर अपनी गाड़ी रोक देते हैं। एक दो मिनट तक उस ग्रामीण स्त्री के क्रिया कलाप को गौर से देखते हैं और आपस में कुछ गुटर-गूँ[५] करते हैं। आप आगे निकल

जाने के बाद हैरतपूर्ण मन: स्थिति के साथ पुन: पीछे लौटने लगते हैं। आप देखते हैं- उस विदेशी युगल में से केवल श्वेत महिला उस ग्रामीण स्त्री के पास आती है और उसके आगे की ओर बगल से झुककर उकडूं बैठ जाती है। उस ग्रामीणा का ध्यान विदेशी महिला की ओर जाता है। ग्रामीणा अपने सामने, अचानक उस विदेशी को प्रत्यक्ष पाकर किंचित भय, आश्चर्य और स्त्रियोचित संवेदना से उसकी ओर गौर से देखती है। उसकी प्राश्निक दृष्टि को समझने का प्रयास करती है। विदेशी महिला अपनी भाषा में कुछ कहती है, जो ग्रामीण स्त्री की समझ से परे होता है। अत: कुछ न समझकर भी वह विदेशी महिला हाथ जोड़कर उस ग्रामीण स्त्री को प्रणम करती है। मानो उसने सब कुछ नहीं समझ लिया हो। लेकिन आप? सब कुछ जानते हुए भी कुछ नहीं समझ पाये।

यह क्या? अब आपको और अधिक हैरत होने लगी। आपको लगने लगा कोई जादू हो रहा है। लेकिन माइक, संगीत, पंडाल, तालियाँ और सबसे महत्वपूर्ण टिकिट तो है नहीं। अरे, ये क्या? वह विदेशी महिला अपने पर्स से 500 रुपये का नोट निकालकर उस ग्रामीणा को दे रही है और वह लेने से मना कर रही है। अंतत: वह पुन: हाथ जोड़कर वह नोट उस ग्रामीणा के चरणों में रखकर प्रणाम करती हुई अपने श्वेत साथी के पास पहुँच जाती है। आप जानना चाहते हैं, यह क्या और क्यों? आप उस विदेशी महिला एवं साथी के पास नि:संकोच पहुँच जाते हैं। वे गुटरगूँ कर रहे होते हैं। आपको सुनाई पड़ता है। 'इट इज मैजिक'। अब आपको विश्वास होने लगता है। जी हाँ, यह जादू है। अब आप सोचने लगते हैं ये विदेशी लोग 'परी परकम्मा'[६] को जादू कहते हैं। अब आप हिम्मत करके उस गवाँर[७] स्त्री के पास पहुँचते हैं, पूँछते हैं- ये पाँच सौ का नोट जादू के टिकट का है? वह आश्चर्य और स्वाभाविक अनभिज्ञता से आपकी ओर देखती है। बोलती कुछ नहीं। आपकी हिम्मत जबाव दे जाती हैं। आप तुरन्त उलटे पैर लौट जाते हैं। गणित पुन: लगने लगती है- उठने, बैठने, लेटने और नारियल की खोपरी रखने को ही विदेशी 'जादू' समझते हैं, तभी तो पाँच सौ रुपये दे दिये। आप उस जादू में अपनी सहमति जताकर जहाँ के तहाँ हो जाते हैं। न कुछ बोलना, न किसी से कोई अपेक्षा, फिर भी जादूगरी की फीस प्राप्त।

यह है लोक का जादू। जिसमें न कोई चमक-दमक, न कोई साज-सम्मान, न ही अपेक्षा और न ही उपेक्षा। यह लोक विश्वास की ताकत है, जिसे हम तब समझते हैं जब कोई विदेशी मानता है। ऐसे जादू वर्षों से हमारे लोक में हो रहे हैं। अब अपनी-अपनी आँखें खोल लो।

संदर्भित शब्द संकेत-

1. वह कच्ची रास्ता, जिस पर बैलगाड़ी चलती है।
2. बैठकर पंजों के बल रहना।
3. नारियल गरी के ऊपर का कठोर आवरण
4. ग्रामीण महिलाओं के साड़ी पहनने का एक ढंग जिसमें साड़ी के एक छोर को दोनों पैरों के बीच से ले जाकर पीछे की ओर कमर में खोंसा जाता है।
5. विदेशियों द्वारा अपनी भाषा में परस्पर बात करने को भारतीयों द्वारा न समझे जाने पर लगाया गया क्रियात्मक अर्थ।
6. धार्मिक भावना से लेटकर की गई प्रदक्षिणा।
7. गाँव में रहने वालों का व्युत्पत्ति परक अभिप्राय।

-पीजीटी, हिन्दी शासकीय मॉडल स्कूल, छतरपुर म०प्र० ॥

अँग्रेजों और बखतबली का युद्ध

-हरगोविन्द तिवारी

तनकर सेना आनन-फानन, दौड़ी लड़ने बखतबली की।
उलदन और बिनेका जाके, खोज बीन की गली-गली की।।
आग बरसने लगी भयानक, चली तोप जब बखतबली की।
मार भगाई गोरी पलटन, ब्रिगेडियर 'सेज' छली की।।

धामौनी, सागर, मालथौन, हटा, हिण्डोरिया, तेंदूखेड़ा।
दमोह, पथरिया, बीना, ढाना, हुआ युद्ध जहाँ जा छेड़ा।।
छतरपुर, पन्ना, पटेरा जाके, गोरों को था मार खदेड़ा।
हुआ संकटमय पथ गोरों का, बखतबली से पड़ा था भेड़ा।।

धौरीसागर, मुरार, ग्वालियर, झाँसी, दतिया और बानपुर।
तालवेहट, नाराहट, मदनपुर, महरौनी फिर बड़े ललितपुर।।
टीकमगढ़, मसौरा, पृथ्वीपुर, मोहनगढ़, मवई, खरगापुर।
ऐरन, ऐरच, कौंच, कालपी, जा गोरों से लड़े बहादुर।।

राहतगढ़, खुरई, नरयावली, खिमलासा औ खनियाधाना।
नरसिंहपुर, जबलपुर, बरघी, फिर रहली वीर बढ़े नाना।।
बल्देवगढ़, बिजावर, गढ़ाकोटा, पाटन, गैसाबाद, अभाना।
टड़ा, केसली, गौरझामर, शाहगढ़, आदि पर जय पाना।।

बखतबली ने दौड़-दौड़कर, अंग्रेजों से युद्ध किया।
सभी जगह पर मार-काटकर, गोरों का बदहाल किया।।
बुँदेली वीरों ने मिलकर, गोरों को नक्कार दिया।
बखतबली ने अँग्रेजों की, बुरी तरह धिक्कार किया।।

बोले बखतबली दहाड़कर, सदियों से हैं हम रण रंगी।
नहीं करेंगे सहन ज्यादती, अत्याचारी व शोषण तंगी।।
जाग उठे सब वीर बहादुर, भारत छोड़ो छली फिरंगी।
हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख एक हम, चकित हुए अरि देख दमंगी।।

-इंदिरा प्रियदर्शिनी वार्ड, तिवारी मुहल्ला, शाहगढ़ जिला सागर म०प्र० ॥

बुन्देली लोकगीतों में नारी की मानसिकता

-मनमोहन पाण्डेय

बुन्देली लोक गीतों में पति-पत्नि के पारस्परिक संबंधों के चित्र दर्पण की तरह सजीव होते हैं। पत्नी को तिलरिया (तीन लर का गहना जो सोने का होता है और गले में पहना जाता है) पहनने की ललक है किन्तु उसका पति कहता है कि तुम्हारा रंग साँवला है तुम्हें तिलरिया अच्छा नहीं लगेगा, अपने रूप की निन्दा सुनकर पत्नी रूठ जाती है गर्भवती पत्नी के कुछ दिन बाद पुत्र का जन्म होता है तब उसका पति तिलरिया बनवाकर लाता है काफी मान-मनौवल के बाद पत्नी मान जाती है और अपने पति को मना लेती है। यथा-

सोहर- *राजा जी पोंडे सिजरिया धना समझावइ हो-*
राजा हमखाँ तिलरिया कौ सौक तिलर गड़वाय दईयो हो
चन्दा बरन मुख साँवरे...३
हो रानी चंदा वरन मुख साँवरे, तिलर तुमे न सोहे हो।
इतनी सुनतन धनियाँ अटरिया चड़ गई...३
हो उनने हन लये बजुर किवार, साँकर उन दै लई हो

पति सुनार से जाकर कहता है-

राजा हाट लौ पौंचे, बजरिया लौ पोंचे...२
हो सोनी सोने तिलरिया गड़इयो, धना मोरी मचली...२ हो...
एक हाँत लीनी तिलरिया, दूजे हाँत बिरिया तौ...२
धना खोल दइयो बजर किबार, तिलरिया तुमे लाये...२

पत्नी का पति को उत्तर-

तिलरी तौ पैरे तुमरी माई, बैन बिरियाँ चावै...२ हो...
हमरे चंदा वरन मुख साँवरे, तिलर हमें न सोहे...२ हो...

पति का नाराज होकर पत्नी को उत्तर देना-

नाँय फैंकी तिलरी, माँय फैंकी बिरियाँ...२ हो...
देव मोरे हाँतन हतयार इतै न रैबी,
मुलक कड़ जैबी, देस कड़ जैवी हो...

बेटा की नाराजी दूर करने को माँ कहती है-

अरे अरे मोरे बेटा, तुमई मोरे पूता...२ हो..
ऐसे कीने हैं बोले बोल, मुलक कड़ जैहौ देस कड़ जैहो...२

पुत्र कथन माँ से-

ऐरी मोरी मताई ओ मोरी मताई ओ मोरी मताई...हो
तुमरी बउआ ने बोले ऐसे बोल, देस कड़ जैवी...२

माता ने बहू से कहा-

अरी अरी बाप की लड़लिया मताई की हुड़लिया...२
मोरे बेटा चले हैं परदेस तुमाओ का करबी...२
इतने की सुनतन धनियाँ तौ उतरी, महलिया तौ उतरी...२
उनने पकरे अँगौछी के छोर..
राजा मनाय लये, राजा मनाय लये...२

हमाये बुन्देलखण्ड में ऐसे सीधे सादे परिवार होत्ते जिनमें कपट नहीं होता और पति-पत्नी एक दूसरे खों जान सें जादा चाउत्ते। एक अन्य दृश्य में सावन में भाई बहिन को लिवा कर घर आता है तो भाभी रुष्ट होकर किवाड़ बन्द कर लेती है ननद गिगयाती है पर उसके ऊपर कोई असर नहीं होता। उक्त भाव का 'राछरौ' देखिये-

आउत देखे ननदिया के डोला अरी डोला सो
हन लये बजर किवार, सुनियौ नन्द भुजाई कौ राछुरौ
नंद- खोलो खोलो रानी भौजी बजर किवारिया। किवरियाँ सो
माई भेंट घर जाँव, सुनियो नंद भुजाई कौ राछुरौ
भौजाई- माइ तों तुमारी बिन्नू बैठी गाँव में,
गाँव में से उतई भेंट कर जाव।
खोलो रानी भौजी बजर किवारे किवारे सो
बाबुल भेंट घर जाव।
बाबुल तौ तुमरे बइया बैठे अथइया, अथइया
सो उतई भेंट घर जाव।
खोलो रानी भौजी बजर किवारे किवारे सो
वीरन भेंट घर जाव।
भइया तौ बिन्नू तुमरे घुड़ला कुँदावें कुँदावे
सो उतई भेंट चली जाव। सुनियौ नंद भुजाई कौ बाछरौ

***

परिवार में प्रसूता जब पुत्र को जन्म देती है तो उसकी दृष्टि में पति के लिये अत्याधिक सम्मान का भाव उत्पन्न हो जाता है। पत्नी की नजर ही नहीं, संपूर्ण परिवार में उस पुरुष का सम्मान बढ़ जाता है जिसकी पत्नी ने पुत्र रत्न को जन्म दिया है। पति परदेश जाना चाहता है तो पत्नी मनाती है-

सोहर- *हँस हँस पैरीं पनइयाँ हँसई हँस निग चले महाराज*
चारा मईना के जाड़े तौ जाड़े धना को सए महाराज
तुम राजा ओढ़ो रजइयाँ तौ, जाड़े राजा हम सऐं महाराज
चारा मईना की गरमी तौ गरमी धना को सए महाराज
तुम राजा हालौ बिजनिया तौ गरमी राजा हम सऐं महाराज
चारा मईना की बरसा तौ बरसा धना को सए महाराज
तुम राजा रइयौ महलिया तौ बरखा राजा हम सऐं महाराज

सावन का महीना है ऐसी अवस्था में नव परणीता पत्नी का पति परदेश चला गया है अब बरसा की सुन्दर रितु उसे अच्छी नहीं लगती वह समाचार भेजती है। इस गीत को महिलायें भादों की तीज को गाती हैं। इस लोकगीत का नाम माँदी है-

काना सें मांदी चली सौदागर लाल
काना धरी बिकाय माँदी राचनूँ मोरे लाल
अगगम सें माँदी चली सौदागर लाल
पच्छम धरी है बिकाय माँदी राचनू मोरे लाल
सासो नें मुलयाइ है सौदागर लाल
ससरा चुकाये चोखे दाम माँदी राचनूं मोरे लाल
सिल लुड़ियन बटवाइ है सौदागर लाल
कचुलन लई पुछाँय माँदी राचनूं मोरे लाल

देवरा रचाई दोइ छिंगुरी सौदागर लाल
भाभी रचाये दोइ हाँत माँदी राचनू मोरे लाल
देवरा बताई माई बैनखाँ सौदागर लाल
हम किये बताँय दोई हाँत माँदी राचनू मोरे लाल
लिख लिख पतियाँ भेजियौ सौदागर मोरे लाल
माई मरी घर आव माँ की राचनू मोरे लाल
माई मरी मर जाने दो सौदागर मोरे लाल
घर कौ किलकिल जाय माँदी राचनू मोरे लाल
लिख लिख पतियाँ भेजियौ सौदागर लाल
भाभी मरी घर आव माँदी राचनू मोरे लाल
भाभी मरी मर जान दो सौदागर लाल
घर कौ हींसा जाय माँदी राचनूँ मोरे लाल
लिख लिख पतियाँ भेजियो सौदागर मोरे लाल
बैन मरी घर आव माँ की राचनू मोरे लाल
बैन मरी मर जाने दो सौदागर मोरे लाल
आये सजन फिर जाँय माँदी राचनूँ मोरे लाल
पत्नी- लिख लिख पतियाँ भेजियौ सौदागर लाल
धना मरी घर आव माँदी राचनूँ मोरे लाल
पति- धना मरी मर जाने दो सौदागर लाल
लरका भए बरबाद माँदी राचनूँ मोरे लाल

हर प्रकार का दुख-पूर्ण(झूठा) समाचार भिजवाने पर भी उसका निष्ठुर पति घर नहीं आया बेचारी मँहदी रचाये उसके मिलन की आशा में दिन काटती रही।

पुत्र जन्मोत्सव के समय गाये जाने वाले निम्नलिखित सोहर में प्रसूता को पिलाया जाने वाला कड़वा (चिरपरा) पेय (काढ़ा) को प्रसूता मना करती है घर परिवार के सभी सदस्य काढ़ा पीने को कहते हैं पर वह इन्कार करती रहती है ऐसे में पति की धमकी पर गटागट पी जाती है-

सोहर- अँगना में बैदई सोंठियाँ, घिनौचन पीपरी महाराज
सिल लोडन बटवाई, कचुरलन धर लई महाराज
अँगना में ठाड़े ससुर जू बहू खाँ सम्जा रहे महाराज
पीलो बहू नौने नौने काड़ो ललन तुमरे दुदु पियें महाराज

अंत में सास-जिठानी-देवरानी-देवर सभी मना-मनाकर हार गये तब प्रसूता के पति ने नाराज होकर कहा-

काटौ दारी भुतनी के कान जौ काड़ौ न पिये महाराज
राजा की सुनतन बात गटागट पी गई महाराज

प्रेम विवश राधा-श्याम से मिलने को पानी भरने का बहाना करती है इस आशय का दादरा भादों की तीजा को महिलायें गाती हैं-

(१) नेहा तोरी मारी राधा पनियाँ को जायै रे
सकरी है कुइया पतरझर पानी
गगरी ना डूबै राधा ठांड़ी पसतायै रे
घर उनके दूर गगर सिर भारी
पतरी सी कम्मर राधा लफ-लफ जायै रे

श्री कृष्ण ने आँगन में बैठी राधा को सैन (कटाक्ष) मारा जो उनके हृदय में चुभ गया-

नारी में ना जाने बैदा बड़ौ है अनारी रे
बैठी ती आँगन में अपने ओढ़े पचरंग सारी रे
देख सखी ऊ नंदलाला ने नैंनन सैना मारी रे
दवादारू कछु काम न आवै ओखद हो रई भारी रे
जाव वैद वीरन धर अपने मोखाँ पीरा भारी रे

उपर्युक्त लोकगीतों से बुन्देलखण्ड की नारियों की सूझ बूझ, हाव-भाव, प्रेम की व्यथा प्रकट होती है।

-मऊ चुंगी नाका, टीकमगढ़ म०प्र० 卐

श्रृंगारिक चौकड़ियाँ

-डॉ.अवध किशोर जड़िया

देहिया की दुति दिपत दिया सी, भरी नई नदिया सी।
प्रीतम कौ रस चाहत कोरी, माटी की मलिया सी।
छलिया सी छल लेत हियो फिर पलट जात पलिया सी।
कहत 'किशोर' पियासी प्रिय की मेंहदीली गदिया सी।

सबरी चतुरई कारीगर की, भई इनइँ के घर की।
अँग-अँग में अंगूरी भर दई, जगा न कोंनउँ बरकी।
गोरी देह गाँठ हरदी की, कै डिरिया ईंगुर की।
'कवि किशोर' अँग-अँग में किलकत सुगरइ सधी सुगर की।

रूपसि ऐंड़ाईं जा भरईं, कलित कला सी करईं।
दोउ भुज मूल उठा कें ऊपर, अँगुरिन अँगुरि मरुरईं।
खुल गये बंद, बंद खुल गये, छवि खुल खेल उघरईं।
कवि किशोर ताकत वारन कीं तकि तकदीर सुधरईं।

सपरत में कँप रई सलौनी, जें कपास की पौनी।
कंपत में संपत ना सँवरी, भइ पूरे की पौनी।
अँग-अँग कपत दिपत दूनी दुति, लफत लरम क[illegible]नी।
कहत 'किशोर' अलौनी नौनी बिन गौने गजगौनी।।

अपने नैंना तनक सँवारौ, करत उंचम अतकारौ।
विदत छिदत घायल कर डारत अपयश भरो पसारौ।
संयम सिंधु डगत लखि इनकौ निष्ठुर नजर नजारौ।
खुद कारे फिर भूषण काजर, मन न होय क्यौं कारौ।

ऐसी नये नैंनन की हेरन, करतब करत अहेरन।
जैसइ कत रत बैसइ कतरत घायल करे करेजन।
वेर न लगत निवेरत में सोउ, ऐसौ हाँकत वे रन।
कवि किशोर से जन लखि लखि कें सब चाहत है सेजन।।

-हरिहर मार्ग, हरपालपुर जिला छतरपुर म०प्र० 卐

बुन्देलखण्ड में कृष्ण काव्य धारा का विकास

-डॉ.(श्रीमती) पुष्पा दुबे, डॉ.(श्रीमती) प्रमोद पाठक

बुन्देलखण्ड में कृष्ण भक्ति का विकास प्राचीन काल से हुआ। महाभारत काल में बुन्देलखण्ड को चेदि और दशार्ण जनपदों के नाम से जाना जाता था। चेदिराजा यदुवंशी थे। किन्तु वहाँ कृष्ण पूजा का निषेध था। बुन्देलखण्ड में कृष्ण के प्रति भक्ति भावना शिशुपाल वध के बाद आई होगी, क्योंकि चेदि नरेश शिशु पाल कृष्ण का कट्टर विरोधी थी। भगवत धर्म का उत्थान यहाँ युगकाल में ईसापूर्व दूसरी शती से हो चुका था। बुन्देलखण्ड में गुप्तकाल काल से धर्म के प्रचार प्रसार के साक्ष्य मिलते हैं।

हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रंथों में कृष्ण पूजा के संबंध में कोई स्पष्ट सामग्री प्राप्त नहीं होती। उत्तर भारत में वैष्णव भक्ति का पुनरुत्थान १४वीं १५वीं शती में हुआ और दक्षिण में मेवाड़ और मारवाड़ से होती है भागवत धर्म का आधार लेकर कृष्ण भक्ति की नवीनधारा बुन्देलखण्ड में पहुँची। सबसे पहले उसका प्रभाव ग्वालियर में पड़ा और उसके बाद ओरछा तथा पन्ना राज्यों में हुआ। ग्वालियर में कृष्ण भक्ति के दो कारण हो सकते हैं। एक तो यह कि कृष्ण भक्ति की केन्द्र भूमि, मथुरा, वृन्दावन और गोकुल हैं, और ये ग्वालियर के निकट पड़ते हैं। दूसरा यह कि बुन्देलखण्ड में ग्वालियर राज्य ही ऐसा था जहाँ संस्कृति कला और भक्ति को संरक्षण मिला था।

तोमरों के पतन के बाद ओरछा बुन्देली संस्कृति का केन्द्र बना। ओरछा नरेश मधुकरशाह कट्टर वैष्णव थे और नृसिंह देव के उपासक थे, परन्तु बाद में वे कृष्ण के उपासक बने। वीरसिंह देव ने संवत् १६७१ (१६१४ ई०) में ब्रज की यात्रा की थी। और १६१८ ई० कृष्ण जन्म के स्थान पर केशव राम जी के मंदिर का निर्माण करवाया था। प्रणामी सम्प्रदाय के प्रवर्तक स्वामी प्राणनाथ ने महाराज छत्रसाल के समय में अपने धर्म का प्रसार करते हुए कृष्ण की रासलीला को सबसे अधिक महत्व दिया था।

छत्रसाल के समय में कृष्ण भक्ति बुन्देलखण्ड की संस्कृति और जीवन का आधार बन गई थी। छत्रसाल स्वयं कृष्ण भक्ति में तन्मय रहते थे। ओरछा के राजमहल, लक्ष्मीनारायण मंदिर आदि के भित्तियों में ग्रहीत प्रमुख विषय वस्तु के रूप में कृष्ण लीलायें इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। इस प्रकार बुन्देलखण्ड में कृष्ण भक्ति भावना के उद्भव विकास और उत्कर्ष की कथा कृष्ण काव्य धारा के समानांतर चली है। अत: बुन्देलखण्ड में इस परम्परा उद्भव १२वीं १३वीं शती माना जाना उचित होगा। यदि इस परम्परा को न भी माना जाये तब भी विष्णुदास (रचनाकाल १४३५ ई०) विद्यापति (१३६०-१४४८ ई०) के समकालीन ठहरते हैं इस आधार पर इस परम्परा का प्रारंभ १४३५ से होता है।

बुन्देलखण्ड का अधिकांश काव्य साम्प्रदायिकता से दूर रहा है। बुन्देलखण्ड में १४-१५वीं शती तक रामकृष्ण की भक्ति में साम्प्रदायिक भावना नहीं थी। दूसरी बात यह कि यहाँ की कृष्ण काव्यधारा में पहले कृष्ण का ऐश्वर्यपरक रूप अधिक आया, बाद में माधुर्यपरक रूप आया। तीसरी बात यह कि बुन्देलखण्ड में कृष्ण काल के उद्भव काल में ही संगीत के उत्कर्ष तथा लोकप्रियता के कारण रागबद्ध पदों की सृष्टि हुई और उसी का प्रभाव सूरदास पर पड़ा जिससे गीतिकाव्य की एक धारा संगीतमय हो उठी। लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं कि कृष्ण प्रबंध काव्य की परम्परा बाद की है। उसका श्री गणेश तो विष्णुदास की कृतियों रुक्मिणी मंगल और स्वर्गारोहण कथा में १४३५ ई० से हो गया था। बुन्देलखण्ड में कृष्ण विषयक अनेक प्रबंध लिखे गये जिससे यहाँ के कृष्ण काव्य का अलग ही महत्व है।

कृष्ण काव्य धारा के प्रमुख कवि-

1. **विष्णु दास**- प्रमाणों के आधार पर डॉ.शिवप्रसाद सिंह और डॉ. गणपति चंद्र गुप्त ने कवि को कृष्ण काव्य एवं पौराणिक प्रबंध काव्य परम्परा का अग्रणी ठहराया है। विष्णुदास का जन्म ग्वालियर में हुआ था। उनके गुरु सुन्दरनाथ थे। वे नाथपंथी थे किन्तु उनका सरल मन राम और कृष्ण की भक्ति में लगा। उन्होंने तोमर राजा के आग्रह पर महाभारत की रचना की। कृष्ण भक्ति विषयक उनकी कृतियाँ हैं-महाभारत कथा, स्वर्गारोहण पर्व, रुक्मिणी लीला और सनेह लीला है। इनके अतिरिक्त कुछ स्फुट पद भी प्राप्त हुए हैं।

महाभारत कथा पांडवों का चरित काव्य है इसमें २५११ छंद हैं। स्वर्गारोहण और स्वार्गारोहण पर्व लगभग एक ही ग्रंथ है, जिनमें पाण्डवों के स्वार्गारोहण की कथा का वर्णन है।

रुक्मिणी मंगल में रुक्मिणी और कृष्ण के विवाह की कथा है जो दोहों एवं छंदों में वर्णित है। रुक्मिणी की मन: स्थिति का वर्णन दृष्टव्य है-

कहा करुँ कैसे लिखूँ, नैन लिखन नहिं देत।
बरसत जिमि सावन घटा, नैक चैन नहिं लेत।।

भक्ति और श्रृंगार का इस कृति में अनोखा समन्वय है। स्नेहलीला को कुछ विद्वान इनकी रचना नहीं मानते। विष्णुदास ने बुन्देली को साहित्यिक रूप प्रदान किया वही बुन्देलखण्ड में कृष्ण भक्ति का काव्य प्रस्तुत किया।

2. **मानसिंह तोमर**- ग्वालियर नरेश मानसिंह तोमर ने संगीत के प्रसिद्ध ग्रंथ 'मान कौतुहल' की रचना की। उन्होंने संगीत की गायन शैली ध्रुपद का अविष्कार किया। मानसिंह ने बैजू बख्शू जैसे श्रेष्ट गायकों को आश्रय देकर रागबद्ध काव्य के विकास में महत्वपूर्ण सहयोग किया।

3. **बैजनाथ मिश्र**-मानसिंह के दरबारी गायक थे जो बैजू बावरा के नाम से विख्यात हुए। बैजू के सहयोग से ध्रुपद गायन शैली का अविष्कार हुआ। होरी गायन शैली में उन्हें निपुणता प्राप्त थी।

इसी समय बख्शू नायक ने अनेक पदों की रचना की उसमें काव्यात्मकता की अपेक्षा संगीतात्मकता की प्रधानता है।

4. **तानसेन**-तानसेन का नाम संगीत से जुड़ा। उन्होंने भक्तिपरक पदों में निराकार और साकार भक्ति को महत्व दिया।

ग्वालियर में संगीत विकास के साथ सम्प्रदाय मुक्त स्वच्छंद रागबद्ध पदकाव्य काव्य धारा उत्कर्ष पर पहुँची। इस प्रकार सूरदास के पूर्व मध्य देशीय हिन्दी गीतिकाव्य का विकास

ग्वालियरी संगीतधारा से हुआ।

कृष्ण काव्य धारा का उत्कर्षकाल-कृष्ण काव्य धारा का उत्कर्ष मध्ययुग में हुआ यह धारा मुख्यतः सम्प्रदाय बद्ध कृष्ण काव्य धारा और सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य धारा के रूप में विकसित हुई। यह उत्कर्ष अनेक रूपों में देखने को मिलता है।

सम्प्रदाय की दृष्टि से कृष्ण काव्यधारा का वर्गीकरण-

1. सम्प्रदाय बद्ध कृष्ण काव्य-बल्लभ सम्प्रदाय, राधा बल्लभी सम्प्रदाय, सखी सम्प्रदाय, गौड़ीय सम्प्रदाय तथा अन्य सम्प्रदाय।

2. सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य-रागबद्ध पद काव्य, छन्द वद्ध काव्य नखशिख काव्य परम्परा, बारहमासी काव्य परम्परा, लीलापरक चरित काव्य मंगल परक काव्य और कथा परक प्रबंध काव्य।

सम्प्रदाय बद्ध कृष्णकाव्य धारा-१६वीं शती से महाप्रभु बल्लभाचार्य के वृन्दावन आगमन से इस काव्य धारा का प्रसार होता है। गोस्वामी विट्ठलनाथ के प्रभाव व प्रयास से गोविन्द स्वामी बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित हुए थे। डॉ.हरिहर निवास द्विवेदी ने गोविन्द स्वामी के ओरछा जाने का उल्लेख किया है। इनके समय १५७७ और १५९१ के मध्य अनुमानित किया। बुन्देलखण्ड में राधा बल्लभ और सखी सम्प्रदाय का प्रभाव अधिक रहा।

बल्लभ सम्प्रदाय-सबसे पहले वृंदावन में बल्लभ सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा हुई। बुन्देलखण्ड में इस सम्प्रदाय का प्रसार विट्ठलनाथ के प्रभाव से हुआ। राजा आसकरन कछवाहा ने कृष्ण भक्ति स्वीकार की। किन्तु बल्लभ सम्प्रदाय ग्वालियर से आगे न बढ़ सका।

गोविन्द स्वामी अष्ट छाप के कवियों में से एक थे ये बुन्देलखण्ड के निकट १४-१५ मील दूर आंतरी ग्राम के थे। इन्होंने सख्यभाव से भक्ति का कोई प्रामाणिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं है। डॉ. दीनदयाल गुप्त ने गोबिन्द स्वामी के २५२ पद प्रामाणिक पद सिद्ध किये हैं। गोबिन्द स्वामी रसरूप के उपासक थे। उनके रागबद्ध पदों का विषय राधाकृष्ण और रास लीलायें हैं।

आसकरन-आसकरन ने रागबद्ध शैली में दो सौ वैष्णव की वार्ता 'संगीत राग कल्पद्रुम' में कृष्ण के बालरूप की लीलाओं का चित्रण किया है।

राधाबल्लभ सम्प्रदाय-राधा बल्लभ सम्प्रदाय के यहाँ दो केन्द्र बने ओछा और गढ़ा (गोंडवाने का प्रमुख केन्द्र)ओरछा के प्रमुख कवि थे श्री हरिराम व्यास और गढ़ा के दामोदर दास सेवक/कर्मकांडों के निषेध के कारण यह भक्ति यहाँ अधिक लोकप्रिय हुई। इस सम्प्रदाय से सम्बद्ध काव्य बुन्देलखण्ड में ईसा की सोलहवीं शती के पूर्वार्द्ध लगभग १५५० ई० से प्रारंभ होकर १८वीं शती तक मिलता है। १६वीं शती के काव्य में भक्ति की प्रधानता है। १८वीं शती में रीतियुग के प्रभाव के कारण श्रृंगारिक भावना अधिक है।

श्री हरिराम व्यास ओरछा नरेश मधुकरशाह के राजगुरु रहे। इनके उलब्ध ग्रंथों में व्यासवाणी, रागमाला और रास पंचाध्यायी हैं। इनका रचनाकाल सं १५९० ठहरता है। व्यास जी ने भक्ति को एकांगिता और सौंदर्यमयता को लोकधर्मी तत्वों से समन्वित किया जिससे वे इस धारा से सर्वश्रेष्ठ कवि सिद्ध होते हैं।

दामोदर दास की रचनाओं को डॉ.विजयेन्द्र स्नातक ने बुन्देली संस्कारों का प्रभाव सिद्ध किया है। अपने ग्रंथ 'सेवक वाणी' में राधा बल्लभीय सिद्धान्तों की विवेचना की है। डॉ. विजयेन्द्र स्नातक ने चतुर्भुज दास और नेही नागरी दास के ग्रंथों का वर्णन किया है।

चन्द्रसखी और प्रियासखी की रचनाओं का वर्णन भी इस धारा की रचनाओं में भजनों के रूप में मिलता है।

सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य धारा-बुन्देलखण्ड में सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य का प्रवर्तन विष्णुदास से प्रारंभ होता है। १९वीं शती तक इसका प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्यधारा पर ग्वालियर के राग रागनियों का प्रभाव पड़ा। साम्प्रदायिक सिद्धांतों के कारण जो संकीर्णता की मनोवृत्ति फैल गई थी, सम्प्रदाय मुक्त कृष्ण काव्य धारा ने उस मनोवृत्ति के स्थान पर विविध आयाम दिये। साहित्यिक दृष्टि से प्रमुख होने के कारण इस धारा के विकास को तीन वर्गों में रखा जा सकता है-

1. **मुक्तक काव्यधारा**-विष्णुदास के बाद रागबद्ध पदों का विकास ग्वालियर नरेश मानसिंह तोमर के राज्य काल में हुआ। रागबद्ध पदों की यह धारा सूरपूर्व काव्य की एक विशिष्ट प्रवृत्ति है। मानकुतूहल से पता चलता है कि मानसिंह ने संगीत को शास्त्रीय रुढ़ियों से मुक्त कर नवीन स्वच्छंद देशी संगीत की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

छंद बद्ध मुक्तक काव्य का प्रारंभ राधाकृष्ण की लीलाओं से संबंधित मिलती है। छत्रसाल, हिम्मतदास, सुखलाल, हरिदास आदि इस परम्परा के कवि हैं।

नखशिख काव्य परम्परा प्रबंध और मुक्तक दोनों रूपों में मिलती है। बलभद्र मिश्र, रसरूप, गिरधर, दामोदर तैलंग, वृन्दावन चंद्र, राधाचरन कायस्थ इस परम्परा के कवि हैं।

1. **प्रबंध काव्य परम्परा**-इसके अंतर्गत बारहमासी काव्य सधा-गोपी विरह रहा इन काव्यों में राधागोपी विरह सामान्य लौकिक नारियों की तरह वर्णित है। कहीं इस विरह की परिणति मिलन में होती है तो कहीं विरह ही बना रहता है।

सम्प्रदाय मुक्त प्रबंधों में लीला काव्य प्रचलित है ये चरित काव्य एवं मंगलकाव्य दो रूपों में मिलते हैं। चरित काव्य परम्परा और मंगलकाव्य परम्परा इस परम्परा की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। लोकगीतों का विकास इस भावभूमि में खूब हुआ।

3. **कथा परक प्रबंध काव्य परम्परा**-इन प्रबंधों का प्राण कथा रस है। इसके प्रवर्तक विष्णुदास थे। इस धारा में तीन प्रकार के प्रबंध रचे गये-

1. कृष्णायन परम्परा, 2. कृष्ण चन्द्रिका परम्परा
3. अन्य कथा परक प्रबंध ग्रंथ।

कृष्ण काव्य की रसिक परम्परा-बुंदेलखण्ड में सखी भाव का प्रसार हरिराम व्यास के उपरान्त हुआ था। व्यास जी ने अपने निधन के पूर्व अपने तृतीय पुत्र किशोरी दास को स्वामी हरिदास से उनके सम्प्रदाय में दीक्षित कराया था। भगवत रसिक ने इसकी सैद्धान्तिक प्रतिष्ठा की। बुन्देलखण्ड में इनका काफी प्रभाव रहा। स्वामी रसिकदास रसिक देव (१६३४ से ललित मोहिनीदास (१७५०-१८०१ ई०) भगवत रसिक (१७६० ई०) बख्शी हंस राज (१७३-५४ ई०) बिहारी बल्लभ (१७८५ ई०) आदि इस परम्परा के प्रमुख कवि हैं। इन्होंने कृष्ण के लीला प्रसंगो का रसात्मक वर्णन किया है।

-नरसिंहगढ़ पुरवा, छतरपुर म०प्र० 卐

बुन्देलखण्ड की लुप्तप्राय बालक्रीडाएं

-कु०रामकिशोरी गुप्ता

जीवन में खेलों का शारीरिक एवं बौद्धिक क्षमताओं के विकास तथा मनोरंजन की दृष्टि से बहुत महत्व है। नौरता, मामुलिया आदि खेलों से बालिकाओं में कलात्मक रुचि का विकास भी होता है। हमारे लोक जीवन में शिशुओं से लेकर बड़े-बूढ़ों तक खेलों का प्रचलन था। जैसे-कौड़ी केरे कौड़ी के, थाई-थाई थपरी, अटकन-चटकन, आलो बालो खेल शिशुओं के लिए-अण्डा-डावली, ओद बोद, कबड्डी युवकों के लिए चगला अंटा और पड़ा छिकऊअल जैसे बड़े बूढ़ों के खेल थे। गेंद का खेल तो प्राचीन है श्री कृष्ण के युग से ही इसका संदर्भ मिलता है।

लड़कियों के खेलों में मामुलिया, छोटी कन्याओं के लिए नौरता, झुलमा आदि। किशोरियों के लिए छक्का-चपेटा का खेल तो बच्चियों से लेकर प्रौढ़ महिलाएँ तक सावन के महीने में खेलती हैं। प्रायः इन खेलों में किन्हीं उपकरणों या कीमती साधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती थी। इन खेलों की विशेषता यह थी कि किसी के मन में यह हीन भावना पैदा न हो कि मेरे पास खेलने की अमुक वस्तु नहीं है। पुतरियाँ, गेंद, रंग आदि बच्चे अपने हाथों से और स्थानीय साधनों से बना लेते थे।

इन लोक प्रचलित खेलों में से गाँवों में अभी भी थोड़े बहुत बाकी हैं, किन्तु वह भी तेजी से समाप्त होते जा रहे हैं। शिशुओं के खेलों का प्रारंभ लय-ताल के साथ गाये जाने वाले गीतों से होता है। इसमें यह आवश्यक नहीं कि गीत अर्थ पूर्ण ही हो, आवश्यक है गीत में लय का होना। ऐसे गीतों में तुकबन्दी तथा लय होती है। ये खेल छोटे-छोटे बच्चों को बहुत भाते हैं। गीत भरे इन खेलों का तो आनंद ही अनूठा है ऐसे गीतों में बच्चों का स्वस्थ मनोरंजन के साथ ही संगीत और कला के प्रति उनकी रुचि का विकास भी होता है। खेलों में शरीर के विभिन्न अंगों के संचालन से उनमें क्रिया शीलता की वृद्धि होती है। जो शारीरिक विकास में सहायक है। दुर्भाग्य कि इन पारम्परिक खेलों के प्रति हमारी मानसिक रुचि दूर होती जा रही है। बच्चों के कुछ लुप्त प्राय गीतमय खेलों का विवरण निम्नानुसार है-

कौड़ी केरे कौड़ी के-इस खेल को खिलाने वाला वयस्क जमीन अथवा पलंग पर चित्त लेट जाता है और अपने दोनों पैरों को सटाकर घुटनों को मोड़कर पैर के पंजों को ऊपर की ओर उठाकर उन पर शिशु को बैठा लेता है। शिशु मुड़े हुए घुटनों को कसकर पकड़ लेता है। खिलाने वाला वयस्क भी बच्चे के दोनों हाथों को अपने हाथों से पकड़े रहता है। अब गीत प्रारंभ होता है-

कौड़ी केरे कौड़ी के, भैया पाँच पसेरी के,
उड़ गए तीतुर बस गए मोर, सरी डुकरिया ले गये चोर,
चोरन के घर खेती भई, वा डुकरिया मोटी भई,
मन-मन पीसे, मन-मन खाय, बड़े गुरु सें जूझन जाये,
जूझ-जूझ सें छपन पुरी, उते से निकरी मदनपुरी,
मदनपुरी सें आये वीर, सौ-सौ करया बाँधे तीर,
एक तीर मैंने माँगो तो, दिल्ली जाय पुकारो तो,
कारे हैं करयान सा, गोरे सें गुरयान सा,
भैंस को सींग पोलो है, पाताल पानी डोलो है,
राजा को कुँवर ब्याहन जात है,
कोउ छींकियों न, कोउ पादियो न,
छींके तो नक्कू कटे, पादे तो पुन्दू कटे,
डिग डिग डोला डिग डिग डोला।...

गीत चलता रहता है और खिलाने वाला अपने पैरों को धीरे-धीरे ऊपर नीचे की ओर हिलाकर शिशु को झुलाता जाता है। गीत की अन्तिम पंक्ति के समय वह अपने पैरों को ऊपर की तरफ उठाकर जल्दी-जल्दी शिश को झुलाता है। शिशु भी आनंदित हो उठता है तथा बार-बार इस खेल को दुहराने का सांकेतिक आग्रह करता रहता है।

थाई थाई थपरी-खेल खिलाने वाला बच्चे के एक हाथ के पंजे की सभी अंगुलियों को अपने बाँये हाथ से पकड़ लेता है तथा दाँये हाथ की अंगुलियों से बच्चे की हथेली को थपथपाते हुए गीत गाता जाता है-

थाई-थाई थपरी, गैया ब्यानी कबरी,
बच्छा भयो सेत, नाम धरो गनेस।

गीत समाप्त होने पर पकड़े हुए पंजे की एक-एक अंगुली को क्रमशः पकड़ता जाता है और कहता है जा बब्बा की, जा बऊ की, जा कक्का की, जा काकी की। अन्त में अंगूठा को पकड़कर उसे फिरकी की तरह घुमाते हुए कहता है-

ऊँठा चोर मचोर डुकरिया डूडा बैल आव,
डुकरिया बासन भाँड़े उठा डुकरिया।

इन पंक्तियों को कहते हुए खिलाने वाला अपनी अंगुलियों को बच्चे की हथेली से कनखी (काँखरी) तक धीरे-धीरे चलाते हुए ले जाता है। जब अंगुली कनखी में पहुँचती है तो वह बच्चे को धीरे गुदगुदाता है जिससे बच्चा खिल खिलाकर हँसने लगता है। इस खेल से रोते हुए बच्चे चुप हो जाते हैं।

अटकन-चटकन-खिलाने वाला बच्चों को अपने सामने अर्द्ध चंद्रकार रूप में बैठा लेता है और बच्चों से अपनी-अपनी दोनों हथेलियों को जमीन पर रखने को कहता है, फिर इन हथलियों को अँगुलियों के सहारे ऊपर उठाने (खड़ा करने) को कहता है। इस प्रकार का जो आकार बनता है उसे घुल्ला कहा जाता है। खिलाने वाला निम्न गीत गाते हुए अपने हाथ की अंगुली एक-एक कर सभी घुल्लों पर रखता जाता है-

अटकन-चटकन, दही चटाकन, बाग फूले बगिया फूली,
बारा मास करेला फूले, फूल-फूल बंजारी के,
बाबा कैसी बारी के, बाबा ले आव रे-झावरे,
एक कटोरी फूट गई, ता पै बऊ रुठ गई,
बऊ कें भयो लरका, बिछा दो रानी पलका।

गीत का अंतिम शब्द आने पर अंगुली जिस घुल्ला पर होती है

उससे प्रश्न किया जाता है-**जौ घुल्ला काँसे आव?** बालक उत्तर देता है यह घुल्ला अमुक स्थान से आव। वह फिर प्रश्न पूँछता है **काय के लानें आव?** बच्चा उत्तर देता है, पानी पीवे खों आव। खिलाने वाला कहता है-**हम पानी नइँ पिआउत।** बच्चा फिर उत्तर देता है-पानी नइँ पिआव तौ हम कुत्ता उलछारें। खिलाने वाला बच्चे के घुल्ला नुमा पंजे को धीरे से जमीन पर दबा देता है और कहता है **बैठ घुल्ला पानी पी।** बालक अपना यह पंजा खेल में से खींच लेता है। गीत और खेल की यह क्रिया तब तक चलती रहती है जब तक खेल में शामिल होने वाले सभी बच्चों के घुल्ला पानी नहीं पी लेते।

अब शुरु होता है खेल का दूसरा भाग। सभी बच्चे अपने दोनों हाथों की हथेलियाँ अपने-अपने घुटनों पर रख लेते हैं। खिलाने वाला एक-एक बच्चे से पूछता है- **चिंटा लेव कि चिटिया।** यदि बच्चे ने चिटिया कहा तो खिलाने वाला बच्चे के पंजे की ऊपरी त्वचा को अपने हाथ की चुटकी को धीरे से दबाकर पंजे को घुटनों से उठाकर जमीन पर रख देता है। यदि बच्चे के चिंटा करने पर चुटकी को थोड़ा जोर से दबाकर पंजा जमीन पर रखा जाता है। (**चिंटा चिंटी से तात्पर्य है चिंटा का काटना तेज होता वह कभी कभी चिपक भी जाता है। चिंटी धीरे से काटती है।**) सभी बच्चों के पंजे जब जमीन पर आ जाते हैं तब खिलाने वाला अपने एक हाथ के पंजे को बच्चों के पंजों के ऊपर घुमाते हुए लीपने का अभिनय करते गीत गाता है-**लीपा पोती चौतरिया, नजर लगा गई परवतिया।** गीत का अंतिम शब्द परवतिया जिस बच्चे के पंजे पर आता है उससे पूछा जाता है-जा छिटिया काँ फेंकें, तुमाई बगिया में। बच्चा मना करता है फिर पूछा जाता है तो काँ फेंके? बच्चा कहता है **बाबा जू के घूरे पे** और छिटिया फेंकने का अभिनय खिलाने वाले के द्वारा किया जाता है। इससे बच्चों में स्वच्छता के प्रति जागरूकता उत्पन्न होती है। यह क्रिया तब तक चलती है रहती है जब तक कि सभी बच्चों को नम्बर न आ जाये।

अब खेल का तीसरा भाग प्रारंभ होता है। खिलाने वाला अपने हाथों की मुट्ठी बाँध कर एक मुट्ठी को जमीन पर खड़ा करता है। मुट्ठी का अँगूठा ऊपर की तरफ उठा रहता है। दूसरे हाथ की मुट्ठी को अंगूठे में फँसा कर पहली मुट्ठी पर रखा जाता है इस मुट्ठी का अंगूठा भी ऊपर की ओर उठा रहता है। अब सभी बच्चे अपने हाथों की मुट्ठियाँ बाँध-बाँध कर एक कर रखते हैं। आखिरी मुट्ठी का अँगूठा भी ऊपर की ओर खड़ा रहता है। जो सुआ कहलाता है। सभी बच्चे मिलकर कहते हैं- बब्बा-बब्बा तुमाए पेड़ पे सुआ बैठो। खिलाने वाला पूछता है का कर रऔ? बच्चे कहते हैं अमियाँ खा रऔ, खिलाने वाला कहता है भगा दो भैया। बच्चे हरिया के गुफना फेंकने का अभिनय करते हैं। सबसे ऊपर मुट्ठी जिस बालक की होती है वह अपने अंगूठे को मुट्ठी के अन्दर कर लेता है, जिसका अभियन प्राय होता है-हरिया उड़ गया। फिर बच्चे कहते हैं बब्बा तुमाए पेड़ में अमियाँ लगी तोड़ लें। बब्बा कहते हैं एक एक तोड़ लो। बच्चे आम तोड़ने का अभिनय हुए चूसते हुएकहते हैं बब्बा जो तो खट्टी है। बब्बा कहते है तो एक और दूसरी तोड़ लो। पुन: बच्चे दूसरी बार तोड़ने और चूसने का अभिनय करते हुए कहते हैं हमाई तो दोई मीठी ओ हो दोई मीठीं। अब सभी बच्चे अपने अपने हाँथों को खींच लेते हैं।

खेल का चौथा भाग भी तीसरे भाग की तरह बनाया जाता है जिसे इमली का पेड़ कहा जाता है इसे भी तीसरे भाग की भाँति खेला जाता है।

आलो बालो-इसे दो बच्चे खेलते हैं। दोनों बच्चे आमने-सामने बैठकर एक दूसरे के कानों की लौड़ी पकड़ते हैं। दोनों बच्चे एक दूसरे की लोड़ियों को धीरे-धीरे दबाते हुए गाते हैं-

आलो बालो चना चबालो, चौखरियन के कान कटा लो।

हाथी/घोड़ा-खिलाने वाला अपने पैरों के घुटनों को मोड़कर जमीन पर रख लेता है तथा दोनों हाथों के पंजो को जमीन पर रखकर हाथी/घोड़ी बन जाता है। एक बच्चे को अपनी पीठ पर बिठाकर धीरे-धीरे घुटनों तथा पंजों के बल चलता है। सभी बच्चे गाते हैं-हाथी बाबा टंन गनेस, जिसकी पूजा करे महेस। इस तरह सभी बच्चे एक-एक, दो-दो बार हाथी घोड़ा पर बैठकर कहते हैं हम तो हाथी घोड़ा की सवारी करके शहर घूम आये ओ ओ होय होय और आनंदित होते हैं।

कित्तन-कित्तन पानी-इस खेल में सब बच्चे एक दूसरे का हाथ पकड़कर वृत्ताकार में खड़े हो जाते हैं। एक बच्चे को वृत के केन्द्र में खड़ा कर दिया जाता है जो मछली रानी कहलाता है। अब सभी बच्चे घूमते हुए आते हैं कित्तन-कित्तन पानी, बोल मछली रानी। बीच में खड़ा बच्चा अपने पैरों के पंजों पर हाथ रखकर पानी की सतह बताते हुए कहता है-इत्तन-इत्तन पानी, फरुवन ऊपर पानी। इसी क्रम में बच्चे पानी की सतह पूछते हैं और बीच वाला अपने हाथों से ऊपर उठाता हुआ पानी की सतह बढ़ने का संकेत करते हुए कहता है घुटनन ऊपर पानी, करयन ऊपर पानी, छातन ऊपर पानी और अन्त में अपने सर पर हाथ रखकर कहता है-डुब्बन डुब्बन पानी सुन लो-सुन लो रानी। अब मछली बना हुआ बच्चा वृत से बाहर निकलने के लिए कहता है-जेल का ताला तोड़ूँगा। गोलाकार में खड़े बच्चे उत्तर देते हैं ठाड़ा मूसर मारुँगा। यह कथन तब तक चलता रहता है जब तक की मछली बना बच्चा गोलाकर खड़े बच्चों के बीच से बाहर नहीं निकल जाता। थोड़ी देर बाद मछली बने बच्चे को गोलाकार में शामिल कर लिया जाता है। अन्य बच्चा मछली बनकर खेल की पुनरावृत्ति होती है। इस प्रकार सभी बच्चों की मछली रानी बनने का अवसर मिल जाता है।

घोड़ा है दिमान साही-इस खेल में सब बच्चे एक दूसरे के सामने मुँह करके गोलाकार बैठते हैं। इन्हें पीछे की ओर मुड़कर देखना मना होता है। एक बच्चा अपने हाथ में गिदउआ लेकर बच्चों की गोलाकार बैठी टोली के पीछे 'घोड़ा है दिमान साही पीछे देखे मार खाई' गाता हुआ तेजी से चक्कर लगाता है। इसी बीच वह छिपाकर रखे हुए गिदवआ को किसी बच्चे के पीछे इस चतुराई से रख देता है कि उसे इसका पता न चले और वह गिदउआ रखकर चक्कर लगाने के लिए आगे बढ़ जाता है। यदि

इसी बीच उस बच्चे को पता चला गया जिसके पीछे गिदउवा रक्खा है वह उसे उठाकर दौड़ने वाले बच्चे का तेजी से पीछा करता है और उसे तब तक मारता है जब तक कि पहले दौड़ने वाला बच्चा उसके द्वारा खाली किये गये स्थान पर जाकर बैठ नहीं जाता। यदि जिस बच्चे के पीछे गिदउवा रखा गया और उसे इसका पता न चला और चक्कर लगाने वाला बच्चा गिदउवा उठाकर गिदउवा से मारता है वह उठकर दौड़ कर चक्कर लगाकर अपनी जगह पर बैठ जाता है। इसी प्रकार यह खेल में सभी की बारी आती है।

आती-पाती-खिलाने वाला कई पेड़ पौधों की पत्तियाँ तोड़कर अपने पास छुपाकर रख लेता है। बच्चों को सामने अर्द्धचन्द्राकार बैठा लेता है फिर किसी एक पत्ती को हाथ में लेकर बच्चों को दिखाते हुए पूँछता है-आती-पाती बताओ, काय की पाती? बच्चे उस पत्ती को देखते हैं और पहचान कर उसका उत्तर देते हुए कहते हैं। आती पाती जा है अमुक की पाती। इस प्रकार बच्चों से संग्रहीत पत्तियों की पहचान कराई जाती है। इस खेल से बच्चों की वनस्पतियों संबंधी जानकारी में वृद्धि होती है।

पंगोला-दो बच्चे आमने सामने बैठकर अपने दाहिने हाथों से एक दूसरे के बाइँ बाँह कस कर पकड़ लेते हैं फिर अपने बाँये हाथ की कोहनी से मोड़कर दाहिने हाथ की कोहनी को कसकर पकड़ते हैं। इस प्रकार एक दूसरे के हाथों को पकड़ने से एक वर्ग जैसी आकृति बन जाती है इसी पर बच्चे को बैठाकर दोनों एक साथ खड़े हो जाते हैं फिर अपने बंधे हुए हाथों पर एक बच्चे को बैठाकर उसे आगे-पीछे जे लाते हुए झुलाने का उपक्रम करते हैं। साथ ही यह गीत गाते हैं-

डंगा डोली पालकी, जय कन्हैया लाल की।
डंगा डोली बहू बड़ोली, सास को डोला बहू की डोली।

किसी दुर्घटना के समय हाथों से बना यह पंगोला घायल को अन्यत्र ले जाने में सहायक होता है।

बालिकाओं द्वारा खेले जाने वाले खेल मामुलिया, नौरता (सुआटा), छक्का, चपेटा, लंगड़ी, नागन टापू आदि आदि खेल हैं।

-सराय मुहल्ला, पुराना पोस्ट ऑफिस के पास, टीकमगढ़ म०प्र० 卐

बुन्देली लोक-कथा-

गधे की आत्मा

-मणि मुकुल

कओ जात कै सिन्सार की रचना रचबे के बखत सेंई गधा भौतइँ सूदे-सच्चे सुभाव बारौ रओ है। ऊ बखत पै गधा मान-पान पावे बारौ अच्छौ-खासौ जीव जंतुअन में गिनो जात्तो। ईसुर खों अपने दरबार में पुशअन कौ सोई एक प्रतिनिधि रखबो उचित लगो, सो उनन नें ईके लानें गधा खोंई ओहदा दै दओ।

ऊ दिनन में सिन्सार खों ढंग-ढौरे सें चलान काजे भगवान जू उपासना करन बारी रीत-नीत कौ एक ठैया शास्तर रच रये ते। ऊ बखत ऐसौ हतौ कै कगदा तौ चलत नें हतो, सो ऊ बखत पै जौन कछू लिखन पढ़न होत हती, बा पत्तन के उपरेंई होत हती। पोथी के मुतके पन्ना पीपर के पत्तन पै लिख कें एक कुदाँई धरत जात्ते।

एक रात खों जैसई सबई जनन की गैरी नींद लगी सो तबई गधा खों का सूझी कै ई मुलाम पत्तन कौ सुआद चीखो जाय। इत्ती धोकतई ऊ चट्ट सें उठो उर ज्यांय पत्तन कौ ढेर लगो हतो सो उतै चुप्पईचाप जाकें एक एक ठैया पत्ता हरें-हरें चबा कें खान लगो उर ई तराँ सें ऊनें लिखे धरे सबरे बे पत्ता चट कर डारे।

दूसरे दिन भुनसारें जैसई भगवान सोकें उठे उर उनन की निघां ऊ कुदाँई पे गई ज्यांय उन्नें पीपर के पत्तन में सास्तर घोक-घाक कें लिखो धरो तौ उतें उनें कछुअई नें दिखानों। उन्नें जित्तो लिखो हतो जौन पत्तन पै बे सबरे ऊ जगा से हिलबिलान हो गये। अब भैया उतै तौ हो-हल्ला मच गओ। खोज-खबर लई गई कै भला बे पत्ता क्यांय गए, भलाँ जा कारस्तानी आखिर की की आय? इत्ती मेंनत मसक्कत सें सो तौ नीत रचबे कौ काम करो हतो। ऊ सबरी मेंनत पै पानी फिर गओ। सबरो करो धरो मटियामेट हो गओ। खोजबीन लैबे में पतो परो कै जौ काम गधा ने करो है। जा सुनतई भगवान खों भौतइँ गुस्सा आई उर मूरख धनी खों सुरग सें निकार बाहर करबे की भगवान नें आग्यां दै दई।

गधा खों सुरग सें धकिया कें बायरें करो सो ऊ धरती पै आ गिरो। धरती पै गिरबे सें ऊ भौत जगा छिल-छुलू गओ, उर मन में भौतइँ दुक्ख भओ, रंज भओ पै आखीर में ऊनें जौ सोच के संतोस कर लऔ कै पिरभु कौ सबरौ ग्यान तौ मोरे पेट में धरो है। अब भैया धरती पै ऊ गधा ने रैंक-रैंक के चिल्यात भये मनंखन सें कैबो सुरू करो कै पिरभु कौ सबरौ ग्यान मोरे पेट में धरो है, जो कछु चावनें होय सो मोंसे बूजौ, मोरी बात मानौ उर ज्यांय चलबे खों मैं कहों सो अपन औरें ओई कुदाईं ओई गैल धरें चलो।

कछु मनंखन नें गधा की बोली बानी समजी उर ऊकी बात खों साँचौ मानों, ओई के कये पै जौन गैल ऊने धराई सो बे मनंखन ओई गैल पकर कें चलन लगे। पै कुल्लन खों ऊकी बात नें जची सो बे उयै मूरख उर उल्लू बनाउत भये हँसत-हँसत अपने घर की गैल धरे चले गये।

भैया, मुतके दिनन लौ रोजइँ-रोजइँ तराँ के बकत-झकत, बखत काटत भओ गधा धरती पै फिरत रओ, उर एक दिना ऊ उमर पूरी होबे पै मर गओ। पै कात हैं के गधा की आतमा अबै लौ अपनी गैल धरें चल रई है। भौत से धरम गुरु के मूँड पै चढ़कें बा ऊकी आतमा जाई कहवाउत रैत कें जो कछू हम जानत हैं, ओई सब कछू ठीक-ठाक है, हमाई बात खों कान खोल कें सुनों समजौ उर गाँठ में बाँद कें चलौ, मानों उर हमारेई पछारूँ-पछारूँ चले चलौ।

-एल०आई०जी०-२, जे०पी०नगर, अधारताल, जबलपुर म०प्र० 卐

बुन्देलखण्ड के बर्तन

–पं.ओम प्रकाश बाल कृष्ण तिवारी

चम्बल, काली सिंध, बेतवा, धसान तथा केन आदि सरिताओं से विंध्योपत्यिकावलि सिंचित। यमुना, नर्मदा सरिताओं से सीमित क्षेत्र वर्तमान में बुन्देलखण्ड कहलाता है। कदाचित इसीलिए ओरछा राज्य के अन्तिम राजकवि कीर्तिशेष मुंशी अजमेरी जी ने बुन्देलखण्ड की सीमा इन शब्दों में व्यक्त की थी-

यमुना उत्तर ओर, नर्मदा दक्षिण अंचल,
पूर्व ओर है टोंस पश्चिमाचल में चंबल।
उर पर केन धसान वेतवा सिंध वही है,
विकट विंध्य की शैल श्रेणियाँ फैल रही हैं।
विविध सुदृश्यावली अटल आनन्द भूमि है,
प्रकृति छटा बुन्देलखण्ड स्वच्छन्द भूमि है।

भारत के मध्य में स्थित यह भू भाग प्राचीन काल से ही महत्वपूर्ण रहा है। बुन्देलों का नाम तब प्रसिद्ध हुआ जब उन्होंने अपना राज्य चौदहवीं शती में स्थापित किया इसे पूर्व महाकवि कालिदास के वांगमय में दसार्ण जनपद से विख्यात इस क्षेत्र को वत्स, जुझौति, जेजाहूति, जुझौतया या यजुर्होती तथा वैदिक काल में चेदि, रामायण काल में कौशल एवं महाभारत काल में रूप और विराट व बौद्ध काल में 'माज्झिम' नाम से जाना जाता था। इसीलिए इस प्राचीनतम भू-भाग की अपनी एक संस्कृति है, तभी तो यह नैसर्गिक रूप से संयुक्त होने के साथ ही ऐतिहासिक सामाजिक सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सुसमृद्ध परम्पराओं को भी अकंस्थ किए हुए है। चूँकि आज वैश्वीकरण के कारण विश्व की संस्कृतियाँ एक दूसरे के सम्पर्क में आ रही हैं जिससे वह एक दूसरे को प्रभावित भी कर रहीं है। साथ ही वैश्विक भू-मण्डलीकरण तथा वैज्ञानिक आविष्कारों से हमारे रहन-सहन तथा खान-पान के साथ-साथ उसमें प्रयुक्त होने वाले बर्तनों के आकार-प्रकार तथा नामों में भी परिवर्तन हो गया है।

आज हिन्दी अपनी प्रकृति, व्यापकता और संवैधानिक मान्यता के अनुसार भारत की 'राष्ट्रभाषा' है। किन्तु हिन्दी को समर्थ, सक्षम और सर्वमान्य राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित होने के लिए अपनी अन्तर्गत बोलियों और क्षेत्रीय भाषाओं से समृद्ध होना पड़ा है। इसी कारण विद्वानों का मत है कि-'बुन्देली हिन्दी की ही एक बोली है।' जबकि पं. गुणसागर 'सत्यार्थी' जी कहते हैं कि हिन्दी तो आज भी निर्माणाधीन है, हिन्दी में उतने शब्द कहाँ हैं? जितने बुन्देली में व्यवहार में आ रहे हैं। उदाहरणार्थ वर्तनों को ही ले लें- जितने पात्र उतने ही नाम बुन्देली में मौजूद हैं जबकि हिन्दी में प्रत्येक पात्र के नामों का सर्वथा अभाव ही है। अस्तु इस लेख के माध्यम से बुन्देली वर्तनों की चर्चा प्रस्तुत की जा रही है। इस संदर्भ में 'लोटा' को ही लें- बुन्देली में इसके आकार प्रकार के अनुसार जितने पर्यायवाची शब्द है उतने हिन्दी तो क्या किसी भी स्थापित बड़ी भाषा में भी नहीं है-जबकि बुन्देली में व्यवहार में यह शब्द प्रचलित है-गड़ई, चिमरयाऊ गड़ई, गड़ुआ, बौला, लुटिया, घंटिया, गंगासागर, गंगाजली, तुतुआ या तुतइया। इन्हीं शब्दों के भावों को देखें-

1. गड़ई-सामान्य धातु का लोटा, जो दैनिक उपयोग में पानी पीने तथा धार्मिक पूजन में कलश बनाने में उपयोगी है।

2. गड़ुआ-एक प्रकार से यह लोटे का ही बड़ा रूप है यानि की बड़ा लोटा। परन्तु इसकी सांस्कृतिक जड़ें कितनी गहरी है? यह अनुमान तो यहाँ के पारम्परिक लोकगीतों में देखा जा सकता है यथा-

'...सोंने के गड़ुआ गंगाजल पानी, पीवेइँ ना राजा गोरी बिना।'

विपन्न कहे जाने वाले बुन्देलखण्ड में भी आर्थिक विपन्नता रहते हुए भी वैचारिक एवं सांस्कृतिक धरातल पर जो सम्पन्नता देखी जाती है वह स्वयं में अनूठी ही है कि गड़ुआ भी सोने जैसे वेश कीमती धातु से बना है जिसमें पेयजल भी ऐसा वैसा नहीं, पवित्र गंगाजल के रूप में है परन्तु गोरी अर्थात् अर्द्धांगिनी के बगैर वह सब भी तुच्छ है। यहाँ शास्त्र भी हमारी लोक संस्कृति के स्वर में स्वर मिलाकर नहीं कहता है-'यत्र पूज्यन्ते नारी, रमन्ते तत्र देवता।' तात्पर्य यह है कि कहने को तो गड़ुआ मात्र एक पात्र है परन्तु उसकी सांस्कृतिक जड़ें बहुत गहरी हैं।

3. बौला-गिलास और लोटे के बीच की आकृति वाला काँसे का सजावटी गिलास।
4. लुटिया-एक मध्यम से छोटे आकार का लोटा।
5. घंटिया-छोटे आकार का लोटा।
6. तुतुआ/तुतइया-टोंटी दार घंटी (छोटी लुटिया)
7. चिमरयाउ गड़ई-चीमरी के आकार का छोटा लोटा।
8. गंगासागर-ताँबे का टोंटीदार लोटा जो पानी पिलाने व देवताओं को जल चढ़ाने में उपयोगी।
9. गंगाजली-गंगाजल लाने और उसे सुरक्षित रखने का ढक्कन लगा लोटा।
10. गिलास-पानी पीने का पेंदी से ही अधिक चौंड़े मुँह का लंबा व सीधा बर्तन।
11. गिलसिया-छोटे आकार का बच्चों को पानी व दूध पीने का गिलास।
12. टाठी/थरिया-धातु की मध्यम आकार की भोजन करने की थाली। लोकगीत भी है-

'...सोने की थरिया में भोजन परोसे, तुम ज्यो लला हरदौल जू'

13. थरा/थार-धातु की बड़े आकार की थाली जिसे शादी विवाह के अवसर पर पक्यात में कपड़े व धन राशि तथा कुँवर कलैवा में मिठाई से भरकर दूल्हे के सामने रखा जाता है।
14. कुपरिया/परात-आटा गूँथने का मध्यम आकार का बर्तन
15. तस्तरी-धातु की प्लेट थाली से छोटी होती है, नास्ते आदि में उपयोगी।
16. कचुल्ला/कटोरा-धातु का दूध रोटी और दूध भात खाने का बड़े आकार का बेला।
17. कचुलिया/बिलिया/कटुरिया-धातु के सब्जी आदि खाने के छोटे बेला।
18. बेला-काँसे की धातु का बड़े आकार का बर्तन इसे शादी के अवसर पर कन्या पक्ष हल्दी रंगे हुए चावलों से भरकर उस पर हल्दी की थपियाँ रखकर वर पक्ष के किसी मान्य व्यक्ति को मुद्रा सहित भेंट करता है इसी हल्दी से ससुराल में वह देवी देवताओं को वर-कन्या हांते लगा कर पूजा करता है।

हाँते घर परिवार में भी लगाये जाते हैं।

19. बौगना/गंजना/तबेला/भगौना-धातु के तली के आकार के ही चौड़े मुँह वाले पात्र जो दैनिक उपयोगी है यह कई आकार के होते हैं।

20. गंज-बड़े आकार के भगौना इनमें किसी प्रकार के भोज में सब्जी आदि बनाते हैं।

21. डेक्ची-धातु की सब्जी, दाल बनाने की पतेली यह दैनिक उपयोग की वस्तु है।

22. कसैड़िया/कसैड़ी-पीतल का छोटे आकार का पानी भरने का बर्तन।

23. गुड-बड़े आकार की कसैड़ी इसके ओंठ खड़े रहते हैं।

24. कसैड़ा-गुंड से बड़े आकार का बर्तन पानी भरने के उपयोग में आता है।

25. हड़ा-पीतल का चौड़े मुँह का बर्तन जो पानी भरने के उपयोग में आता है।

26. कुपरा-शादियों में उपयोग किया जाने बाला पीतल का बड़ा पात्र।

27. कांसिया-काँसे धातु की अधिक वजन की पतेली।

28. काँसे की थरिया-काँसे धातु की थाली।

29. बटलोई-छोटे आकार की धातु की पतेली।

30. करईया-कढ़ाई कई आकार की छोटी, बड़ी, मझोल हुआ करती है यह लोहे से निर्मित होती है। रोटी बनाने वाला तवा भी लोहे का बना होता है। भोज्य पदार्थों में लोहे का अंश शरीर को मिलता रहे। इस कारण बुन्देलखण्ड के बर्तनों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण रहा है। लोहे की कढ़ाई में लोहे की ही कर्छुली सब्जी या मिष्ठान बनाते समय चलाई जाती है तब कर्छुली और कढ़ाई के साथ जो लोहे का घर्षण होता है उसे खाद्य पदार्थ लौह युक्त हो जाता है। जो मानव शरीर के लिए आवश्यक है। लोक जीवन में ऐसे बर्तनों के लिए बुझउअल (पहेली) तक रच डाली है-

काकी के हैं कान, कका के कानइँ नइयाँ,
काकी चतुर सुजान, कका कछु जानत नइयाँ।

यहाँ करइया और तवा इस बुझाउअल का सटीक उत्तर लोक में प्रचलित हैं-कढाई, में कन्ना होते हैं और तबा में नहीं होते। कढ़ाई में विविध भोज्य पदार्थ बनते हैं जबकि तवा में केवल रोटी। है ना? बुन्देलखण्ड के बर्तनों में वैज्ञानिक सोच और समझ?

31. कड़ाऔ-बहुत बड़े आकार की कढ़ाई जिसमें गुड़ बनाया जाता है।

32. झारो/झरिया-कढ़ाई से पूड़ी या अन्य तली हुई वस्तुओं को निकालने का छिद्र युक्त डंडीदार हत्था।

33. थैता/कर्छुली-बिना छिद्र वाला ठोस आकार का डंडी युक्त हत्था।

34. पैली-लगभग दस किलो अनाज नापने का पीतल का बर्तन जो विनिमय का काम करता था।

35. नाद/गंगाल-पीतल का बड़े आकार का कुंदा लगा हुआ बर्तन।

36. मटकिया-पीतल/स्टील का दही मथने का बर्तन।

स्थानाभाव एवं आलेख विस्तार के कारण सभी बर्तनों का विवरण देने का औचित्य नहीं है। देश काल की बदली हुई परिस्थितियाँ में बुन्देलखण्ड के बर्तन आज भी घरों में देखे जा सकते हैं। परन्तु इन बर्तनों को हम दो वर्गों में विभाजित कर सकते हैं, पहले वर्ग में दैनिक उपयोग में आने वाले वर्तन हैं। जिन्हें नित्य प्रति माँजा जाता है। अत: आज भी वे अपनी चमक इस धरा पर बिखरने में सक्षम हैं। दूसरे वर्ग में धरौअल बर्तन हैं जिनका उपयोग शादी विवाह या मांगलिक अवसरों पर होता है वे भण्डार गृह में रखे रहने वाले बर्तन हैं, अत: इन बर्तनों में वैसी चमक न होना भी स्वाभाविक है जैसे-हड़ा, कुपरा, थार, गंगाल, नाद, आदि। वे प्राय: बड़े घरों में रखे हुए आज भी मिल जाएँगे। तात्पर्य यह है कि यह बर्तनों का भण्डार बुन्देलखण्ड में आज भी यथावत विद्यमान है। जबकि अन्य क्षेत्रों में देश काल परिवर्तन का प्रभाव ऐसा पड़ा कि उनके कितने ही बर्तन ओझल हो चुके हैं।

इसी प्रकार से बुन्देलखण्ड में अर्थाभाव के कारण अन्य कई प्रकार के बर्तन भी प्रयुक्त होते रहे हैं। उनमें से बहुत से तो आज भी उपयोगी हैं। जिनमें-

मिट्टी के बर्तन

१. हड़िया-मिट्टी की छोटे मुँह के आकार की कड़ी बनाने की गगरी।

२. कैलो/तवा-रोटी बनाने के बर्तन तवा विशेष प्रकार के।

३. गुरसी/बरौसी-आग रखने तथा जलाने का पात्र।

४. पोतला-किसान द्वारा खेत पर पानी ले जाने वाली मिट्टी कली सुराही। जिसके लिए कहावत प्रसिद्ध हैं-

बादर देख कैं पोतला फोर दओ।

५. गगरा/गगरी/डबला/डबुलिया/घैला/घैलिया/मटका/मटकिया/डारिया-यह सभी पानी भरने के विभिन्न आकार प्रकार के बर्तन हैं यह देशी फ्रिज के रूप में प्रसिद्ध है।

६. चपिया-दही जमाने का मिट्टी का बर्तन जिसके लिए कहावत प्रसिद्ध है यह कहावत बुन्देलखण्ड की सीमा निर्धारण करती है-

भैस बंधी है ओरछे, पड़ा हुसंगाबाद,
लगवैया है कालपी, चपिया रेवा पार।

७. कुठिया/कुठीला-अनाज रखने मिट्टी की टँकी।

८. दियट-दीपक रखने का स्तम्भ।

पत्थर के बर्तन

१. पथरौटा-पत्थर का बर्तन जिसमें लगभग दो किलो पानी बन जाता था।

२. खल्ल-मुसरिया-पत्थर के दवा बाँटने के बर्तन।

३. छिपनी-दवा खिलाने में उपयोगी वस्तु।

४. गौरईया-गौरा पत्थर के बर्तन दही आदि खट्टी चीजें खानें में उपयोगी।

५. सिल-लोड़ा-पत्थर के पात्र जिससे पीसने का काम लेते हैं।

६. चकिया/जतरिया-घर की आटा चक्की एवं दाल आदि भी दरी जाती है।

बाँस के बर्तन

१. डलिया-बाँस की मध्यम आकार की टोकरी।

२. पिरा-पिरिया-बाँस के ही बड़ी छोटी टोकरी।

३. दौरिया-उथले आकार की टोकरी।

४. टिपारी-बड़े आकार की डलिया जिसका ढक्कन भी होता है कन्या पक्ष द्वारा विवाह के अवसर पर पकवान भरकर विदा के समय वर पक्ष को दिया जाता है।

५. चुनिया-छोटे आकार का टिपारा।

६. चंगेर-छोटे बच्चों का एक प्रकार का झूला।

७. गुट्टा/गुट्उवा-छोटे आकार की डलियाँ।

८. सूपा-अनाज साफ करने का बर्तन।

९. छाब-बड़े आकार का टोकना शादी विवाह में पूड़ी रखने में उपयोगी होता है।

१०. गाँजिया-अनाज पानी में साफ करने में पतले बाँस की टोकनी।

अन्य वनस्पति के बर्तन

१. चौरी-पाव भर २५० ग्राम लगभग अनाज मापने का बर्तन
२. वरैया/चौथिया-लगभग एक किलो अनाज तौलने का पात्र
३. कथौती-पुराने समय में आटा गूँथने का बर्तन।
४. उरसा-बिलना/बिलनियाँ-रोटी, पूड़ी, पापड़ आदि बनाने के पात्र।
५. सिकौली-कांस और खजूर की बनी टोकनी।
६. पूरैन के पत्ता-माँगलिक अवसरों पर भोज में थाली के रूप में प्रयोग होता है।

पलाश/छैवला/ढाक के बर्तन

१. डेउवा/डंका/कलछिया/चटुआ-यह सभी लकड़ी के चमचा एवं चम्मच के रूप में प्रयुक्त होते थे।
२. पत्तल/दौना-छैवला के पत्तों के थाली कटोरी के रूप में प्रयोग होता है।

इन कुछेक उपलब्ध उदाहरणों के सन्दर्भ में यही कहा जा सकता है कि इन बर्तनों के सन्दर्भ से बुन्देली भाषा की समृद्धि के साथ ही यहाँ की सांस्कृतिक विरासत की सम्पन्नता के साथ-साथ भोजनादि दैनिक जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में हमारे बर्तनों का वैज्ञानिक धरातल पर भी विशेष महत्व देखा समझा जा सकता है। आज के विकसित युग में स्टेनलैस स्टील के बर्तनों का प्रायः हर प्रकार के भोज्य पदार्थों के लिए समान रूप से उपयोग होता है। जबकि खट्टे या रिक्त पदार्थों के लिए हमारी संस्कृति, परम्परा में पत्थर या गौरा पत्थर के बर्तन मौजूद हैं। ढाक/छैवला के पत्तों की पवित्रता हमारे शास्त्रों ने उसे देव वृक्ष कहकर यदि बखानी है तो बुन्देलखण्ड के लोक जीवन में बृहद भोज या सह भोज में ढाक के पत्तों से बने पात्र दोना पत्तल कदाचित शास्त्र से भी पूर्व से लोक जीवन में मौजूद हैं। अब ऐसा लगने लगा है कि बुन्देलखण्ड के कितने ही ऐसी अजीबो गरीब किस्म के बर्तन भविष्य में म्यूजियम की वस्तु न बन जाएँ? कई वर्षों से पर्यटक ग्राम बसारी (छतरपुर) में प्रति वर्ष बुन्देली उत्सव की परम्परा डाली गई है उसमें ऐसे अभूतपूर्व वर्तनों का संग्रहालय भी यदि प्रदर्शित किया जाए तो देश-विदेश के पर्यटक बुन्देलखण्ड के सांस्कृतिक वैभव जो आधुनिक विज्ञान सम्मत भी है का साक्षात्कार कर सकेंगे। इन्हीं शब्दों के साथ-

-बाल साहित्य प्रेरक, तिवारी सदन, कुण्डेश्वर, टीकमगढ म०प्र० ؋

दो गीत

-डॉ.वीरेन्द्र निर्झर

भसक रईं घर की दीवारें,
तुमईं करो का किऐ समारें।

तना तना से दरवाजे हैं,
मूँड़े में लग रओ दिरोंदा।
बड़ी-बड़ी चाएँ कौंर्याये,
अकलहीन नेंनू के लोंदा।
करनी ना करतूत कयें का,
नच्छत्तर जे गजब गुजारें।

खेती नटी खलीती खाली,
कर्जीले दिन कैसें कट रए।
कोऊ न जाने ई मन की,
किन किन टुकड़न में हम बँट रए।
बिटिया बिरझी है फुलेल कों,
बहुएँ फिरतीं पटियाँ पारें।

इनपै हाँत धरें जो अपनो,
बे ईंटें गिरबे को ठांड़ी।
घर की घर लों रईं न बातें
दूर-दूर लों भईं उभाडी।
फटे पोलका में दिन कट रये,
की हाँ पैरें, किऐ उतारें।

हवा सहर की लगी गाँव कों,
चाल बदल गई पगडंडी की।
स्वाद लगो जाने का कैसा,
रुचै न दार भात हंडी की।
भसक रईं घर की दीवारें,
तुमईं करो का किऐ समारें।१।।

मन की बातें,
रै गईं मन में
जैंसे सपन सपन में।
जिनके लाने साज सँवारे,
बे कर गए किनारे
अपनी एक बात न सुनबैं
हूँकत हाँत पसारे
ना जाने का बिगरी हमसें
रै गई कमी जतन में।
फिर गए डड़ा बीच बखरी में,
फोरा भये कखरी में
दच्छिन बाम बाम दच्छिन भए
है पसग तखारी में
तुलबो करें रतन में कभऊँ
अब दिन कटत कनन में।
देह धरम को नातो कइए
बेदरदी दुख सइये
तपा तप रए अनहोनी के
तन मसोस कें रइये
पालागन में घूँटे टूटे
जर गए हाँत हवन में।२।।

-एम०बी०१२०, न्यू इंदिरा कालोनी,
बुरहानपुर, म०प्र० ؋

पीरू मरे बरहा के खॉंद

-डॉ. कामिनी

लोकोक्ति का अर्थ लोक की उक्ति से है। ऐसी उक्ति में अनुभव को, किसी घटना को, किसी प्रसंग को, किसी सारगर्भित कथन को सुरक्षित कर लिया जाता है, इस तरह लोकोक्ति ज्ञान का संक्षेप रूप है। लोकोक्तियों को ही कहावत कहा जाता है। समाज अपने अमूल्य अनुभवों को लोकोक्ति के रूप में सुरक्षित कर लेता है और अगली पीढ़ियों के लिए धरोहर के रूप में सौंप देता है। किसी स्थान के साथ अथवा किसी ग्राम के नाम के साथ भी किसी घटना को जोड़कर लोकोक्ति के रूप में सुरक्षित कर लिया जाता है। भिंड जिले की लहार तहसील के बरहा ग्राम के साथ जुड़ी लोकोक्ति 'पीरू मरे बरहा के खाँद' के साथ भी घटना, व्यक्ति और इतिहास जुड़े हुए हैं। सिंधिया दौलतराव के फ्रांसीसी सेनानायक का नाम पेरौन था। इसी को लोक रुचि ने 'पीरू' मान लिया और बरहा ग्राम के समीप 'खॉंद' में उसके मर जाने की स्मृति सुरक्षित है लेकिन वास्तविकता इससे ठीक उल्टी है। इस संघर्ष में पैरोन का हाथीवान पीलवान मारा गया था और बरहा ग्राम में हाथीवान का स्मारक ही टूटे-फूटे चबूतरे के रूप में है। सेनानायक पीरू सिंधिया की फौज से रिटायर्ड होकर अपने देश लौटा था और वहीं उसकी मृत्यु हुई थी।

इतिहास-'पीरू मरे बरहा के खॉंद' लोकोक्ति में इतिहास के कई पृष्ठ सुरक्षित हैं और इन पृष्ठों से ग्वालियर के सिंधिया राजवंश के साथ दतिया के बुन्देला राजवंश का सीधा सीधा संबंध है। जिस संघर्ष का निर्णायक पूर्ण विराम ३ मई सन् १८०१ ई० को हुआ, उस संघर्ष का आरंभ सन् १७९४ ई० में महादजी सिंधिया की मृत्यु के कुछ दिनों बाद पारिवारिक कलह से हो चुका था। महादजी सिंधिया की मृत्यु के बाद उनकी तीन विधवाओं भागीरथी बाई, यमुना बाई और लक्ष्मीबाई के साथ दौलत राव का व्यवहार कुछ दिनों तक सद्भावना पूर्ण रहा किन्तु राजीराव घाटगे की कुमंत्रणा के कारण दौलतराव ने विधवा माताओं को परेशान करना आरंभ कर दिया और महादजी सिंधिया के उन विश्वस्त सरदारों को नजरकैद कर लिया जो इन विधवाओं की सहायता करते थे। विधवाओं के इन सहायकों में लकवा दादा, जगू बापू, नारायण राव बख्शी, देवजी गौला, राजाजी पटेल और रामजी पटेल प्रमुख थे।

विरोध का विस्तार-मार्च १७९८ ई० में महादजी की विधवाओं ने पूना कूच करने की धमकी दी। इन विधवाओं ने हरजी सिंधिया को पत्र लिखकर अपनी दशा उन्हें बतलाई। जगू बापू और लकवा ने कैद से निकलने के बाद विधवाओं के नाम पर पद ग्रहण किये और इस अधिकार की लड़ाई को राजस्थान से होते हुए मालवा की ओर ले गये। इन विधवाओं ने २१ जनवरी १८०१ ई० को दतिया रियासत के सेंवढ़ा स्थित किले में महाराज शत्रुजीत ने शरण दी और यही घटना शत्रुजीत की मृत्यु का कारण बन गई।

लकवा दादा-लक्ष्मण अनंत लाड़ सिंधिया का दुर्ग रक्षक था। मराठा सरदारों में इन्हें लकवादादा के नाम से पुकारा जाता था। लकवादादा के व्यवहार में जितनी समता थी, उससे अधिक मृदुलता भी थी। उसके चरित्र में साहस के साथ दृढ़ता और राजनीतिक चतुरता के साथ सफल युद्ध संचालन की क्षमता थी। गुलाम कादिर और इस्माईल बेग द्वारा आगरा के किले का घेरा डाले जाने पर दुर्ग रक्षक लकवा दादा ने अपनी सूझ-बूझ से नौ माह तक हिम्मत नहीं हारी थी। उसने सबलगढ़, विजयपुर, नरवर के किलों को फतह किया था। इन सब सफलताओं के बाद भी दौलतराव ने उसे बर्खास्त करके उसकी गिरफ्तारी का आदेश दे दिया, परिणाम स्वरूप लकवा दादा उत्तर भारत में विधवाओं के पक्ष का नेताबन गया। बरहा के युद्ध में शत्रुजीत मारे गयें और लकवा की उँगली में एक गोली लगी, जिसका घाव सड़ने लगा। अंतिम दिनों मे वह कुछ दिन महाराणा उदयपुर के पास रहकर जावद होता हुआ सलूंबर में पहुँचा और वहीं चार दिन के ज्वर के बाद उसका देहान्त हो गया।

पेरोन-सिंधिया के इस सेनानायक का जन्म १७५५ ई० में फ्रांस में हुआ था, वह १७८० ई०में भारत आया और प्रतिष्ठित पदों पर रहते हुए ३ मार्च १८०१ ई० को बरहा के युद्ध में उसने लकवा दादा को हराया, इसी युद्ध में एक घातक घाव लगने से दतिया नरेश शत्रुजीत मारे गये। पेरोन के अधिकार में उत्तर भारत के सात-आगरा, अजमेर, दिल्ली, अलीगढ़, खुरजा, सहारनपुर और फिरोजाबाद दुर्ग थे। सितम्बर १८०३ ई० में वह सिंधिया की फौज से रिटायर होकर वापस फ्रांस चला गया और वहीं सन् १८३४ ई० में उसकी मृत्यु हुई।

अम्बाजी इंगले-महादजी की तीनों विधवाओं का पक्ष लेने के कारण सिंधिया का पराक्रमी और चतुर सरदार लकवा दादा विद्रोही हो गया था और उसको दबाने के लिए पैरोन और अंबाजी इंगले का संघ बना। अंबाजी ने राघौगढ़ में दो सेनायें अपने भाई भालाराव और अपने पुत्र भाऊ की देखरेख में भेजी, जिन्हें जगू बापू ने तितर-बितर कर दिया। अंबाजी ने दिसम्बर १७९९ ई० में दतिया रियासत से एक लाख रुपये वसूलकर ४ लाख का इलाका ले लिया। मार्च ३ सन् १८०१ ई० के युद्ध में विजय प्राप्त करने के बाद दौलत राव की ओर से महादजी की विधवाओं को दो लाख वार्षिक की जागीर और आँतरी का किला देना मंजूर कर लिया।

महाराजा शत्रुजीत की मृत्यु-सेंवढ़ा के किले में तीनों विधवाओं को आश्रय देकर दतिया नरेश ने इस संघर्ष को नियंत्रण दिया था। बरहा ग्राम के समीप इस संघर्ष में सिंधिया की साधन सम्पन्न फौज ने पेरोन की देख-रेख में हिस्सा लिया और विधवाओं की ओर से लड़ने वाले लकवा दादा तथा उनका सहयोग करने वाले महाराजा दतिया की सेनायें पीरू की सेना का मुकाबला न कर सकीं। महाराजा शत्रुजीत की मृत्यु लकवा दादा के घायल होने और सेनाओं के तितर-बितर हो जाने के साथ ही इस संघर्ष का अंत हो गया। दतिया रियासत को सिंधिया की शर्तों पर संधि करनी पड़ी और विधवाओं का आँतरी का किला तथा २ लाख वार्षिक के परगने देने पर सहमति हो गई।

-प्राचार्य, शास.गोविन्द महाविद्यालय, सेंवढ़ा जिला दतिया म०प्र० 卐

दो पाठकीय प्रतिक्रियाएँ

(1) दिनेस बैस

(1) आंचलिक भाषा में पत्रिका प्रकाशन अत्यन्त समर्पण की माँग करता है। वांछित सामग्री के संचयन से लेकर वितरण तक वेशुमार जोखिम होते हैं। 'बुन्देली बसंत' के सम्पादक डॉ.बहादुर सिंह परमार ने पत्रिका प्रकाशन के प्रति यह समर्पण कूट-कूट कर भरा प्रतीत होता है। इसलिए वे प्रकाशक के मार्ग में आने वाली हर बाधा को सहज भाव से पार कर रहे हैं।

उनके समर्पित श्रम का ही फलितार्थ है कि पत्रिका का अंक १५वां पाठक के समक्ष पत्रिका नहीं, एक लघुग्रंथ के रूप में सामने आया है। लगभग त्रुटिहीन स्थिति में। वह सामग्री चयन हो या पत्रिका का कलेवर तैयार करना हो या मुद्रण पक्ष हो। यहाँ तक कि प्रूफ की अशुद्धियाँ भी कम ही सामने आती हैं। किसी पत्रिका/पुस्तक का यह वह महत्वपूर्ण पक्ष है जिसकी ओर से आज स्थापित और विख्यात प्रकाशन गृह तक निराश कर रहे हैं। उनके प्रकाशनों में प्रूफ की अशुद्धियों की भरमार पाठक को कुछ ऐसे असहज कर देती है जैसे मुँह में चावलों के बीच कंकड़ आ गये हों। कुल मिलाकर पत्रिका के सुरुचि पूर्ण प्रकाशन के प्रति सतर्कता का परिणाम है। कि बुन्देली भाषा/बोली के प्रति तनिक भी अनुराग रखने या बुन्देली तथा बुन्देलखण्ड के प्रति जिज्ञासु पाठक इस अंक को सहेजकर रखना चाहेंगे।

कदाचित पत्रिका का सम्पादक मण्डल बुन्देली भाषा संस्कृति इतिहास की पड़ताल और स्थापना के प्रति अधिक आग्रही है। इसलिये अंक का प्रारंभ 'भाषा-साहित्य-आलोचना' खंड से ही हुआ है। सामग्री भी इसी पक्ष की अधिक है। इस खंड में ग्यारह लेख बुन्देली भाषा संस्कृति पर, शास्त्रीय चर्चा पर केन्द्रित हैं। शेष नौ लेख बुन्देली भाषा संस्कृति के ध्वजवाहक पुरोधाओं पर हैं।

'इतिहास, परम्परा और संस्कृति' खंड में इक्कीस लेख संग्रहीत हैं। इनमें पर्यावरण, स्वास्थ्य, ललित कलाओं, तीज त्यौहार, पर्यटन, इतिहास जैसे तमाम विषयों को समेटने का प्रयास किया गया है। 'बुन्देली गद्य' खण्ड वास्तव में विविध गद्य विधाओं को समेटे है। इसमें अधिकाँश कथा तथा लघुकथा प्रस्तुत की गई है। हालाँकि आलेख तथा साक्षात्कार भी हैं।

स्वाभाविक है, बुन्देली काव्य खण्ड में कवितायें हैं। कुछ परम्परागत काव्य विधाओं में। कुछ तनिक विचलन के साथ। मिश्रित सामग्री प्रस्तुतीकरण के उद्देश्य से अन्य खण्ड भी हैं। इसमें पुस्तक समीक्षा से लेकर साहित्यक सांस्कृतिक गतिविधियों तक पर सामग्री है। इतने विशद संग्रहण के बावजूद फिल्म और टी.वी. जैसे ससक्त तथा युगान्तरकारी माध्यम की अनुपस्थिति आश्चर्य जाग्रत करती है। शायद इस माध्यम के वंचित रह जाने का एक कारण यह भी है कि प्रवासी फिल्म निर्माता इस अंचल में मात्र दृश्यांकन के लिये आ रहे हैं। सांस्कृतिक और सामाजिक सरोकार उनके नहीं हैं। स्थानीय प्रयास केवल रोमांचजनित है। उनमें गम्भीरता के दर्शन दुर्लभ हैं।

सम्पादक महोदय की पत्रिका प्रकाशन में दृष्टिगत व्यथा है। सम्पादकीय में उसे उन्होंने प्रकट किया है। डॉ.बहादुर सिंह परमार समाजवाद से अनुप्राणित हैं। उन्हें बुन्देलखण्ड जैसे अंचलों में भी बाजार की घुसपैठ स्पष्ट महसूस हो रही है। जो यहाँ के संस्कारों और संस्कृति को चर रही है- अब हल जोतता किसान लोकगीत नहीं गाता है, मोबाइल पर गीत सुनता है-तिकड़मों से शासकीय योजनाओं को पलीता लगाता आम आदमी दिख रहा है। उन्हें खेद है, बुन्देली में सम सामायिक साहित्य कम ही लिखा जा रहा है जो इन चुनौतियों से मुठभेड़ कर सकता था।

–३गुरुद्वारा, नगरा, झाँसी उ०प्र० ५

---

(2) डॉ. अशोक त्रिपाठी

(2) 'बुन्देली बसंत' का फरवरी 2014 में प्रकाशित 15वाँ अंक पढ़ा। नि:संदेह इस पत्रिका का अनवरत प्रकाशन एक स्तुत्य कार्य है। बुन्देली संस्कृति एवं साहित्य के अनुरागी और सुविज्ञ व्यक्तित्व ही इस जोखिम को साल दर साल उठाने का साहस कर सकते हैं। प्रधान सम्पादक डॉ. बहादुर सिंह परमार की सम्पादकीय कलम से निकली निम्रांकित शब्द श्रृंखलाओं ने 'बुन्देली बसंत' शाश्वत यात्रा के निहितार्थ एवं विषय वस्तु की सार्थकता को स्पष्ट कर दिया है-

१. 'लोक जीवन के दृश्य बहुत तेजी से बदल रहे हैं। इस बदलाव के दौर में हम बुन्देली की मूल मानवीय संवेदनाओं को संरक्षित करने में कैसे कामयाब हों? यह एक विचारणीय यक्ष प्रश्न है। इसका समाधान खोजना होगा, अन्यथा की स्थिति में हम अपनी भावी पीढ़ी को पूर्वजों की धरोहर नहीं सौंप पाएँगे।'

२. 'कुछ साथी अभी भी पुरानी लीक पर कदम ताल कर रहे हैं। उनसे ख़ास अनुरोध है कि समाज के दर्द को महसूस करें और उसे रचना में उतारें।

डॉ.के.एल.पटेल (सह सम्पादक) निस्पृही व्यक्ति हैं। बुन्देली की अज्ञात, अल्पज्ञात एवं उपेक्षित मनिकों को खोजना और उन्हें माला में पिरोना उनका व्यसन है। तभी तो नृत्य में ताल (राई नृत्य का प्राण तत्व बुन्देली कहरवा) मिलाने का पारंपरिक किन्तु अभिनव प्रयोग उन्होंने किया है। डॉ. हरीसिंह घोष जी की रचनात्मक प्रतिबद्धता सराहनीय है।

पं.गुणसागर 'सत्यार्थी' जी अपने व्यक्तित्व और

कृतित्व दोनों से महान हैं। उनका शोधात्मक लेख 'विश्व की प्राचीनतम भाषा एवं संस्कृति बुन्देली' पढ़कर मन बाग-बाग हो गया। 'बुन्देली बसंत' का मर्म तो ऐसे ही आलेखों में निहित है। पं. जी को इस अकिंचन का प्रणाम। पुरश्च एक प्राचीनतम भाषा सिद्ध किया है, उसी प्रकार (दिए गए शीर्षक के अनुसार) बुन्देली संस्कृति की प्राचीनता की सिद्धि भी होती, तो हम जैसे शोध-पिपासुओं की क्षुधा भी शांत होती। शायद आलेख का कलेवर बढ़ने की किंचित संकोच रहा हो? किन्तु निवेदन यह कि डॉ. दया दीक्षित की बुन्देली कथा-'एक ती सुमन, एक ती उम्मेद' के भारी भरकम कलेवर को 'बुन्देली बसंत' ने न सिर्फ ससम्मान स्वीकारा प्रगतिवादियों द्वारा उसे अन्यान्य अभीष्ट अर्थों से भी नवाजा जायेगा; यथा-स्त्री विमर्श, नारी मुक्ति, प्रयोगधर्मी आदि-आदि। मेरी दृष्टि में उक्त कहानी अपने बिखरे कथानक के साथ नारी की संवेदनात्मक विवशता का चित्रण है।

राम स्वरूप पाण्डेय जी की कहानी 'ठड़उअल' अपनी सीमित कथावस्तु के साथ भी व्यवस्था की विकृति का संकेत देकर परिवर्तन के सकारात्मक संदेश का शंखनाद करती है। अपने आकार, सहज कथ्य, अनगढ़ शिल्प एवं समकालीन प्रासांगिकता की दृष्टि से मुझे यह कहानी संतुलित लगी। 'अदबनी अटाई' और 'अनोखी बगिया' जैसी बुन्देली कहानियाँ अपनी रचनात्मकता में छिपी प्रेरणा और संदेश को सम्प्रेषित करने में समर्थ हैं। लोकनाट्य 'जोगीनाथ' का प्रतिपाद्य पारंपरिक होते हुए भी प्रस्तुति रोचक है। बुन्देली कविताएँ 'मुलिया कौ घरबारौ' और 'अहानो पर आधारित बुन्देली दोहे' हमारे चिन्तन और चरित्र दुरस्त बनाने में अपनी भूमिका का यथोचित निर्वाह करते हैं। ऐसे रचनाकारों को हार्दिक शुभकामनाएँ।

आलेख 'पर्यावरण संतप्त बुन्देली उत्सव-गोवर्धन' के शीर्षक में 'संतप्त' शब्द मुझे खटकता सा प्रतीत हुआ। अतः इस चुभन को विनम्रता के साथ अनुभव कराने का साहस कर रहा हूँ, कृपया क्षमा करें। नन्नी किसा- 'लिहाज' बुन्देली बसंत में लेखक की उपस्थिति मात्र के लिहाज से ही उपयुक्त लगी। उरई 'जिला जालौन' के बुन्देली संग्रहालय के विषय में लेखिका द्वारा दी गई जानकारी भले ही अलंकारिक है, लोक संस्कृतिकारों एवं पुरातत्वविदों हेतु उपयोगी है। अतः लेखिका साधुवाद की अधिकारिणी हैं। और अच्छा होता यदि कोई-कोई लोक संस्कृतिकार, लोकसाहित्यकार या लोककलाकार अथवा पुरातत्वक्षेत्र का नवशोधार्थी इस संग्रहालय को 'अनूठा' सिद्ध करने की कोशिश करता। इससे 'अपनी मटकी के मठा कौं, को पतरौ कहत' वाली बुन्देली कहावत की चरितार्थता का भी संजोग न जुड़ता। खैर-

लिखना, कहना तो और बहुत कुछ चाहता हूँ, पर डरता हूँ कि ज्यादा लिखने से सब धरा का धरा न रह जाये। इसलिए 'बुन्देली बसंत' के १५वें अंक के बारे में साररूप इतना ही कहूँगा कि संस्कृति, साहित्य, कला और परम्परा से संबंधित विविध और बहुरूप सामग्री का ऐसा संकलन असंभव नहीं तो दुर्लभ अवश्य है। इसे आकार और प्रकार देने वाले मनीषी धन्य हैं। मेरी अनंत शुभकामनाएँ।

-एम.आई.जी. १६, एकता पार्क, चौबे कालोनी छतरपुर म०प्र० ✠

माटी मेरे सागर की

-डॉ. वर्षा सिंह

माँ के आंचल जैसी प्यारी , माटी मेरे सागर की ।।
सारे जग से अद्भुत न्यारी, माटी मेरे सागर की ।।

भूमि यही वो जहाँ "गौर" ने, दान दिया था शिक्षा का
पाठ पढ़ाया था हम सबको, संस्कार की कक्षा का
विद्या की यह है फुलवारी , माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी.......

विद्यासागर जैसे ऋषि-मुनि की पावनता पाती है
धर्म, ज्ञान की, स्वाभिमान की अनुपम उज्जवल थाती है
श्रद्धा, क्षमा, त्याग की क्यारी, माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी......

'वर्णी जी' की तपो भूमि यह, यही भूमि 'पद्माकर' की
'कालीचरण' शहीद यशस्वी, महिमा अद्भुत सागर की
सारा जग इस पर बलिहारी, माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी.......

नौरादेही में संरक्षित वन जीवों का डेरा है
मैया हरसिद्धी का मंदिर, रानगिरी का फेरा है
आबचंद की गुफा दुलारी, माटी मेरे सागर की ।।
मां के आंचल जैसी प्यारी........

राहतगढ़ की छटा अनूठी ,झर-झर झरती जलधारा
गढ़पहरा, धामौनी बिखरा , बुंदेली वैभव सारा
राजघाट, रमना चितहारी, माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी..........

एरण पुराधाम विष्णु का , सूर्यदेव हैं रहली में
देव बिहारी जी के हाथों सारा जग है मुरली में
पीली कोठी अजब सवारी , माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी........

मेरा सागर मुझको प्यारा, यहीं हुए लाखा बंजारा
श्रम से अपने झील बना कर, संचित कर दी जल की धारा
'वर्षा'-बूंदों की किलकारी , माटी मेरे सागर की ।।
माँ के आंचल जैसी प्यारी.........

-एम- १११, शांति विहार, रजाखेड़ी, सागर (म.प्र.) ✠

मदरालालपुर (कालपी) का सूर्यकुण्ड एवं सतमठियाँ

-डॉ.मिथलेश गुप्ता, डॉ. आशुतोष त्रिपाठी

उत्तर प्रदेश के जालौन जनपद की तहसील कालपी पौराणिक एवं ऐतिहासिक विशिष्टताओं के कारण बुन्देलखण्ड ही नहीं अपितु सम्पूर्ण देश में अपनी पहचान कायम रखे हुए है। विश्व के प्रसिद्ध तीन सूर्य मंदिरों में (कोणार्क, मुल्तान, कालपी) परिभाषित, मोक्ष प्रदाय नन्दी ग्राम (अयोध्या), सम्भल ग्राम (कालपी) तीन स्थानों में कालपी कृष्ण द्वैयपायन महर्षि वेदव्यास की जन्मस्थली, ऋषि पराशर की तपोभूमि, गंगापुत्र भीष्म की प्रतिज्ञा स्थली, हिन्दू मुस्लिम एकता का प्रतीक, बुन्देलखण्ड का प्रवेश द्वार, झाँसी की रानी की अंतिम रण स्थली, कृष्णाप्रिया सूर्यतनया कालिन्दी के पावन तट पर स्थित कल्पऋषि की कालपी पवित्रता एवं पुण्य में काशी एवं प्रयाग के समान है।

कालपी नामकरण के सम्बन्ध में अनेक मतमतान्तर हैं। एतदर्थ यह कहा जा सकता है कि 'मुण्डे मुण्डे मतिर्भिन्ना, तुण्डे-तुण्डे सरस्वती, कतिपय विद्वान् 'कल्पि' से कालपी मानते हैं। कुछ संस्कृत नाटककार आचार्य 'भूवभूति' के नाटक 'उत्तररामचरितम्' में वर्णित 'कालप्रिय' शब्द से कालपी का संबंध जोड़ते हैं। उत्तररामचरितम् के प्रथम अंक में नान्दी के अनन्तर सुत्रधार कहता है- *सूत्रधार-*

''अलमति विस्तरेण।

अद्य खलु भगवतः कालप्रियानाथस्य यात्रायामार्य

मिश्रान्विज्ञापयामि-एवमत्रभवने विदांकुर्वन्तु।''

सूत्रधार-बस, अधिक विस्तार मत करो। आज भगवान कालप्रिय नाथ (शंकर की) यात्रा के अवसर पर मैं सम्माननीय महानुभावों से निवेदन करता हूँ कि आप लोग यह जानें कि काश्यपगोत्रोपन्न, व्याकरण, मीमांसा तथान्याय के पण्डित श्रीकण्ठ उपाधि से विभूषित जतुकर्णी के सुपुत्र आदरणीय भवभूति नामक कवि हैं।

ऋग्वेद के वर्णनों के अनुसार लोगों को प्रकाशित करने वाले सूर्य ही सूर्य देवता हैं। इसलिए सूर्य देवता की स्तुति में भौतिक सूर्य की विशेषताएँ कही गई हैं। सूर्य का चमकदार घेरा उपासकों के लिये विशेष आकर्षण है। सूर्य को मित्रावरुण का नेत्र कहा गया है। यह नेत्र दूरद्रष्टा है और सर्वद्रष्टा है। यह स्थावरों और जंगमों को गति प्रदान करता है। सूर्य के रथ में एक या सात घोड़े जुते होते हैं। सूर्य का पिता द्यौ और माता अदिति हैं। सूर्य शब्द गमन अर्थ में सृ-गतौ धातु से 'सरति आकाशे सूर्यः' इस व्युत्पत्ति के आधार पर सूर्य शब्द निष्पन्न है। आकाश में गमन करने के कारण ही इसे सूर्य कहा जाता है। श्री अमर सिंह द्वारा विरचित 'अमरकोष' में सूर्य के सैंतीस (३७) नामों का उल्लेख किया गया है-सूर, सूर्य, अर्यमा आदित्य, द्वादशात्मा, दिवाकर, भास्कर, अहस्कर, ब्रघ्न, प्रभाकर, विभाकर, भास्वान्, विवस्वान्, सप्ताश्व, हरिदश्व, उष्णरश्मि, विकर्तन, अर्क, मार्तण्ड, मिहिर, अरुण, पूषा, द्युमिणिः, तरणि, मित्र, चित्रभानु, विभावसु, ग्रहपति, त्विषाम्पतिः, अहर्पतिः, भानु, हंस, सहस्त्रांश, तपन, सविता, रवि।[२]

कालपी से लगभग बारह (१२ किलोमीटर) की दूरी पर उत्तर एवं पूर्व दिशा के मध्य में 'मदरालालपुर' नामक ग्राम कालिन्दी (यमुना) के तट पर स्थित है। जो कि अपने अंक में सूर्यकुण्ड धारण करने का गौरव प्राप्त किये हैं। ऐसा कहा जाता है कि संसार के समस्त देशों में भगवान् सूर्य की मान्यता अनादिकाल से निरन्तर चली आ रही है। इस स्थान के विषय में जब हमें जानकारी मिली तो हम दोनों ने प्रत्यक्ष रूप से वहाँ जाने का निर्णय किया। तमाम ऊबड़-खाबड़ रास्तों से होते हुए हम लोग इस स्थान पर पहुँचे। उत्सुकतावश तुरन्त यमुना के किनारे पहुँच गये, परन्तु वहाँ पहुँचकर हमें इस कुण्ड का दर्शन नहीं हुआ। सहसा ऐसा लगा कि जैसे स्थान चुनाव में भूल हो गयी। लेकिन एक किसान ने हमें सूर्यकुण्ड तक पहुँचा दिया। यमुना का पानी कुण्ड के पानी से मिल जाने के कारण कुण्ड को पहचानना मुश्किल लगता है।

सूर्यकुण्ड की महत्ता के विषय में गाँव के श्री रामप्रकाश शास्त्री ने हमें इसके पौराणिक महत्व को समझाते हुए एक द्रष्टांत भी सुनाया। जिसके अनुसार एक बार नारद के भड़काये जाने पर श्रीकृष्ण ने अपने प्रपौत्र शाम्ब को कुरुप होने का शाप दे डाला। शाम्ब की प्रार्थना पर नारद मुनि ने ही शाम्ब को सूर्योपासना के माध्यम से सूर्यदेव को प्रसन्न कर अपनी कुरुपता समाप्त करने का उपाय बतालाया। शाम्ब की कुरुपता का कारण कोढ़ था। शाम्ब ने नारद मुनि के बताये अनुसार सूर्य को प्रसन्न कर लिया तब सूर्यदेव ने शाम्ब से कहा कि तुम्हें शीघ्र ही नदी में तैरती एक प्रतिमा मिलेगी, जिसे तुम मूलस्थान में स्थापित करा देना। शाम्ब को स्नान करते समय चन्द्रभागा नदी में सूर्य की प्रतिमा मिली जिसके विषय में सूर्यदेव ने बतलाया कि इस प्रतिमा का निर्माण कल्पवृक्ष द्वारा, विश्वकर्मा ने किया है। सूर्यदेव ने शाम्ब से आगे कहा-

शान्निध्यं मम पूर्वाह्ने सुतीरे द्रक्ष्यते जनः।

कलाप्रिये च मध्याह्नेऽपराह्ने चात्र नित्यशः।।

अर्थात् लोग मेरी उपस्थिति पूर्वाह्न में सुतीर में, मध्यान्ह में कलप्रिय में तथा अपरान्ह में इस स्थान में अर्थात् मूलस्थान में देखेंगे। उपर्युक्त सम्पूर्ण कथानक वराह पुराण में वर्णित है तथा तीनों स्थानों की स्थिति इस प्रकार बताई गयी है-

साम्बं सूर्य प्रतिष्ठां च कारयामास तत्त्ववित्।

उदयाचले च संश्रित्य यमुनामाश्र दक्षिणे।।

इस प्रकार स्कन्द पुराण के अनुसार साम्ब ने सूर्यदेव की प्रतिमा तीन स्थानों पर स्थापित की-१. पूर्वीय पर्वत, २.

यमुना नदी के दक्षिणी तट पर कालप्रिय में, ३. तथा पश्चिमी पर्वत मूलस्थान में। डॉ. वा.वि. मिराशी (नागपुर) ने अपने शोध में इस बात को प्रमाणित किया है कि शाम्ब ने यमुना नदी के तट पर कालप्रिय में जो सूर्य की प्रतिष्ठा की है, वह स्थान अन्यत्र और कोई नहीं सिर्फ कालप्रियनाथ की कालपी है।[३] तभी से एसी मान्यता चली आ रही है कि जो भी कुष्ठ रोग से पीड़ित हो, यदि वह इस कुण्ड में स्नान करने तो रोग से मुक्ति प्राप्त होती है। संयोगवश उरई के एक परिवार की कन्या कुष्ठ रोग से पीड़ित थी, जिसे वह कुण्ड में स्नान कराने के लिए साथ लाये थे। जिससे साम्ब की पौराणिक घटना को बल प्राप्त होता है। अस्तु आज भी सैकड़ों की संख्या में पीड़ित (कुष्ठ से) लोग प्रत्येक पूर्णिमा एवं अमावस्या को आते हैं। विगत १७ सितम्बर २०१४ को यहाँ पर ओजोन संरक्षण दिवस पर विशाल जनसभा का आयोजन भी किया गया था। साथ ही अगहनी पूर्णमासी को यहाँ पर एक विशाल मेला लगता है।

किंवदन्ती है कि नाटककार भवभूति के तीनों नाटकों (मालतीमाधव, महावीरचरित, उत्तररामचरितम्) का मञ्चन यहीं हुआ करता था। साथ ही यहाँ पर सत्तर हजार (७०,०००) लोगों के बैठने का प्रेक्षाग्रह था। महाकवि भवभूति के नाटक 'महावीरचरित' की प्रस्तावना में सूत्रधार कहता है कि-

भगवत: कालप्रियनाथस्य यात्रायामार्यमिश्रा: समदिशन्ति।

अर्थात् भगवान कालप्रियनाथ के मेले में एकत्रित सम्मानित जनों ने मुझे ऐसा उपदेश दिया है।

इनके दूसरे नाटक मालती माधव की प्रस्तावना में प्रथम अभिव्यक्ति इस प्रकार है-

मारिष, सविहितनि, रंगमंगलानि संन्तिपातितश्च भगवत:
कालप्रियनाथस्य यात्रा प्रसंग: न नाना दिगन्तवास्तव्यो
महाजन। समाज: आदिष्टश्चास्मि विद्वज्जन परिषदां यथा
केनचिद्। पूर्व प्रकरणे वयं विनोदयितव्या इति।

अर्थात् मारिष, रंगमंच की मांगलिक क्रिया विधिवत् सम्पन्न हो चुकी है। भगवान कालप्रियनाथ के मेले के सन्दर्भ में अनेक दिशाओं से सज्जन समाज यहाँ एकत्रित हुआ। विज्ञ समाज द्वारा मुझे आज्ञा दी गई है कि किसी नवीन नाटक के अभिनय से उनका मन:प्रसादन किया जाये।

यहाँ पर गाँव के बाहरी हिस्से पर टीले के ऊपर कुछ मठियाँ (SMALL ROMANS) विद्यमान हैं। मठियों तक पहुँचने के लिये उन्चास (४९) सीढ़ियों को चढ़कर पहुँचा जाता है। जैसे ही ऊपर पहुँचते हैं सामने एक मठिया, ठीक उसके पीछे फिर एक, इसके पीछे दो, इसके पीछे तीन, सबसे पृष्ठ भाग में दो मठियाँ हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर नौ (०९) मठियाँ हैं। ज्यादातर मठियाँ जीर्ण-शीर्ण हालत में हैं। इन मठियों के दरवाजें की चौखट 'बालू पत्थरों' की बनी हुई हैं। जो कि गुप्तकाल की याद दिलाती हैं। जनश्रुति के अनुसार ये मठियाँ राजा लहरिया श्रीचन्द्र की लोढ़ारानी सहित सातधर्म पत्नियों के सती स्थल हैं। इसी कारण इन्हें सतमठियाँ कहा जाता है, परन्तु जब हम लोगों ने इस स्थान का अवलोकन किया तब पाया कि वहाँ पर सात मठियों के स्थान पर नौ मठियाँ हैं। इन मठियों के अन्दर मूर्ति के लिये भी स्थान सुरक्षित हैं।

इस क्षेत्र में एक टीला और भी है। जो कि काफी विशाल एवं विस्तृत है। इसे वहाँ पर 'मोदीटोला' के नाम से जाना जाता है। इस मोदी टोला से अभिप्राय यह है कि ऐसा मुहल्ला जहाँ पर वैश्यवर्ग या व्यापारी वर्ग हो अथवा व्यापार करता हो। इस क्षेत्र से कुछ मिट्टी के पात्र तथा उनके अवशेष प्राप्त हुए हैं, जो कि बुन्देलखण्ड संग्राहलय (भरत चौक उरई) में सुरक्षित हैं। इनके संदर्भ में राष्ट्रीय संग्राहलय झाँसी के वीथिका सहायक श्री रुद्रकिशोर पाण्डेय का कथन है कि ये पात्र कुषाण काल तथा गुप्तकाल के पात्रों से मिलते जुलते हैं। इन मृण पात्रों की उपलब्धि से कहा जा सकता है, कि कालप्रिय (सूर्य) मंदिर का अस्तित्व कुषाण गुप्त काल में था।

निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि दशकों से उपेक्षित इस स्थान पर यदि भारत सरकार 'भारतीय पुरातत्व एवं सर्वेक्षण विभाग' के माध्यम से उत्खनन करवाये तो निश्चित रूप से महाभारतकालीन व कुषाणकालीन युग की सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक व शिल्पगत विशेषतायें प्रकाश में आ सकती हैं। ऐसी धरोहरें हमारे सांस्कृतिक, पौराणिक गौरवशाली भारत का स्वरूप विश्वपटल पर रखने में समर्थ है।

संदर्भ-

१. उत्तररामचरितम् (प्रथम अंक)-भवभूति, पृष्ठ-१३
२. अमरकोष-अमरसिंह, पृष्ठ-३२ (प्रथम दिग्वर्ग), श्लोक सं०-२८,२९,३०
३. गौरवशाली कालपी, डॉ.हरिमोहन पुरवार, पृष्ठ-७२, सं०-२००३
४. उपर्युक्त ,, पृष्ठ -७५

-हिन्दी विभाग, श्री रामकृष्ण पी०जी० कालेज कुरारा, हमीरपुर उ०प्र० 卐

बुन्देली दोहे

-वीरेन्द्र बहादुर खरे

उठा धरी दिनभर करें, कबै करें सिंगार।
मोरी माँ बस सजत है, तीज ब्याव त्यौहार।।१।।

पति खाँ चश्मा न मिलै, पूत मँगावत चाय।
एक अकेली जान माँ, की की के ढिग जाय।।२।।

चढ़ी नदी फुटी तरी, बूढौ खेवन हार।
तिनका बोलो नाव खाँ, कर दैहों मैं पार।।३।।

नारी खाँ कर्तव्य दऔ, बस नर खाँ अधिकार।
सिरजन हारे जगत के, जौ कैसौ व्यवहार?४।।

-किले का मैदान, टीकमगढ़ म०प्र० 卐

हैं। टीकमगढ़ जिले के मोहनगढ़ नामक स्थान पर आकर्षक बौद्ध मठ था। नष्ट भ्रष्ट होकर मठ तो अवशेषमात्र रहा गया है, परंतु इसमें स्थित युवराज सिद्धार्थ के गृह त्याग को दर्शाती हुई आकर्षक प्रतिमा तीन-चार वर्ष पूर्व चोरी चली गयी।[१२] इसी जिले के जतारा तहसील मुख्यालय पर पुराने बस स्टेंड पर स्थित एक प्राचीन मठ को सुंदरीकरण के नाम पर चलने वाला बुलडोजर लील गया।[१३] होशंगाबाद के खिड़की बगरौल तथा हीरापुर में भी बुद्ध प्रतिमाएँ हैं।

ग्वालियर चंबल-संभाग का बुंदेलखंड में आने वाला क्षेत्र भी बौद्ध पुरा-संपदा से समृद्ध है। दतिया जिले के गुजर्रा ग्राम में प्राप्त अशोक का शिलालेख यह इंगित करता है कि सम्राट ने यह शिलालेख बौद्ध धर्म के प्रचारार्थ शिल्पांकित कराया था। इसी जिले के बडौनी खुर्द ग्राम की गोपेश्वर पहाड़ी पर अब भी बौद्ध मठ के अवशेष हैं, परंतु दतिया के इतिहासविद् स्व. श्री बाबूलाल गोस्वामी का मत इसके विपरीत है- "बौद्धों ने सोनागिरि पहाड़ी के सामने गोपेश्वर पहाड़ी पर डेरा डालकर प्रचार किया था। वहाँ मिली मिट्टी की मुद्राओं से प्रकट है कि छठवीं शताव्दी में बौद्ध भिक्षु वहाँ थे। परंतु बौद्धों का प्रभाव इस क्षेत्र में जनसाधारण पर नहीं हुआ। जिन लोगों ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था, वे शैव थे। उन्होंने बाद में बौद्ध धर्म त्याग कर पुनः अपना पुराना शैव धर्म स्वीकार किया। बडौनी के जोगी उनमें मुख्य हैं। सातवीं शताव्दी के पश्चात बौद्ध धर्म के प्रतीक नहीं मिले। बडौनी की जिस मूर्ति को बुद्ध की मूर्ति कहा जाता है, वह वास्तव में जैन तीर्थकर की मूर्ति है।"[६] परंतु दतिया के ही एक और इतिहासविद् श्री राधारमण वैध का मत इसके पक्ष में है - इस क्षेत्र में केवल कुषाणों ने अधिकार ही नहीं किया होगा, वरन् यहाँ उनका बौद्ध धर्म-प्रसार मथुरा को केन्द्र बनाकर हो रहा था, जिसके अवशेष पवाया और छोटी बडौनी में देखे जा सकते हैं।"[७] इतिहास विदों के लिए बडौनी प्रकरण शोध का विषय हो सकता है।

बुंदेलखंड का पवाया (पदमावती) इतिहसकारों के मध्य नागों की राजधानी और साहित्यकारों के बीच भवभूति के नाटकों की रंगस्थली के लिए विख्यात है। बौद्ध धर्म का अस्तित्व यहां भी रहा है। डबरा के पास सिमरिया में बौद्ध स्तूपों के संकेत प्राप्त हुए हैं। यह स्थल पवाया के आसपास ही है। शिवपुरी जिले की कोलारस तहसील के कैलधार के शिवमंदिर तथा पारागढ़ स्थित शनिमंदिरों की दीवारों पर भगवान बुद्ध की प्रतिमा के स्पष्ट अंकन हैं। सेसई ग्राम में एक नीम के पेड़ के नीचे चबूतरे पर सैकड़ों खंडित-अखंडित प्रतिमाओं का ढेर लगा है। इसी ढेर में भगवान बुद्ध की आशीर्वादात्मक मुद्रा में दो प्रतिमाएँ थीं। प्रस्तुत शोधपत्र की साम्ग्री के लिए जब स्थल भ्रमण किया तो प्रतिमाएँ नहीं दिखीं। स्पष्ट है कि चोरों ने उन्हें अपना निशाना बना लिया।"[८] इसी जिले की पिछोर तहसील में पिछोर-रन्नौद मार्ग पर ग्राम राजापुर में ईटों व चूने से निर्मित एक बौद्ध मठ अब भी स्थित है। पुराविदों के अनुसार यह मठ आठवीं-नवीं शताव्दी का है।"[९] राजापुर ग्राम से दो किलोमीटर दूरस्थ ग्राम मायापुर है। ये दोनों ग्राम आवासीय पत्थर खदानों के उत्खनन के लिए विख्यात हैं, पर इन ग्रामों में भारी पुरा संपदा फैली हुई है। इसमें से कुछ चोरों के हत्थे चढ़ी है, कुछ देव के रूप में पूजित हो रही है। और कुछ यत्र-तत्र बिखरी पड़ी है।

अशोकनगर जिला मुख्यालय से कचनार-आरौन मार्ग पर अशोकनगर से १० कि.मी. दूर स्थित तुमैन गाँव ऐतिहासिक और पुरावैभव की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न है। विद्वानों ने इस स्थल की पहचान प्राचीन तुम्बवन से की है। इस स्थल से हिंदु व जैन धर्म के अतिरिक्त बौद्ध धर्म से संबंधित पुरा सामग्री भी प्राप्त हुई है। बुंदेलखण्ड के इस अंचल में कई बौद्धस्तूप अब भी हैं। महाजनपद काल के पश्चात् तुमैन तथा आसपास का क्षेत्र मौर्य साम्राज्य के अंतर्गत था। इस समय एक बड़े बौद्ध स्तूप का निर्माण हुआ.... .....। वर्तमान तुमैन ग्राम के समीपवर्ती क्षेत्र में तीन बौद्ध स्तूपों के अवशेष, पठार को काटकर बनाया गया राजमार्ग तथा पत्थर को काटकर बनाई गई गुफा की खोज का उल्लेख करना नितांत आवश्यक है। एक बड़े बौद्ध स्तूप के उत्खनन से ज्ञात हुआ है कि इसका निर्माण मौर्यकाल में हुआ। शेष स्तूप मौर्यकाल के पश्चात् निर्मित कराये गये प्रतीत होते हैं।"[१०] झाँसी जिले में स्थित एरछ प्राचीन और ऐतिहासिक कसबा है। कहा जाता है कि बौद्ध साहित्य में जिस एरकच्छ का उल्लेख है, वह यही एरछ है।"[११] बुद्ध प्रतिमाएँ बाँदा, दमोह और सागर जिलों में भी प्राप्त हुई हैं।

बुंदेलखंड का कोई भी भाग ऐसा नहीं है, जहाँ से भगवान बुद्ध की मूर्तियों, स्तूप अथवा उनसे संबंधित सामग्री प्राप्त न हुई हो। "बौद्ध धर्म मौर्यकाल में चरमोत्कर्ष स्थिति में था। बुंदेलखण्ड के किसी स्थानीय शासक ने इसे राज्याश्रय प्रदान नहीं किया। गौतम बुद्ध स्वयं भी कोशाम्बी तथा सहजात (इलाहाबाद) जाते हुए चेदि की राजधानी शुक्तिमतीं या सोत्थिवती से अवश्य गुजरे होंगे। हेनसांग चीनी यात्री ने खजुराहो को बौद्ध धर्म बाहुल्य क्षेत्र के रूप में उल्लिखित किया। दतिया में गोपेश्वर पहाड़ियों में बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। धर्मचक्र मुदा में बुद्ध मूर्ति सारनाथ के समान प्राप्त है। खजुराहो में विशाल बौद्ध प्रतिमा में नवीं-दशवीं शती के अक्षरों में बौद्ध मंत्र अंकित है। हमीरपुर जनपद में बौद्ध स्थापत्य एवं शिलालेख उपलब्ध हैं। बौद्ध मठों को स्थानीय शासकों के द्वारा भूमि दान दी गयी थी।"[१२]

बुंदेलखण्ड में बौद्ध धर्म का पर्याप्त प्रभाव रहा है, परन्तु इसका सम्यक् मूल्यांकन इतिहासकारों द्वारा नहीं किया गया। इस अंचल में बुद्ध-विहार भी निर्मित हुए होंगे, भिक्षु भी हुए होंगे और ग्रंथ-लेखन का कार्य भी हुआ होगा, पर इस ओर अन्वेषण और अनुसंधान करने में सक्षम विद्वानों द्वारा उदासीनता का परिचय दिया गया।

हिंदु और जैन बहुल बुंदेलखण्ड के ग्रामीण अंचलों में एक विडंबना यह है कि अशिक्षा के कारण अधिकांश ग्रामीणजन भगवान बुद्ध से परिचित ही नहीं हैं। यत्र-तत्र प्राप्त बुद्ध-मूर्तियाँ सिंदूर से पुतकर हनुमान के रूप में पुज रही हैं अथवा प्रतिमा साम्य के कारण बैठी हुई मुद्रा में प्राप्त बुद्ध-प्रतिमा को जैन प्रतिमा मान लिया गया है। स्तूपों व विहारों के रिक्त स्थान को शिवलिंग या देवी-देवताओं की मूर्तियों से पूरित किया गया है। बुंदेलखण्ड में बौद्ध धर्म का प्रभाव कैसा और कितना रहा है तथा उसका उन्मूलन कब, क्यों और किन परिस्थितियों में हुआ- ये प्रश्न मौलिक शौध के विषय हो सकते हैं।

विडंबना एक और भी है। जिन भगवान बुद्ध ने विश्व को करूणा का संदेश दिया, वही भगवान बुद्ध लाविंग बुद्धा के रूप में धन्ना सेठों के सज्जागृहों में शो-पीस के नाम पर उनकी शोभा बढ़ा रहे हैं। जिस देश में भगवान बुद्ध ने जन्म लिया, जिस देश में बुद्धं शरणं गच्छामि...... की पवित्र स्वर लहरियॉं गुंजित हुईं, उसी देश में तथागत और उनके धर्म की दुर्दशा हो गयी........क्यों ?

संदर्भ संकेत

०१. बुदेली भाषा और साहित्यः संपा.:डॉ० अशोक शर्मा, पृ. १४, म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल, संस्क. २००४

०२. बुंदेलखण्ड का पुरातत्वः डॉ. एस.डी.त्रिवेदी, पृ. ५५-५६, राजकीय संग्राहालय झॉसी, १६८४

०३. हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियां : डॉ. शिवकुमार शर्माः पृ. ३६-३७, अशोक प्रकाशन आगरा, १६७७

०४. इतिहासकार पं. हरिविष्णु अवस्थी, अवस्थी चौक टीकमगढ़ द्वारा प्रदत्त जानकारी १२.१०.२०१४

०५. साहित्यकार श्री वीरेन्द्र बहादुर खरे, कटरा बाजार, नगर पालिका चौराहा टीकमगढ़ द्वारा प्रदत्त जानकारी, १२.१०.२०१४

०६. दतिया : उद्भव और विकास संपा. डॉ. के.बी.एल. पाण्डे, पृ. १०३ः मुडियन का कुआ, दतिया, १६८६

०७. वही, पृ. १६

०८. स्थल भ्रमण ०६.१०.२०१४

०६. स्थल भ्रमण ०६.१०.२०१४

१०.. मनीषा १६८० (ग्वालियर दर्शन) संपा. डॉ. हरिहरनिवास द्विवेदी पृ. ३०० पर प्रकाशित श्री कृष्ण कुमार त्रिपाठी का आलेख) ग्वालियर शोध संस्थानः जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर

११. बुदेलखण्ड : साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक वैभव : डॉ. रमेश चन्द्र श्रीवास्तव, पृ. २८१, बुदेलखण्ड प्रकाशन, बलखंडी नाका, बांदा, संस्क-अनुल्लेख

१२. वही, पृ. २४१

-सहायक प्राध्यापक हिन्दी एवं प्रभारी प्राचार्य,
शा.महाविद्यालय करैरा शिवपुरी 卐

पेशावर हृदय विदारक नरसंहार का दर्द-

की कौ का बिगार रये ते जे

-विजयलक्ष्मी 'विभा'

कैसौ कलजुग आ गओ भैया, सब दुनिया बौरानी,
भर गये घड़ा पाप के सबरे, छलक परौ है पानी।

की कौ का बिगार रये ते जे,
नौनें मोड़ा-मौंड़ी,
लैकें बस्ता गये मदरसा,
बना-बना कें जोड़ी,
दाग दइँ इनपे बन्दूकें,
तनकऊ दया ना छोड़ी,
खेलत कूदत सब लरकन खॉं,
खा गई मौत निगोड़ी,
माई बाप के फटे कलेजा,
कैसी किस्मत फोड़ी,
कलजुग कौ इतिहास बना रये,
देखौ पाकिस्तानी।

संसद में चल रओ हो हल्ला,
सब हो गये हैं बागी,
कुर्सी ऊपर उछल कूद रये,
छिपे छिपाये दागी,
कौनऊँ पुरसांहाल न, जनता,
फिर रई भागी-भागी,
कैसे-कैसे स्वांग रचत हैं,
देखौ तौ जे स्वांगी,
मौन साध के बैठ गये हैं,
सारे नेता त्यागी,
चारउ तरफ देखलो, कैसी
हो रई है मनमानी।

धरम बदल रे करम न बदले,
लड़ रये भाई-भाई,
रोज-रोज बँटवारा कर रये,
बँट रये बापू माई,
कहूँ छिनैती कहूँ डकैती,
चल रई कहूँ लड़ाई,
करकें बड़े-बड़े घोटाला,
कर रये कहूँ कमाई,
फैलाकें आतंक छिपे हैं,
कौनऊँ ठौर कसाई,
अपने-अपने ढंग से कर रई,
सब रैया शैतानी।

लेकिन रखौ भरोसा भैया,
फिर पूरब लौ हेरौ,
घिरन लगो देखौ उजयारौ,
आउन लगो सबेरौ,
भैया जी लाहें सब सुख,
उनसें नजर न फेरौ,
धीरज रखौ और सुख दुख में,
एक उनइँ खॉं टेरौ,
जो कैहौ वे दैहें तुमखॉं,
करें न मेरौ तेरौ,
वे सच्चे नेता जनता के,
उनकी नैंया सानी।

-साहित्य सदन, १४९ जी/२ चकिया, इलाहाबाद उ०प्र० 卐

काँ मर जाबैं?

आत्मपीड़ा-

-डॉ.शिवाजी चौहान

आजकाल जाँ देखै ताँ होरी सी धधक रई। चौतरफाँ आग लगी आग। आपुस में गुत्थम गुत्था, धम्माधाई, धमा चौकड़ी मची। कोऊ काऊ की सुनत है का। न गुनत है अपनी धुनत है जादाँ कऔ तौ ऊपर सें खपड़िया और चुनत है। हित की बात कोऊ नइँ कत, काऊ सें पूँछौ कै काँ जारए, तौ कत कै कऊँ नइँ, तनक इतइँ। ईकौ तौ अजमा लिऔ घर में, गैल-घाट, खेत खरयान, हाट, बाजार, दफतरन, मोटरन, रेलन, तमाशन में मान्स लरत मिलत। गम्म कोऊ नइँ खात। अपनी-अपनी चलाँयँ चाउत। कोऊ-काऊ से कमती नइयाँ। लंका में बाउन गज सें हल्कौ कोऊ नइँ हतौ ऐसी बुजुरगन के मों सें सुनीती। गलती खुद करत, दूसरन पै अनुवा लगावैं। जोई मचो सब जाँगा। विवेक सें काम नइँ लेत का नीकौ है का फीकौ है?

पैलें देहात कौ अरथ (मतलब) हतौ काऊ कें कौनऊँ काम आ गऔ, ब्याव, सादी, तेरइँ, कथा, भागवत, कौ तौ सबइँ गाँव हात बटाउत तौ, हात देत तौ, सहायता करत तौ। अब बाकौ अरथई बदल गऔ। अर्थात् एक दूजे में हात दै हातापाई करत। मारा मल्ल मची, खूना खच्ची होत रत। औ सुनो जैसें कौ कोऊ गाँव से सौदा करबे कस्वा में हाट बजारे आउत। उयै कऊँ उतइँ दिन डूब गऔ तौ बौ मन में सोचत कै कोऊ संगी साथी घर लुक खों मिल जाए तौ कित्ती अच्छौ रै बातें हुएँ, रस्ता कटे। पैल कितनें प्रेम, अपनोपन, आतमीता, विसवास, लगाव हतौ। अब ऊ की जाँगा बैमनसता, धोखा, घिरना, बैर पनप रए। अब भै ब्याप गऔ भै। अब मानुस जानी कै वो हटारौ घरै चलो जारऔ सोचत कै कोऊ मिल न जाबै। मानुस खों देख कैं मानुस डरान लगौ। कायसें कै अब मानुस खों मानुस खान लगौ। वातावरन में कित्ती तबदीली हो गई। भोग तौ ऐसौ लगत कै विसवास निठुअई जा जगती सें उठ गऔ।

साँसी कयँ मौसी कौ काजर, साँसी बात सटोले कयँ सबके मन सें उतरे रयँ। साँसी बात कै नइँ सकत। मों दुचजे जीबौ मुसकिल होजे। दबंगन की चल रई धाँधल गर्दी गुन्डागर्दी गेरऊँ सें गेरें। जबर मारे रोन न देय जा कानात सच्ची हो रई। बोली पै गोली लगे साँसी पै फाँसी। इतै कुआ उतै खाई-दोऊ तरफ सें मौत आई। साँसे तौ फाँके करें लाबर लड्डू खायँ? कैसौ समै आ गऔ बाप-बेटा की, भइया-भइया की, लोग-लुगाई की, पास-परोसी की आपुस में नइँ बनत। एक दूसरे के ताँईं हेरत नइयाँ, अनबोलौ है। कोऊ काऊ की बढ़ती नइँ देख सकत लोग बाग अपने दुख में दुखी नइयाँ दूसरे के सुख सें दुखी है। उनपै देखौ नइँ जात। बताऔ का करौ जाय?

लोगन नें पइसा खों भगवान मान लऔ। कमावे में जुटे, भागम-भाग मची, ऐन केन प्रकारेन धन आबै हाय-हाय परी। जबकै मरबै पै संगें छिदाम नइँ जानें सब इतइँ धरौ राने। अर्थ नइयाँ जौ अनर्थ है। पइसा रनवन कों करवा देत। आपुस में मानुस खून के प्यासे हो जात एक जनें कै रएते कै तुमने सुनी आदमी चन्दा पै तौ पौंच गऔ पै आदमी सें दूर हो गऔ।

साँसी आय जा बात। बीच में भेदभाव की फौलादी दीवारें खिचीं। मिलन होय तौ कैसें होय। जबकै दीवार तौ दीवार सें मिल सकत। पै मानस मानस सें नइँ मिल सकत। जौ सौ अन्देर आय। प्रकृति बदल गई सँगै संगैं मानुस की सोऊ प्रकृति बदल गई। कायसें कै विज्ञान विशेष ज्ञान ने कित्ती तरक्की करी, घर बैठें दुनिया की खबरें जानों, बात करौ। टी.वी.देखों। बात की बात में चाय जितै पोंचौ। जौतो सब कछू भऔ, वैज्ञानिकन नें धरती, आकास, हवा, पानी, पहाड़, समुन्दर सब पै अपनौ अधिकार जमा लऔ, जानकारी लै लई। हवा, बिजली, पानी सब वाको कैबे में चलत। विकास के सँगै-सँगै आज के नए मानुस ने बिनास की चीजें सोई जुटा लइँ, नइँ-नइँ खोजें करीं, जीसें खोज मिट सकत। जौ गलत भऔ। बारुद के ढेर पै बैठी जा दुनिया। चायँ जब मिट सकत ईमें दोराय नइयाँ।

सूरज के ताप सें बढ़ोत्तरी होत जा रई। बरखा, सीत में कमी आ गई। फसलें होंय तौ कैसें होय। जा जमाने में ईमान खों फाँसी हो गई। पुरखों खों उमर कैद। न्याय पइसन में बिक गऔ। बखत की बलिहारी तौ आय काऊ ने कई सो ठीक कई-

अब तौ पूँछ झूठ बोलन की, संगै मिठ बोलन की।
जा जुग में कछू कीमत नइयाँ भोलन अनभोलन की।
जाँगन ताँगन पूजा होरई, बिगरैलन लोलन की।
कात शिवाजी बनी जिन्दगी ढंग सें ढड़कोलन की।

और सुनो-

मिलतई कहा अनख बाँदे सें, अनबोलो सादें सें।
चुरियाँ कइँ फूटती नइयाँ, यार गरे लागे सें।
पुजत अधरमी आज कबऊँ ना ऐसौ भऔ आँगे सें।
नाव शिवाजी धरौ चैरिया, पूँछ नइँ काँढें सें।

लरका मताई-बाप खों लतया रए, बताऔ इनकौ कैसें पूरौ परहै। जो कछू है सो पइसा है। बोई करा रऔ जे तमासे। काऊ नों नइयाँ फूटी कौड़ी काऊ लौ भण्डार भरे। भेद घिरना न होय तौ कैसे ना होय? एक दूसरे खों फूटी आँखन नइँ देखे चाउत। ऐसें में काँ जाएँ काँ ना जाएँ?

भाई भतीजौबाद, अलगावबाद, हिंसाबाद, भाषाबाद, आतंकबाद, जातबाद, सम्प्रदायबाद, वर्गबाद देस खों बरबाद करबे पै तुले। विवस्थाएँ चरमरा गईं। अनुसासन हीनता कौ बोलबालौ है। नौकरियअन में अपने-अपने लाए जारए चायें वे चायें जैसे होवें। सिच्छा शिष्यता में कमी हो रई। मान मरजादाएँ कर रई, कुंठा के मारै तनाव के तीर पलपल पीरा बढ़ाउत हैं। मनुस चिंता के चक्रव्यूह सें नइँ निकर पारओ। पछवा बैर ने हमाई संस्कृति सभ्यता खों झकझोर कें धर दऔ। नौ जवान दिसाहीन हो गए। पहनावे अजूबे हैं। सेवा भाव आत्मीयता, सदाचार जैसें सदा खों चले गएँ होंय ऐसों भ्यासन लगो।

आतंक अजगर, भ्रष्टाचार भूत, बेईमानी कौ बकासुर, साम्प्रदायिकता संकटासुर, कपट कालनेंम, अन्याय मारकाट, लूटपाट, चोरी डकैती, घुस पैठ आगजनी, बम विस्फोट, आत्मघाती हमले दिन पै दिन बढ़ते जा रए, मिथ्या मारीच दम्भ दसानता, दगा दुरयोधन, दुष्कर्म दुसासन, घूस घननाद, क्रूरता कंस गलियन-गलियन चौराहन पै बड़ी दबंगी सें डोलत फिरत। गुटखा, दारू पीबौ फैसन में है अपनों प्यारौ भारत गारत होत जारव। इनहैं बचाबे की सोचो, विवेक से काम लैने पर है तब कऊँ काम बनहैं। 卐

-गुरसराँय, झाँसी उ0प्र0

दस कौ नोट

-शकूर मुहम्मद

भौत दिना की बात हुइये जब बुन्देलखण्ड धन-धान्य में भौत पिछड़ो हतौ। जनसंख्या दिन दूनी रात चौगुनी बढ रईती, ई जनसंख्या बड़बे पै चिन्तन हो रऔ तो। विदेसन सै पिसी, कनक औ लाल जुनई मँगा कैं जैसे तैसें भरपाई हो पा रईती। किसानी के बेई पुराने तरीका सें फिकरा, लठारा, कौदौ उर जुनई की खेती, चैत की फसल में थोरी भौत जबा पिसी की खेती। बिरचुन, मुरका उर लटा खाकैं आदमियन की नौनी जिन्दगी की गाड़ी सरकत रय।

चिन्तामन खौं भगवान ने छप्पर फार कैं लड़ेर दई ती कै छः लरका चार बिटियाँ। ई खौं जे भगवान की खुशी में अपनी खुशी मान रयते। चिन्तामन को काम जो रैबे, ई समइया में अपनी बैलगाड़ी से सहर खों बजरी डारबें। बाजार में एक बैलगाड़ी बजरी तीन रुपइया की बिकबै, उन तीन रुपइया सें नजाई सें लौटती बेरां दो की पिसी उर एक रुपइया के चाँउर। जा इनकी दिन भर की आमदानी हती। बड़े लरका घन्सू खौं सड़क पै तसला डारबे खों लगा दऔ।

चिन्तामन की बड़ी बिटिया स्यानी हो चली, मताई खों चिन्ता सतान लगी उर बेर सबेर बे चिन्तामन खों अरई सी टोंचन लगी के कऊँ जाकैं बिटिया खों घर दौर देखो। अब चिन्तामन खों जेई लगन लगो कै हाँत न मुठी खुर खुरा उठी। उनै जा फिकर खाँय जा रईती कै घर दौर देखतौ लैबे पै बियाव काज काय सें करत, घर में तो नइयाँ फूट कौंड़ी। एक दिना बजारै बजरी डारबें गय, जी साब के इते बजरी डारी, तनक सुस्तावे के लाने ऊकी छानी के नैचें बैठकें सुआपी सें पसीना पौछन लगे, इतने में पइसा दैबे खों साब आ गए, तौ इनपे नइँ रई गई सो अपने मन की बात कै बैठे।

साब ने सुनके अनसुनी कर दई। अब चिन्तामन अपनी उँगइया दाँस सें दबा कै रै गए। हिम्मत बाँदी गरे खों खकारौ फिर मनइँ मन सोसी, कै देवी, बरदान न दै तौ न सई, पै गड़ई तौ छुड़ाय नइँ लेत। बोले-साब कक्का! अपुन मोरी बिथा खों समजो हमाय घर में छोटे बड़े बारा आदमी जुर रय जिनकौ घन्सू उर हम दार रोटी भर को इंतजाम कर पात, फिर बिटिया सियानी हो चली ऊके हाँत पीरे करने सो ई के लाने अपुन हमाई पइसा, टका, दान दहेज के लाने मदद करौ। हम अपुन कौ मय बियाज के पाई-पाई सें चुका देंय। अरे, चिन्तामन! तुम काय में सैं चुका देऔ। तुम खुद कै रय कै लरका उर तुमाई कमाई सें दार रोटी कौ इंतजाम हो पा रऔ फिर करजा कैसे का चुके, जा तौ बताऔ?

चिन्तामन नें लामी, हर साँस लई फिर बोलो कै भगवान गरीबी काऊ खों न दिऔ। इतनी जाँदा लड़ेर होबे में हमाऔ का दोस जौ तौ सब भगवान की किरपा उर आसीस आय। अब तौ साब कक्का बिटिया के हाँत तौ पीरे करने है सो अपुन चाव तौ हमाई पटिया है ऊखों गानै धर कैं लिखन पड़न करालो। साब कछू मुस्किया गए फिर बोले-अरे भई हम नाई थोरी कर रय। बा तौ तुम जानत हौ कै आजकल कौ समइया भौत खराब है, काय सैं के ठक्कयानौ लड़इया बादर गरजें डरात। बैठे ठाले अपनौ देकै पाछे सैं चुकाती बेराँ पनइयाँ घिस जातीं।

साब ने पूरी खाना पूर्ति करी जमीन कौ पट्टो मँगाओ, रुक्का लिखो गऔ फिर दान दहेज उर रकम सौंपी गई। चिन्तामन ने नाते रिस्तेदारी में बिटिया की चर्चा चलाई, नौनों खातौ पीतौ घर मिल गऔ। बियाव सुदवाऔ, चिन्तामन ने हँसी खुशी सैं बिटिया को बियाव करो। राजी खुशी सें बिदा भई।

हराँ-हराँ दिन मइना गड़न लगे, बिटिया केऊ बेरा की आई गई हो गई। बाप मताई दोऊ खुशी हते। एक दिना संजा की बेराँ दामाद लल्ला आ गय, यथा जोग उनकौ आदर सत्कार भऔ। वियाई में मयरौ उर लुचइँ बनीं। अच्छी नौनी बियाई भई। रात में दामाद लल्ला के लिंगा, चिन्तामन उनके घर सें ओरी घन्सू उर सबई बैन भइया आकैं बैठ गय, नौनी बातें होन लगीं। किसा कानियाँ सोउ भइँ। चिन्तामन उर ओरी फूले नइँ समारय ते। काय सें उनके दोरे पै पैली बेर दमाद आय, उनें लग रऔ तौ के अपने दामाद खों कितें उठायँ किते बिठाँय उर का खुआँय का पियाँय। दामाद सोऊ येसी ससरार पाकें फूले नइँ समा रयेते। जब सब जनें मौंग गय तबइँ दामाद ने अपने आवे की बात कई कै घरै बाई खों कछू दिनन के लाने बुलाऔ है। सास ने सुनी पैलाँ तौ बे घबरा गई फिर बोली के काय बिटिया को कछू पिरात दुखत है, का बात है, कै...। इतनी भर कई बे माँखों हेरी, दामाद की आँखन सें समज गईं फिर बोली चलो लो जा नौनी भई हमें भारी फिकर हती।

भुन्सरा दमाद ने चलबे की कई। संगे चलवे के लाने ओरी तैयार हो गई। दमाद को ग्यारा रुपइया सें हरदी चाँउर से टीका करके बिदा करी। निगत विगत दुपर लौटे सास दमाद रमा बिटिया के इतै पौंचे, बिटिया ने खुसयाली मनाई। रमा ने अपनी औरी खौं अपनी बात बताई। औरी बोली-रमा जब तुमाय इतने दिना हते तौ अबै सें हमें काय बुला भेजो, तुम तौ घर के हाल चाल जानतीं। इतनी सुनी रमा फुसकन लगी, फिर अपनी सास-नन्द की सुनान लगी। औरी ने रमा के मूड़ पै हाथ धरौ, खैर। तुम फिकर न करौ, अब हम आ गए। घर की का, तनो घर तौ भरो, सब होत रेय। इतै चिन्तामन औ पूरौ परवार ओरी के न रय सें भारी परेसानी झेल रऔ तो, सो एक दिना चिन्तामन ने घन्सू सें कई कै बेटा ऐसौ कर तुमाई ओरी खों एक

पन्द्रइया सें जादाँ हो गऔ, कौनइँ बैन की खबर नइँ मिली, न होय तौ तुम काल सकाऊँ उनके इते हो आओ, काय सें इतै ऊसई नाज पानी की तंगी है। तुमाई मताई न जाने किते सें माँग चूँग, काड़-मूँस कैं पूर्ती करत रतती।

दूसरे दिना घन्सू ने परोस सें रामदीन कक्का के इतै सें साइकल मँगाई कै हमें रमा खौं देखबे जाने। ओरी खौं भौत दिना हो गए, न जीजा ने कछू खबर दे पठाई न कौनऊ बात, सो संजा लो लौटके आय जात।

घन्सू साइकिल सें बैन के इतै पौंचो। उतै पौंच के पता चलो कै रमा बैन के भानेजन भई। सो जा सुनकैं उनकी नंद उर सास नें मौं फेर लऔ जैसें जा बिटिया न हौंके कौनऊँ उनके घर में दुस्मन आ गऔ होबे। ओरी रमा बैन की पूरी सेवा टाल में लगीती, बिटिया खौं कौनउँ कस्ट नइँ होन देबे। ओरी जब सब काम काज सैं फुरसत भई फिर घन्सू खौं खाट पै बैठारौ, फिर घर के हाल चाल पूँछन लगी। मताई बेटा की भौत देर नौं बातें होत रईं। ओरी बोली कै अबे तुम जाओ हम फिर आ जैंय, काय सें इतै सब ठीक नइयाँ, बा हम तुमें फिर बतायें। तुम घरै जाओ नाज पानी को इन्तजाम बनाय रइयो, भला! कौनऊँ परेसानी न आ पावे। ओरी ने एक दस कौ नोट दऔ कै जौ लेत जाऔ और बानपुर के हाट सें इनकी कनक लेत लइयो। घन्सू ने जे रुपया कमीज के खलीता में समार कैं धर लय।

दुपर लौंटे ओरी के पाँव परकें घन्सू साइकिल उठाकें, बैनऊ सें मिल के चल दऔ। अबै आदो एक मील चलो हुइये के ऊखों ऊ दस के नोट की खबर आई, खलीता टटोलो कछू ऐरो नइँ मिलो। ऊकौ जी में सन्नाटो सौ आ गऔ, झट सै बो साइकिल सैं नैचें उतर गऔ, ऊनें खलीता टटोलौ उतै दस कौ नोट गायब हतौ अपने पूरे उन्ना फटकारे उतै होय तौ मिल जावे। साइकिल हलाई चैन चलाई, पैडल घुमाओ, सीट ठोकी, ई बगल सें देखी, फिर दूसरी बगल सें, ऊखों लगौ के कऊँ साइकल में बिद गऔ होबे, कन लगत कै जब टाठी हिरात तौ गगरी में हाँत डारत, जेई किसा घन्सू की हती। साइकल छोड़ घन्सू दो चार पगइया पाछें देखत आओ कै स्यात गली में डरो मिल जाबे। गडवाँत की जरिया छेबलें देखे के कऊँ नोट उड़ गऔ होबे। इतने में एक आदमी बैन के गाँव तरफ सें इनके ताँईं आत दिखानौ, घन्सू कौ गरौ सूक गऔ, गरौ खखारो ऊसें दे पूछी काय दद्दा तुमें गली में हमाऔ दस को नोट तौ नइँ मिलो, ऊ आदमी ने कैऊ सबाल पूँछ डारे किते हतौ कैसौ हतौ नऔ हतौ कै पुरानौ, कितै धरैंते, घन्सू ऊ के मौ ताईँ देखत रै गय। फिर ऊनें कई के भइया हमें नइँ मिलो तुमाऔ दस कौ नोट उर बौ अपनी गली चलो गऔ।

घन्सू साइकिल के लिंगा आ कैं बैठ गऔ ऊकी आँखन की डबइया भर आईती। अब बे गुर भरो हँसिया होके रे गय कै का करें का न करें? काय सें इतै गरीबी में आटो गीलो हो गऔ तो। ऊखों बैठें-बैठें बन्न-बन्न के खियाल आत रबै। जे गिरानी के दिन, ओरी कब सैं काँसें आफत बिपत के लाने बो दस को नोट रखे हुइये। अब घर जात तौ का मौ लेके जाँय, घर में तौ नइयाँ फूटी कौड़ी, घरे बियाई को इंतजाम भऔ हुइये के नइँ। अब कनक का दाँत टोर कै लय जात। येई उधेरबुन में घन्सू संजा लौ तनक दिन छरछरात रै गऔ तबलौ बैठो रऔ, ओरी नौ लौटत तौ कैसें लौटत।

घन्सू कौ दस कौ नोट का गऔ मानो ऊकी गिरस्ती लुट गई होबे, ऊ खों काटो तौ खून नइँ। फन पटक कै हारो थकौ पैदल घर ताइँ चल दऔ। अगर दद्दा खों पतौ चलने उनैं खिसयाने अलायदो। घन्सू हराँ-हराँ बियाई की बेरा लौ घरे पौचों, चिन्तामन दुगई में बैठे घन्सू की बाट देख रयेते।

चिन्तामन ने कई के अरे घन्सू अब तक का करत रय काय साइकल पंचर हो गईती। घन्सू हाँ हूँ करत रऔ ऊनें सोस राखीती कै दद्दा सें दस के नोट की चरचा नइँ करने नातर उनकौ गुस्सा भौत खराब है, ई सें जोई अच्छौ है कै ऊमर फोरौ न पखा उड़ाव। ई सें गुम सुम रैबे में सार है। जब ओरी आय एक तौ उनें खबर नइँ रने अगर उनने पूँछई लई तौ देखी जै। चिन्तामन उर ऊकी बैन ने घन्सू सें बियाई के लाने भौत कई पै ऊनें जेई कई कै हम खाकें आय उर हमें बियाई नइँ करने फिर बौ बिछौना में जा परो ऊकी आँखन सें अँसुआ बे रयेते। येई से कई गई है, कै-

रोटन खौं झूँकत हते, चुखरा खा गय नाज।
ओई अहानो भऔ कै, भई कोढ़ में खाज।।

-ग्राम-पोस्ट कुण्डेश्वर, टीकमगढ़ (म०प्र०) 卐

कोउ नइयाँ...

-स्वतंत्र प्रभाकर रावत 'मुखलिस'

मन की पीर बँटाबे बारौ, कोउ नइयाँ,
दुख में संग निभाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
अपनी-अपनी ढपली, सबको अपनो राग,
गीत प्यार कौ गाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
उरजंटा बिदवाबे बारे हैं सबरे-
उरजंटा सुरजाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
जब जी चाय तुमाव, ऐंन अजमा लइयो,
काम बखत पै आबे बारौ, कोउ नइयाँ।
घी में सौंज मठा में न्यारे हैं सबरे,
दुख कौ बोझ उठाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
कुम्हलाय हैं मन में फूल उमंगन के,
इनैं खिला-महकाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
पानी, ओस, घटा, साउँन सब कैबे के,
मन की प्यास बुझाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
जाँ हेरौ ताँ धन के मचे धिंगाने हैं-
निर्धन को अपनाबे बारौ, कोउ नइयाँ।
सब कोउ आकें हमहाँ समजाउत 'मुखलिस',
का उनखाँ समजाबे बारौ, कोउ नइयाँ।

-कड़ा की बरिया, छतरपुर म०प्र० 卐

बुन्देली के रीति-नीति सहित कहावतन वारे दोहा

-डॉ.डी.आर.वर्मा 'बेचैन'

बुन्देलखण्ड कौ क्षेत्र भौत बड़ौ है। इतै की समाज में बुन्देली कौ साहित्य बिखरो डरो। विद्वानन में भौत बटोर लओ उर अबै भौत बटोरवे के लाने है। बुन्देली भाषा के वे दोहा जोन कैवतन कौ काम करत चले आ रये, उर उनके बनावे वारे कवियन कौ पतौ तक नइयाँ, भौत काम के हैं। समाज उनसें बड़ौ फायदा उठाउत। उनके पढ़े, सुने उर गुने सें बड़ी शांति उर संतोष मिलत। इन दोहन में पुरखन ने अपने अनुभव मुतियाँ गूँथ दये उर दोहन की दौरी माला बना दई। जे दोहा भौतइँ उम्दा उर ज्ञान भरे हैं, सो अपुन इनको कछु स्वाद लेव-

१. लीक लीक गाड़ी चलै, लीकई चलै कपूत।
लीक छाँड़ तीनउँ चलें, सायर, सिंह, सपूत।।

सार- ईकौ सार है कै कवि उर शेर उर सपूत अपनी अलग से लेंन बना के अपनी अकल से काम करत।

२. आलस कर खेती करै, बंजी करै सुसाय।
सत्यानाश की बात का, अठ्यानाश हो जाय।।

सार- आलस करवे से खेती उर रुजगार नष्ट जो जात।

३. नट, कुंजरा उर बेड़िया, राँड़, साँड़ उर भट्ट।
इनें देर ना लगत है, जे चढ़ बैठें झट्ट।।

सार- दोहे में गिनाई गई जातियाँ उर प्रानी अपनों काम झट्ट करवे के आदी होत।

४. ऊब गये भोजन मिलै, साका सूकें मेव।
पैठ गयें तिरिया मिलै, तौ चूले में देव।।

सार- पेट की भूँख मिट जाने पर भोजन, फसल सूक जातै पै पानी, कौनऊँ के घरै पैठुआ वन जावै पै लुगाई मिलै तौ कौन काम की। टेम उर जरुरत पै कौनऊँ जिंस ना मिलै उर बाद में मिलै तौ बेकार।

५. कनवाँ सें कनवाँ कऔ, तुरतइँ जै बौ रूठ।
धीरें धीरें पूँछ लो, कैसे गई ती फूट।।

सार- हर जगह अकल से बात करो चइये।

६. आरा ऐरे ना करै, नहीं गोंच कें दंत।
जो नर धीरे बोलवें, तिनें समारौ कंत।।

सार- कम बोलवे बारन सें जादाँ सावधान रओ चइये। जे अपनौ प्रभाव भौत जादाँ करत।

७. तन गोरे मन साँवरे, बगला कैसे भेंक।
ईसें तौ कागा भले, भीतर बाहर एक।।

सार- कपटी आदमी से दिल को साफ आदमी साजौ होत।

८. पंचयात उर परसवौ, पर घर दोवे जाव।
इनमें अपजस मिलत है, कोटन करौ उपाव।।

सार- सही-सही काम करवे पै संसार में लोग अपजस देत।

९. खैर, खून, खाँसी, खुशी, बैर, प्रीत, मद-पान।
जे दस दावे ना दबें, पाप, पुन्य उर स्यान।।

सार- उक्त चीजें समाज में जरूर खुल जाती हैं। स्यान कौ मतलब जादाँ चतरई बतावौ।

१०. व्यापारी उर पाँवनों, तिरिया और तुरंग।
ज्यों-ज्यों जे ठनगन करें, त्यों-त्यों बाड़ै रंग।।

सार- इन सबसें मान मनौअल, वाद विवाद में बहाने बाजी, बातें बनाने आदि बातन में भी मजा मिलत।

११. तनकी भूँक तनाक है, तीन पाव उर सेर।
मन की भूँक मनाक है, लीलन कात सुमेर।।

सार- मन की इच्छयें कभऊँ शांत नइँ होतीं शरीर की तौ शाँत हो जाती।

१२. ज्यों केला के पात में, पात पात में पात।
त्यों चातुर की बात में, बात-बात में बात।।

सार- चतुर व्यक्ति बहुत ज्ञान भरी बातें करत।

१३. नीच न छाँडत नीचता, कैसौ हू सुख देत।
धोयें सौ-सौ बेर के काजर होत न सेत।।

सार- जन्म जात गुण भौत देर में छूटत उर या तौ मिटतई नइयाँ।

१४. कौंड़ी-कौंड़ी जोर कें, निर्धन होत धनवान।
अक्षर-अक्षर के पढ़े, मूरख होत सुजान।।

सार- धीरें धीरें कोसित करवे पै सफलता मिल जात।

१५. तिल, भौंरी, लासुन, मसों बसै दायनें अंग।
जाय बसै बन खंड में, तोउ लक्ष्मी संग।।

सार- दोहा में ऊपर गिनाइँ बातें शुभ मानी जातीं।

१६. भलौ बुरये कें होत है, भलौ बुरये कें होत।
दीपक सें काजर बनै, कमल कीच सें होत।

सार- अक्सर साजे कें बुरये उर बुरयें के साजे पैदा हो जात।

१७. रिन चुकन, कन्या मरन, प्रातकाल स्नान।
जे पैलाँ दुख देत हैं, पाछें सुक्ख महान।।

सार- ऊपर गिनाईं बातें थोरी देर खाँ दुख देतीं।

१८. काँटौ सालें कीच कौ, उर बदरई कौ घाम।
माता सालें दूसरी, और पराओ काम।।

सार- पानी के गिलारे में काटौ लग जाय, बदरा घाम होय उर दूसरी मताई जादाँ दुख देवे बारी बातें हैं।

१९. वैद्य रोगी, तरुन जोगी, सूरा पीछे घाव।
कीमियाँ हो भीक माँगे, इनें जिन पतयाव।।

सार- कोई वैद्य हो और वौ खुद रोगी होय कोई सूरवीर होय उर पींठ में घाव लगे होंय, ऐसई सोने बनावे वारौ अगर भीक माँगत होय तो उन सब पै विश्वास न करो चइये।

२०. तीन हाँत तिरिया से रइये, तेरा हाँत सिंगारे सें।
साठ हाँत घुरवा से रहये असी हाँत मतवारे सें।।

सार- स्त्री जाति से, सींगवारे जानवरन सें, घोड़ा से उर हाती से दूरई रये में भलाई है।

इतराँ सें बुन्देली साहित्य उके एक अंश पै थोरौ सो सोच के लिखो। कैऊ बातें लिखी जो भइंयन खां साजी लगहैं, मोय पूरौ विसवास है।

-स्यावरी, झाँसी उ०प्र० ५५

बुन्देलखण्ड के परम्परागत कृषि उपकरण

-रवि शंकर पाठक

पूर्वकाल से ही कृषि बुन्देलखण्ड के लोगों की जीविका का प्रमुख साधन रहा है। सर्वप्रथम लोगों ने अपनी बुद्धि बल से कृषि उपकरणों का निर्माण कर उनकी सहायता से कृषि कार्य किया। समयानुसार प्रयुक्त होने वाले इन उपकरणों को जुताई-बुबाई, सिंचाई, कटाई, ढुलाई, गहाई, उड़ावनी, निंदाई-गुड़ाई तथा अन्य सहयोगी उपकरण के रूप में बाँटा जा सकता है।

हल खेत की सघन एवं गहन जुताई का मुख्य साधन है। इसमें लकड़ी की एक लम्बी किन्तु मूल भाग में कुछ टेढ़ी, चपटी, चौकोर, पीछे एक तथा आगे दो छेद वाली 'हरीस', एक 'अकुरिया' जिसका ऊपरी सिरा मोटा किन्तु टेढ़ा सा, निचला लंबा सिरा पहले मोटा, फिर पतला होता जाता है जिसे 'नास' कहते हैं, जिसमें लोहे का एक कुसिया दो काँटों या बिछिया को ठोककर कस दिया जाता है। अकुरिया के पीछे ऊपर की ओर एक सवा हाथ लम्बा 'परेथौ' जिसमें मुठिया लगा होता है, आदि अंगों को लगाते हैं तथा अकुरिया और परेथे में हरीस एवं कटरा की आकृति के दो छेद करके तीनों को फँसाकर हरीस में पीछे पछकील लगाकर हरीस के ऊपर से 'ग्याँगरौ' ठोककर तथा कटरा में स्वाँट या मुड़ील ठोककर हरीस, अकुरिया तथा परेथे को कस दिया जाता है। हरीश के आगे के छेद में डेढ़ बेता की लकड़ी की 'हरैनी' डालकर, सन या बकोंड़े से बने रस्सा 'नाना' में नानगाँठ लगाकर उसे 'जुआँ' तथा हल में 'हरेनी' के पास फँसाकर तथा 'जुएँ' में बैल जोतकर किसान खेत की जुताई करते हैं। बैलों द्वारा हल खींचने पर खेत में 'कूँड' होते जाते हैं। जिससे ऊपर की मिट्टी नीचे तथा नीचे की ऊपर आ जाती है। गेहूँ, चना, अलसी, मटर आदि बोने के लिए हल की अकुरिया की नास में आर-पार छेद करके बाँस की पोली नली के ऊपरी भाग में लकड़ी की एक 'चौरी' लगाकर उसके निचले सिरे को अकुरिया के छेद में रखकर 'नारी' को हल में अच्छी तरह कस दिया जाता है। इसके बाद 'बौका' चौरी पर हाथ रखकर क्रम से अनाज के दाने गिराता जाता है। वे दाने नारी के द्वारा कूँड में गहराई में नमी तक पहुँचकर आसानी से अंकुरित होकर जमीन से बाहर 'पोई' के रूप में आ जाते हैं 'छिटकाँ' एवं 'हथवाऊँ' पद्धति से भी खेतों में बुवाई की जाती है।

बखर सूखी अथवा गीली धरती की सघन एवं गहन बखरनी का प्रमुख साधन है। इसके प्रयोग से घास एवं खरपतवारों का समूल नाश होने के साथ ही खेत समतल व पोला होता जाता है। इसमें आठ पाल वाली सात बेता की लम्बी लकड़ी 'लोड़' में पाँच चौकोर छेद होते हैं। सामने वाले दो छेदों में लकड़ी की दो लम्बी 'डाँड़ी' लगाकर लोड़ के पीछे 'मुड़ीला' ठोककर कस दी जाती है तथा आगे दोनों में बराबरी पर छेद करके 'हरेनी' डाल दी जाती है। 'लोड़' के नीचे वाले तिरछे दो छेदों में लोहे अथवा खैर की सारदार लकड़ी के दो 'दतुआ' लोड़ में ठोक कर उनके नीचे पाँच से सात-आठ अँगुल तक चौड़ी धारदार घुमाव वाली एक लोहे की 'पाँस' चौकौर 'कुरौरा' नामक छल्लों से फँसाकर दतुओं में कस दी जाती है। 'पाँस' की आकृति बैलों की शक्ति के अनुसार होती है। बखर को लाने ले जाने के लिए 'राँसी' नामक दो जिखना वाली लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। खेत में बखरनी करते समय बैलों की खुदयाने, लोड़ या पाँस में लगे चारे या मिट्टी को हटाने के लिए 'खोलिया' का प्रयोग किया जाता है। लोड़ के बीच के पाँचवे छेद में 'मुठिया' लगा 'निजौना' लगाया जाता है जिसे पकड़कर बखर हाँका जाता है।

गुड़इया, भेंकुली, रहँट, तरसा तथा लुटिया आदि यहाँ के मूल सिंचाई यंत्र माने जाते हैं। गुड़इया बनाने के लिए लकड़ी के दो 'भैंसा' पाँच हाथ के अंतर से कुएँ में रखकर दोनों के बीचों-बीच लकड़ी की एक 'भौंरी' रखकर उसमें ३० छेद करके १८ अरा और १२ पईं लगाकर उनका गोल ढाँचा बनाकर मकुइया, खकूँदर या छिराँटा के बौला ऐंठकर उनको कस दिया जाता था। उस गोल ढाँचे के ऊपर 'बकोंड़े' या 'खजरी' की टानों से बनी माल के 'गुने' में दो-दो के जोड़ा से लकड़ी की किलवारीं लगाकर उन पर मिट्टी की 'घरियाँ' तार, खकूँदर या छिराँटा के बौला से कस दी जाती थीं। माल को ढोल के ऊपर से कुएँ में लटका देने के बाद एक व्यक्ति पइयों पर चढ़कर अपने पैरों से ढोल को घुमाता रहता था। पूर्वकाल में भू-जल स्तर उच्च होने से घरियों का पानी भैंसा पर लगे पनरा में गिरकर पनारी द्वारा नीछर में पहुँचकर 'बरये' के माध्यम से खेत में चला जाता था। गुड़इया चलाना जोखिम भरा एवं शारीररिक श्रम की अधिकता वाला कार्य होने से तथा धीरे-धीरे जल स्तर घटने की समस्या से निपटने के लिए लकड़ी के 'रहँट' नामक सिंचाई यंत्र का अविष्कार किया। इसमें लकड़ी का कुएँ में रखा जाने वाला लंबा, मोटा 'भैंसा' एक भौंरी, चिपुलिया तथा 'तारौ' नामक दो खूँटे भैसा पर रखी भौंरी में लगाए जाते हैं। भौंरी में दोनों ओर सामें लगती हैं। भौंरी में चार 'सिंगारे' आपस में फँसाकर पचरा से कस दिये जाते हैं। भौंरी जमीन में पड़ी रहती है तथा सिंगारे 'खड़ोलौ' नामक गड्ढ़े में घूमते रहते हैं। दोनों सिरों पर नुकीली, सीधी खड़ी की जाने वाली भौंरा, नामक लकड़ी में भी चार सिंगारे इस प्रकार लगाए जाते हैं ताकि वे भौंरी के सिंगारों में फँसकर उसे बल लगने पर घुमा सकें। भौंरा को सीधा और व्यवस्थित रखने के लिए 'भोंन' के दोनों ओर 'चोइया' तथा 'जेर' नामक दो मोटी लकड़ियाँ गाड़कर 'बदरौट' नामक लम्बी लकड़ी उसमें लगाकर मजबूत रस्से से कस दी जाती है तथा उसमें बीचोबीच किए गए छेद में भौंरा का ऊपरी सिरा डाल दिया जाता है ताकि भौंरा और उससे जुड़ी चीजें हिल न सकें। भौंरा के बीच के चौकोर छेद में लगे 'गदेरे' में

'नान' नामक मोटे रस्से को बाँधकर बैलों की लंबाई के अनुसार जुएँ में बाँध दिया जाता था। भौंरा से जुएँ तक 'माँवदी' नामक रस्सी अंदर की ओर बाँधी जाती थी ताकि बैलों को 'भौन' में घूमने में सरलता हो सके। इसकी माल की संरचना तथा पानी निकालने की विधि गुड़इया के समान ही है। अंत में 'रहँट' ढीलते समय खड़ोले में भौंरी के सिंगारे में 'बेंड़ा' लकड़ी लगा दी जाती है। इनके अलावा कुओं से पानी निकालने के लिए तरसा तथा पान बरेजों में सिंचाई के लिए लोगों द्वारा कंधे पर रखकर ढोई जाने वाली 'लुटियाँ' हैं। पान बरेजों में की जाने वाली सिंचाई को 'गबोरौ' कहा जाता है।

बैलगाड़ी बुन्देलखण्ड में भारवहन एवं यातायात का प्रमुख साधन माना जाता है। इसमें बारह-बारह नग वाले 'खुसमा' अथवा छह-छह नग वाले 'छियारिया' पद्धति से बने 'गर्रा' सहित दो पहिया होते हैं। नग प्रत्येक पहिया के 'गर्रा' में किए गए चौकोर छेदों में ठोकर 'गुजिया' सहित छ 'पुठीं' दो-दो छेद करके नगों में फँसाकर, उन्हें अच्छी तरह ठोककर कसने के लिए नग के बगल से 'मुड़ीला' ठोक दिए जाते हैं। दोनों पहियों में पुठी के अनुरूप लोहे की गोल 'हल्ल' या 'दन्न' चढ़ाई जाती है ताकि पहिया व पुठीं सुरक्षित रहें। इसमें लकड़ी के लम्बे तीन 'धुरा', तीन पटलीं लगे ढाँचे को दो 'धुरों' वाले या एक 'परगज' वाले 'भोंरा' में टानें लगाकर रस्से के 'भोंड़ेरा' से कस दिया जाता है तथा धुरों में पहिया लगाकर 'चकील' लगा देते हैं ताकि पहिया निकल न सके। बैलगाड़ी के कुछ अंग इस प्रकार हैं-मुहल्ली, धुरकीला, टाने, चकुलियाँ, हरेना, घुरिया, पखिया, बिरियाँ, खड़ेलुआ, पछुआ, हुडुलुआ आदि। इसी का छोटा रूप 'तंगड़िया' कहलाता है। बैलगाड़ी का उपयोग मूल रूप से कटी फसलों को ढोने, गहाई के बाद अनाज घर या बाजार तक ले जाने तथा भारी वस्तुओं को ढोने में किया जाता है।

टटवा या टटा दाँय या गहाई का मूल उपकरण है। इसकी आकृति चौकोर होती है। इसमें चार नीचे तथा चार ऊपर की पटलियों के बीच में करधई अथवा इमली के 'खड़ा' फँसाकर चारों कोनों को रस्से से कस दिया जाता है। आगे दो छल्ले लगाकर, उनमें दो लंबे, मजबूत रस्से बाँधकर दूसरी ओर जुआँ में बाँध देते हैं तथा जुआँ में दो बैल जोतकर टटवा पर खड़े होकर हाँकने वाला खलिहान में फैली 'लाँक' पर उसे चारों ओर चलाकर पहले लाँक को छोटा करता है। इसके बाद खलिहान के बीच में गड़ी 'मेंड़ी' नामक मोटी लकड़ी में 'गड़ाउन' का छल्ला 'मिड़वासौ' डालकर गड़ाउन में सात से दस तक बैल 'नह' कर खलिहान में उन्हें गोल-गोल घुमाकर 'लाँक' को छोटी आकृति का भूसे के समान किया जाता है। उसे 'छराना' कहा जाता है। लाँक को समटने या कूँड़ने के लिए 'लाँकुड़ी या खेंटन' का प्रयोग किया जाता है। दाँय हो जाने पर अनाज मिले भूसा का खलिहान में समेटकर लम्बा ढेर लगा दिया जाता है जिसे 'दाब' या 'सेंड़' कहा जाता है। अब बारी आती है उड़ावनी की। खलिहान में खड़े होकर पर्याप्त हवा चलने पर उड़ावनी करने में सरलता होती थी। जब नीचे खड़े होने पर हवा न लगे तो उड़ाने के लिए 'तिबारौ' नामक उपकरण का उपयोग किया जाता था। तिबारे में लंबा, चौड़ा, मोटा, तीन कोंण वाला एक पटिया रहता है जिसके तीनों कोणों में एक-एक गोल छेद होता है। इन तीनों छेदों में तीन मोटी तथा तीन हाथ लंबी ऊपरी सिरे पर नुकीली लकड़ियाँ नीचे की ओर से फँसाकर उसे 'दाब' के पास रख लेते हैं तथा हवा के बहाव एवं गति के अनुसार 'तिबारे' पर खड़ा होकर एक आदमी उड़ावनी करता है, नीचे एक आदमी 'खँदे' में गिर रहे अनाज की 'उरई' के 'बारा' से 'सरवाई' लेकर कचरा अलग करता जाता है तथा एक व्यक्ति 'उसेंड़ा' देने में लगा रहता है।

पाटा या कोपर का उपयोग जमीन को समतल तथा मिट्टी को महीन करने के लिए किया जाता है जिससे कृषि कार्य सरल हो सके। पाटा सात-आठ हाथ लम्बी मोटी लकड़ी का बनाया जाता है। इसकी आकृति चपटी होती है। इसके निचले भाग में एक 'खाई' नामक नाली काटकर, दोनों सिरों के पास एक-एक छेद करके लकड़ी के दो 'काए' (अर्थात् टानें) डाले जाते हैं। इसमें एक या दो जोड़ बैल 'नह' कर इसे खेत में फिराया जाता है ताकि ढेला फूट जाएँ, खेत समतल हो जाए तथा कूँड पुर जाने व मिट्टी दब जाने से खेत की नमीं भी न जाए। इस संबंध में 'सौ कूँड एक डूँड' अर्थात् सौ बार की गई जुताई तथा एक बार लगाया गया पाटा बराबर महत्व रखते हैं।

इन उपकरणों के अलावा जुआँ, जवाँरी, फटका का सूपा, ढुलिया, अद्दा, पैला, जेरी, ओबी, मुँगरिया, पचा, फावरौ, बका या कटनयाँ, कसन, नाना-पगइयाँ, चोटिया, पैना-पैनियाँ, पाखरी या ठेकी, छिटियाँ, छबला या टुकना, कुहइया, मुसीका, चापका, खुरपा-खुरपी, कुदरा-कुदरियाँ, कुलरिया-टोंगिया तथा अन्य अनेक सहयोगी उपकरण हैं जिनसे कृषि कार्य आसान हो जाता है। इन उपकरणों में से कुछ विलुप्त हो गए हैं कुछ विलुप्त प्राय हैं तथा कुछ यथावत प्रचलन में हैं। आधुनिक वैज्ञानिक कृषि यंत्रों के प्रचलन से बुन्देलखण्ड के मूल कृषि उपकरणों पर घोर प्रभाव पड़ा है। अतः अपनी इस पैतृक धरोहर का संरक्षण करना हमारा (हम बुन्देलखण्ड वासियों का) परम कर्तव्य होगा।

-ग्राम मलपुरा, पोस्ट धमौरा, छतरपुर म०प्र० 卐

चार दोहे

-वीरेन्द्र बहादुर खरे

उतै खुलो नल बहत है, इते दार उफनात।
चकरी सी नाचत फिरै, महतारी दिन रात।।
सुख माँगो तो दुख दओ, तुमने तो भगवान।
जान बूझ कें बनत हो, काहे खाँ अनजान।।
तुमइँ अकेले हौ नइँ, गिरधारी नंदलाल।
हमहूँ धरें हैं मूड़ पै, दुख के शैल विशाल।।
बिलखत हैं हम भूख सें, माखन खा रये आप।
कैसे उतरत हलक सें, कहौ जगत के बाप।।

-कटरा बाजार, टीकमगढ़ म०प्र० 卐

बुन्देली साहित्य में राष्ट्रीय भावना

-ब्रजेश कुमार प्रजापति

देशभक्ति और राष्ट्रीय भावना पवित्र सलिला भागीरथी के समान है। जिसमें स्नान करने से शरीर ही नहीं अपितु मनुष्य का मन और अन्तरात्मा भी पवित्र हो जाती है। वास्तव में माता और मातृभूमि के मोह से मनुष्य तब तक मुक्त नहीं होता। उन दोनों के इतने उपकार होते हैं कि मानव उनसे आजीवन ऋणी रहता है। मातृभूमि की मान रक्षा के लिये अपने बलिदान करने में जो परम आनंद प्राप्त होता है, देशहित के लिये अपना सर्वस्व बलिदान करने में जो सुख और शान्ति मिलती है। उसका मूल्य कोई सच्चा देशभक्त ही जान सकता है। यही राष्ट्रीय भावना तथा देशभक्ति से ओतप्रोत साहित्य प्राय: आदिकाल या वीरगाथाकाल रीतिकाल तथा आधुनिक काल में कवियों ने अपने मुखर स्वर प्रदान किए हैं। केशव, भूषण, जगनिक, पद्माकर, अग्रदास आदि कवियों ने बुन्देली साहित्य में राष्ट्रीय भावना का स्वर भी मुखर किया है। इस युग में विपुल साहित्य देशप्रेम तथा राष्ट्रीय भावना से सृजित है।

१३वीं सदी में छोटे राज्यों के उदय से देश प्रेम की भावना अत्यंत सीमित रूप में व्यक्त हुई है। आल्हखण्ड में मलखान के संदर्भ में देश प्रेम अभिव्यक्त हुआ है-

राज बढ़ाओ तुम बहुबे को, वश की ध्वजा दिया फहराय।
आज खजाना महुबे गढ़ को, बेटा तुमने दियो बढ़ाय।।

इस देश प्रेम की महत्ता यह है कि मलखान जैसा चरित्र इतिहास प्रसिद्ध पृथ्वीराज चौहान को भी नगण्य मानकर अपने देश की रक्षा का वचन देता है। विष्णुदास की कृतियों में देश प्रेम की भावना राजा के प्रति समर्पित भावना में सन्निहित है। केशवदास की रचनाओं में बार-बार नगर ओड़छो बहु बसै धरनीतल में धन्य आया है। जो वस्तुत: कवि द्वारा आश्रय दाता की निवास भूमि और कर्मभूमि की प्रशंसा है। पृथ्वीतल पर यह ऐसा राज्य माना गया है कि जासों देश देश विदेश के रहै सबै नृप हारि। राम चंद्रिका में कवि ने धर्म और संस्कृति के साथ-साथ तत्कालीन राजनीति को अभिव्यक्ति देने का उपक्रम किया है। उस समय संत, गाय, द्विज की रक्षा की बात मुख्य है। अत: देश भक्ति जैसे पक्षों पर मुख्य दृष्टि नहीं मिलती है। इन्द्रजीत सिंह, वीरसिंह को मुगल बादशाह के अधीन रहना पड़ता है। अत: बुन्देलों का देश बुन्देलखण्ड हो सकता है और जनसमाज का राजा के प्रति कर्तव्य होने के कारण देश के प्रति भी माना जा सकता है। परन्तु यथार्थ में कवि का जनसामान्य से सरोकार नहीं मिलता है। देशभक्ति जनसामान्य से उभर कर आने वाली भावना है, वह केशव के काव्य में खोजना असमीचीन है।

अग्रदास के काव्य में देशभक्ति का स्वरूप रामभक्ति में समा गया है। त्रिकालदर्शी राम सृष्टि के आदि और अंत है। अत: एक देश विशेष की चर्चा उस समय उपयुक्त प्रतीत नहीं होती है। छत्रप्रकास में चंपतिराय और छत्रसाल दोनों अपने स्वतंत्र अस्तित्व के लिए संघर्ष करते हैं। उनका देश प्रेम संस्कृति प्रेम के रूप में उभरा है। अत: वे पृथक राज्य की कल्पना करते हैं-

तेजु छाई है दिसन में, देस आइ है हाथ।
सत्रु भागि हैं मान भय, होल लागि है साथ।

*****

करौ देस कौ राज छतारे, हम तुम तैं कबहुँ नाहिं न्यारै।
दौरि देस मुगलन के मारौ, दबरि दिली के दल संहारौ।

लाल कवि के समय में देश की धारणा ही भिन्न है। अपने देश के अर्थ है एक विशिष्ट प्रकार के जीवन रहन सहन संस्कृति के लोगों की भूमि जिसमें छत्रसाल राज्य करते हैं। देश का आधुनिक अर्थ यहाँ लागू नहीं होता है।

अक्षर अनन्य एक संत कवि होने के कारण समस्त मानव समाज को अपना मानते हैं। रामरूप कथा महाकाव्य में सात द्वीपों में जंबूद्वीप और उसमें भरतखण्ड की चर्चा स्वयं में देशप्रेम की चर्चा है। अपने देश एवं संस्कृति पर कवि को गर्व है।

सात द्वीप भुव के जग जानै, तिनके, नवनव खण्ड बखानैं।
जंबूद्वीप सबन सिरदार, यह पाछैं कीनौ निरधार।
भरतखण्ड तामैं अधिकाई, चिर चर जीवन को सुखदाई।

बख्शी हंसराज ने अपने आश्रयदाता सभासिंह और उनके राज्य की ही प्रशंसा की है। इसी को उनका देशप्रेम माना जा सकता है। राजा छत्रसाल और पन्ना, ओरछा आदि विभिन्न स्थानों के प्रति कवि की विशेष रुचि एवं स्तुतिभाव मिलता है। स्नेह सागर में मधुपुरी मंडल को अष्ट सिद्धियों और नवनिधियों से युक्त माना है। विरह विलास में कवि ने श्री जी साहिब की बानी का प्रसार संपूर्ण विश्व में माना है।

बोधाकृत विरह वारीश में कवि ने अपने आश्रयदाता का जैसा सुन्दर वर्णन उसके पूर्वजों सहित किया है। राज्य का अर्थ देश से लिया गया है-

देवगढ़ चाँदा गढ़ मंडला उज्जैन रीवा।
साम्हर सिरोज अजमेर लौं निहारो जोई।
पटना कुमाऊँ पेखि कुर्रा और जहानाबाद।

पद्माकर उत्तर मध्यकाल के ऐसे कवि हैं जिन्होंने दौलतराव सिंधिया की प्रशस्ति के ब्याज से समग्र भारतवर्ष की राजनीति एवं युगदशा का वर्णन किया है। यह तो स्पष्ट है कि पद्माकर के समय तक रणजीत सिंह, ईस्ट इंडिया कंपनी और शिवाजी तीन शक्तियाँ अपनी स्वतंत्र सत्ता के प्रति प्रसिद्ध हो चुकी हैं। ऐसे में मीनागढ़ से कलकत्ता, बंबई, मद्रास के विजित करने की चर्चा स्वयंमेव एक ऐसे आंदोलन की भूमिका है जो राष्ट्रीयता एवं देशप्रेम को उजागर करता है तथा वृहत्तर भारत को एकता के सूत्र में बाँधने का प्रयास है।

सारत: देशप्रेम की मान्यताएँ विभिन्न समयों में अलग-अलग रही हैं। आल्हखण्ड में वर्णित देश शब्द का अर्थ उस भूमि भाग की संस्कृति, धर्म, जनसमाज और प्रदेश से है जो महोबा के राजा के अन्तर्गत आता है। इसे आज के अर्थ में देशप्रेम भले न माना जाए पर यह अपने राजा और उसके राज्य वासियों के लिए एक श्रद्धा का भाव अवश्य ही व्यक्त करता है। देश काल के अनुसार देशप्रेम शब्द भी संकुचित एवं व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। समग्र रूप में बुन्देली समाज और संस्कृति का आभ्यंतर कथा काव्य काल से ही एक निश्चित एवं विकासात्मक परंपरा का परिचय देता है।

संदर्भ-

१. बुन्देली समाज और संस्कृति-डॉ.बलभद्र तिवारी

२. बुन्देली काव्य-म०प्र० हिन्दी ग्रंथ अकादमी

३. बुन्देली फाग काव्य एक मूल्यांकन-डॉ.नर्मदा प्रसाद गुप्त

-सहायक प्राध्यापक, शा.कन्या महाविद्यालय, छतरपुर म०प्र० 卐

एरण की नवपाषाण तथा ताम्र पाषाण युगीन संस्कृति

-डॉ.नागेश दुबे

एरण, बुन्देलखण्ड का प्राचीनतम सामरिक एवं सांस्कृतिक केन्द्र रहा है।[१] एरण ऐसा केन्द्र है जो अनेक कालखण्डों में सांस्कृतिक प्रकाश स्तम्भ का कार्य करता रहा है। मानवीय जीवन की निरंतर विकासशील धारा की दृष्टि से इस प्राचीन स्थल का अध्ययन भारतीय संस्कृति का स्वरूप प्रस्तुत करता है।

एरण, मध्यप्रदेश के सागर जिला की खुरई तहसील में सागर नगर से लगभग ७५ कि.मी. उत्तर-पश्चिम दिशा (२४.४'१०'' अक्षांश उत्तर तथा ७८.१०'२४'' देशान्तर पूर्व) में स्थित है। विदिशा से इसकी दूरी ७२ कि.मी. उत्तर-पूर्व है।[२]

एरण तक जाने के लिए दो मार्ग हैं। पहला मार्ग खुरई होकर जाता है। सागर से खुरई तथा निर्तला तक पक्की सड़क है, वहाँ से एरण जाने के लिए लगभग १७ किलोमीटर का कच्चा मार्ग है। कच्चा मार्ग वर्षाकाल में अवरुद्ध रहता है। दूसरा मार्ग बीना-भोपाल रेलमार्ग पर स्थित मण्डी बामोरा स्टेशन से होकर जाता है। मण्डी बामोरा से एरण की दूरी लगभग १० किलोमीटर है। यह मार्ग सभी ऋतुओं में उपयोगी रहता है। प्राचीन काल में एरण प्रमुख राजमार्ग पर स्थित था। यह मार्ग उज्जियनी, विदिशा होता हुआ एरण आता था, यहाँ से भरहुत होता हुआ कौशाम्बी जाता था। जनरल कनिंघम[३] तथा जॉन एलन[४] ने एरण की यही स्थिति दी है।

एरण बेतवा (प्राचीन बेत्रवती) की सहायक बीना नदी (प्राचीन बेण्वा) के तट पर बसा हुआ है। बीना नदी उत्तर-पश्चिम एवं पूर्व दिशा से एरण को अपने घेरे में लेकर अर्द्धचन्द्रकार रूप में प्रवाहित होती हुई उसकी स्वाभाविक सुरक्षा करती है। चौथी ओर ताम्रपाषाण युग में निर्मित सुरक्षा दीवार है। उक्त दीवार और खाई के अवशेष उत्खनन से प्रकाश में आए हैं। एरण में ताम्रपाषाण संस्कृति के लोग बीना नदी से थोड़ा हटकर रहते थे। नदी के मोड़ से बने प्राकृतिक अर्द्धवृत्त के भीतर सुरक्षा दीवार का निर्माण किया गया था। एरण से प्राप्त ताम्रमुद्राओं के पृष्ठ भाग पर निर्मित चिन्हों से उक्त तथ्य की पुष्टि होती है। कनिंघम के अनुसार इन मुद्राओं पर अंकित अर्द्धवृत पुराने एरण नगर की स्थिति को प्रदर्शित करता है तथा नदी का चिन्ह बीना नदी (प्राचीन बेण्वा) का संकेत करता है, जिसके तट पर एरण नगर बसा हुआ था।

भौगोलिक दृष्टि से एरण का महत्व अधिक रहा है। इसके एक ओर बुन्देलखण्ड तथा दूसरी ओर मालवा का भूभाग है। अत: यह बुन्देलखण्ड तथा मालवा के मध्य एक प्रवेश द्वार के समतुल्य था।[५] पूर्वी मालवा की सीमा रेखा पर अवस्थित होने के कारण यह दशार्ण को चेदि-जनपद से जोड़ता था।[६] प्राचीन राजमार्ग पर स्थित होने से इसका महत्व अधिक था।[७] विशेष रूप से गुप्त काल में यह सांस्कृतिक व सामरिक दृष्टि से विशिष्ट महत्व रखता था।

लगभग डेढ़ वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैले प्राचीन टीलों में से मुख्य टीले पर वर्तमान एरण ग्राम स्थित है। इसी मुख्य टीले पर ताम्रपाषाण युग की बस्ती थी। अन्य टीलों पर परवर्तीकलीन निवास संबंधी अवशेष मिले हैं।[८] मुख्य टीले की ऊँचाई लगभग १२.२० मीटर है, जबकि बाहरी टीले लगभग ६.१० मीटर ऊँचे हैं। निवास की अधिकतम मोटाई क्रमशः ८.८४ मीटर तथा २.४४ मीटर है।[९]

डॉ.हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर द्वारा स्थल एरण में १९६० से १९६५ तक और १९८४ से १९८८ ई. तक तथा १९९८ में उत्खनन कराया गया। इन उत्खननों के द्वारा एरण तथा समीपवर्ती स्थलों से पाषाण युग, आद्यऐतिहासिक तथा ऐतिहासिक युग के अत्यंत महत्वपूर्ण अवशेषों की प्राप्ति हुई है।

एरण और उसका निकटवर्ती प्रदेश प्रागैतिहासिक युग से ही मानव की क्रीड़ा-स्थली रहा है। एरण में बीना नदी के तट से बड़ी संख्या में पुरापाषाण, मध्यपाषाण तथा उत्तर पाषाण कालीन उपकरण प्राप्त हुए हैं।

एरण के निकट भापसौन घाट तथा छपरेट घाट में बीना नदी के तट से पुरापाषाणयुगीन उपकरण पाये गये हैं।[१०] एरण के निकटवर्ती क्षेत्र में उपलब्ध पुरापाषाणयुगीन उपकरणों के निर्माण में लाल बलुआ पत्थर, फ्लिंट तथा क्वाटजाइट का उपयोग किया गया है। उपकरणों में यद्यपि मूठछूरा प्रमुख है किन्तु खुर्चन यंत्र (स्क्रेमर), विदारक (क्लीवर), गंडासा तथा कतरना (चॉपर-चापिंग टूल्स) इत्यादि भी प्राप्त हुए हैं। ये पुरापाषाण-युगीन उपकरण विकास की तीन अवस्थाओं के द्योतक हैं। एरण, भापसोन घाट और छपरेट घाट उपलब्ध मध्यपाषाण युगीन उपकरण, क्वार्टजाइट, चर्ट और अगेट पत्थर से निर्मित हैं। ये छोटे मजबूत सुघड़ और विविध उपयोगी उपकरण विकास के परिचायक हैं। इनकी निर्माण तकनीक भी विकसित है। इस काल में खुर्चन यंत्र, अग्रास्त्र, छिद्रक, बाण फलक, यंत्र छिद्रक निर्मित किये गये। उत्तरपाषाण कालीन बाण फलक अग्रास्त्र, छिद्रक तथा अर्द्धचक्र इत्यादि अगेट, जास्पर, क्वॉट्ज जैसे मजबूत और चिकने पत्थर से बनाये गये हैं। इनमें और भी विकसित निर्माण तकनीकी प्रयुक्त की गयी है। इस काल के उपकरणों का प्रयोग लकड़ी अथवा अस्थि की मूठ में फँसाकर किया जाता था।

एरण कि सर्वेक्षण तथा उत्खनन में प्राप्त नवपाषायुगीन प्रस्तर कुठारों में नवीन तकनीक देखने को मिलती है। इन उपकरणों को निश्चित आकार देने के उपरांत शिलाखण्ड पर घिसकर चिकनाया गया है। नव पाषाण युग के मानव ने पशु पालन तथा अनाज संग्रह का सूत्रपात किया।[११] एरण में कायथाजनों के समकालीन नवपाषाण संस्कृति के पशुपालक धातु से अपरिचित थे। आरंभ में वे केवल पत्थर की समतल चमकीली कुल्हाड़ियों और हस्तनिर्मित मोटे मिट्टी के बर्तनों का उपयोग करते थे। इस काल के हस्तनिर्मित मृदभाण्ड मोटे हैं, उन पर टोकरी अथवा चटाई के निशान हैं। पकी मिट्टी के मनके, चिकनी चमकीली कुल्हाड़ियाँ, सिलबट्टे और पत्थर के छोटे-छोटे ब्लेड के अतिरिक्त घोड़े का अस्थि पंजर खुदाई में प्राप्त हुआ है। घोड़े की अस्थियां को बाकायदा दफनाने के प्रमाण पहली बार एरण में ही मिले हैं।[१२]

वर्ष १९८६ में प्रो.सुधाकर पाण्डे तथा डॉ. विवेकदत्त झा के निर्देशन में हुए एरण उत्खनन द्वारा यह तथ्य उजागर हुआ कि एरण में सबसे पहले कायथा-संस्कृति के लोग यहाँ के नवपाषाण युगीन पशुपालक मानवों के साथ बस गये। उक्त उत्खनन के पहले तक मध्यप्रदेश में कायथा सबसे प्राचीन नगर माना जाता रहा। उज्जैन के समीप स्थित कायथा और एरण के निवासियों का पारस्परिक घनिष्ठ संबंध दोनों स्थलों में उपलब्ध मिट्टी के बर्तनों की समानता द्वारा प्रदर्शित हुआ है। भलीभांति मिट्टी गूँथकर, सावधानीपूर्वक चाक पर बनाये गये मजबूत लाल मृदभाण्डों पर काले अथवा गहरे भूरे रंग का लेप लगाया जाता था। उनके मकान मिट्टी के बनाये जाते थे। वे अनाज के साथ-साथ मांस का भक्षण भी करते थे। कायथा की तुलना में एरण के निवासी विपन्न थे। कायथा जैसे उत्कृष्ट ताम्रपाषाण उपकरण एरण में नहीं मिले हैं।

परवर्ती हड़प्पा संस्कृति को ताम्रपाषाण संस्कृति के नाम से जाना जाता है। हड़प्पा, मोहनजोदड़ो, लोथल, कालीबंगा, जैसे सम्पन्न केन्द्रों के निवासियों को नाना कारणों से विवश होकर दूरस्थ प्रदेश में जाकर करना पड़ा। एरण से भी हड़प्पा संस्कृति के निवासियों का संबंध रहा है। हड़प्पा संस्कृति से एरण का संबंध यहाँ से प्राप्त मृद्भाण्डों, कूबड़दार बैल आकृतियों और पक्की ईटों के द्वारा प्रमाणित हुआ है। सिन्धु सभ्यता का विनाश होने पर इस सभ्यता के कुछ निवासी एरण में आकर बस गये। उन्होंने आसपास के जंगलों को साफ कर, बीना नदी से तीन ओर से सुरक्षित भू-भाग में अपने मिट्टी के मकान निर्मित किये। कहीं-कहीं पर मकानों में ईंटों का बहुत ही सीमित उपयोग भी किया। एरण के तत्कालीन निवासी छोटे तीक्ष्ण और कारगर पाषाण उपकरणों को लकड़ी की मूँठ में फँसाकर ब्लेड, चाकू, छेदक, और बाणफलक की भाँति प्रयोग में लाते थे। पत्थर के भारी गोल छल्लों को काष्ठदण्ड के ऊपरी सिरे पर लगाकर गदा जैसा शस्त्र बनाते थे। इनके अतिरिक्त हरिण के सीगों तथा गोफन का प्रयोग भी शस्त्र के रूप में किया जाता था। गोफन में रखकर फेंकने के लिये बनाए गए गोल पत्थर और पकी हुई मिट्टी की गोलियाँ उत्खनन में प्राप्त हुई हैं। शंख, पकी मिट्टी, अगेट, चालसीडोनी तथा क्वार्ट्स जैसे पत्थरों की विविध दैनिक उपयोगी वस्तुएँ बनायी जातीं थीं। बच्चों के खेलने के लिए मिट्टी के बर्तनों के मण्डलक मिट्टी की खिलौना-गाड़ियाँ और छोटी गोलियाँ निर्मित की जातीं थीं। वयस्कों के मनोरंजन के साधन नृत्य, आखेट और शतरंज थे।

कायथाजनों के तुरन्त बाद अब से लगभग चार हजार वर्ष पहले ताम्रपाषाणसंस्कृति के लोगों का कब्जा हो गया। कि लोग पाषाण उपकरणों के साथ-साथ ताँबे की वस्तुओं का भी उपयोग करते थे। नदी द्वारा सुरक्षित अर्द्धचन्द्रकार भू-खण्ड पर ही उनका निवास केन्द्रित था। कुछ समय बाद १७५० ई.पू. के आसपास उन्होंने चौथी असुरक्षित दिशा में मिट्टी की एक विशाल सुरक्षा दीवार तथा खाई का निर्माण किया। इस दीवार की वर्तमान ऊँचाई ३० मीटर तथा लम्बाई एक किलोमीटर है। यह दीवार उस युग में एरण की विशिष्ट स्थिति तथा वहाँ के निवासियों की सजगता का परिचायक है। इस सुरक्षा दीवार में दो प्रवेशद्वार थे। एक द्वार दक्षिण पूर्व में और दूसरा दक्षिण पश्चिम में। आज भी एरण में प्रवेश इन्हीं दोनों प्राचीन द्वार-स्थलों से संभव है। दक्षिण पूर्वी प्रवेश द्वार स्थल पर ही शताब्दियों बाद डाँगी राजाओं ने जो प्रवेशद्वार निर्मित कराया वह आज भी दृष्टव्य है। इस द्वार का प्रयोग ग्रामवासी नदी नट पर जाने के लिए करते हैं। दूसरे स्थल पर पिछली शताब्दी में जनरल कनिंघम के तोरण द्वार खड़ा पाया गया था। यह सुरक्षा दीवार बाहरी आक्रमणों के दौरान सुरक्षा प्रदान करती रही।[१३]

संदर्भ-

१. झा, विवेकदत्त: 'एरण: बुन्देलखण्ड का प्राचीनतम सामरिक सांस्कृतिक केन्द्र ईसुरी, अंक ४. डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, १९८६-८७, पृष्ठ-९

२. सिंह, उदयवीर: एरण ए चालकोलिथिक सेटलमेंट, बुलेटिन ऑफ एन्शियेन्ट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड ऑक्यॉलाजी, सागर विश्वविद्यालय, सागर, १९६७, अंक १, पृष्ठ-२९

३. कनिंघम, ए.: क्वायंस ऑफ द एंशियेन्ट इण्डिया,लंदन, १८९१,पृष्ठ ९९

४. एलन, जे. :केटलाग ऑफ द क्वायंस ऑफ एन्शियेन्ट इण्डिया, लंदन, १९३६, पृष्ठ-९६

५. सागर जिला गजेटियर (१९७०), पृष्ठ-५११

६. द्विवेदी, चन्द्रलेखा : एरण का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, दिल्ली, १९८५, पृष्ठ-१

७. बाजपेयी, के.डी. एवं पाण्डेय, एस.के.: भारतीय संस्कृति में मध्यप्रदेश का योगदान (१९६७), इलाहाबाद, पृष्ठ-११४

८. दुबे, शैली:एरण के कलावशेष, (अप्रकाशित लघु शोध-प्रबंध) डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर १९८३, पृष्ठ-१

९. बुलेटिन ऑफ एन्शियेन्ट इण्डियन हिस्ट्री एण्ड ऑक्यॉलाजी, सागर विश्वविद्यालय, सागर, १९६७, अंक १, पृष्ठ-३०

१०. बाजपेयी, कृष्णदत्त: सागर थ्रू द ऐजेज, सागर १९६४, पृष्ठ-११

११. अवस्थी, शैलेष: एरण उत्खनन से ज्ञात तृतीय काल (अप्रकाशित लघु शोध प्रबंध) १९८२, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर म०प्र०

१२. झा, विवेकदत्त: 'रीसेन्ट एक्सकेवेशन्स एट एरण' ऑक्यॉलॉजिकल स्टेडीज, बनारस, १९६६ पृष्ठ-१०२

१३. झा, विवेकदत्त:पूर्वोल्लिखित, ईसुरी (अंक ४), पृष्ठ-१०

-संस्कृति तथा पुरातत्व विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर म०प्र०

बुन्देली खेल और मेला

-जफ़र उल्ला खाँ 'जफ़र'

हिल मिल खेलत सबरी गुइयाँ,
मार कछौटा खोलें मुइयाँ।
जोड़ी दार बनावे अपनी,
टाँग लेत जल्दी सें कइयाँ।
रूख काट दय लोगन्ने सब,
मिले न अब कौनऊँ खाँ छइयाँ।
अपनी-अपनी परी सबऊँखाँ,
कछू फिकर अब कोऊ खाँ नईयाँ।
मेला देखन कैसे जारय,
संग लड़ेर उर लोग लुगइयाँ।
ढूड़त फिरत हैं अँधयारे में,
किते बिलागए मोरे सइँयाँ।
अब न जैहों मुन्सेलू संग,
हाहा करत परत हों पइयाँ।

-टीकमगढ़, म०प्र०

मूरखन की अथाई

-उमाशंकर खरे 'उमेश'

पार टौरियन खों चीरत और उछल-कूँद करत भइँ सारंग नदी के किनारे, सागौन, करदई, बमूरा, छेवले आदि पेड़न की डांग के बीच रमपुरा नाव कौ एक छोटो सो गाँव बसो है हजार बारा सौ आबादी बारे ई गाँव के लोग खेती-किसानी औ गईयाँ भैंसे पाल कें दूध, दही आदि कौ धंधों करके अपनो भरन-पोषन करत हैं। गाँव में अधिकांश लोग अनपढ़ हैं पन्द्रा-पच्चीस जनेई पढ़ लिख लेत हैं चार-पाँच साल पैले ई गाँव में सिरकार ने एक छोटो सौ मदरसा खोलो तौ, मदरसा में गाँव के पच्चीस-तीस मौंड़ी-मौड़न ने नाव लिखा लव तो। मदरसा में एक मास्टर है जौन गुरु जी कुआवत हैं, पढ़ावे खां आन लगेते, पै अब बे गुरु जी दस-बारा दिन में एक-दो घंटा के लाने आउत औ मौंड़ी-मौड़न की हाजरी भर के चले जात हैं, ई गाँव में आज तक ई मदरसा खों देखवे कौनउँ बड़ो हाकिम नइँ आव है। गाँव के दो-तीन कोस पै रतनगढ़ एक छोटो सो कस्बा है, एइ कस्बा में ई गाँव के पटवाई दद्दा रत हैं, जो दस-पाँच दिन में ई गाँव में आकें गाँव के मुखिया कक्का सें मिल-मिलू कें चले जात हैं।

गाँव के मुखिया कौ नाव रामसींग है, पै गाँव के सबई भैया-बैनें उनें रमसू कक्का कै के पुकारत हैं। रमसू कक्का की उमर करीबन ६५-७० साल की हुइये वे पढ़े-लिखे तौ बिलकुल नइयाँ पै बिचारवान हैं। गाँव में एक मिट्ठू भैया हैं जोन बड़े बातूनी औ हँसोड़ सुभाव के सज्जन आदमी हैं। गाँव के लोग इने बकील-बकील कत हैं। गाँव में हरदास नाव के एक पुरेत कौ घर है, पुरेत महाराज गाँव में कथा वार्ता पत्रा-अत्रा देखकें अपनी गुजर-बसर करत हैं।

गाँव के सबई बारे बूढ़े भुन्सरा होत अपने-अपने कुआँ खेत पै जाकें खेती किसानी कौ काम करत है, औ घर की जनी मान्स गोबर कूरा रोटी पानी करके सब अपने-अपने घर के लोगन खों रोटी कलेउ लैंके हार-खेत पै जाके खेती किसानी में हात बटाउतीं हैं। गाँव में एक कुआँ है जो मिठुआ कुआँ कुआवत है। गाँव भरे की सबइँ जनीं मान्से पीवे कौ पानी एइ कुआँ से भरती हैं।

आज पानी भरतन में मगना की बहु तुलसा बड़े पुरा की एक अधेड़ उमर की महिला सें बोली-काकी! काल संजा कें बखत हमाय परोसी मजले ने अपनी दुलइया खों ऐसो मारो कें ऊकी सबरी पीठ सूजी धरी। तुलसा ने जोन महिला सें काकी कई हती वा काकी बोली-

'काय दुलईया का बात पै मजले ने अपनी घरबाई खों ऐसो मारो पीटो है।' तुलसा बोली, काल मजले संजा के कऊँ से दाऊ पीकें घरे आय तौ मजले की दुलईया मजले सें बोली-'घर के जे राई भरे से मौड़ा तौ ई ठन्ड में उगरारे फिर रय उनके उन्ना-लत्तन खों तौ तुमलौ पइसा टका नइयाँ औ दाऊ पीवे खों तुमलौ रोज रुपइया निकर आउत।'

'इतनी सुनतनइँ मजले ने आव न देखो ताव उनने तौ उठा लठिया अपनी घरबाई की रुई सी धुन दई। बा तौ गनीमत रई की ओई बेराँ कऊँ सें मुखिया कक्का निकर आय उनइँ ने ऊ की जान बचाई।'

तुलसा की बात सुनकें वा काकी बोली-बेटा ऊ ठठरया मजले कौ नाव जैसौ दुर्जन है ऐसई ऊँ के काम है। बौ तौ दुर्जन की खान तुमें पतो न हुइये। तुमाय वियाव के तीन-चार साल पैले बौ सराब के नशा में दिन दुपरें रमुआ के घर में घुस के ऊ रमुआ की दुलईया मनकू सें छेड़ा-छाड़ी करन लगौ तौ ओई बेराँ मनकू के चिल्याय सें पुरा के लोग जुरे औ उननें मजले की ऐसी धुनाई करी ती कै तीन दिना लौ खाट पै धरौ रवतौ। फिर गाँव की पंचायत जुरीती सौ सारे खों गाँव भरे की पूरी बिरादरी खों रोटी पानी दैवे कौ डाड़ लगौ तो। इतनी गत होवे पै भी ऊ के आचरन में सुधार नइँ भव आये।

तुलसा बोली-'काकी अब तौ और उनने गाँव के दस पाँच लोग लरकन खों दाऊ पीवो सिका दव जो अब उनकी हाँ में हाँ मिलाउत रत हैं।' काकी बोली-'होरी में जान दो जो जैसौ करै सो बैसोई भरे।'

इतनी बातें करत गइँ काकी औ तुलसा अपने-अपने घरे चली आईं। गाँव के अथाईपुरा में गाँव की अथाई है। संजा होवे के बाद गाँव के लोग लरका व्यारी करकें अथाई पै आ जुरत औ गप्प सड़ाका लगाकें मनोरंजन कर अपनों मन बैलाउत हैं।

जाड़े में ई अथाई पै कोंड़ो जरा कें आगी तापत भय चुटकला, कानियाँ कत हैं। गाँव के पुरेत महाराज कभउँ-कभउँ इते आके रामान महाभारत आदि की कथा वार्ता कै कै लोग बागन खों सुनाई कें उनसे ज्ञान की चर्चा करत हैं। आज गाँव के सात-आठ आदमी लरका आपस मेंई मजाक करत भय बता रये ते। धर्मदास नाव के एक लरका, जिये गाँव के लोग-बाग धरमू कैबू करें। परमा नाव के लरका से बोले-'भैया! मोय तौ जनी मांसन कौ गावौ बजावौ समज में नइँ आउत। अपने पन्ना कक्का के नाती भव, तौ उतै बुलउआ बाई जनी मांसे गा रई ती, आज दिन सोने कौ महाराज, काय भैया? दिन काय कौनऊँ गानों-गुरिया आय जोन सोने को बन गव?

परमा, धरमू की बात सुनकें बोले-'धरमू भैया! तुम तौ निराट मूरख रय। अरे जनी मान्सन कौ गावे कौ मतलब है कै आज कौ दिन सोबे खों है। ओई बीच रतना बोल परो-काल सूका के लरका की राछरी फिर रई ती तौ जनी मान्सें जानत का

गा रईंतीं। धरमू बोलो-का गा रईंती? रतना ने उत्तर देत भइ कई-वे जनीं मान्सें गाउत जा रईंतीं, इन गलियन होके आव री बनरा रघुवंशी। काय भैया हरौ! बो दूला बन्दरा आय जोन जनी मान्से उये बनरा कै रईंतीं।

एई बीच उन लरकन की बातें सुनत भय गाँव के मुखिया रमसू कक्का उतें से निकरे उनने उन लरकन की बातें सुन लईंतीं। वे अथाई पै आके बैठे औ उन सबरे लरकन सें बोले-'तुम सबरे लरका बुद्धु के बुद्धु हो। अरे! दिन सोने कौ नइँ होत आय, पै ऊ कौ मतलब है, कै आज कौ दिन शुभ है नौनों है, अच्छौ है।' एई बीचां रतना बोलो-काय कक्का! औ दूला खों जनी मान्सें बनरा काय कै रईंतीं?

मुखिया कक्का फिर बोले मैंने तुम सबसें पैलेंई नइँ कई आय कै तुम सबकी अकल तौ भैंस चर गई। बनरा कौ मतलब होत है दूला। दूला खों बन्ना बनरा आदि कत हैं। आज कल हमाइँ नई-नई बहुयें-बिटियाँ लरका ठाकुर अपनी बुन्देली संस्कृति के रीति-रिवाज, गावौ-बजावौ, खान-पान, तीज-त्यौहार सब भूलत जा रय। हमाव तुम सबसें कैबो है कै हम अपने मोड़ी-मौड़न खों पढ़ाबे लिखाबे अपनी बुन्देली संस्कृति खों नष्ट होवें से बचावें।

मुखिया कक्का की बातें सुनकें धरमू बोलो-काय कक्का, पुराने जमाने की...बोई बातें कै रये। काय की संस्कृति, काय कौ पढ़बो-लिखबो? एक कानात है-'पढवें फारसी बैंचे तेल, जौ देखो करमन कौ खेल।' धरमू की बात सुनके मुखिया कक्का बोले-'बेटा हम औरन कौ तो काम समजावे को है, मानबो न मानबो लरका बारन कौ है।' तुमने जा कानात सोई सुनी हुइये-'जो न माने बढ़न की सीख, लेंय खपइया माँगे भीख।' ऐई बीच मिट्ठू भैया अथाई पै आकें सबसें राम-राम करत भय बोले-सब पंचन खों राम-राम पौंचे। अथाई पै बैठे सबई भइयन ने मिट्ठू भैया से राम-राम करके कई- आव भैया बकील साव अबाई होबे।

मिट्ठू भैया अथाई पै आके बैठे के मुखिया सें बोले-'मुखिया कक्का! का बात की चर्चा हो रई, मुखिया मिट्ठू से कन लगे-अरे बकील भैया जे लरका ठाकुर मूरखन जैसीं बातें करत हैं। मैंने इन खों समजावे बाई बात कई तौ बात बात इनके गरे नइँ उतरत आय। मैंने कई कै अरे लरका हरौ पढ़ो-लिखो, धर्म कर्म सीको, अच्छी बातें करवो सीका, पै जे तो मोई खों ज्ञान सिखाउन लगे'

एई बीच गाँव के कौनउँ आदमी की भैंसे उतें अथाई के ऐंगर आकें ठाड़ी हो गई। भैंसन खों देखकें मुखिया कक्का बोले-'देखो तौ रे! जा कीकी भैंस आ छूटी फिर रइ, अबइँ जा कौनउँ के खेत में पिड़ कै उजार करे।' मुखिया की बात करबे के बीच दुर्जन अपने संगे आठ-दस लोगन खों लुआयँ भय दारू पीयें अथाई लो से निकरे औ मुखिया की बातें सुनन लगे-मुखिया की बात खों सुनकें दारू के नशा की झोम में दुर्जन मुखिया सें बोले-कक्का!'बुढ़ापे में तुमाई आँखें आँ कमजोर हो गइँ अब तुम चस्मा बनवा लो, जा भैंस नोइँ ढाँड़ी, पड़ा आ ठाड़ो है।'

दुर्जन की बात खों सुनके उतै बैठे भगौने माते बोले-काय दुर्जन, मुखिया की आँखें आँ कमजोर हो गइँ, भगोने की जा बात सुनकें दुर्जन दारु के नशा में ललखरयात बोले-काय रे? भगोना का कैरव मोय आ नइँ दिखात? मोय तौ खूब दिखात। तोई आ आँखें फूट गइँ। भगोने बोले-दुर्जन नौनीं तराँ बोलो न तौ ठीक न हुइये जौ तौ हम जानत हैं कै तुम दारू कौ नशा करके आ गए। दुर्जन मुखिया सें बोले-'देखो मुखिया कक्का, ई भगोना खों हटको जौ मोय दारू खोर बनारव औ लरोंय बोल रव। मैं तौ साँचीं कैरव कै जा भैंस नोंईं पड़ा आय। ई बात पै जौ उल्टो बोलन लगौ।

मुखिया की बात सुन दुर्जन बोले-कक्का अब तौ ई बात कौ अबइँ निरनय हुइये, कै जा भैंस आय कै पड़ा आय। दुर्जन की बात खों सुनकें मिट्ठू भैया बोले-अब ई बात को निरनय कैसे हुइये कै जा भैंस आय के पड़ा। दुर्जन बोले-सब भइयन सें हाँत उठवाव जौ भगोने के पक्ष में हुइये कै जा भैंस आय, तौ भइया ओरें अपने हाँत उठायँ। औ जौ भइया ओरें हमाये पक्ष में हुइयें कै जो पड़ा आय तौ वो अपने हाँत उठायें।

मिट्ठू बोले-जा बात ठीक है, फिर मिट्ठू सबसे बोले जोन भइया हरें भैंस बता रये पैलें वे हाँत उठायँ। मिट्ठू की बात सुनके उतै बैठे लोगन में से सात जनन नें भैंस बतावे के लानें भगोनें के पक्ष में हाँत उठा दय। मिट्ठू बोले-ठीक है सात भैया भैंस बता रय। अब पड़ा बतावे वाय भैया दुर्जन के पक्ष में हाँत उठायँ। दुर्जन के संगे दारू पीके आय सबईं आठ लोगन ने अपने हाँत दुर्जन के पक्ष में उठाय। ई तराँ से दुर्जन के पक्ष में एक हाँत जादा उठ गव। मिट्ठू बकील बोले-दुर्जन भैया तुम जीत गय, औ भगौने भइया हार गए। काय से अब जौ लोकतंत्र को जमानो है। बहुमत के आधार पैइ तौ हार जीत हो है।

दुर्जन ने बकील मिट्ठू द्वारा निरनय सुनकें मिट्ठू सें कई, अब बकील साब। अब भगौने कौ का डॉड़ हुइये। मिट्ठू बोले-ई बात को निरनय तौ मुखिया कक्का करें। मुखिया कक्का बोले-भइया हरौ अब ई बात को हम का निरनय दें। मोई तो समझ में नइँ आव कै सजीमन जा भैंस ठांडी है औ तुमन उये पड़ा बतारय ई सें मैं कछु नइँ कै सकत।

दुर्जन बोले-मुखिया कक्का! मौं देखी पंचात न करो। मुखिया बोले-मैं कछु पंचात नइँ कर रव तुम सब जनन खों, जो दिखाय सो करौ। दुर्जन बोले-भगोने की हार हो गई अब उने पूरी बिरादरी खों रोटी-पानी देने आय। नइँ तौ इनको पूरी बिरादरी से हुक्का-पानी बन्द करो जाय। मिट्ठू बकील बोले-काय भगोने भैया! बताव तुम का कैरय? भगोने बोले-ठीक है हमें तुम सब जनन कौ निरनय मंजूर है। उन सब जनन की बातें सुनकें, मुखिया कक्का अपनो मूँड पकर कै सोसन लगे, वाह रे जमानो, वाह रे लोकतंत्र। ई मूरखन की अथाई पै दारू खोरन के बहुमत से भैंस पड़ा बन गई। 卐

-साकेत नगर, पृथ्वीपुर, टीकमगढ़ म०प्र०

सब रागन कौ राग है, जा बुन्देली फाग

-प्रेमनारायण पाठक 'अरुण'

ऋतुराज बसन्त के आगमन का संकेत मिलते ही मृदंग, ढोलक, नगड़िया के कड़कड़ाते स्वरों, ढप की थापों, मंजीरा और झाँझ की झनकारों से बुन्देलखण्ड का समूचा वातावरण गुंजायमान हो उठाता है। साँझ होते ही अलाव और कौंड़ों के आसपास फागों के फड़ लग जाते हैं, जो सूर्य भगवान के उदय होने तक पूरी रात अनवरत चलते रहते हैं, यह सिलसिला लगभग बसन्त पंचमी से आरंभ होकर होली तक डेढ़-दो माह तक चलता है। इसे बसन्तोत्सव या फागोत्सव के नाम से भी जाना जाता है, फागों की अत्यधिक लोकप्रियता के कारण वर्तमान में इन्हें किसी विशेष उत्सव पर इन्हें बारहों महीने गाने की प्रथा चल पड़ी है। बुन्देली की हर लोकविधा में फागों के गीत गाये जाते हैं, संस्कृत भाषा में एक फल धातु है, जो निष्पत्ति अथवा फलना के अर्थ में प्रयुक्त होती है, इसी धातु में 'गुक्' प्रत्यय लगाने पर 'फल्गु' शब्द बन जाता है, अन्त में 'फाग' का रूप धारण कर लेता है। बुन्देलखण्ड में फल्गु कहा जाता है राख मिश्रित आग के बारीक अंगारों को, तात्पर्य है कि जब तक अलाव की धधकती आग फल्गु में न बदल जाये तब तक फागों का गायन होता ही रहे, फाग का संधि विच्छेद करने पर फ+आग अर्थात् जब तक आग सुखदायी, तन को लगे तब फागों के गायन का समय होता है। स्थान के अन्तराल पर गायक इन फागों को अपने-अपने ढंग से गाते हैं, फागों के अनेक प्रकार बतलाये गये हैं, अत्यधिक प्रचलित फाग विधायें कुछ इस प्रकार हैं-

१. **छन्दयाऊ फाग**-फागों का नामकरण 'यथा नाम, तथा गुण' के आधार पर ही है, कई छन्दों का समायोजन होने पर इसे छन्दयाऊ नाम दिया गया है टेक २८ मात्राओं की होती है, १६ व १२ पर विराम देकर अन्त में दीर्घ किया जाता है इसे दुगुन, चौगुन मे गाने के लिए गायक के बीच में 'ललबै' शब्द गाकर आगे बढ़ते हुये अन्त में 'लाल' शब्द का प्रयोग करते हैं, अनेक रचनाकारों की छन्दयाऊ फागें यत्र-तत्र सुनने व पढ़ने को मिल जातीं हैं, कुछ बगैर छाप की फागें भी सुनने को मिलती हैं, जिनके रचनाकार अज्ञात हैं। छन्दयाऊ को लावनी फाग भी कहते हैं।

अधिकतर स्व. श्री भुजबल सिंह ठाकुर, चौका छतरपुर के ठाकुर चतुर सिंह, पन्ना के धीर वीर मोती, मालबा अंचल से बुन्देलखण्ड में विस्थापित श्री दंगल सिंह, सटई क्षेत्र के पटवारी शिवराम, बिजावर के पंडित श्री रमेश प्रसाद पाण्डेय की छंदयाऊ फागें यहाँ के लोक गायकों को रटीं हुई हैं छन्दयाऊ फागें बहुत विस्तृत होतीं हैं, स्थानाभाव के कारण कुछ अंश ही लिख पा रहा हूँ।

राम-श्याम समता की फाग

टेक- भजमन रामचन्द्र गिरधारी, ब्रजपति अवध बिहारी।
दोहा- रामचन्द्र सीतापति, राधा पति घनश्याम।
दोउन के वरनन करत, आदि ब्रह्म सुखधाम।।
छन्द- ब्याहे जनकपुरी करतार, इनकी बरसानें ससुरार,
उनके जनक हैं नातेदार, इनके वृषभान।
गाओ राम श्याम अवतार, जिनकी लीला अपरम्पार,
सुनकें भागे वाने डार, कइयक गुनवान।
उड़ान- राम श्याम के सेवक हैं, वे करहैं दया करारी।
'भुजबल सिंह' जोड़ माँगत हैं, नइँतर खाजा हारी।।
कहरबा-ऐंसी नदिया बताव, जोंन दोई कोद खाँ बहावै।।

शिक्षाप्रद छन्दयाऊ फाग

टेक- ज्ञानी साँची मानौ बानी, पर है न हैरानी।
दोहा- आधी रोटी है भली, घरै बैठकें खाव।
सेंगी पावे अन्त घर, परदेशै न जाव।।
छन्द- जो मन की बात, औरन सें कात, बिलुरत बिलात, कावें स्याने,
परनारी संग, जो रचे रंग, जीवन में तंग, होतई रानें,
उड़ान-काऊ कौ सुख देख न जरियौ, नइँतर बढ़ै गिरानी,
कहरवा-जितनौ होवै चून, उतनइँ खाँ नेवते पौचाइयौ।
छन्द- माया की चाह, असहाय आह, करबै तबाह, जीवन सारौ,
कर घर में फूट, जो करी लूट, हो जात टूट, कंचन कारौ,
उड़ान-आलस करबे वारन की तौ, नाहक गई जिन्दगानी,
कहरवा-बोलौ न कुबोल, चाराई दिना कौ जौ मेला।
छन्द- भगवान भाँत, जे पिता मात, दिन और रात, पूजत रहयौ,
खुद की कमाई, जो है तुमाई, कर गुजर भाई, ना ऋण लइयौ,
उड़ान-'अरुण' घरई कौ कुरवा फोरत, आँखें रीत पुरानी,
ज्यादाँ ना उड़ौ, ओर-छोर नइयाँ बादर के।।

२. **सखयाऊ फाग**- इनमें सारगर्भित दोहों को प्रयोग करके अपने सखा या सखी को संबोधित किया जाता है, 'अरे रामा' लगाकर इन्हें कबीर साखी की शैलियों में गाकर लम्बी तानें लगाईं जातीं हैं।

हाँ कहौ तौ है नहीं, ना कहौ तौ है।
हाँ औ ना के बीच में, जो कछु है सो है।।
मोरे रामा जो कछु...।
कविरा हम हारे भले, जीतो सब संसार।
हारे हरिपुर जात हैं, जीते जम के द्वार।।
मोरे रामा जीते...।

३. **डिढ़ खुरयाऊ फाग**-पूर्वकाल में अशिक्षा बहुत थी, इसलिए अनपढ़ लोग अपने-अपने ढंग से गणना करते थे, कुछ पशुओं के तलबों से भी गिनती किया करते थे डेढ़ अर्थात् १$^{१}/_{२}$ पशुओं में एक या दो खुर (तलबे) होते हैं, इन फागों में डेढ़ खुर का प्रयोग होने के कारण इन्हें डिढ़ खुरयाऊ कहा जाता हे। टेक लेद की होती है फिर टेक में 'अरे हाँ' को लगाकर फाग आगे बढ़ाई जाती है। इनमें अन्य छन्दों का प्रयोग भी किया जाता है, इन्हें झूमर या झूलना की फाग भी कहा जाता है। जैसे-

झूला झूलें कदमवाँ की डार, कन्हैया राधा जू के संग में,
अरे हाँ, कन्हैया राधा...।
जुर आये सखिन के झुण्ड, कन्हैया झूमर खेलें राधा सौं,
अरे हाँ, कन्हैया झूमर...।

४. **ढप की फाग**-ढप पर गाई जाने के कारण इसे ढहूका की फाग भी कहा जाता है, इनमें बहुत विस्तार होता है, ढप वाद्य यन्त्र को ढाक भी कहते हैं, कहीं खंजड़ी भी कहा जाता है, इनके पूर्व पदों में प्रश्न उत्तरार्ध में उत्तर भी दिये जाते हैं, ये बहुत ही मार्मिक होते हैं।

गिरधारी लाल, तोरौ भरोसौ है भारी।
काहे खाँ बोली कोयलिया, काहे खाँ मोर,
काहे खाँ बोलीं राधिका, जहाँ कान्हा चितचोर,
गिरधारी लाल...।
तपें खाँ बोली कोयलिया, बरसें खाँ मोर,
मिलें खाँ बोलीं राधिका, जहाँ कान्हा चितचोर,
गिरधारी लाल...।

५. **चौकड़िया फाग**-इन्हें टहूका (टऊका), नरेन्द्र और ललित पद भी कहा जाता है, गायक इन्हें अपनी इच्छानुसार धुनों में गाते हैं, हर पद में २८ मात्रायें होतीं हैं, १६ व १२ पर विराम दिया जाता है, वैसे तो गीत में चार कड़ियाँ होने के कारण ही इन्हें चौकड़िया नाम दिया गया, परन्तु कई कवियों नें इनमें मनचाही कड़ियों का प्रयोग भी किया है। इनके जनक कविवर 'ईसुरी' माने गये हैं जैसे-

रजुआ हँसती नजर परे सें, नेहा बिना करे सें।
हमतौ मनखाँ मारें बैठे, बरके रात अरे सें।
जिदना जिद्द हमें आ जैहै, बचौ न एक धरे सें।
'ईसुर' मिलौ, प्रान मिल जैहें, कै बन जाय मरे सें।

***

जौ लौ हैं जीवन की साँसें, तौ लौ कये खाँ आँसें।
कभऊँ चढ़ै न ताप तिजारी, परे परे न खाँसें।
खुद न फँसबे माया जारन, न औरन खाँ फाँसें।
'अरुण' अमोलू फिर जे ऐंसी, साँसे पाहौ काँसें।

६. **खड़ी फाग**-इनमें कड़ियों की संख्या निर्धारित नहीं है, हर कड़ी में ३० मात्रायें होतीं हैं, १६ और १४ मात्राओं पर विराम होता है। चौकड़ियाँ और खड़ी फागें सबसे ज्यादा लोकप्रिय हुईं हैं, इनमें चन्द्रसखी, वृषभान कुँवर (स्टेट बिजावर) पं.गंगाधर जी व्यास ने अपना अमूल्य योगदान दिया है जैसे-

मैं ठाँड़ी रही केशर घोरें, आये न श्याम सखी दौरें।
कुम कुम बीर अबीर धरें रई, लाल गुलाबी रज जोरें।
तरसत रही उन्हें तकबे खाँ, नेह भरे दोऊ दृग बोरें।
करती भेंट गरें लग लग कें, जेई लालसा रई मोरें।
'चन्द्रसखी' मोहन सें कइयौ, नेह लगाकें न टोरें।

***

दिन ललित बसन्ती आन लगे, हरे पात पियरान लगे।
घटन लगी रजनी अब सजनी, रवि के रथ ठहरान लगे।
उड़न लगे चहुँ ओर पताका, मारूत के फहरान लगे।
ऐंसें में 'गंगाधर' मोहन, कौन सौत के कान लगे।

बुन्देली फाग साहित्य में गागर में सागर के दर्शन होते हैं, जिनमें गोता लगाना, ना पूर्ण होने वाला स्वप्न जैसा है, अनेकानेक विद्वान कवियों नें फागों की रचना की है, कुछ आज हमारे बीच में है, कुछ नहीं हैं, बस उनकी अमर रचनाएँ ही शेष है, अन्त में सिर्फ यही लिखूँगा-

शशिकर में शुभ दाग है, रविकर में है आग।
सब रागन कौ राग है, 'अरुण' बुन्देली फाग।।

संदर्भ-लोकप्रभा-डॉ.श्याम सुन्दर बादल।

-सहायक शिक्षक, सटई, जिला छतरपुर म०प्र० 卐

दो गजलें

-महेश कटारे 'सुगम'

चाहत तौ है सरदारी की,
बात करत है रखवारी की।
जब सें बन गये पइसाबारे,
आदत आ गई रंगदारी की।
वे अपने दरबार लगा रये,
जिनकी इज्जत दरबारी की।
वे अकली की कीमत नौंनी,
नइयाँ कदर हुनरदारी की।
पिरे मुसीबत के कोलू में,
हालत हो गई लाचारी की।
खाबे खों रोटी नइँ मिल रई,
सूरत बन गई बीमारी की।
बात काम की कोऊ नइँ करत,
आदत परी मगजमारी की।
घरै चौंखरे डंड पेल रये,
शान मनो लंबरदारी की।१।

पास में जी के दौलत नइयाँ,
ऊँ की कछ्छू इज्जत नइयाँ।
वजन अगर नइयाँ रिश्पत कौ,
फाइल आँगे सरकत नइयाँ।
उम्मीदन पै पालौ पर गऔ,
खुशी फरत उर फूलत नइयाँ।
बात अकल की करवौ छोड़ौ,
ई की कछू जरूरत नइयाँ।
कबै जश्न हुइयै खुशियन कौ,
निकरौ अबै महूरत नइयाँ।
राजनीत ऐसी हो गई है,
गरजत है पर बरसत नइयाँ।
'सुगम' आज के मोंडा मौंड़ी,
बूढ़न खों तौ समझत नइयाँ।२।

-बीना, सागर म०प्र० 卐

विलुप्त होते नैतिक मूल्य

-डॉ.आर.बी.पटेल 'अनजान'

मानव मानव है वही, जो मानव का सत्कार करें।
मानव दानव है वही, जो मानव का संहार करें।

आज मानव मूल्यों का अधोपतन पवन झकोरों की तरह हो रहा है। किसी देश की संस्कृति का मूल मानव मूल्य होते है जिसके आधार पर ही उस देश का उत्थान पतन सुनिश्चित होता है। भारतीय संस्कृति विश्व गुरु संस्कृति वाला देश है किन्तु आज पाश्चात्य संस्कृति की देखा-देखी भारतीय संस्कृति भी गर्त में जा रही है। ऐसी विपरीत परिस्थिति में मानव मूल्यों को संजाये रखने के लिये हमें अपनी लोकसंस्कृति (साहित्य) की शरण में जाना पड़ेगा तथा लोकसाहित्य में पिरोये मानव मूल्यों को अपनाना पड़ेगा तथा उनका प्रचार प्रसार जनमानस में करना होगा तभी हम मानव कहलाने योग्य बने रह सकेंगे। यदि ऐसा नहीं किया गया तो वह दिन दूर नहीं कि हमें लोग दानव रूप में पहचानेंगे तथा पाश्चात्य देशों जैसे अमानवीय कृत्यों (हत्या, अपमान, दुराचार, नरसंहार आदि) का बोलवाला होगा।

बुन्देली लोकसाहित्य मानवीय मूल्य दया, प्रेम, सहकारिता, त्याग, शौर्य, पराक्रम, भक्ति, परोपकार आदि सागर में मोतियों की तरह अक्षय भण्डार है आवश्यकता है इन्हें सहेजने की क्योंकि दूरदर्शन, इंटरनेट, मोबाइल आदि ने नन्हें मुन्ने बच्चों से लेकर बूढ़ों तक के मन मस्तिष्क को आच्छादित कर रखा है जिसके अभाव में वह साँस तक नहीं ले पा रहा है। अर्थात् उसे अपना जीवन अपूर्ण लग रहा है ऐसे संक्रमण काल में मानव मूल्यों को सहेजना कठिन कार्य है किन्तु लोकमानस प्रचलित लोकसाहित्य (लोकगीत, लोक-कथाएँ, कहावतें, लोकपरंपराएँ आदि) को आज भी गीतों के माध्यम से (ग्रामीण क्षेत्र) प्रयोग करता चला आ रहा है इसकी झाँकी हमें गीतों में बखूबी देखने को मिल जाती है। जैसे बीरता की झाँकी निम्रपंक्तियों में दृष्टव्य है-

सात दिना लौ युद्ध भयो, लोहागढ़ दरम्यान।
फिरे फिरंगी बचाउत, अपने-अपने प्रान।।

ऐसे ही अनेकानेक दृष्टांत हैं जिनमें मानव मूल्य उभर कर आये हैं कुछ मूल्यों को इस लेख में सजोने का प्रयास किया गया है-

१. **नैतिकता**-नैतिकता ही मनुष्य को महान बनाती है। इसे मानव जीवन की रीढ़ कहा जाता है। जिस व्यक्ति ने अपना नैतिक स्तर खो दिया उसका अपना जीवन नारकीय हो जाता है तथा समाज में उसे घृणा की दृष्टि से देखा है। बुन्देली संस्कृति में तो नैतिक जीवन को ही सब कुछ स्वीकार किया गया है कहा जाता है-'धन गया कुछ नहीं गया, तन गया कुछ नहीं गया किन्तु चरित्र गया सब कुछ गया'

बुन्देली संस्कृति बुन्देली साहित्य में पल्लवित पुष्पित हो रही है। बुन्देली गृहणी अपने अतिथि का आदर सत्कार करने के लिये आतुर है किन्तु उसका अतिथि उसकी अनुपस्थिति में आकर चला जाता है तब वह खेद व्यक्त करती हुई कह उठती है-

घर होती आदर कर लेती, घर होती।
प्रेम की पातर दया के दोना, कंचन थार परस देती।
थाल परस आगे धर देती, अचलां की विनियाँ डुलाय देती।

वर्तमान में शादी के समय से ही नई नवेली बहुएँ मर्यादा तोड़कर अपने सास-ससुर, भाई-बहिन, माता-पिता व समाज के सामने भोजन, डांस आदि से परहेज नहीं करती जबकि बुन्देली नई नवेली दुल्हन अपने पिता के घर पर होते हुए भी वह शादी के बाद अकती खेलने नहीं जाती वह अपनी माँ से कह उठती है-

बरातरै कैसे जाऊरी, माई मोरे मेले लिवौउवा।
अरी अकती खेलन कैसे जाँऊरी, माई मोरे मेले लिवौउवा।।

बुन्देली संस्कृति में किसी भी कार्य प्रारंभ करने के पूर्व भी गणेश या अपने आराध्य देवता का स्मरण पूजन हमारा नैतिक कर्तव्य है तभी तो एक बुन्देली युवती अपने अच्छे वर प्राप्ति के लिये गौर गणेश की पूजा अर्चना करती है यथा-

बेटी पूजे लागे गौर गणेश, मनावै लागी सरसुतिया।
बेटी काहा दे है गौर.गणेश, सो काहा दैहे सरसुतिया।
बेटी घर दैहै गौर गणेश, सो वर दैहै सरसुतिया।

आज शादी विवाह आदि में बफर सिस्टम (सामूहिक भोज) का बोलबाला है जिसमें समस्त समाजों के लोग लुगाई एक साथ जूता, चप्पल पहिने भोजन करते नजर आते हैं। किन्तु हमारी प्राचीन संस्कृति इसे कभी इजाजत नहीं देती तभी तो एक बुन्देली माँ अपने बेटे को भोजन (पंगत) में जाने के पूर्व समझाती हुई कह उठती है यथा-

जूता पैने पंगत में ने जइयो, जैहौ तो लग जैहै डांड।
कठिन होत है डांड, ऐसे न जइयो जूता पैने मोरे लाल।

२. **वीरता व राष्ट्रीय प्रेम**-वर्तमान परिवेश में साहस, वीरता व राष्ट्रप्रेम देखने को नहीं मिलता क्योंकि व्यक्ति अपने स्वार्थों, निजी कार्यों में इतना लिप्त हो गया है कि उसे देशप्रेम, परोपकार आदि के लिये उसके पास कोई समय ही नहीं है इसीलिए आज हिंसा, लूटपाट, या तुच्छ स्वार्थों तक ही मानवीय भाव सिमटकर रह गये है जबकि प्राचीन संस्कृति व संस्कारों में ये भाव कूट-कूट कर भरे हैं। तभी तो विदेशी शासकों को यहाँ से भागना पड़ा था-

सात दिना लौ युद्ध भयो, लोहागढ़ दरम्यान।
फिरे फिरंगी बचाउत, अपने-अपने प्रान।।

इन फिरंगियों को भगाने वाले बुन्देली वीर ही थे।

३. **ईश्वरीय सत्ता के प्रति आस्था**-वर्तमान युवा पीढ़ी में ईश्वर के प्रति अनास्था/देवी देवताओं के प्रति औपचारिक प्रेम सिर चढ़कर बोलता है। आज दिखाबा, छलावा, आडम्बर देखने में आ रहा है जिसके पीछे मंदिरों व शिवालयों में रहने वाले वेशधारी संत/महात्मा है जिनकी करतूतें आए दिन समाचार पत्रों टी.वी. दूरदर्शन आदि में प्रसारित हो रहे हैं। जबकि प्राचीन संस्कृति में धर्म व ईश्वर के प्रति प्रगाढ़ आस्था लोगों में थी वे तन, मन व धन से ईश्वरीय सत्ता के प्रति समर्पित थे तभी तो वे समाज के समक्ष कह उठते थे-

राम नाम सुमिरो नहिं रे मोरे प्यारे, करो न हरि से हेत।

वे नर ऐसे जाएगें, ज्यों मूली को खेत रे।। भजन करो हो...

४. **स्वास्थ्य के प्रति सजगता**-आज विषैले परिवेश में प्रत्येक जीव घुटन महसूस कर रहा है क्योंकि चारों तरफ आज जहर ही जहर फैला हुआ है। प्राण वायु में कार्बन डाई आक्साइड, अनाजों में रासायनिक खादें, सब्जी व फलों में केमिकल्स का मिश्रण राज कर रहा है। ऐसी वस्तुओं का सेवन करने पर स्वस्थ रहना सिर्फ कल्पना रह गया है। किन्तु हमारे बुन्देली मनीषियों ने स्वस्थ्य रहने के लिये ढेर सारे नुस्खे साहित्य के माध्यम से बताये हैं जिनका यदि अनुसरण किया जाये तो हम स्वस्थ्य रह सकते हैं यथा-

१. *क्वांर करेला, चैत गुड़, भादौ मूली खाय।*
पैसा जावे गाँठ का, रोगी हो पर जाय।।

२. *खाके मूतै सूतैं बाँउ। काहे का वैद बसावै गाँव।।*

३. *सूर्योदय सूर्यास्त में, भोजन कबहुँ न खाय।*
जो मनुष्य भोजन करे, स्मरण शक्ति नशाय।।

मानव जीवन असंख्य पुण्यों का परिणाम है। यहाँ शिशु को गर्भ से लेकर मरणासन्न अवस्था तक संस्कारित करने का विधान है। ये सभी संस्कार (सोलह संस्कार) मंगल गीतों से ध्वनित होते हुए लोक मूल्यों से सराबोर हैं जो सारे वातावरण को जीवन पर्यन्त गुदगुदाने का कार्य करते हैं। मानव जीवन से जुड़े प्रत्येक क्रियाकलापों के लोकगीत आज भी ग्रामीण अंचलों के जनमानस में अपना घर बनाये हुए हैं। इन्हीं गीतों के माध्यम से शिक्षित/अशिक्षित जनसमुदाय को जीवन जीने की कला, कृषि, पर्यावरण, मानमर्यादा, आदर-सत्कार आदि विविध महत्वपूर्ण तथ्यों की जानकारी सहज सुलभ प्राप्त हो जाती थी। किन्तु आज शहरीकरण व पाश्चात्य संस्कृति के अंधानुकरण से हमारी संस्कृति व संस्कार हताहत हो रहे हैं तभी तो समाज विरोधी गतिविधियाँ फल फूल रहीं हैं, ऐसी विपरीत परिस्थिति में हमें अपने खोये हुए मानव मूल्यों को पुनः अपनाना पड़ेगा। सच्ची मानवीयता हमारे संस्कारों में तभी आएगी जब हम लोकसाहित्य में समाहित मानव मूल्यों को आत्मसात कर उन्हें आचरण में लाने का प्रयास नई पीढ़ी को करना होगा यदि ऐसा करना प्रारंभ हो गया तो हम सच्चे मानव बन सकेंगे।

-बजरंग नगर कालोनी, छतरपुर म०प्र०卐

बुन्देली रचनाकार-श्री रघुनाथ सिंह 'मधुप'

-गुप्तेश्वर द्वारका गुप्त

सिरी रघुनाथ सिंह जू कौ जनम ८/१०/१९३७ खों गाँव लोहारी (देवरी) जिला नरसिंहपुर के लोधी घराने में भऔ। उन्नें गिरिराज नरसिंह विद्यालय में मैट्रिक करी उर फिन हिकारिणी महाविद्यालय जबलपुर सें एम०ए० पास करी। वे पलऊँ इसकी पतरी कितवियों में लोकगीत रच कें छपात और, उनें गाउत बेंचत्ते। ऐई बीचां उनन की भेंट सिरी बालजू पाण्डे सें हो गई उर फिन इन्नें उनें कबता को गुरु मान लओ, उर कबता के गुरु सीके। बुन्देली में वे पैलऊँ लोकगीत रचत्ते। फिन एक बेरें पंत जू नें इनको नाँव 'मधुप' धरो। सो वे फिन रघुनाथ सिंह 'मधुप' बनके लिखन लगे। पैली पोथी ई तरा सें जौन नोंनी सी बनी बा 'आओ माटी में मोती उगाएँ' नाँव सें मानूं आई ई पोथी में बुन्देली की लोकधुनन में ढार कें मुलक गीत रचे-छपे। सिरीबाल पाण्डे जू की पिरेरना सें 'मधुप' जू नें बुन्देली खों साहित्य बारी छटा में बगराओ जी की बानगी बतौर उनन की जौन पोथियाँ छपीं, उनमें रनघू धन, मुनगा के जैयाँ, रामगढ़ की रानी जैसी नौंनी नौनी पोथी है। जे पौथीं कबता बारी आजें तक पोथी बुन्देली ललित कथाएँ के नाँव बारी सोई हैं।

ई तराँ सें बुन्देली साहित्य की वृद्धि में मधुप जू कौ भौतइँ बड्डौ योगदान है। उनन कौ महत्तम इतै सहित बारन नें नइँ आँको काये के वे गाँव खेरे में रैत भये जौ काम करत्ते। अपनी खेती पाती सें चिपके उन्नें साहित्य रचो उर गाँव बारन की पीरा खों उकेर कें कबता में ढारो, और देस की दसा पै रचना करी। उनन ने वियोग, सिंगार, समाज की, सुराजी बारी रचनान खों कबता में ढारो उर समाज के सामूँ धरो सुनाओ।

नरसिंहपुरिया बुन्देली की कड़क भाव भरी भासा की ठसक ज्यांय बुन्देली के हवेली बारे ढांचे में रची बसी दिखत उतइँ खटोला बारी बुन्देली कौ बिर्रा अपनी सोंदी महक कौ चाव, सुआद उनन की कबता में अपनी उजास खेरत भऔ दिखत है। काँठर उर हवेली की रसिक मिजाजी कौ रस हिलोर मारत भओ अपनी छब उकेरत भओ झलक मारत निरखो परखो जा सकत। ई तराँ से मधुप जू की बुन्देली कौ सरुप जयाँय शुद्ध बुन्देली खों गाँस कें चलो है उतईं ऊमें बुन्देली की नरसिंहपुरिया की ठोस विसात सोई बिछी है। जीके कारन बुन्देली अपनी अलगई पैचान बनाउत है। अपुन की बुन्देली कौ और जादाँ ब्याकरन के जानकार खोजबीन करकें खालस रूप खों उकेरवे की ताक झाँक कर सकत हैं। बुन्देली की एक रचना पढ़कें अपन ओरें ईकमें सर सबाद लै सकत, पढ़ो-

हरे भरे आँगन में बिरछा, एकइ आस पुराव रे,
हिरदे सिंचित जरद कजरियें, पी के पाँव चढ़ाव रे।
का हुइये ले सगुन गोंदरा, चीरत ते तुम सैयाँ,
अटकर तुमरौ साँचो निकरो, देख लो लैकें कैयाँ।
दद्दा भैया खों हुनकत है, अपनी गोद उठाव रे,
हूबा हूब सपां उन्हरो है, मों उर बरन तुम्हारो,
हाँत पाँव गोरे नारे हैं, डील डौल हुनगारो,
रय रय कें जी में उमगत है, तुमरोइ नाम धरावरे
घर घर आई नावन गुझा, खा रय ब्याहे बारे,
अपने घर अनरय कौ साहुन, को हैं सावन हारे,
टूट गईं डारें सब सुख की, लग गय गहरे घाव रे,
पुटया पुटया अंगें लगाई, डारो नेहा गांथो,
अब तुमरो कच्छू बस नैयां, जोरें रइयो नातो,
कस तौ पार उतर गय साजन, हमखों पार लगाव रे,
नाँय माँय सें संग की गुइयें, आ आ खबरें लेतीं,
पुरा दोर की तनक तनक में, राँड़ भांड़ कर देतीं,
ओउ नइँ पिच्छ लेन करो अब, साजन उतइँ बुलाव रे,

-पी-३२/डी-१० पैरा मेडीकल के बाजू में, कचनार सिटी, विजय नगर जबलपुर (म०प्र०) 卐

एक रोचक प्रसंग-

लोक साहित्य में लड़ैया (श्रृगाल)

-जगदीश किंजल्क

श्रृगाल के देशी नाम पृथक-पृथक हो सकते हैं परन्तु बुन्देलखण्ड में इसे लड़ैया कहा जाता है। समूचे भारत के इतिहास-साहित्य में लड़ैया को विशेष स्थान प्राप्त है। यह जानवर कौतूहल और उत्सुकता से देखा जाता है। धूर्तता और मक्कारी में इसका कोई सानी नहीं है। वन्य पशुओं में इसे धूर्तता का सिरमौर माना जाता है। इस वन्य प्राणी का विशेष महत्व इसी बात से प्रतिपादित होता है कि इसे 'हितोपदेश' जैसे शीर्ष संस्कृत ग्रंथ में महत्वपूर्ण स्थान मिला हुआ है। इसमें श्रृगाल के ऊपर अनेक कहानियाँ हैं जो इसके विभिन्न गुणों (मक्कारियों) पर प्रकाश डालती हैं। अनेक प्रदेशों के स्थानीय लोक साहित्य में भी इसका उल्लेख चटखारों के साथ वर्णित किया गया है। श्रृगाल को लेकर जितना अधिक साहित्य रचा गया है, उतना शायद अन्य किसी वन्यप्राणी पर नहीं। हाँ, इन लोककथाओं में श्रृगाल (लड़ैया) को महिमा मण्डित नहीं किया गया है वरन् लोगों को शिक्षित करने, मक्कारियों से बचने के लिये उपदेश के रूप में किया गया है। प्रान्त-प्रान्त की श्रृगाल संबंधी लोककथाओं में शिक्षा तो मिलती ही है साथ ही इनसे मनोरंजन भी भरपूर होता है।

दैवयोग से प्रकृति ने श्रृगाल को कुछ ऐसा रंग रूप दिया है कि उसके चेहरे से ही मक्कारी झलकती है। इसका स्वभाव भी अन्य वन्य प्राणियों से हटकर है। यह सदैव अपने गिरोह में अर्थात् झुण्ड में रहता है। पूरा का पूरा झुण्ड एक साथ बोलता है, अर्थात् 'हुआ' 'हुआ' करता है। इनका एक साथ बोलने का अंदाज एक नाद सा उत्पन्न करता है। कभी रोने जैसी कभी गाने जैसी, कभी हँसने जैसी आवाजें उत्पन्न होती हैं वहीं दूसरी ओर कुछ मधुर, कुछ कर्कश, कुछ तुमुल ध्वनियाँ। समग्र प्रभाव अपशकुन जैसा प्रतीत होता है। लगता है किसी अमंगल की सूचना है किसी अज्ञात भय का अहसास होता है। मातायें इनका कर्कश स्वर बच्चों को गले से लगा लेती हैं। इनका दिखाई पड़ना भी अमंगल सूचक होता है।

बुन्देलखण्ड में ऐसी भी मान्यताएँ हैं कि यदि लड़ैया किसी राहगीर का रास्ता काट जाये अर्थात् उसके सामने से निकल जाये तो उस राहगीर को लकवा सा मार जाता है। वह भयंकर अमंगल की आशंका में डूब जाता है। राहगीर या तो वापस लौट जायेगा, या फिर किसी अन्य राहगीर के उस रास्ते से निकल जाने की प्रतीक्षा करेगा। बिल्ली का रास्ता काट जाना भी बुरा माना जाता है। इस लड़ैया का अपशकुन इतना प्रभावी माना जाता है। कि यदि किसी मरीज के घर के आस-पास भी इसकी बोली सुनाई पड़ जाये तो माना जाता है कि मरीज परलोक सिधार जायेगा।

लड़ैया की विशेषता यह भी है कि यह स्वयं शिकार करके अपने भोजन नहीं जुटाता। दूसरे हिंसक पशुओं द्वारा मारे गये या स्वयं मरे हुये जानवरों को ही खाकर यह अपना पेट भरता है। प्रायः लड़ैये श्मशानों में घूमते हुये पाये जाते हैं। इसी कारण इसे अशुभ, अमंगल जानवर माना जाता है। पक्षियों में उल्लू को भी अशुभ माना जाता है। लड़ैया स्वभाव से भीरु, डरपोंक और शंकालु होता है। मनुष्य को देखकर तीव्रता से भागता है। पुरुष लड़ैयों का शिकार नहीं करते। इनके बारे में एक कहावत भी प्रचलित है-'लड़ैयन में कोऊ लोहिया नइँ खोत..।' अर्थात् इस जानवर को मारने के लिये कोई अपनी गोली बरबाद नहीं करता।

लड़ैयन की भीरुता और मक्कारी पर आधारित बुन्देलखण्ड में अनेक मनोरंजक लोककथाएँ प्रचलित हैं, जिनमें से मैं एक लोककथा का यहाँ उल्लेख करना चाहूँगा। एक बार एक जंगल में, किसी सकरे रास्ते में एक लड़ैया की मुलाकात एक जुलाहे से हो गई। जुलाहा अपनी पीजन (रुई धुनने का यंत्र) अपने कंधे पर लटकाये हुये था। उसे देखकर लड़ैया डर गया कि जुलाहा कहीं उसे मार न दे। इस आशंका में लड़ैया तत्काल उसकी सुश्रूषा करता हुआ बोला-

काँधे धनुष हाथ में वाना, कहाँ चले दिल्ली सुल्ताना?

अकेला पाकर और सामने लड़ैया को देखकर जुलाहा भी मन ही मन डर गया कि कहीं वह काट न ले। काट ले तो यहाँ बचाने वाला भी कोई नहीं है। अतः उसने लड़ैया की सुश्रूषा करना ही उचित समझा और कहा-

वन के राव वेर के खाना, बड़े की बात बड़े पहचाना।

जुलाहे की बात सुनकर लड़ैया थोड़ा आश्वस्त हुआ। समझ गया कि जुलाहे से कोई भय नहीं है। जब जुलाहा कुछ दूर निकल गया तो लड़ैया 'हुआ' 'हुआ' करके हँसता हुआ बोला-

तुक तुक ताना, तुक तुक ताना, बड़े की बात बड़े पहचाना।
न मैं राव न तुम सुल्ताना, मैं एक लड़ई और तुम ब्याना।

लड़ैया की मक्कारी पर जुलाहा हँसता हुआ आगे बढ़ गया। इस प्रकार लड़ैया तमाम रोचक प्रसंगों और लोककथाओं का नायक है।

बुन्देलखण्ड में यह भी कहा जाता है कि पन्ना राज्य के महाराज श्री अमान सिंह ने लड़ैयों को अपनी प्रजा माना था और उनके लिये रजाई गद्दे बनवाये थे। हुआ यूँ कि एक रात को राजा अमान सिंह अपने दरबार में बैठे थे, तभी लड़ैयों का एक बड़ा समूह उनके राज प्रासाद के समीप आकर बड़े करुण स्वर में "हुआ" "हुआ" करने लगा। राजा ने अपने दरबारियों से पूछा,

ये लड़ैये क्यों रो रहे हैं? एक चतुर दरबारी बोला-'अन्नदाता! लड़ैयों को ठण्ड लग रही है। कड़ाके की ठण्ड भी पड़ रही है, इसलिये वे अपना दुखडा सुना रहे हैं।'

राजा अमान ने तत्काल आदेश दिया कि वे हमारी प्रजा हैं, उन्हें भी रजाई गद्दे बनवा दो। बस फिर क्या था हजारों की तादाद में रजाई गद्दे बन गय और दरबारियों के घर पहुँच गये। परन्तु इस पर भी लड़ैयों की 'हुआ' 'हुआ' करना बन्द नहीं हुई। एक दिन फिर वे उसी समय राज प्रासाद के समीप जाकर 'हुआ' 'हुआ' करने लगे, राजा अमान ने फिर दरबारियों से पूछा, अब क्या कह रहे हैं ये लड़ैये। चालाक दरबारियों ने कहा, महाराज! ये सभी रजाई गद्दे पाकर अत्यन्त प्रसन्न हैं, अब आपकी जय-जयकार कर रहे हैं। आपकी दीर्घआयु की कामना कर रहे हैं। हालाँकि राजा अमान सिंह ने मरते समय अपने दरबारियों से कहा भी था, 'देखो तुम लोग अब लड़ैयों के लिये रजाई गद्दे मत बनवा देना। मेरे मरने के बाद मेरा लड़का राजा बनेगा। वह यह सब बर्दाश्त नहीं करेगा।'

बुन्देलखण्ड में यह भी कहा जाता है कि लड़ैयन कौ ब्याव भओ। इसका अभिप्राय क्या है, ऐसा कब और क्यों कहा जाता है? इसके संबंध में भी एक रोचक कहानी प्रचलित है। ऐसा प्राय: तब कहा जाता है जब वर्षा के दिनों में आकाश में एक ओर धूप निकली होती है और एक ओर पानी बरसता होता है।

लोककथा इस प्रकार है। एक समय एक राजा की राजकुमारी अपनी कुछ सहेलियों के साथ अपने राजमहल के खुले प्रांगण में खेल रही थी। इसी समय एकाएक आकाश में एक मेघ घटा आई। उससे नन्हीं-नन्हीं बूँदे गिरने लगीं। एक ओर भुवन भास्कर दीप्तमान हो रहे थे। उनकी किरणें जल की नन्हीं-नन्हीं बूँदों पर पड़ी नहीं कि वे हीरे, मोतियों जैसी चमकने लगीं। राजकुमारी को बड़ा आनन्द आया। वह हीरे, मोतियों की इस वर्षा में अपनी सहेलियों के साथ नाचने लगी। परन्तु पानी की बूँदे थोड़ी देर में ही गिरना बन्द हो गईं। राजकुमारी सहसा बोली- 'मैं अपना विवाह तभी करुँगी जब आकाश से ऐसे ही हीरे मोतीं बरसेंगे।' राजकुमारी की बात, उसकी सहेलियों ने राजा से कह दी। राजा बड़ी उलझन में पड़ गया। कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला-'राजकुमारी कैसी बुद्धू है? ऐसा अवसर क्या हर समय आता है? फिर ऐसा कौन राजकुमार होगा जो उसके साथ विवाह करने के लिए ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में उसके पास ही बैठा रहे। ऐसा अवसर आता भी है तो कुछ ही क्षणों के लिए आता है। इसके लिए कोई भी राजकुमार पहले से दूल्हा बना न बैठा रहेगा।'

राजकुमारी के मुंह से जो बात निकल गई सो निकल गई। राजकुमारी लाड़ली थी। अप्रतिम सुंदरी। उसकी जिद्द को कौन काटता? हाँ, पड़ोसी राज्य का एक राजकुमार उसे देख चुका था और उस पर आसक्त था। उससे विवाह करना चाहता था। राजा ने उस राजकुमार को आमंत्रित कर अपने ही राजप्रासाद में रख लिया, परन्तु वह स्वर्ण अवसर नहीं आ रहा था जिससे वे हीरे मोतियों की बूँदें टपकें। कई वर्ष बीत गये। राजा बड़ा व्यथित था कि क्या किया जाये? एक दिन उसने राजपुरोहित को बुलाया और गंभीर समस्या उसे सुनाई।

वह राजपुरोहित बहुत चतुर और चालाक था। बड़ी विनम्रता से बोला-'पृथ्वीनाथ! जब ऐसा अवसर आता है तब लड़ैया अपना विवाह करते हैं और आनन्द से सब एक साथ बोल उठते हैं, 'हुआ' 'हुआ' अर्थात् विवाह हुआ। इस अवसर पर सैकड़ों लड़ैयों की भांवरें पड़ जाती हैं। ऐसे अवसर दिन में सूर्य के प्रकाश में आते हैं और रात में भी चन्द्रमा के प्रकाश में। अत: जब भी लड़ैया एक साथ 'हुआ' 'हुआ' बोलें, समझ लेना चाहिये कि वह शुभ अवसर आ गया। उसी समय तत्काल राजकुमारी की जयमाल राजकुमार के गले में डलवा देना चाहिए।

राजा को राजपुरोहित का यह सुझाव बहुत पसन्द आया। उसने अपने राजप्रासाद के पीछे लगे हुये वन में कुछ मांस डलवाना प्रारंभ किया। धीरे-धीरे वहाँ लड़ैये आने लगे। एक दिन संध्या समय सब लड़ैये एक साथ बोल पड़े 'हुआ' 'हुआ'। इतना सुनते ही राजमहल में चहल पहल मच गई। तत्काल राजकुमारी की जयमाला राजकुमार के कंठ में डलवा दी गई और धूमधाम से विवाहोत्सव मनाया जाने लगा। उसी समय से यह कहावत प्रचलन में आ गई,-'लड़ैयन कौ ब्याव भओ'

कुछ लोगों की मान्यता यह है कि यह कहावत आल्हा के विवाह से प्रचलित हुई है लड़ैया, लड़ने वालों को भी कहा जाता है। आल्हा को भी बड़े लड़ैया कहा जाता था। आल्हा काव्य में भी आल्हा के लिये कहा गया है-'बड़े लड़ैया महुबे वाले-जिनकी विकट चले तलवार।' जब आल्हा की भाँवर पड़ रही थी, दिन का समय था। संयोग से उसी समय एक बदरी आई और बूँदे टपका कर चली गई। उन बूँदों पर सूर्य किरणें पड़ने से हीरे मोतियों की बरसात सी होती दिखाई पड़ने लगी। उसी समय लोगों ने व्यंग्य में कहा-'हीरे मोतीं क्यों न बरसें, लड़ैयों का तो विवाह है।'

तभी से, जब भी धूप निकलती है और उस समय पानी बरसता है तो कहा जाता है, 'लड़ैयन कौ ब्याव भओ।' आज यह कहावत बुन्देलखण्ड में ही नहीं, दूर-दूर तक प्रचलित है। राजस्थान, बंगाल और पंजाब जैसे प्रदेशों में यही कही जाती है-'लड़ैयन कौ ब्याव भओ' श्रृगाले विवाह हुच्चे...गीदले विवाह हुद्दे...। लोक साहित्य में इतना महत्वपूर्ण स्थान रखने वाला यह वन्य प्राणी अब बहुत कम दिखाई पड़ता है। आधुनिक पीढ़ी के सामने यह आ भी जाये तो वे इसे पहचान नहीं सकेंगे। भविष्य में इस प्रजाति का सफाया भी हो जाय तो कोई आश्चर्य नहीं, परन्तु यह लोकसाहित्य में सदैव जीवित रहेगा।

-संपादक, दिव्यालोक,
१४५-ए,साँईनाथ-सी-सेक्टर कोलार, भोपाल म०प्र० 卐

बुन्देली बसंत में भरो पराग

-डॉ.शिरोमणि सिंह 'पथ'

बुन्देली बसंत को अंक १५,१७, फरवरी २०१४ मिलौ भौतईं नौनो लगौ पत्रका कों पढ़ो तो जानपरो के साँसऊँ जामें बसंत भरो है। बुन्देली बसंत बन्न-बन्न के लेखन और कवितन के पराग भरे फूलन की फुलवाई है। भौतइँ नौंनी बास लयें फूल हमारे मनकोंऊ मैंका गये। जामें समूचे बुन्देलखण्ड माटी की सुबास कों गदयऔ पदय दोऊ विधन में भरकें पूरे देश में फैलाबे की ताकत हैं। संपादक जू ने मोंकों पत्रका परखवे लाक जानो जो हमाऔ सौभाग्य है। पोथी में गाँव, सैर, पूजनीय, देवगण, बुन्देल-भू और राष्ट्र पुरस है। पिरकिरती परयावरन है। करुना है ललकार है। बुन्देली बसंत में एक संगे घाम और छांई है। दुख कीं सुख कीं बातें हैं। स्वाभिमान है। किसान, मजूर औ मेहनत कस के ऐहसान है। सब मिलाकें बुन्देली बसंत में लेखकन, कवियन, ज्ञानीयन की अनुभूतियन को निचोर है।

सम्पादक जू के मन की पीर उनकी सम्पादकीय में खूब दिखात है। वे समाज कों कछु दैवे के लाने कैसे तरफरात हैं। बुन्देली भाषा के लाने कित्ते लगे रत के अपयी बुन्देली भाषा को विकास होवे औ हमायी संस्कृति सुरक्षित रये। सामाजिकता औ भाषा कों विकास संगे संगे औ एक प्रक्रिया के भीतर होत है। जब सामाजिकताएँ हिरा रयीं हैं। तो स्वभावत: भाषाऐऊँ बई प्रक्रिया के भीतर हिरातीं जा रईं। भाषा की मृत्यु में जब रघुवीर सहाय जू कत हैं-

'भाषा को शक्ति दो यह प्रार्थना करके कवि माँगता है बचे
रहने का बरदान'

जा बात की चिंता में बुन्देली कवि साहित्यकारऊ लगे हैं के हमायी बुन्देली भाषा कोऊ अपऔ ठौर रये। सम्पादक जू के भीतरऊँ कसक है। बुन्देलखण्ड के गाँवन में हो रये अन्याय-अत्याचार की पीरा उनके मन है। बैसेऊ एक सृजेता सदां नियाय के संगे ठाड़ो दिखात साँसें सृजेता को मन घटाटोप अंधेरे की अन्यायी औ रावणी मदांध सत्ता कों सलाम करबे की बजै सतत व छोटे 'दिया' कों सौ सौ पालगन करत है। जो अपयी किरन से अंधेरे की छाती चीरवे कों दमई नई भरत बल्कि जित्ते पलनों वो जरत रत अंधेरे को चीरतरत है। बिना जो सोसें के जा वियावान में वो अकेलो है। जा सच्चाई कों हमायें सम्पादक जू खूब निभारये हैं।

लोकांचल की विरगती सूरत छीजतीं परम्पराएँ औ रीत रबाज संस्कृति को कुरूप मौं पश्चम सभ्यता संस्कृति को असर विदेशी चीजन की भरमार हमाए लोक जीवन कों घिनौनों बना रये। हमें लगत है के धनिया को आंचर आज पैलें से जादां तार तार हैं। जो आसुरी पिरकिरती मान्स पै चढ़ी बैठरयी जा कौ कछु उपाओ जरूर कन्ने पर सो जा काम के लाने हमाये संपादक जू औ सवई कलमकार भैइया वैनें अपयी लेखनी रूपी सुदर्शन सें बुराई रूपी राक्षस को मारवे को काम कर रये हैं। हम उनके जज्बा कों परनाम करत हैं।

पोथी को ठौर भौत ऊँचो है। जैसें मताई के दूध से मोड़ी मोड़न को पूरो पूरो पोषण हौत है औ संसार की मुलक सुवधन के बाबजूद मताई के दूध को कौनऊँ विकल्प नइ होत ऐसेंई जा बुन्देली बसंत को कौनऊँ विकल्प नइया।

बुन्देली में भौतइँ बुजरकन और ज्ञानियन के लेख हैं। जौ अतीत औ आज दोऊअन को दरस दिखात है। पं. श्री गुणसागर सत्यार्थी जू ने भौतईं ज्ञान भरो लेख लिखौ वाय कोऊ ज्ञानी पंडितई लिख सकत है। जामें विज्ञान और इतिहास दोऊअन की निगा में बुन्देली भाषा को पुरानों से पुरानों समौ केम्ब्रियन काल बताओ और संस्कृत की बैन कहो बेटी नई।

विश्व की प्राचीनतम भाषा एवं संस्कृति/भाषा, साहित्य एवं आलोचना की कड़ी को नौनो सो लेख है-बुन्देलखण्ड की तहदार चट्टानों को भू-गर्भ शास्त्रियों ने बुन्देलखण्ड नीस नाम दिया ये चट्टाने बहुत भारी हैं और जैसा कहा जा चुका है केम्ब्रियन काल अर्थात् सबसे पुराने समय की हैं।

जा बात पै मोय कछु नेक गुमानऊ हो आउत के हमायी बुन्देली भाषा इतेक समृद्ध औ पुरानी है। श्री ओ0पी0रिछारिया जू की कथा 'लोहे की सास' कों भौत चाव से पढ़ौ औ औरऊ कों पढ़वाओं औ पढ़ केऊ सुनाई। भौत नौनी लगी जौ हमें ज्ञान तो देतई है संगे हँसातऊ भौत है 'कथा' लिखवे को ढंग का पूछने, बिना कौनऊँ अटकन के सरल सहज भाउन औ भाषा से सजी है। मैं उने भौत-भौत बधाई देत हों। उतईं साके की सती 'बरेदिन बीरू बाई' कहानी ने हमायी जनमदात्री को पला भारी कर दऔ। ऐसो जान परत के भानुप्रताप जू कों कहानी लिखवे को परताप मिलौ होवे। 'एक कुत्ते का दर्द' अनोखी कहानी है जौ समाज को भौत कछु सीख दे रयी है के समौ परे आदमी अपौ बरताप कैसे बदल लेत जौनों अपऔ स्वारथ सदौ तानों तो नौनो बनो रत, औ कारज सहतनई भूल जात सब चाहे फिर आदमी रऔ होवे चाहे जनाउर अब कछु गरज नईया। सो बोऊ कछु काम को नइयाँ।

'हमाई आँखन में जा बिरियाँ भरे अँसुआ, देखवे की फुर्सत कीये धरी। सब लगे अपने-अपने धंधन में। जे लैनेंई कहानी को मर्म दिखा गयी।'

'मुलिया को घरबारौ' कंज जू की रचना में समाज की सूरत कों जो उकेरो गऔ वौ भौतऊँ जी को छीबे बारी हैं।

'फटे चींथरा लटकें तन पै नइयाँ कछु सहारौ।

सोसत जात बखर के पाछें मुलिया कौ घरवारौ।।'

ऊपरी लेने हमें बुधिया और हरचरना की सुर्त करा गयी भौत नौनी रचना है जामें पीरा हैं गरीब की कराह है। जाके लाने कंज जू बधाई के जोग्ग हैं उनें भौत-भौत बधाई।

भूले बिसरे कवि लेखकन कों उजागर करो बोऊ नौनो है काय के जै हमायी धरोहरें हैं इनकोंऊ सेहज के धरें चइयें। नाटक, लघु कथायें, दोहा, कविता, चौकड़ियाँ, निबंध, गारी, औ बुन्देली को अनोखोपन सब नौनोई नौनों है औ जो काव्य सृजन भऔ भौतई नौनों है जाके संगे एक काम नऔ भऔ वो है बुन्देली भाषा में बाल कविता को, पहेलियन को जिनकों हम बतऊअल कहानियाँ कत हैं। हमऊँ ने बाल कविताएँ लिखी खड़ी भाषा में और बुन्देली भाषा में। सुश्री सुधा रावत 'क्षमा' जू बुन्देली में नौनो लिख रयी। काय के हमायी बुन्देली भाषा औ संस्कृति कों हमायी नई पैरी हमाये नौनिहाल भूलत जा रये। अकेले अपनी भाषा में मोड़ी-मौड़ा बाल कविता पढ़ हैं तो उनें अपयी भाषा और संस्कृति को ज्ञान बनो रैहै। जईसें हमनेंऊ बाल कवितायें लिखी हैं। हम सुधा जू को बधाई देत हैं।

पोथी में चिट्ठी पत्री, नई पोथी अपुन के लाने, पाठकी प्रतिक्रियाएँ, पोथी परखाव सबई तराँ के लेखकन से सजी मामुलिया सी लगत है। सम्पादक जू ने दो बुन्देलखण्ड साहित्यिक नक्षत्रों का टूटना वेदना पूर्ण लेख कों पत्रका में ठौर दऔ वो सम्पादक जू को सच्चो मान्स होवो जनाउत है। अपनें डॉ.रामसेवक गुप्त जू और डॉ. शंकरलाल शुक्ल जू को सांसी श्रद्धांजलि दई, का कैवो है। कु.नेहा बुन्देला जू ने सत्रहवें बुन्देली उत्सव २०१३ को प्रतिवेदन भौतईं नौने तराँ से लिखौ। प्रतिवेदन पढ़कें ऐसो लगौ के हमनें इतेई सें पूरौ-पूरौ उत्सव देख लऔ होवे। भोतई नौनो लिखौ मैं बैन बुन्देला जू कों उनके लेखन के लाने बधाई देत हों।

सबई नौनो रऔं अकेले नेक कछु छपवे में मोय भूल जानरी के कुत्ते के दर्द कों संस्मरण और कहानी दोऊ नांव दे दये गये जौ नेक पढ़ऊअन कों दर्द बढ़ा देत है तो उतई व्यंग विधा आपुस में विध गयी काय के 'कनवरटाइगो' व्यंग 'मातेराज' व्यंग मेंऊ लिख गऔ जौ नेक उरझन में डार देत है औ कछु नइया।

एक बात औ मेय मन में आउत है के जौ गद्य में लेख है वे खड़ी भाषा में भौत लिखे हैं वे कऊँ बुन्देली भाषा में लिखे जावें तो औरऊँ नौनों लग है। कछु लेख बुन्देली में लिखे हैं जैंसे 'श्री कृष्ण भगवान के पुरखन को राज' डॉ. नागर जू ने लिखौ भौत नौनों लगत है ऐसेंई सबई लेख बुन्देली भाषा मेई नौने लगहैं। बुन्देली बसंत आँगन सें बाँगन नौ बगरौ-बगरौ फिरहै। बुन्देली में आज की परिस्थितियन पै लिखो जावे कछु नऔ होंबे तो औ नौनो लगे।

कायके मान्स को अपने प्राणवन हौवे कों जाने चइयें तभई मान्स होवो सई रैहै नई तौ रूण्डमुण्ड निष्प्रभ निरानंद जीवन का काम कौ। सो अपये प्रानवान होवे को सबूत हमाएँ सबई बुन्देली के मनीषी जानकार दे रये हैं बुन्देली भाषा औ बुन्देलखण्ड के लाने कछु कर गुजरवे को जज्बा सबमें दिखत है। हमऊ परखाव खड़ी भाषा में लिख सकत ते अकेले मन नई मानौ सो अपनी मातृभाषा में लिखो।

बुन्देली बसंत को प्रकाशन होवौ कौनऊँ अनुष्ठान से कम नइयाँ औ अनुष्ठान कोऊ एक आदमी नई कर सकत। वाके लाने सबई की जरूरत परत है। जो जा अनुष्ठान में लगे सबई जनन कों भौत-भौत बधाई। जो पत्रका इन सब समितिअन और सम्पादक जू की सतत साधना को मीठो फल है। सम्पादक जू महोदय सें कछु सीखने होय तो वो है लघु कों विराट से जोरवे को जज्बा। आप एक मननशील लेखक के संगे भौत नौने मान्स हैं। बुन्देली बसंत के संरक्षक औ सम्पादक जू कों उनकी जा नौनी शीलवान, बुन्देली, खड़ी भाषाओं विधन से सजी बसंत से भरी पूरी बुन्देली बसंत के लाने बेर-बेर बधाई। उनको नमन राम-राम !

-ग्राम व पोस्ट गिरवासा लहार जिला भिण्ड म०प्र०

हॉल-सेंवढ़ा जिला दतिया म०प्र० 卐

वीर छत्रसाल

-भारतेन्दु अरजरिया 'इन्दु'

यश की पताका दिव्य, देवगढ़ खजुराहो,
पारस पुरुष भये, जहाँ के भुआल हैं।
सावन सुनाबै साकौ, शूरमा अनोखे भये,
आल्हा वीर ऊदल जहाँ के वीर लाल हैं।
शची सकुचानी पन्ना हीरन की घानी देख,
रानी दुरगावती जहाँ की वीर बाल हैं।
'इन्दु' हरदौल से हलाहल पियन वारे,
शिवाजी शरीखे वीर, वीर छत्रसाल हैं।।

रानी लाल कुँअर के चम्पत के वीर लाल,
शंका मन आनी नहीं, जंग बीच काल की।
शिवाजी से भेंट करी, गुरु प्राणनाथ करे,
कान्धे पै उठाई कवि, भूषण की पालकी।
बंगश नबाव लड़े, जगतेश हृदेशाह,
बाजी राव पेशवा खाँ, सौंप दई मालकी।
अमित बड़ाई भई, जंग बेर-बेर जीती,
अमर कथा है 'इन्दु' वीर छत्रसाल की।।

-२० मैथिलीशरण गुप्त मार्ग, महोबा उ०प्र० 卐

विविध ज्ञान का आगार: बुन्देली लोकोक्ति कोश

-आचार्य डॉ.रामेश्वर प्रसाद गुप्त

आचार्य डॉ.गौरीशंकर उपाध्याय 'सरल' द्वारा प्रणीत बुन्देली लोकोक्ति कोश (भाग-१) उनके अद्भुत, अपूर्व एवं अतुल श्रम का उन्मेष है। पंडित जी का यह 'बुन्देली लोकिक्ति कोश' उनके दो दशक से भी अधिक का श्रमसाध्य साधना, संलग्नता, समर्पण, साहित्यिक सेवा एवं अनुभव जन्य सुचिन्तन का सफल है। बुन्देलखण्ड के लगभग इक्कीस जिलों में बुन्देली भाषा में प्रचलित लोक लुभावन सर्वजनजागरण की उत्प्रेरक कहावतों, मुहावरों, पहेलियों एवं लोकोक्तियों से सम्भृत यह कोश एक ऐसी परिपूर्ण सुकृति है, जो सत्य, शिव और सौन्दर्योपेत बनकर मानव समाज हितार्थ प्रेय और श्रेयप्रद मार्ग प्रशस्त करती है।

आचार्य डॉ.उपाध्याय जी की तीन सौ सरसठ पृष्ठीय यह रचना 'बुन्देली लोकोक्ति कोश' सन् २०१३ ई0 में सरल साहित्य संगम ९७/१७ ए सिविल लाइन्स, झाँसी उ0प्र0 से प्रकाशित हुई। मानव समाज, प्रकृति, पंचतत्व दैवी एवं समस्त प्रकार की सम्पत्तियों तथा उनके अंग-उपांगों से संबंधित एवं प्रचलित लोकोक्तियाँ इस ग्रन्थ में वर्णानुक्रम से सम्यक् निबद्ध है। 'अ' वर्ण से लेकर अन्तिम 'ह' वर्ण तक की प्रारम्भ होने वाली बुन्देली लोकोक्तियों को यहाँ यथाशक्ति स्थान मिला है। सुन्दरता, मधुरता, मसृणता, लालित्य सुचिन्तन एवं प्रसाद का सुरूप होती हैं लोकोक्तियाँ। इस ग्रंथ को इस सुन्दर सृष्टि ने और भी अनन्य सौन्दर्य प्रदान किया है। 'सुन्दरता कहं सुन्दर करई' रामचरित मानस की यह अर्धाली यहाँ पूर्णत: चरितार्थ है।

लोकोक्तियों का इतिहास मानव समाज के प्रारंभ से ही मान्य है। हमारे प्राचीन ग्रन्थ वेद इन लोकोक्तियों के भण्डार हैं। यतेमहि स्वराज्ये (ऋ0५-६६-६), 'वयं राष्ट्रे जागृयाम' (यजुर्वेद ९-२३), माता भूमि: पुत्रोऽहं पृथिव्या: (अथर्ववेद १२-१-१२) 'सत्यमेव जयते' (मुण्डकोपनिषद्), सत्यान्मृते न धर्म: (उपनिषद्) 'धर्म न दूसर सत्य समाना' (रा.च.मा.२-९४-५) आदि लोकोक्तियाँ सशक्त बनकर समाज का मार्गदर्शक बनी हुई हैं। इसी क्रम में आधुनिक हिन्दी बोलियों में प्रधान बुन्देली में प्रचलित लोकोक्तियों को आचार्य उपाध्याय जी ने अपने 'बुन्देली लोकोक्ति कोश' का मणिमय हृदयहार बनाया है। ये लोकोक्तियाँ मानव जीवन मूल्यों का कोश है। बड़ी से बड़ी बात थोड़े से शब्दों में मर्म को स्पर्श करने की कला रखती है ये लोकोक्तियाँ। यह अमिधा, लक्षणा, व्यंजना, तात्पर्यार्थ तथा अन्यान्य अनुभावों से सार्थकता को प्रतीत कराती हैं। पंडित श्री उपाध्याय जी ने ऐसी अनेक लोकोक्तियों को अपने इस ग्रन्थ में आबद्ध किया है जो क्षण-क्षण व्यक्ति को अच्छा करने के लिये चेतना देती है और आगाह भी करती हैं। यथा-

अक्कलमंद खों इसारौ भौत, अगाई चेतो, मजा उड़ाओ, अत्त कभउँ नोंनी न होतइ, अधजल गगरी छलकत जाए, अपने गिरेबान में कोउ नइँ झाँकत, ईसुर के घर देर है अंधेर नहीं, को रऔ रावन खों पनदेवा, चढ़ी बेल काटी नईं जात, जबानी जमा खर्च, पढ़ौ तौ गुनो नइयाँ, रंगबाजी पूरी बर्बादी, हात कंगन को आरसी का आदि लोकोक्तियाँ और कहावतें मानव के मन को उसकी दशा और दिशा से अवगत कराकर अपने लक्ष्य के निर्धारण में अपनी अहं भूमिका का निवर्हण करती हैं।

आचार्य उपाध्याय जी ने इन लोकोक्तियों के संचयन में जो वैशिष्ट्य प्रस्तुत किये हैं, वे श्लाघनीय हैं। प्रत्येक लोकोक्ति या मुहावरे का खड़ी बोली हिन्दी में अर्थ स्पष्ट किया है। समाज में प्रचलित धर्म, काम एवं मोक्ष अर्थात् पुरुषार्थ चतुष्टय से संबंधित सभी कहावतें इनके ग्रन्थ में गुम्फित हैं। लोकोक्तियाँ बुन्देली भाषा से संबंधित हैं। अत: बुन्देली के प्रत्येक शब्द को सुस्पष्ट करना पण्डित जी ने अपना कार्य कर्म मानकर उसका सुरूप दर्शाया है। पण्डित जी द्वारा अपने ग्रन्थ में निबद्ध लोकोक्तियाँ समाज संस्कृति, सभ्यता, राजनीति, धर्म, अर्थ आदि सभी क्षेत्रों से सम्बद्ध हैं। इन लोकोक्तियों के पात्र भी मानव, प्रकृति, पशु पक्षी, ऋतु, पुष्य, पाप, नदी, पर्वत, आकाश, तारे, ग्रह, जड़, चेतन आदि सभी हैं।

आचार्य श्री उपाध्याय जी ने बुझौअल या पहेलियों को पृथक शीर्षक से पृष्ठ ३१३ से ३६७ तक सुव्यवस्थित रूप से संजोया है। जिज्ञासा को उत्पन्न करती हुई ये पहेलियाँ अपने अन्त: को परिणाम को सुस्पष्ट करती हुईं प्रदृष्ट हैं। पहेलियों का बुझौअल ज्ञान डॉ.सरल जी ने उनके समक्ष प्रस्तुत कर पाठक की जिज्ञासा आपूर्ति में सार्थक सहयोग दिया है। यथा-

* अंक हैं, पंख नहीं, चलता है चुगता नहीं। चन्द्रमा, रुपया।
* अगर नाग पै चढ़ जाऊँ, कान पकड़ कर तुम्हें पढ़ाऊँ। चश्मा।
* अपन करें और सबसे कराउत। राम नाम
* एक अचंभौ ऐसौ, फूल के ऊपर पत्ता। बंदगोभी
* एक ईंट के दो द्वारे। नाक के नथूने

आचार्य डॉ. उपाध्याय जी के 'बुन्देली लोकोक्ति कोश' भाग-१ की एक और विशेषता यह है कि इसमें विविध विषयों का ज्ञान निहित है। प्राय: सभी विद्याओं और कलाओं का तथा अध्यात्म ज्ञान का इस ग्रन्थ में निहित लोकोक्तियों से ज्ञान मिलता है। वैसे तो सच यह है कि लोकोक्तियाँ सुन्दर सुभाषित होती हैं। यह मानव जीवन के संविधान के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

निष्कर्षत: आचार्य श्री उपाध्याय जी का यह बुन्देली लोकोक्ति कोश (भाग-१) ग्रन्थ अपने शाब्दिक शरीर में सुन्दर भावों की आत्मा को संजाये हुए लोक को सन्मार्ग प्रशस्त करने का सुमान्य माध्यम है। इनकी यह रचना कला एवं जीवन दोनों ही दृष्टियों से महनीय है। अतएव पठनीय एवं हृदयंगमनीय है।

-श्रीमती लक्ष्मी गुप्ता भवन, उद्योग विभाग के पास,
सिविल लाइन्स, दतिया (म0प्र0) 卐

पोथी परखाव-

प्राचीन इतिहास के साक्षी: बुन्देलखण्ड के शिलालेख

-डॉ.श्याम बिहारी श्रीवास्तव

बुन्देलखण्ड के इतिहास, राजनीति, साहित्य, धर्म और संस्कृति के स्वरूप पर गवेषणात्मक लेखन करने वालों में श्री हरिविष्णु अवस्थी का नाम अग्र पंक्ति के साहित्यकारों में आता है। इन्होंने दीर्घ अवधि से जो सर्वेक्षण क्रम जारी रखा, वह अब साहित्य जगत के समक्ष आने लगा है। अभी हाल में श्री अवस्थी जी की एक पुस्तक 'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' शीर्ष से मरुभूमि शोध संस्थान डूँगरगढ़ (जयपुर) राजस्थान द्वारा प्रकाशित की गई है।

'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' में बुन्देलखण्ड क्षेत्र के अंतर्गत पाए गए ताम्रपत्रों, प्रस्तर आलेखों, कूप, बावड़ी, मठ, मंदिर, समाधि स्थल, बाग, तालाब आदि के निर्माण बीजकों का विश्लेषण दिया गया है। यह पुस्तक दो भागों में लिखी गई है। जिसका यह प्रथम भाग प्रकाशित हुआ है। इस पुस्तक में ३६ आलेख संग्रहीत हैं। जिनमें एक सैकड़ा से अधिक शिलालेखों के विषय में महत्वपूर्ण जानकारियाँ दी गई हैं।

'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' ग्रन्थ का महत्व इसलिए और बढ़ जाता है कि इसमें उल्लेखित शिलालेखों में प्राचीन इतिहास की कड़ियाँ गूँथी हैं, साथ ही वास्तुकला,चित्रकला, लिपि, भाषा आदि का तत्कालीन स्वरूप स्पष्ट होता है। इस दृष्टि से लेखक का यह असाध्य श्रम सार्थक हुआ है। इस ग्रन्थ के माध्यम से बुन्देलखण्ड के शिलालेखों में उत्कीर्ण इतिहास, कला, संस्कृति, भाषा-साहित्य आदि के विवरण चिरस्थायी रह सकेंगे।

हरिविष्णु अवस्थी खोजी प्रवृत्ति के साहित्यकार हैं। इन्होंने सदैव जोखिम भरे दुर्गम स्थानों पर जाकर इन शिलालेखों से संबंधित जानकारियाँ अर्जित की हैं। इनकी यह खोजी प्रवृत्ति इन्हें इनकी वयोवृद्ध अवस्था में भी कठिन और दुर्गम स्थानों में जाने को प्रेरित करती रहती हैं। अभी पिछले दिनों एक ऐसी ही जोखिम भरी खोज यात्रा के दौरान वे काई लगे पत्थरों पर रिपटकर गिर पड़े जिससे इनकी कूल्हे की हड्डी टूट गई और महीनों से बिस्तर का सेवन कर रहे हैं। ये स्वभाव से इतने हँसमुख और साहसी हैं कि इनसे सहज रूप में मोबाइल फोन पर बात करते हुए कोई यह नहीं भाँप सकता कि अवस्थी जी इतने बीमार हैं।

'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' पुस्तक में संग्रहीत शिलालेख उर्दू, संस्कृत हिन्दी आदि भाषाओं में उत्कीर्ण किए गए हैं। श्री हरिविष्णु अवस्थी ने इन शिलालेखों का वाचन कर पाठकों के लाभार्थ उनको मूलरूप में प्रस्तुत करते हुए उनका भावार्थ भी दिया है जिससे वे सहजता से समझे जा सकें। इस प्रकार के शिलालेख तत्कालीन ऐतिहासिक स्रोतों एवं स्थानीय लिखित साक्ष्यों की दृष्टि से बहुत उपयोगी और महत्वपूर्ण रहे हैं। 'अड़जार हर्षमऊ के शिलालेख' शीर्षक आलेख में वीरसिंह देव बुन्देला के वंशज राजा सुजानसिंह द्वारा बनवाए गए सुजान सागर के बंधान पर लगे उर्दू, हिन्दी और संस्कृत में उत्कीर्ण शिलालेखों में तत्कालीन मुगल और बुन्देला शासकों के नामों आदि का उल्लेख किया गया है। लोकभाषा बुन्देली में उत्कीर्ण एक शिलालेख का विवरण इस प्रकार है-मूल पाठ

दोहा- *हीरा दे रानी उदर उपजे सिंह सुजान।*
तिनक ग्रहरानी भई, ब्रजकुमार शुभ जान।१।
तीरथ वृत कीने सबै, ब्रजरानी धरध्यान।
जस प्रकटौ नवखण्ड में भक्तदान सन्मान।२।
तिनदंपति संवत् ।।१७२८।। कियौ नागन जन मुन चन्द।
तव सुजान सागर रचौ लिखै मिटौ सुख [illegible]।३।
नंदन वन अमरावती बाग लगे ता पास।
सजल फूल फल सारिका सुख जन करत विलास।४।

उपर्युक्त शिलालेख में राजा सुजानसिंह की माँ हीरादेवी तथा पत्नी ब्रजराज कुमारी के नामों का उल्लेख हुआ है। सुजान सागर के निर्माण की तिथि संवत् १७२८ विक्रमी से ज्ञात होता है कि इस अवधि में राजा सुजानसिंह बुन्देला राज्य के शासक थे। अनेक शिलालेखों में तत्कालीन मुगल सम्राट के नाम को भी उत्कीर्ण किया गया है। इससे स्वत: ज्ञान होता है कि सुजानसिंह बुन्देला मुगल सम्राट के अधीनस्थ राजा थे। शिलालेख कली पंक्तियाँ निम्नानुसार हैं-मूलपाठ

दान दलीपति औरंगसाह जहाँ सब साहन कौ पनुयारै।
श्री विरसिंह को सिंह पहार जु तासु सुत सिंधु सुजान बिहारै।।
संवत् सत्रह सै अठविंस रच्यौ तिहि नीर निधान सिंगारै।
सोइ लहै धनुमान प्रमान कौं जोई सुजान तड़ाग [illegible] सुभं।।

उपर्युक्त पंक्तियों में उल्लेखानुसार उस समय औरंगजेब दिल्ली सम्राट थे तथा वीरसिंह देव पुत्र पहाड़सिंह के पुत्र सुजान सिंह ओरछा के राजा थे। सुजानसिंह ने संवत् १७२८ विक्रमी में सुजान सागर का निर्माण कराया था। हरिविष्णु अवस्थी ने ओरछा के बुन्देला राजाओं के वंश का भी संक्षेप में उल्लेख किया है। ओरछेश मधुकर शाह के पुत्र वीरसिंह देव जहाँगीर के मित्र थे। वीरसिंह देव ने जहाँगीर को प्रसन्न करने के लिए अबुलफजल का वध किया था। इसके परिणाम स्वरूप सम्राट अकबर की मृत्यु के उपरांत सन् १६०५ ई० में जहाँगीर को बादशाहत प्राप्त हुई थी और सहयोग के उपलक्ष्य में जहाँगीर ने वीरसिंह देव को रामशाह के स्थान पर ओरछा का राजा बनाया था। वीरसिंह देव ने बुन्देलखण्ड में भवन निर्माण हेतु ५२ नीवें एक ही तिथि को रखीं थीं।

शिलालेखों के रूप में राजवंशों के द्वारा कराए गए निर्माणों विशिष्ट मठों, मंदिरों, सरोवरों, तीर्थ स्थलों पर स्थापित प्रस्तर बीजकों की परम्परा भारत में प्राचीन काल से ही पाई जाती है।

इतिहास के विद्वानों ने इनकी खोजकर तत्कालीन इतिहास की विश्वसनीयता को सुरक्षित किया है। श्री हरिविष्णु अवस्थी इतिहास के ज्ञाता और अध्येता हैं। इन्होंने बुन्देलखण्ड के इतिहास के विषय में अनेक उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' संग्रह ग्रन्थ में कुछ ऐसे भी प्रस्तर टंकित पुरा अभिलेख श्री अवस्थी ने दिए हैं जिनमें बुन्देला राजाओं की वंशावली दी गई है।

पुस्तक के पृष्ठ ४८-४९ पर एक लंबे शिलालेख का विवरण दिया गया है।

यह बड़े आकार के संगमरमर के ऊपर टंकित है। इस पुस्तक के तीन पृष्ठों में इसका विस्तार है। श्री अवस्थी जी ने शिलालेख की विषयवस्तु का विवेचन बहुत अच्छा किया है। इस शिलालेख की तिथि संवत् १९०२ विक्रमी उल्लिखित है। इसमें बुन्देला वंश की उत्पत्ति सूर्यवंश से दर्शायी गई है। इसमें भारतीचन्द, मधुकर शाह, रामशाह, वीरसिंह देव, जुझारसिंह, देवीसिंह, पहाड़सिंह, सुजानसिंह, इन्द्रमन, जसवंत सिंह, भगवंत सिंह, उदोत सिंह, पृथ्वी सिंह, सावंथ सिंह, विक्रमाजीत, धर्मपाल आदि बुन्देला नरेशों के नामों का उल्लेख हुआ है। इस विशाल शिलालेख में ओरछा के अतिरिक्त बाघाट के दिमान कुशल सिंह, नवल सिंह, रनजीत सिंह के नामों और उनकी रानियों के नामों का भी वर्णन किया गया है। बुन्देला राजाओं की प्रजावत्सलता एवं धार्मिक आस्था के विषय में भी विस्तार से दर्शाया गया है। उल्लिखित राजाओं के नामों और उनके शासनकाल के विषय में हरिविष्णु अवस्थी ने इतिहास समस्त विवेचन प्रस्तुत किया है।

'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' ग्रन्थ में बुन्देलखण्ड के जैन मंदिरों में पाए जाने वाले अनेक शिलालेखों का विवरण प्रस्तुत किया गया है। शिलालेखों, मंदिरों, जिनालयों, जैन तीर्थकरों के फोटोग्राफ्स और उनके मूलपाठ के साथ भावार्थ प्रस्तुत कर हरिविष्णु अवस्थी ने संग्रह को अति उपयोगी बना दिया है।

प्रस्तुत शिलालेख संग्रह का परिशिष्ट बहुत समृद्ध है। परिशिष्ट में कालन्जर के बुन्देला शासक प्रताप रुद्र देव प्रशस्ति एक विशाल पत्थर पर उत्कीर्ण होने का विस्तृत विवरण दिया है। यह प्रशस्ति कवि दुर्गादास की लिखी हुई है। इस प्रशस्ति के उत्कीर्ण कर्ताओं के नामों का भी उल्लेख हुआ है। उत्कीर्ण कर्ताओं के सहायकों के नाम भी दिए गए हैं। यह प्रशस्ति संस्कृत भाषा में चालीस श्लोकों में है। इसे टंकित करने वाले शिल्पी जूड़े, दामू, महोबा निवासी भमराज तथा उसके वर्ग के सहकर्मी सातन लौहकार, कोटवार आदि थे।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि 'बुन्देलखण्ड के शिलालेख' ग्रन्थ इतिहास और पुरातत्व की दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। इसमें संग्रहीत शिलालेखों में गुर्जर-प्रतिहार, गुप्त, चंदेल, बुन्देला, खँगार, पमार, गहरवार, सुल्तान तथा मुगल शासकों का उल्लेख होने से इतिहास सम्बम्धी साक्ष्यों की विश्वसनीयता प्रमाणित होती है। साथ ही शिलालेखों के सचित्र वर्णन से भाषा और लिपि के स्वरूप का भी ज्ञान होता है। पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हो जाने से इन अभिलेखों के विनष्ट या विलुप्त होने का खतरा टल गया है। श्री हरिविष्णु अवस्थी ने इस दिशा में बहुत सार्थक श्रम किया है।

पुस्तक का नाम-बुन्देलखण्ड के शिलालेख

लेखक-हरिविष्णु अवस्थी

-अनन्य कालोनी, सेंवढ़ा, दतिया म०प्र० 卐

मुइयां चन्दा जैसी गोरी

-रामरूप स्वर्णकार 'पंकज'

मुइयाँ चन्दा जैसी गोरी, चूँनर सें ढक ओड़ी।
चुनरी कितऊँ सरक नाँ जावे, घुँघट दाबे ठोड़ी। मुइयाँ...
ज्यों ज्यों उठति उँगरियाँ ऊँची, तिथि सी घटत अंधेरी।
उँजयारेऊ लजा रये ऊसें, नओ चन्दा छिटकोरी। मुइयाँ...
ओंठन लाली रचें हँसे तो, कचनाँरऊ सें गोरी।
आँखन काजर गेरो डारें, भौंरी तक लरजे री। मुइयाँ...
शरम लगत धीरें सें बोले, कभऊँ न मों उघरे री।
कये पंकज आपस में बोले, बोलन रस बगरे री। मुइयाँ...

कोनों

करकस बोलन बेर बसत हैं, अपनों होय परोनों
कड़े बोल काँटे से चुभतइँ, कोऊ न कहे सलोनों
बनी बात बिगरत है छन में, लगो न धुबे डिठोनों,
ऊके पास न बैठे कोऊ, सबरे झाँकत कोनों
कँये पंकज करकस जिन कईयों, है खोनों ई खोनों

-भगत सिंह नगर कोंच, जनपद जालौन उ०प्र० 卐

ढूँड़ो जू! अपनो किते गाँव

-श्याम बहादुर श्रीवास्तव 'श्याम'

हम इतै जायँ तुम उतै जाव, ढूँड़ो जू ! अपनो कितै गाँव।
हम भटक गये रस्ता भूले, घुस आए सहर में दबे पाँव।।
हर बखर बैल उर सार कहाँ, दाऊ की बौ टिटकार कहाँ।
सब बड़े प्रेंम सें मिलत रहे, आपुस की राम-जुहार कहाँ।।
पक जात खेत जब कूँड़-कूँड़, आ जात नुनइया झूँड़-झूँड़।
वे गये लावनी गीत कितै, को लै गव उनकों ढूँड़-ढूँड़।।
ढूँड़ो तौ पुरखन के के अलाव, किस्सा-कानूतन के पंजाब।
सुख-दुख की बातें करीं बैठ, भइया! वे अपने कितै ठाँव।।
बा बैल गाड़ियन की बरात, बैलन के जँगा घनघनात।
काँ गए रस्ता के बे पड़ाव, जाँ खुरमा सतुआ रहे खात।।
बब्बा को हुक्का नइँ दिखात, काँ गइ अथाइ की मुलाकात।
सूदे साँचे वे लोग कहाँ, काँ पंच पुरानी पंचयात।।
काँ फाग-फजीतौ होरी को, काँ गओ प्रेंम बौ भौजी कौ।
रातन फागन के ढोल झाँझ, काँ रंग गुलाल वौ गोरी कौ।।
ऐंधिन पै रस-गुर सौंठ जितै, पौंड़न के टेरत खेत उतै।
अब काँय-काँयँ सें पके कान, मन अपनो लै-लै जात उतै।।
धन्दे पानी की उतइँ जरें, उनइँ कों सेंचें पुखत करें।
बस जौंन जीच की लगै कमी, हम बाकी उपजा उतइँ करें।।

-चुरखी रोड, बघौरा, उरई (जालौन) उ०प्र० 卐

पोथी परखाव-

बुन्देली संस्कृति को प्रकट करती कहानियाँ हैं अरगनी में

-नन्दकिशोर पटेल

बुन्देली कहानी संग्रह 'अरगनी' पढ़ी। यह डॉ.शिरोमणि सिंह 'पथ' द्वारा लिखित ग्यारह कहानियों का अनूठा संग्रह है। इन कहानियों में बुन्देलखण्ड के जीवन-संस्कृति, सभ्यता, वातावरण तथा ग्रामीण परिवेश का यथार्थ अभिव्यक्त हुआ है।

कहानी पद्य साहित्य की भाँति गद्य की प्राचीनतम विधा है, जो जीवन के छोटे-छोटे अंशों को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करने का माध्यम बनतीं हैं। कहानियाँ लेखक के आत्म-जीवन बोध की सहज अभिव्यक्तियाँ होती हैं। ये लेखक की रचनात्मकता का परिणाम होती है जिसके लिए वह अपने परिवेश तथा भोगे हुए यथार्थ से पोषण प्राप्त करता है। कहानियाँ विश्व साहित्य में सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है क्योंकि उनमें मानवीय संस्कृति, सभ्यता तथा जीवन मूल्यों को विकसित व संरक्षित करने की योग्यता होती है।

डॉ.शिरोमणि सिंह 'पंथ' द्वारा लिखित कहानियों में 'कुलकुल बाती', 'काँटे', 'दगा', 'बरोसी', विरछन की छाई 'अरगनी' आदि आदर्शपरक है, जबकि खपरैल, बछिया, यथार्थवादी है। 'भबूत' कहानी अंधविश्वास पर चोट करती है। 'चैत' कहानी बेगार प्रथा तथा शोषण के बदलते स्तरों के उद्घाटित करती है। 'घरघूला' कहानी सच्ची मित्रता से जुड़ी है जो बचपन की याद दिलाती है।

लोक आस्था के सामने विषमताएँ व विपत्तियाँ भी बौनी साबित होती हैं। 'बछिया' कहानी में नायक का त्रासद अंत 'गोदान' की याद दिलाता है। निर्धनता बछिया कहानी व गोदान उपन्यास की मूल समस्या है। लोक जीवन का विषमताओं के सामने असहाय होना और इसी बीच लोक आस्थाओं से जीवन आशान्वित होना अद्भुत है।

गरीबी इंसान के पाँव तोड़ देती है, उसे असहाय बना देती है और जीवन बन जाता है नरक। 'खपरैल' कहानी में भी विधवा नायिका रमधन्नो का जीवन संघर्षमय बीतता है। रमकल्लो कहती है 'खपरैल में तो अम्मा मरबोई-मरबौ है। ठण्डन में ठण्ड हाड़ कपकंपा देत। जेठमासन में आँधी-बहूरो खपरा उड़ा देत और चौमासिन में टपका। कबहूँ चैन नइयाँ। शुक्र है कि आज भी गाँवों में समरसता की झलक मिल जाती है जो रमकल्लो जैसी बेटी को अपनी बेटी मानकर उसके हाथ पीले करते हैं। बड़े सौहार्द के साथ, आस्था और पुण्य लाभ की आकांक्षा के साथ। 'कुलकुल बाती' कहानी भी बेटी के विवाह उपरान्त बेटी को माँ की सीख को उद्घाटित करती है।

'काँटे' कहानी बरबूला गाँव के निवासी बलीराम माँते तथा उनके पूरे परिवार पर केन्द्रित है। जो बागवान फिल्म की तरह है बहुयें आते ही घर में अनेक दीवारें खड़ी हो जाती हैं। माँते-मातेन अज्ञात दिशा की ओर बढ़ जाते हैं जो युवा पीढ़ी के सामने प्रश्न खड़ा करते हैं। रास्ते में हिरुआ चौंपिया से भेंट होती है तब माँते कह उठता है- 'तो जैसो लाल सबको दे भगवान' रास्ते के काँटे तो थोड़ी देर बाद निकल जाते हैं किन्तु अपनों द्वारा दिये काँटे नहीं निकल पाते। जिन्दगी भर परिवार केई काँटे सेब काँटे छिदत रये दिना तक जौंन मौड़ी मौंड़न को छाती से नेंचें नई उतारो बेउ आज तक ऐसेइ सूल सै गढ़त रये..। अंत में श्रवण कुमार का माता-पिता की सेवा में समर्पित होने की भावना को उद्घाटित करती हुई यह कहानी आदर्शवादी बन जाती है।

'भबूत' कहानी बुन्देलखण्ड के ग्रामीण यथार्थ को अभिव्यक्त करती है। इसकी नींव अंधविश्वास पर टिकी है। यह कहानी झाड़ फूंक, पूज-पुजापा और जीव-बलि जैसी कुरीतियों व अंधविश्वास पर से पर्दा हटाती है। 'दगा' कहानी झूठ-फरेब, धोखा छोड़ने की नसीहत देती है। गोधन कहता है 'नई गोपी देखो हम आदमी हैं हमें अच्छे बुरे को ज्ञान होंय चइयें दीन दुखियन को सहारो दये चाइये।' हमें अच्छे बुरे का ज्ञान पशुओं से अलग करता है उनसे विशिष्ट बनाता है।
इस दृष्टि से भी हमें अच्छे-बुरे कर्मों का ज्ञान होना चाहिए। तथा अच्छे कार्य में विश्वास करना चाहिए।

'बेगार प्रथा' की झलक देती है कहानी-चेत। इस कहानी में बतलाया गया है कि मजदूरों से काम तो करवा लिया जाता है पर मजदूरी काम के अनुरूप नहीं देते। वर्ग-वैसाम्य को उजागर करती हुई यह कहानी जमींदारों व साहूकारों के गलत हथकण्डों को बेनकाब करती है। शोषण के बदलते स्तरों को उद्घाटित करती है यह कहानी। परन्तु गरीब जानता सब कुछ है-'गरीब सेई जमींदारी ठैरी नइँ कबहुँ के डेरा उठ जाते। देखियो एक दिन ऐसौ आये कैं जेई जमींदार थराई करें और कामदार न मिलै।'

'घरघूला' कहानी में हिंगोटी गाँव के दीने-हीने दो बचपन के मित्रों की कथा-व्यथा है। इस कहानी में शिक्षा अशिक्षा, अमीरी गरीबी के द्वन्द्व के बीच सच्ची मित्रता के स्वरों की अनुगूँज सुनाई पड़ती है।

'वरोसी' कहानी गाँव के समरस जीवन, एकता व आत्मीय भाव को आदर्श रूप में उद्घाटित करती है। 'विरछन की छाईं' कहानी बिगड़ते हुए पर्यावरण के प्रति जागरूक करती है। तथा वृक्षारोपण का संदेश देती है। कहानीकार के शब्दों में 'बिरछन की छायीं' कौ प्राणी के जीवन से बड़ेई नौनों नातो है।... चाय गर्मी होय चाँय चौमासे चाँय फिर जड़कारौ।' वास्तव में वृक्षों का हमारे जीवन में सांस्कृतिक सामाजिक, आर्थिक व आध्यात्मिक महत्व सभी लोग स्वीकार करते हैं।

'अरगनी' कहानी प्रतीकात्मक है, प्रतीकों के माध्यम से लेखक ने रिश्तों की महत्ता को प्रतिपादित किया है। अच्छे बुरे सभी तरह के रिश्तों का निर्वाह हम सभी को करना पड़ता है। सभी रिश्तों को सेवा रूपी सीमेन्ट से जोड़े जाने चाहिए अन्यथा वो बिखर जायेंगे-'रहिमन धागा प्रेम का जिन तोरो चटकाय' बदलते सामाजिक व पारिवारिक जीवन में रिश्तों की अहमियत घट रही है। पाश्चात्य शिक्षा, सभ्यता और संस्कृति के प्रभाव तथा भौतिक विलास से संयुक्त परिवार, नाभिकीय परिवारों में बिखर रहे हैं।

अत: इस कहानी संग्रह की संपूर्ण कहानियाँ पूर्ण रूपेण बुन्देली रंग-ढंग में रंगी हुई है। बुन्देली संस्कृति व सभ्यता और जीवन की झाँकियाँ प्रस्तुत करती है। इनमें उद्देश्य थोपा हुआ नहीं वरन घुलकर आया है जो स्वाभाविक है। संपूर्ण कहानियों में पात्र पूर्व रूपेण ग्रामीण व देशी है जिनकी भाषा सरस व अनुकूल है। पात्रों की सहज अभिव्यक्तियाँ मन को मोह लेती है। सूत्र शैली, मुहावरों व लोकोक्तियों के स्वाभाविक आगमन से कहानियों की प्रभावोत्पादकता बढ़ी है। डॉ.शिरोमणि सिंह 'पथ' जी की कहानियाँ निश्चित तौर पर बुन्देली कहानियों में 'शिरो-मणि' बनकर चमकेगी।

पुस्तक का नाम-अरगनी, लेखक-डॉ. शिरोमणि सिंह 'पथ'

-ग्राम व पो०झमटुली जिला छतरपुर उ०प्र० ♦

बुन्देलखण्ड के दस्तावेज:एक धरोहर

-डॉ.जगदीश प्रसाद रावत

डॉ.साफिया खान की पुस्तक 'बुन्देलखण्ड के दस्तावेज' का प्रकाशन २०१३ में हुआ। जिसमें १७वीं, १८वीं और २०वीं शताब्दी के बुन्देलखण्ड की रियासतों के राजाओं द्वारा राजस्थान के जयपुर नरेश को लिखे ४६ हस्तलिखित पत्रों का संकलन है। तत्कालीन समय के दस्तावेजों के अभाव में समकालीन शासन की साहित्यिक, राजनैतिक, सामाजिक व्यवस्था और उस कालखण्ड की गतिविधियों के बारे में इतिहास मौन हो जाता है। दस्तावेजों की अनुपस्थिति में बुन्देला प्रशासन की बारीकियों, उनकी राजनीति, ध ार्मिक नीति, मुगलों एवं अन्य राजपूत रियासतों के प्रति उनके दृष्टिकोण का अध्ययन गहनता से नहीं हो पाता है। हालांकि तत्कालीन समय के फारसी में और अरबी में दस्तावेज उपलब्ध हैं। लेकिन इन दस्तावेजों में मुगल सरकार की ओर अधिक झुकाव है। विदुषी लेखिका ने शोध प्रवृत्ति होने के कारण अभिलेखागारों में एक राजपूत शासक को दूसरे के द्वारा किये गये पत्राचारों को अथक प्रयत्नों से प्राप्त किया। इनमें ओरछा, नरवर, दतिया (दिलीप नगर) चंदेरी और पन्ना प्रमुख हैं। यह पत्र खरीते द्राट और खरीते जात के नाम से जाने जाते हैं। लेखिका की अधिक अभिरूचि खरीते जात यानी बुन्देलखण्ड के राजाओं द्वारा जयपुर शासकों को प्रेषित किये गये पत्र या पत्राचार के संकलन में रही है। डॉ. गिरिजाशंकर शर्मा एवं डॉ. कांतिलाल माथुर ने यह खरीते जात लेखिका को उपलब्ध कराये जो पुस्तिकाकार में प्रकाशित हैं। इन्हीं पत्रों की मुख्य विषयवस्तु पर डॉ. सफिया खान की "बुन्देलखण्ड के दस्तावेज" पुस्तक आधारित है। वस्तुतः पुस्तक में सात बुन्देलखण्ड के रियासती शासकों के ऐसे पत्रों को सम्मलित किया गया है जिन्होंने तत्कालीन कालखण्ड में जयपुर के नरेशों से पत्राचार किया था। जिनमें राजनीति, सांस्कृतिक एवं निजी पत्रों का परिदृष्य उपस्थित होता है। बुन्देलखण्ड के बुन्देला जयपुर के कछवाह राजपूतों से घनिष्ठ संबंध बनाकर मुगलों से लाभ की अपेक्षा रखते थे, क्योंकि इसका कारण ओरछा का सैन्य बल, आत्म बल और राजनैतिक बल का क्षीर्ण होना था। सन् १५४५ से १६२७ के ओरछा राजाओं द्वारा बनायी गई शाख १६२७ से १६३५ ई. जुझारसिंह तक आते- आते लगभग समाप्तप्राय हो जाती है। ओरछा की जागीर बड़ौनी के वीरसिंह देव ने शहजादा सलीम से मैत्रीसंधि अनुसार १६०२ में अबुल फजल का कत्ल कर ०३ वर्षो (१६०५) अकबर की मृत्यु तक अनेक युद्धों का गोरिल्ला युद्ध से सामना किया। वीरसिंह ने जहांगीर के दक्षिण अभियानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई क्योंकि ओरछा दक्षिण का द्वार था।

जयपुर महाराजाओं को ओरछा के महाराजा के शासकों द्वारा प्रेषित कुल जमा २० खरीते जात (पत्र) प्रस्तुत ग्रंथ में संकलित हैं। जिसमें महाराजा पहाड़सिंह (१६४२ -१६५३ ई.) यह पत्र राज्याभिषेक के एक वर्ष बाद आमेर के मिर्जा राजा जयसिंह को भेजा था। उद्देतसिंह के ०७ पत्र कछुवाह शासकों को। उद्देतसिंह के १७२२ के चार पत्र । इसके अतिरिक्ति ओरछा के राजा ने पितृपक्ष, नवरात्रि एवं दशहरा के पश्चात् स्वयं के सेवा में पहुंचने का संकेत दिया है। सवाई जयसिंह को लिखे महाराज पृथ्वीसिंह के तीन पत्र। महाराज सांवतसिंह के आठ खरीते जात जो जयपुर के राजाओं को लिखे थे और अंतिम पत्र सन् १८३१ का वीरसिंह देव द्वितीय द्वारा सवाई मानसिंह को लिखा गया। दतिया (दिलीप नगर) राज्य के चार पत्र संकलित किये गये है।

ओरछा के २२ पत्रों के बाद सर्वाधिक १५ पत्र पन्ना शासकों द्वारा जयपुर के राजा को प्रेषित किये गये। इसमें महत्वपूर्ण बाद यह है कि जिनमें अधिकांश पत्र महाराजा छत्रसाल द्वारा जयपुर नरेश को लिखे गये। यह इतिहास का वह कालखण्ड था जब शिवाजी की सलाह पर छत्रसाल बुन्देलखण्ड ने लौटकर मुगलों पर अकेले प्रतिशोधात्मक गुरिल्ला युद्ध कर रहे थे। जिसमें उन्हें किसी बुन्देला राज्य की सहायता नहीं मिली। उस समय ओरछा, दतिया एवं चंदेरी राज्य मुगलों का साथ दे रहे थे। यह संर्घष १६७१ ई. से १७०६ ई. तक अनवरत जारी रहा। १७०६ ई. में चार हजारी मंसब से बड़ाकर १७१७ ई. में छह हजारी मंसब राजा का खिताब और चार हजार सवार का मंसब छत्रसाल ने हासिल किया लेकिन सितम्बर १७१६ ई. में बादशाह मुहम्मद शाह द्वारा मुहम्मद खां बंगश की इलाहाबाद में सूबेदारी की नियुक्ति के साथ ही मुगलों एवं छत्रसाल के संबंधों के समीकरण बिगड़ गये। बंगस बुन्देला संर्घष में पराजित होकर छत्रसाल को आत्मसमर्पण के लिये विवश होना पड़ा। ग्रंथ में इन्हीं घटनाक्रमों एवं समय सापेक्षता के पत्रों का संकलन है। जिनमें राजकुमार हृदेशाह द्वारा जयसिंह को छत्रसाल के दो पत्र तुर्को से बुन्देलों के विजय के बारे में लिखा १६२३ ई. का वह पत्र बुन्देलखण्ड के इतिहास का अत्यंत महत्वपूर्ण वह पत्र है , जिसमें उनके पुत्रों द्वारा राज्य के आपसी बटवारे के विवाद को सुलझाने के लिए वे (छत्रसाल) जयसिंह से आग्रह करते है।

तत्कालीन समय की बुन्देली बोली में लिखे गये यह ४६ पत्र आज इतिहास की धरोहर है जो लगभग ३५० वर्ष पुराने है। पुस्तक में प्रकाशन के साथ यह संरक्षित हो गये है। सामान्य पाठक के लिए मूल पत्र पढ़ना कठिन, दुष्कर एवं असाध्यकारी है, क्योंकि यह पत्र संयुक्त शब्दों का लगातार लेखन है। फिर भी यह पत्र इतिहासवेत्ताओं, शोध ार्थियों, प्राध्यापकों ,विद्यार्थियों एवं इतिहास में अभिरूचि रखने वाले के लिए महत्वपूर्ण दस्तावेज है। इन पत्रों में बुन्देली भाषा, कहीं कहीं राजस्थानी प्रभाव के साथ-साथ अरबी, फारसी के शब्दों की भरमार है। कदाचित ऐसा उस समय के भाषायी प्रभाव के कारण हुआ है। अरबी , फारसी के शब्दों में जैसे हकीकति, हजुर, इखलास, मैक्रूफ (सम्पन्न), फरमात, जबाबु (जबाब), पेशखानों (बीमारी), मुहीम, तुरकनि आदि। बुन्देली भाषा के समकालीन शब्द और क्रियापद आधुनिक बुन्देली भाषा से भिन्न है जिनमें बृजभाषा का भी प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। जैसे पाती, उहि (वह), तीके (उसके) आपू (आप), महाराज कोमार (राजकुमार), जुहार (प्रणाम का संबोधन), अपरंच, अप्रंचि (अपभ्रंश), पठैवो (भेजना), अंगु (अंग), इंहा - उंहा (यहां - वहां), ताकौ (उसको) ऐते (यहा), इहि (इस), दुचिते (असमंजस), उनती (उनको),याभांति (इस प्रकार), ओड़छौ (ओरछा), अपुने (अपने) परिगनौ (परगना) इन्हिकौ (इन्हींका) हकीकति (हकीकत), जांगा (जगह) उनिसे (उनसे), फतै (फतह) दसराहै (दशहरा) उनिकी (उनकी), तिहिकै (जिसके), हुकुममाफिक (आज्ञानुसार) डेरा-डांडे (विश्राम स्थल), खुस्याली (खुशहाली) , जादा (ज्यादा), दिननी (दिन), तिहि (उन) आदि। क्रिया पदों में चाहिजै, रहिबै, चलौ आयौ है, जानिवौ, जानिवी, रहोला, जबाबु न आयौ, हुहै, हूहै, रहत है, हति, लये, भये, करै है,पाछे आउती, रहवी आदि।

यह सौभाग्य की बात है कि डॉ. सफिया खान ने शोध प्रबंध बुन्देलखण्ड के स्थापत्य पर एवं उनके द्वारा लिखित पुस्तकें एवं शोध पत्र बुन्देलखण्ड की विरासत पुरातत्व एवं इतिहास तथा जलप्रबंधन विषयों पर प्रकाशित हो रही है। विदुषी लेखिका शोध कार्यो में सतत् संलग्न एवं समर्पित है।

-वन संरक्षक वन मण्डल कार्यालय मामौन गेट टीकमगढ़ (म०प्र०) ＊

पोथी परखाव-

लोक परम्परा:अवधारणा और संरचना

-डॉ. सत्या घोष

'लोक परम्परा' अवधारणा और संरचना को डॉ. मालती शर्मा ने अपने पचास वर्षों के चिंतन के बीजों का छतनार पल्लवन बताते हुए जीवनानुभवगत तथ्यों की प्रस्तुति माना है। लोक परम्परा के अवधारणागत तथ्यों को लोकदृष्टि से परखने के लिए ग्रंथ को पाँच सोपानों में विभक्त किया गया है- लोक परम्परा:अवधारणा और संरचना, लोकपरम्परा: धर्म की अवधारणा, लोक परम्परा:जीवन मृत्यु और सार्थकताएँ, लोक पम्परा: लोकगीत अवधारणा और संरचना, लोकगीतों के रचना विधान। साधिका ने लोक परम्परा की मंदाकिनी में डुबकी लगाकर जो रत्न पाये उन्हें प्रस्तुत सोपानों में पिरोने की चेष्टा की है।

सृष्टि के आदि से आज तक प्रकृति के नियमित चक्र से संचालित जीवन विषयक चिंतन की अभिव्यक्ति भारतीय दर्शन में अधिक व्यापक है। लोकपरम्परा ने जीवन के उदय, विकास और अंत को प्राकृतिक चर्या की सापेक्षता में परखा है। और उसे लोकसाहित्य के विविध रूपों यथा कथा, कहानी, गीत, गाथा, पहेली, मुहावरों और लोकोक्तियों में संजोकर रखा गया है। डॉ. शर्मा ने इनकी सैद्धान्तिक व्याख्या के साथ वर्तमान में उसकी प्रासंगिकता को स्पष्ट करते हुए लिखा है-'इनमें प्रकृति के साथ जीवन को अभावों में भी उदात्त से जीने की, संकटों-आपदाओं से लड़ने की जिजीविषा है। पर्यावरण असंतुलन और पृथ्वी के बढ़ते तापमान जैसी विश्व की बहुत सी समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि भी लोकपरम्परा के प्रतीक मिथकों को खोलकर पायी जा सकती है और यही वर्तमान के लिए आज इसकी सबसे बड़ी प्रासंगिकता है।'

डॉ.शर्मा ने लोकपरम्परा के अंतर्गत धर्म की अवधारणा पर गवेषणा प्रधान दृष्टिकोण उपस्थित किया है। धर्म विषयक परम्परागत अवधारणा लोक की अपनी है, उसमें शास्त्रीय विद्वता से दूर अपना एक धर्म है। प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक गुणधर्म तो सभी जीवधारियों में सहज होता है किन्तु दूसरी ओर धर्म का शाश्वत भाव संजोए जो अपनी 'धरम-करम' की लोकस्वीकृत मान्यता है उसे डॉ. शर्मा ने व्यावहारिक रूप में परखा है। 'सत' की व्याख्या और सतकर्म पर लोक का विश्वास की बात को प्रभावी ढंग से स्पष्ट किया है। वाचिक परम्परा में प्रचलित गाथाओं, तथ्यों से विषय प्रभावी बन पड़ा है।

जीवन मृत्यु और पुनर्जन्म की भारतीय अवधारणा लोक में इतनी बलवती है कि मानव किसी भी परिस्थिति में टूटता नहीं है। बल्कि जीवन को उत्सवमय बनाकर आनंदित हो सकता है। भारतीय दर्शन के तथ्यों को समझने के लिए शास्त्रीय समक्ष चाहिए किन्तु लोक में बिखरे गीत-गाथाएं बड़ी सहजता से सब कुछ समझा देती हैं। इस पक्ष को डॉ. शर्मा ने विविध उदाहरणों का उल्लेख करते हुए विषयवस्तु को सरल बना दिया है।

लोकगीत जीवन के प्रत्येक पक्ष की अनुभूतिगत तथ्यों के साथ रागात्मक लय में स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। डॉ.शर्मा ने इसे गहराई से समझा है। वे लिखती हैं कि लोकगीतों में एक ओर लोकजीवन की अत्यंत जीवंत सृजनशीलता है तो दूसरी ओर गहरी अंतर्दृष्टि भी है।

लोकगीतों के रचना विधान में डॉ. शर्मा ने संरचना पर तथ्यात्मक जानकारी देना चाही है किन्तु नामावली विधान की विवेचना में सीमित होकर संतुष्ट हुईं। नामावली विधान को लोकगीतों में प्रधानता दिए जाने की बात शाश्वत है। डॉ. शर्मा ने नाम के महत्व को आध्यात्मिक और लौकिक पृष्ठभूमि में परखा है।

मुझे विश्वास है कि दार्शनिक विवेचन की तरह लिखा यह ग्रंथ शोधार्थियों के लिए उपयोगी होगा और लोक परम्परा के अध्येताओं के लिए एक अनमोल निधि के रूप में आदर पावेगा।

-घोषयाना, संकट मोचन मार्ग, छतरपुर म0प्र0 卐

बुन्देली गज़ल-

जा कै रय हैं सबइ जनें

-नीरज कुमार खरे

चारउ तरफा छाऔ कोदंलौ, नइँ सुजा रऔ कछू हमें।
अच्छे दिन आवे बारे हैं, जा कै रये हैं सबइ जनें।।
की सें कइये काँ जावें हम नइँ सूज रइ एक गली।
जिनसें कानें वे नइँ सुन रय, बातें कर रय भली-भली।।
मजदूरी कर रय दिल्ली में, नाव चढ़ौ गारण्टी में।
जॉब कार्ड सरपंच के घर में, नोट ओइ की अण्टी में।।
लाज सरम सबरी टूटी है, आग लगी है गाँवन में।
विकास की गंगा ऐसी बै रइ ठंड लगै बसकारन में।।
सीसी डर गइँ, नाली खुद गइँ, ढढ़ गये आँगन घर-घर में।
भइया-भइया में नइँ बन रइ, बहुएँ लड़ रइँ घर-घर में।।

-शा.उत्कृष्ट उ.मा.विद्यालय बल्देवगढ़, टीकमगढ़ म0प्र0 卐

सिया रईं बहुत बिलखाय

-डॉ.एल.आर.सोनी 'सीकर'

सिया रईं बहुत बिलखाय, खटोला उड़त जात रावन लंका।
खटोला उड़त जात रावन लंका।
अरे हाँ! रे खटोला, सिया ने उन्ना फाड़े, चिंदी-चिंदी कर डार।
खटोला उड़त जात रावन लंका।
अरे हाँ! खटोला गिद्धा ने रस्ता रोकी, अरु चोंचन मार गिराय।
खटोला उड़त जात रावन लंका।
अरे हाँ! खटोला रावन नें पंखा काटे, उर डारे दोऊ जराय।
खटोला उड़त जात रावन लंका।
अरे हाँ! खटोला उधर भई कुटिया सूनी, उर सूनोइ सूनो दिखाय।
खटोला उड़त जात रावन लंका।
अरे हाँ! खटोला राम लखन दोऊ रोबें, 'सीकर' कयें अँसुवा ढार।
खटोला उड़त जात रावन लंका।

-सीकर भवन, ठंडी सड़क, दतिया म0प्र0 卐

बुन्देली कथा-

गँवार

-लखन लाल पाल

कुसुम परेसान ती। ओखें दस हजार रुपइया की सख्त जरूरत हती। मौड़ी कौ बी.ए. में दाखिला करवाने तो। हजार रुपइया घर में धरे होहै। उनसें का होत ? वे तो तरकारी-भाजी में चले जैहैं। ई मँहगाई के जमाने में घर कौ खरचा चलावो दिल्ली की सरकार चलावे से जादा कठिन काम है। इनकी (पति) आमदनीयऊ तो नई हो रई है। आजकल की पंडिताई को हाल अजब है। जिन्हें फल गई उनके लाखन के वारे-न्यारे है, जिनसें रूठ गई उन्हें फाँके लौ करा देत।

कुसुम कौ पति पं. सिवचरन सास्त्री पंडितयाई करत। जेठ मास की सहरग में कछू ब्याव पढ़े ते, पइसा आओ तो पै पहलेई कौ गड़वा भरे में सारे रुपइया बिला गए। अषाड़ को महीना है, खूब कथा-भागवतें होत। आदमी इनसे कथा-भागवतें पढ़वातई नहियाँ। ये सूधी-सूधी, भागवत पढ़ देत। सूधी-सूधी कथा में आदमिन खें मजा नईं आउत। बीच-बीच में किसा-कहानियाँ, चुटकुला कथा खें रोचक बना देत। येई किसा-कहानियन सें भीड़ जुरत। खूबई चढ़ावा चढ़त। वोई नरमाधौ महाराज कौ लरका बिसंभर कासी सें पढ़ खें आओ। ओखे इतै लैन लगी रहत। आदमी कहत ऊ मंत्रन कौ उच्चारन सुद्ध करत। उच्चारन सें का होत, इन्हें तो सबरे मंत्र मौखातर याद हैं। बिना कौन्हऊ किताब के फर्राटे से मंत्र बोलत चले जात। जिजमान खे का कही जाय, उनकी बुद्धि पै तो पथरा पर गए हैं।

जिजमान इनसें कथा पढ़वाउत होते तो आज कोऊ के मुँ कोद न हेरनै परतो। इन्हउँ खें का कहाँव ? हजार देर कही कि अकेले कागजी ग्यान से ग्रहस्ती नईं चलत। दुनियादारी जीवन में उतनई जरूरी है जितनी भोजन में तरकारी। कथा खें नए नजरिया से पेस करौ। ओमें बैज्ञानिक पुट होवै तो कथा रुचकर और सच्ची लगन लगत। आदमी कोरी-कोरी कथा नई सुनत, बलखें ओखे गूढ़ अरथ खें समझबो चाहत। पंडिज्जी मोई बात सुनतई नहियाँ। कहत है कथा खें टोर-मरोर खे मैं पइसा नईं कमाबो चाहत। पुरखन के बचनन खें झूठौ सिद्ध करे से धन मिलत होय तो ऐसौ धन मोखें न चाहिए। जो साँचौ है मैं ओई कैहों। साँच कडुवा औ बेड़ौल होत येई से आदमी खें भाउत नहियाँ।

मैं चहाँ जितनौ समझाऊँ पै ये कछू समझबो नई चाहत। आज हम एक-एक पइसा खें तरसत। मैं इन्हें हमेसा ई कहत कि जमाने के हिसाब से बदलौ और पुँजी इकट्‌ठी करौ। कल के दिना मौड़ी कौ ब्याव करनै है। ये नईं बदलत, दुनिया चहाँ यहाँ की वहाँ हो जाय। इकथिर मन के घमंड कौ पोषन करखें अपने आपखें तसल्ली देत रहत। खुद तो घिसटत है मोरहउ खें घसीट रहे। औरतन खें पंडिताई करें की इजाजत होती तो मैं बारा रांड़ के ब्याव रचा देती। जिजमानन खें पोटखें पइसा सें घर भर लेती। कभऊँ पइसा की कमी न रहन देती। आज अमीरन में अपनौ नाव लिखो होतो। जोतिसियन ने मो भाग्य दिखखें बताओ तो कि तोव जीवन सुख-समृद्धि से भरो-पूरो रैहै। पै पता नईं ऐसौ कौन सौ गिरह्‌ा लगो है जुन सुख-समृद्धि से दूर करें है।

मौड़ी को दाखिला तो करवानई है। बी०ए० के बाद बी०एड० करा दैहों ता सरकारी टीचर तो बनई जैहै। मौड़ी कोऊ के सहारें न रैहै। मौका-बेमौका पै कोऊ के आंगू चुहरा भर दाँत तो न काढ़नै परहैं। आजकल सरकारी नौकरी बालौ इंसान सुखी और सुतन्त्र है। हात में रुपइया है तो सब कछू सूझत। लोक-परलोक सब येई से बनत-बिगड़त। बिना पइसा के तो धरमउ-करम नई होत।

छरहरे बदन की पंडितानी छत्तिस की उम्मरउ में खूबसूरत दिखात। पंडितानी सबद बलखें ओखे जुबना के आकरषन खें बाधित करत फिर उँ पंडिज्जी की पत्नी होबे को गरब ओखे सकून पहुँचाउत। मौड़ी के तंग उन्हा पहरखें वा अनचिन्हार हो जात। पंडितानी खे ये सब खूब औरत। अधूरी हसरतन को उन्माद उम्मर की सीमा सें परे होत। जहाँ न उम्मर आड़े आउत और न ग्रहस्तिन की मर्यादा। अल्हड़पना अपने पूरे सबाब पै आ जात। ऐसे समै पै वा अपनी सबरी हसरतें पूरी कर लेत। पंडिज्जी औरन के सामूँ तो दाँत पीस देत्ते पे अकेले में ओखें इकटक निहारित रह जात्ते।

दस हजार रुपइन में दाखिला के संगै कापी-किताबें खरीद जैहैं। रुपइयन के खटका में ओखौ खूबसूरत बदन कुम्हला गओ तो। देह कौ नोन जो ओखे सौन्दर्य खें बढ़ा देत्तो आज ऊ असमै घुरन लगो। चिन्ता में ओखे मुँ पै मलिनता छा गई ती।

केसें पइसा माँगे ? हर कोऊ के सामूँ तो हात नई फैलाए जा सकत। प्रतिष्ठऊ को तो ख्याल राखनै परत। हजार, पाँच सौ होते तो कोऊ सें माँग सकत ती। कह देती पंडिज्जी घर में नहिया, आ जैहैं सो पइसा लौटा देहौं। इतने रुपइया उठा लैहों तो चुका हों कैसे ? सूद पै लओ पइसा गरे को फन्दा बनखें हर महीना कसत। बा चाहत ती कि ऐसी जँहगा से पइसा मिले जहाँ सूद न देने परै।

पंडितानी के सामूँ कई आदमिन के चेहरा घूम गए। उनमें एक चेहरा अनिल कौ हतो। अनिल कौ चेहरा ध्यान आउतई ओखे मुँ पै पीरा उमड़ परी। अनिल ओखी बहन कौ पति है। ऊ बैंक मैनेजर हतो। अगर ऊ होतो तो आज इतनी बड़ी समस्या सामूँ न आ पाती। ओखी खुसियाँ आदमिन खें दिखी न गई।

मैं अपने बहन-बहनोई के इतै बड़ी खुसी से जए करत ती। उनके सुखन खें दिखखें महूँ सुख कौ अनुभौ करन लगत ती। और कोऊ थोरे हते, अपनई तो हते। ओखे लरकन खे मैं सपराउत ती, धुववाउत ती, आँखन में आंजन लगाउत ती।

अनिल ने अपनौ घर ऐसौ बनवाओ तो कि माछी बैठ जाये तो ओऊ रपट जाय। पूरे घर में सुपेत संगमरमर बिछो तो। दिन डूबे ऑफिस से लौटती बेरा अनिल बजार से झोरा भर खें फल और मिठाई ल्याउत तो। मैं खूब खात्ती। पहलूँ-पहल संकोच लगो तो फिर हँरा-हँरा खुल गई ती। करोरन रुपइया ते ओखे पास।

मैं और सुमन सगी बहनें है। संगै पढ़ी संगै बड़ी भई। हम दोऊ हाईस्कूलई तक पढ़ पाई ती। कालेज सहर में हतो सो जलमदांता ने हमें वहाँ न पठैयों। मैं बड़ी ती। सुमन पै मोरहई आदेस चलत तो। जहाँ बैठारत ती वहीं बैठत ती।

सुमन नौकरी पेसा वाले खें ब्याही ती और मैं पंडिताई करत वाले पंडिज्जी से। आर्थिक असमानता ने हम दोउअन के बीच में एक अनबोली दिवार ठाड़ी कर दई ती। सुमन खें पहलूँ जैसौ खिसयाबे में संकोच होन लगो तो। कौन मुँ से खिसयाती ? पइसा आदमी खें बहुत कछू सिखै देत। सुमन अब मोसें जादा चतुर और सलीकेदार हो गई ती।

मैं ऊसई की ऊसई। साबुन सें हात धोए बिना वा कौन्हऊ काम न करत ती। मोई आदत ओई माटी और राख वाली हती। सुमन मोखें साफ-सफाई कौ एहसास दिबा देत ती। लरकन खें गोद में उठायें से पहलूँ हाथ साफ भओ चहिए। नईतर बच्चा बीमार हो जात। एक समै ऐसौ हतो जब मैं एखें सुच्छता कौ पाठ पढ़ाउत ती। या बिना मंजन के चाय पिएँ खें बैठ जात ती, मैं बहुत खिसयात ती। आज या मोखे पढ़ाउत। का मैं सफाई से नईं रहत। रहत तो हों पै हरेक जँहगा के मानक अलग हैं।

मोय वहाँ दो चार दिन रहें के बाद सुमन को मूड उखर जात तो। यौ मूड जानै कौन बला कौ नाव है। आदमी खे घर से बाहर करनै होवे या काऊ की कटी उँगरिया पै न मूतनै होवै तो मूड खराब कर लेव। सारे काम सर जैहै। अनिल के ब्यौहारउ में बदलाव दिखान लगत तो। मैं कछू-कछू तो समझ जात ती पै उन्हें एहसास नईं होन देत ती कि उनके ई मूड सें मोखे ठेस पहुँचत है। उन्हें लगत तो कि मैं उनसें रुपइया माँगे के लाने तो नुहैं डरी हों। मोई माली हालत सें तो वे परिचितइ हते। पै उनकौ यौ भरम हतो। मैं काए माँग हौ पइसा ? मोखे तो दिखे-सुने कौ सुख बहुत है। काऊ कौ हींसा थोरी बँटवानै। मैं अनिल अकेले खें दोष काए दउँ ? हर पइसा वालौ येई सोचत कि रिस्तेदार भाई-बन्धु सिरफ पइसा की खातिर उनके इतै आउत। गरीब-अमीर कौ कोऊ मेलउ तौ नहियाँ।

गरीब हौं तो का भओ। कोउ मोखे चार पइसा दै दैहै तो मैं अमीर थोरी हो जैहों। छूँछे कुआ पतोहर से नईं भरत। कुँआ में झिर न होवै तो को भर सकत ओखें ? हमाए कुआ तो सूखे परे। ओई पंडिताई है, ओखौ नोन लै लो चहाँ धनियाँ। ओउ कौ ठिकानौ नहियाँ। मैं अपनी गरीबी सें दुखी न हती। मोखे ई बात कौ दुख तो कि मोई पीठ पै की बहन ऐसौ सोचत।

मोई बहन खूब सुख में है। अनिल लला की बदली ग्रामीन छेत्र में हो गई। जुन बिलाक में वा बैंक हती ओमे पचास-साठ गाँव आउत होहै। बदली इन्टीरियर में भइ ती पै बस कौ साधन हतो। लला रोज आउत-जात ते। सबेरे घर से निकरे और रात खें आठ बजे लौं लौट आउत ते।

अपने-अपने ग्रीनकार्डन से किसान बैंक से करजा उठा रहे ते। सरकार की या महत्वाकांछी योजना किसानन खें राहत पहुँचा रई ती। महाजनन के करज से गरे लौ डूबे किसान राहत महसूस करन लगेते। ई योजना में उन्हें ब्याज बहुत कम देनै परत तो। तीन साल लौ रुपइया कौ उपयोग करौ। तीन साल बाद ऊ रुपइया बैंक में जमा कर दो, चार-पाँच दिना बाद ओई रुपइया फिर से निकार लेव। बैंक में लैन लगी ती। लला ने किसानन खें खूब रुपइया बाँटे। बिना उनके दसकत के रुपइया पास न होत ते। दलाल बीच में हतो सो उनकी ऊपरी आमदनी बढ़ गई तीं। पहलूँ किसानन से पाँच परसेन्ट लेते, भीड़ दिखखें सात परसेन्ट पै आ गए। येई बीच मंहगाई ने ठेल मारी और ओनै अपनी सुरसा जैसौ मुँ बा दओ। आदमी हाल-बेहाल हो गओ। मंहगाई खें घुटेला करत भए लला सात परसेन्ट से बढ़ खे दस परसेन्ट पै आ गए। लला कौ खरचा जादा है, ऐसी मंहगाई में थोरी-बहुत से काम चलत कहाँ है?

भगवान ने किसानउ खे न जानै कौन माटी कौ बनाओ। या तो निचाट मूरख, गरियाल बैल की नाई। उनके ऊपर चहाँ कछू लाद देव वे चूँ न करहै या फिर विस्मयकारी चतुर। एक किसान हट पकर गओ कि ऊ दस परसेन्ट कमीसन न दै पाहै। पाँच परसेन्ट दै सकत तो। लला अपनौ रेट काए बिगारते ? कौन ओइ अकेलौ है। सत्तर से लैडू उनके आँगू-पाछूँ पूँच हिलाउत। किसानन की बुरई आदत होत। अगर एक सें पइसा कम लै लए तो दूसरौ मैनेजर पै चढ़ बैठत। हमसें ऐसी का दुस्मनी हती कि ओखें पाँच परसेन्ट में निपटा दओ। दूसरे सें जादा कमीसन लए पै पहलूँ बालौ खुस हो जात। ऊ समझत कि मैं जादा बेकूफ नई बनो।

किसान अपनी हट में पन्दरा दिना लौ लला के पाछूँ घूमत रहो। ललऊ ने कच्ची गोली नई खेली ती। वे आराम सें टरका देत्ते। आखिर में किसान खें हार माननै परी। ओनै दस हजार रुपइया वहीं बैंक के कोने में दलाल के हाथ पै धर दए। दलाल ने रुपइया लला खें दै दए। लला ने दलाल कौ हींसा निकार खें ओखी खलेती में डार दए। लला खे अब किसान के खाते में एक लाख रुपइया डारें में कौन्हऊ दिक्कत नई हती।

लला रुपइया गिनखें खलेती में रखन वाले हते कि चार-पाँच मुस्टंडा उनसें बहस करन लगे। लला खें वे नैतिकता कौ पाठ पढाउन लगे। ऐसे मुस्टंडा तो न जानै कितने उन्नै चराखें निकार दए ते। लला ने उन्हें झिड़क दओ। उनकी झिड़की कौ उन्हैं कोउ असर न भओ। उन्नै चपरासी से पानी मंगवाओ। लला कछू सकपकाने पै मोरचा से हटे न ते। लला कौ मोरचा कमजोर साबित भओ। वे रंगे हातन पकरे गए ते।

मोबाइल में मैसेज आउत रहत। उन्हई में भिस्टाचार के खात्मे के लानै सी०बी०आई० अपनौ मैसेज घुसेड़ देत। ऊ नम्बर पै काल करौ औ नाव, पतौ बताऊ वे हाजिर हो जैहें।

पंडितानी ने बुरओ मुँ बनाओ। आजकल सी०बी०आई०

बाते अपनौ प्रसार-प्रसार करें में लग गए। अब इन्हें कोऊ पूछतउ तौ नहियाँ। वहाँ न गए जहाँ अरबन के घोटाले चलत है। इतै मिचकरौ (मेढ़क) पकर खे तीरन्दाज बन गए।

किसान ने ऊ मैसेज कौ उपयोग करखें सी०बी०आई० खें बुला लओ। उन्नै न जाने कितने कैमरा पहलई से लला के चारउ कोद फिट कर दए ते। लला जाल में फँसी मछरिया की नाई फरफरात रह गए ते। लला और दलाल दोऊ जेल में डार दए। सी०बी०आई० ने इनके सबरे खाता सील कर दए ते। लला ने अपनी मुक्ति के एवज में एक करोर कह दए ते। एक करोर कछू होत हैं। लै लेते तो उन्हउ कौ काम बन जातो और लला छूट जाते। पै वे ऐसे दुष्टी निकरे कि तनकउ न पिघले। लोकतन्त्र की कला निराली है- ''बार जैसी बारीकी, नईतर मूसर जैसौ भर्‌रौ।''

आज लला होते तो उनके इतै चली जाती और दस के बीस हजार लै आती। ऐसी भाबई आ गई कि दिमाक कहो नई करत। एडमीसन की डेट निकरी जात। पंडित जी सब कहूँ फिर आए पै कहूँ बात नई बनी। सबइ कोद सैं हतास पंडितानी अपने भाग्य खें कोसन लगी। कैसौ भाग्य लैखे जलमी कि एक-एक पइसा खें मोहताज हैं। पंडितानी जोतिष में दखल राखत। ओनै जोतिष पढ़ो है। कुसुम जानत है कि वा भाग्यसाली है पै पता नई ऐसौ कहाँ लोचा पर गओ कि ओखौ भाग्य करौटा खा गओ।

नारी अंगन के सुभासुभ लच्छनन में पढ़ो तो-''पीपर पात सी जोनि वाली स्त्री'' हमेसा सुख-समृद्धि से भरी पूरी रहत। कुसुम जानत है कि वा इ अरहता खे पूरी करत है फिरउँ ओखे जीवन में इस्थाई दरिद्रता कौ वास हो गओ। ओखें पीपर पात पै कछू संका भई। संका के समाधान के लानै निरीछन खें तइयार हो गई। झुके पै ओमें विकृति आ गई। ओनै दरपन सामूँ धर लओ। पीपर-पात साफ नजर आओ ओऊ अपने पूरे आकार में। संका निरमूल साबित भई।

जब सब कछू सास्त्र के हिसाब से है तो वा अभाव बालौ जीवन काए जियत। मो परीछन गलत तो नहियाँ। कहूँ राकेस की बात तो सही नहियाँ। कुसुम मुस्कुरा परी- 'ऊ मूरख हतो। पान के पत्ता में और पीपरा के पत्ता में भेद करबोउ न जानत होहै। ठस लौडा, ओनै वेद-पुरान थोरे पढ़े हैं। उनकी जात में कभउँ नईं पढ़े गए।

राकेश मोय बचपन कौ साथी हतो। हमाए घर आमूँ-सामूँ हते। बाहर निकरतई ओई से सामनौ होत तो। समै निकरत गओ हमें पतौ उ नई चलो कि हम कभै ज्वान हो गए। देह में हो रओ बदलाव और माँ की रोक-टोक ने एहसास करा दओ तो कि मैं बड़ी हो गई हों। राकेश कौ आकरषन मोखें बराबर छल रहो तो। ऊ मोखे अच्छी लगत तो। दिन में दो चार देर ओसे बातें न कर लऊँ तौलौ चैन नई परत तो। ओउ मोसें मिलें के लाने तलफत रहत तो। हम दोऊ बदमास बहुत हते। कोऊ खें सक नई होन दओ कि हम एक दूसरे खें चाहत है। राकेश ने कभउँ कोऊ के सामूँ अपनी बहादुरी कौ बखान नई करो।

राकेश में एक आदत खराब हती। ऊ मोसें सटखे जादा बैठत तो। ईसें मैं असहज हो जात्ती। मौका-परतई ऊ मोय कोद खें हात बढाउन लगत तो। मैं ओको हात झटक देत्ती। जब बढ़ी नदी वापस नई लौटी तो लगो मन कैसे पाछू हट सकत। मैं पहलूँ तो न ....न करत रही फिर सोचो-काए खे रोकों। डिरात रही कि रोके सें ऊ कहूँ और न भटक जावै, पता नई कौन बदजात ओखें अपनी कोद खींच लेवै।

राकेश मोसें हर बखत मिलें की फिराक में रहत तो। ओखें जादा इन्तजार नई करनै परत तो। दोउ जने के दिल एक से धड़कत ते। मैं जितनई पाछूँ हटत ती ऊ ओई अनुपात में आगू बढ़त तो। एक दिना घर में मैं अकेली हती। ऊ आखें मोय ऐंगर बैठ गओ। बरगए खें खूब रोको पै ऊ न मानो। बाभन सूद्र सब इकमिल कर डारो। ऊ बोलत बहुत तो। ऊ न जानै कैसी-कैसी बातें करत रहत तो। पान के पत्ता वाली बात ओई में सामिल हती।

जभई मैं मायके जात हों, ऊ मिल जात। मोए कोद टुकुर-टुकुर दिखत रहत। मैं नई दिखत .... कए का दिखनै। वोई तो आय। एक देर ओखी कोद दिखो तो औनै मुस्करा दओ तो। मोरहऊ मुस्कान को व्रत टूट गओ तो। ओखें दिखखें न जानै कितनी पुरानी गड़ी बातें ध्यान में आउन लगत।

पंडितानी कौ दिमाग चकरघिन्नी बनो तो। पता नई कौन कौन सी बातें कहाँ से आखें ओखे दिमाक में आखें जुर जात्ती। जब जुरत ती तो अपनौ प्रभाव छोड़े बिना न रहत ती। कभउँ ओखे दिमाक में अनिल-सुमन कौ सुखमै जीवन घूम जात्तो तो कभउँ जेल की सलाखन के पछाउँ अनिल कौ उतरो चेहरा। अनिल के आवे की बाट हेरत सुमन ओखे मन में आ जात्ती। एडमीसन की लास्ट डेट ओखे हलकान करें ती। ऐसी विषम परिस्थितियन के बीच में राकेस उ अपनी उपस्थिति दरज करा जात्तो।

देर रात पंडिज्जी घर लौट आए। उनकी आँखें आज चमक रही ती। पंडितानी खें या चमक बहुत दिनन बाद दिखानी ती। पंडितानी तो दूसरन के दुख में दुखी और सुख में सुखी रहत वाली औरत ती। पंडिज्जी आज खुस है तो ओउ खुस है। पन्दरा दिना से वे तितुरिया सौ मुँ लेंय घूमत रहे ते।

पंडितानी ने उन्हें पानी दओ। पंडिज्जी उछाह में बोले- 'सक्सेना जी भागवत करवा रहे हैं।'

-'ब्यास गद्‌दी तुम्हई खे सौप रहे है का ?'

-'हाँ।' पंडिज्जी नोटन की गड्डी पंडितानी खे पकराउत भए बोले- 'पचीस हजार में तै हो गई। दस हजार एडवांस लै आओ।'

-'माँगे ते कि अपने आप ....?'

-''मौड़ी कौ एडमीसन नई करवाने ? पंडिज्जी खीझ उठे।'

पंडितानी ने रुपइयन पै एक नजर डारी। प्रार्थना में ओखौ मूँड अपने आप ऊपर खें उठ गओ।

-कृष्णाधाम के आगे, शिव मंदिर के पास अजनारी रोड,
नया रामनगर उरई (उ०प्र०)

का अपुन इनें बिसरा दैवी-

ठेठ बुन्देली क्रियायें

-सुरेन्द्र शर्मा 'शिरीष'

अड़ुआ भाँजबौ-कार्य में व्यवधान की योजना, **अड़ुआ बिदैवो**-व्यवधान डालना, **अरइ करबौ**-बारंबार कार्य हेतु कहा जाना, **अँरैबौ**-रस्सी सहारे बर्तन कुयें में उतारना, **अरौ बिदैबौ**-झगड़े का रास्ता बनाना, **अरौ लैबो**-झगड़ा करने को उकसाना, **इकमिल करबौ**-पृथक जनों या बातों को मिला देना, **उँगरयाबौ**- उंगली से संकेत करना, गुप्तांग में अंगली प्रविष्ट करना, **ऊँछबौ**-ककई/कंघी से केश सँवारना, **उकरुबौ**-पेड़ का अचानक आमूल सूख जाना, **उछरबौ**-उल्टी करना, **उमछाबौ**-जी मचलाना, उमंग से अति उत्साहित होना, **उरीलबौ**-स्त्रियों का बाल सुलझाना, **उसकारबौ**-अग्नि या किसी बात में तेजी लाना, **उसेलबौ**- बुनाई खोलना, **अँगोछबौ**-तौलिया से बदन पोंछना, **कड़याबौ**-बाहर निकल आना, **कनपटयाव करबौ**-फालतू बातों का सुनाना, कनपटी पर चपत लगाना, **कलथईंया लैबौ**-कुलाटें लगाना, **कलपाबौ**- पीड़ा देना, आराम पाना, **किलपबौ**-कष्ट में तड़पना, **काबौ**-कहना, **किलपावौ**-कष्ट/दुख से तड़पाना, **कुनयाई करबौ**-बेईमानी करना, **कुनमुनाबौ**-पूरा मन न बना पाना, सहमत न होना, **कुड़पनया करबौ**- अश्लील या बर्जित हरकतें करना, **कुमलाबौ**-मुरझाना, **कैबौ**-कहना, कथन, **कोरो करबौ**-धनहीन करना, सब कुछ छुड़ा लेना, **ख्वाबौ**-भोजन कराना, **खकोबौ**-किसी वस्तु या धन को हर पात्र में जगह में ढूँढ़ना, **खटकबौ**-बुराई हो जाना, बुरी लगना, बुरा लगना, **खिसयाबौ**-क्रोध में भरकर डाँटना, **खुँदवाबौ**-पैरों से शरीर कुचलवाना, **खुँदबौ**-कुचल जाना, **खुटकबौ**-नाखूनों से कोंपलों का काटना, **खुकंट चढ़बौ**- धूल धूसरित हो जाना, विस्मृत, **खुकंट उड़ाबौ**-रंगत बिगाड़ना, धनहीन करना, **खुपड़मंजन करबौ**-फालतू बातें कर दिमाग खाना, **खुदयाबौ**-छेड़ना, **खुद्दरौ लैबौ**-झगड़े की जड़ जमाना या छेड़ना, **खुलकबौ**-आभास कराए बिना निकल आना, **खोंदबो**-किसी के शरीर को पैरों से दबाना पीड़ा घटाना, **गुटकबौ (गुटकबौ)**-गले के नीचे उतारना, **गठयाबौ**-प्राप्त कर लेना, जनेऊ तैयार करना, **गढ़याबौ**-गाढ़ा करना, **गरयाबौ**-गालियाँ देना, **गपाबौ**-चुभाना, **गारबौ**-घिसना, **गाँसबौ**-आबद्ध करना, **गुंगवाबौ**-धुआँ भर जाना, **गुच्चबौ**-चुभाना, **गुड़याबौ**-घरी या तह करना, **गुस्याबौ**-क्रोध करना, **गुलकबौ**-आँख में उँगली से हल्की चोट लग जाना, **गेरबौ**-परिक्रमा, चक्कर लगाना, **गोबौ**-धागे में फूल पिरोना, गूँथना, बालों की चुटिया बनाना, **घरयाबौ**-तह या घरी लगाना, **घिनयाबौ**-घृणा से भर जाना, **घालबौ**-चलाना, करना, मारना, **घोरुआ घोरबौ**-कष्टों अभावों में जीवन बिताना, **चटकें उड़ाबौ**-किसी की अवमाना हेतु हँसी उड़ाना, **चमकाबौ**-हास परिहास करना, **चंचेड़बौ**-रूखे मन से बोलना, **चनकटयाबौ**-चपत लगाना, **चरबदयाव**-फालतू बातों वाली चर्चा, **चाबौ**-चाहना, **चिकन्याबै**-चीकना करना, चिकनाई युक्त करना, **चिमाई सादबौ**-कुछ न बोलना, **चुखरयाई करबौ**-हल्का भ्रष्टाचार करना, **चुमरबौ**-टट्टी पर पैर पड़ जाना, **चुपरबौ**-रोटी पर घी लगाना, **चुलकबौ**-चंचलतापूर्ण बातचीत व क्रियायें, **चेंटबौ**-चिढ़ना, **चेंटाबौ**-चिढ़ाना, **चकचोंदयाबौ**-भ्रम होना, **छुटकबौ, छुटकाबौ**-हाथ से गिराना, ढीला पन करना, **छछैबौ**-खोज, **छनकाबौ**-गाढ़ा करना, छुन-छुन करना, **छपबौ**-छपना, लग जाना, **छरकबौ, छरकाबौ**-ना पसंद करना, बचना, **जताबौ**-अहसास कराना, अवगत करना, **जी आबौ**-आकर्षित हो जाना, **जी करबौ**-इच्छा, **जड़याबौ**-तेज ठंड लगना, **जगन्वार करबौ**-जागरण, **जिमाबौ**-भोजन कराना, **जरबौ**-जलना, ईर्ष्या करना, **जेंबौ**-भोजन करना, **झटकबौ**-छुड़ाना, दुर्बल होना, दुबला होना, **झटकाबौ**-झटकारना, **झींमबौ**-ऊँघना, अर्द्ध निद्रित होना, **झड़बौ**-वीर्यपात, नीचे आना, **झन्नाबौ**-जलन होना, **टरकाबौ**-टालना, **टुनयाबौ**-छेड़-छाड़ करना, **टुँगबौ**-थोड़ा सा देना, **टोंचबौ**-बार-बार याद करना, **टेंबौ**-पत्थर पर घिसकर धार बनाना, **ठठबौ**-चुभ जाना, **ठठैबौ**-चुभाना, **ठँड़याबौ**-उत्तेजित करना, **ठंसबौ**-बिना पात्रता के घुसना, शामिल होना, **ठाँसबौ**-क्रोध सहित समझाना, **ठुलयाबौ**-जूतों की ठोंलें मारना, **ठेंसबौ**-आयतन से ज्यादा भरना या डालना, **डुरयाबौ**-साथ में लेना, **ढँड़काबौ**-आगे बढ़ाना, **ढुँडकाबौ**-तरल को व्यर्थ गिराना, **ढीलबौ**-पालतू पशुओं को बंधन मुक्त करना, **ढोंसबौ**-धक्का मारना, **तड़कबौ**-रह रहकर तेज दर्द होना, **तड़तड़ाबौ**-क्रोध करना, **तिंनगाबौ**-चिढ़ाना, **तुन्नयाबौ**-ऐंठना (मूँछों को), **थुड़याबौ**-हतोत्साहित करना, धिक्धिक् करना, **दपकाबौ**-डाँटना, **दम पचड़के की देबौ**-स्वयं की प्रशंसा करना, वे सिर पैर की बात करना, बढ़ा चढ़ाकें बातें करना, **दम भरबौ**-लगाबौ, गाँजा पीना, **दम लैबौ**-सुस्ताना, **दम-दम पारबौ**-बहुत जल्दीबाजी मचाना, **दसाबौ**-बिछाना, **दुनयाबौ**-दुहरा करना, तह या घरी लगाना, **दुकान बढ़ाबौ**-दुकान बंद करना, **देरी खूँद खाबौ**-बार-बार आना, **दुसराबौ**-दुहराना, **धचेड़बौ**-नीचे गिराकर ऊपर चढ़कर पीटना, **नबबौ**-झुकना, विनम्रता दिखाना, **नबाबौ**-झुकाना, **नर्रयाबौ**-नखरे दिखाना क्रोध दिखाना, **ना नुकुर करबौ**-मना करना, **नाँबौ**-तरल पदार्थ ऊपर से नीचे गिराना, **निंगबौ**-पैदल चलना, **निंगाबौ**-पैदल चलाना, **पनपना कँपबौ**-डरना, भय खाना, **पनयाबौ**-जूतों से मारना, **परबौ**-लेटना, **पपड़याबौ**-सूखने से ऊपरी सतह पर पपड़ी जम जाना, **पदाबौ**-दौड़ाना, **पसारबौ**-फैलाना, प्रसार करना, **पारबौ**-लिटाना, **पठैबौ**-भेजना, **पाबौ**-प्राप्त करना, **पिलैबौ**-गोटी का कंचा के गड्ढे में डालना, **पुर्टबौ**-दौड़ाते हुए पीछा करना, **पेरबौ**-परेशान करना, **पैरबौ**-पहिनना, तैरना, **पैराबौ**-तैरना सिखाना, पहिनाना, **फटकबौ**-पास आना, सूप से कूड़ा निकालना, **फट्टे बगराबौ**-बनावटी दिखावा करना, **फेरबौ**-वापिस करना, **बमकाबौ**-उछालना, **बरकाबौ**-बचाना, **बर्राबौ**-सपने देखना, **बगराबौ**-फैलाना, **बिरबाबौ**-रीझना, **बिसरबौ**-बिसराबौ, भूलना, भूलजाना, **बारबौ**-जलाना, **बिलोरबौ**-बिगाड़ना, क्रम तोड़ना, **बुकरबौ**-काट डालना, **बुलयाबौ**-सालियों का जीजा से हास परिहास, **बिसाबौ**-क्रय विक्रय करना, **बुकलबौ**-मुँह में पानी

भरकर छोड़ना, **बुँदयाबौ**-बूँदे गिरना, **बोरबौ**-डुबाना, **भटकाबौ**-बार-बार व्यर्थ बुलाना, गलत रास्ता बतलाना, **भरमाबौ**-झूठा आश्वासन देना, **भमकाबौ**-व्यर्थ में पानी गिराना, **भाबौ**-अच्छा लगता, मन को भाना, पसंद आना, **भाँबौ**-मथना, गलत बयानी, **भँड़याई करबौ**-चोरी करना, **भिनकाबौ**-बिगाड़ना, **भिमयाबौ**-जोर-जोर से रोना, **भिंदरयाबौ**-डर समा जाना, भयभीत हो जाना, **भुन्नयाबौ**-रिस करना, गुस्सा आना, **भुकरबौ**-बात चीत न करना, बुरा मानना, **भुसड़याबौ**-अश्लील गालियाँ देना, **भैराबौ**-अभाव दिखाना, लालच करना, **भुरकबौ**-छिड़कना, **भोगमानी भोगबौ**-कष्टपूर्ण जीवन जीना, **मटकाबौ**-नेत्र/कमर इधर-उधर चलाना, **मतबौ**-नस चढ़ जाना, **माँ-बैन एक करबौ**-अश्लील गालीं देना, **मंसयाबौ**-मंशा/इच्छा करना, **मिंचबौ**-आँखें बंद होना, **मिलकाबौ**-दीपक जलाना, **मिसमिसाबौ**-दाँत पीसना, क्रोध करना, **मींचबौ**-आँखे बंद करना, **मिच मिचाबौ**-बार-बारआँखें बंद करना, **मुड़याबौ**-कार्य करना, स्वीकार करना, **मुलयाबौ**-मोल भाव करना, **मुकरबौ**-कहकर पलट जाना, **मुरकबौ**-मुड़ना, वापिस होना, **मूँदबौ**-ढकना, **मोंगाबौ**-चुप करना, **रगेदबौ**-पीछा करते हुए दौड़ाना, **राबौ/रैबौ**-रहना, **रियाबौ**-विनती करना, **रिसाबौ**-बात-चीत न करना, रूठना, **लाबौ/ल्याबौ**-लाना, **लगुन लिखबौ**-लग्न पत्रिका लिखना, आरोप लग जाना, **लमतरानी दैबौ**-वे सिरपैर की बातें करना, आधार हीन बातें करना, **लुलाबौ**-लँगड़ा कर चलना, **लैबौ**-लेना, **लोरबौ**-तैरना, **लोंकबौ**-रह रह के पीड़ा या उत्तेजना होना, **सगबाट निपोरबौ**-निकट का रिश्ता बतलाना/प्रदर्शित करना, **सपरबौ/सपराबै**-नहाना, नहलाना, **सरकबौ/सरकाबौ**-खिसकना, खिसक ाना, **सनयाबौ**-सनक पैदा करना, धुनसवार कराना, **सन्नाबौ**-जोर से फैंकना, **सटकबौ**-फिसलना, बिना आभास कराए निकल जाना, **सरुँटबौ**-हथेली से एकत्र करना, **सींबौ**-सिलना, **सिमाबौ**-सिलाना, **सूकबौ**-सूख जाना, दुबला हो जाना, **सटकाबौ**-बिना बताये लेना, धीमे प्रवेश कराना, **सुलयाबौ**-तैयारकरना, सहमत करना, **सुदयाबौ**-लक्ष्य साधना, **सुलबुलाबौ**-बिना दाँत मसूढ़ों से चबाना, **सुबाबौ**-सुलाना, **सोबौ**-सोना, **सकुचबौ**-संकोच करना, **सुटकबौ**-गले में नीचे उतारना, **सेंटबौ**-डरना, संकोच करना, **हटकबौ**-मना करना, **हरबरयाबौ**-जल्दबाजी करना, **हड़बड़ाबौ**-अस्त व्यस्त हो जाना, सूझ न पड़ना, **हड़काबौ/हुड़काबौ**-चिढ़ाकर तैश में लाना, **हुँदयाबौ**-ऊधम करना, **हुदयाबौ**-टिहुनी से हुद्दा (धक्का) मारना, **हेरबौ**-देखना, सिर से जुँये निकालना, **हूँका दैबौ**-ध्यान देने की सूचना, **हुरयाबौ**-होली की हुड़दंग करना, **हरयाबौ**-हरा होना, खुश होना, **हगबौ**-टट्टी करना, **होबौ**-प्रसव, जन्म लेना,होना, **हामी भरबौ**-स्वीकृति देना, सहमति बतलाना।

-आदर्श मार्ग, शुक्लाना, छतरपुर म०प्र० 卐

अठारहवें बुन्देली उत्सव में सम्मानित विभूतियाँ

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान (समीक्षा हेतु)
डॉ. सरोज गुप्ता, सागर

चिरगाँव जिला झाँसी में २० जुलाई १९६३ को जन्मी तथा सागर में रह रही समीक्षक डॉ. सरोज गुप्ता को यह सम्मान उनकी बुन्देली समीक्षा हेतु प्रदत्त किया गया। इनकी प्रकाशित प्रमुख पुस्तकों में सियारामशरण गुप्त के काव्य में समाज और संस्कृति, बुन्देली धरती: सर्जना और सृजन, बुन्देलखण्ड की संस्कृति एवं प्रमुख कवि हैं। इन्होंने कई पुस्तकों का संपादन किया है। डॉ.गुप्ता के निर्देशन में बारह छात्रों ने शोध उपाधियाँ प्राप्त की हैं।

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान (काव्य रचना हेतु)
श्री बटुक चतुर्वेदी

चार मई सन् १९३३ को विदिशा में पं. मूलचंद्र चतुर्वेदी के घर जन्मे भोपाल निवासी वरिष्ठ बुन्देली कवि श्री बटुक चतुर्वेदी को यह सम्मान उनके बुन्देली काव्य में रचनात्मक अवदान के के लिए दिया है। आपकी खूब भरो है मेला, आदमी होने का है दुख, हेमन्तिया, नागफनी के काँटे पुस्तकें प्रकाशित हैं।

राव बहादुर सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान (लोक संस्कृति हेतु)
श्री लोकेन्द्र सिंह नागर

बुन्देली संस्कृति साहित्य तथा बुन्देलखण्ड के लिए संघर्ष करने वाले दस जुलाई १९४१ ई, को समथर जिला झाँसी में ठाकुर गजराज सिंह के घर जन्मे श्री लोकेन्द्र सिंह नागर को दिया गया। इनकी प्रकाशित पुस्तकें गोपीशतक, ईसुरी, ईसरी का फाग साहित्य है। आप अपनी वाणी तथा क्रिया से बुन्देलखण्ड तथा बुन्देली संस्कृति के उत्थान के लिए क्रियाशील रहते हैं।

दीवान प्रतिपाल सिंह बुन्देला स्मृति सम्मान (बुन्देलखण्ड के इतिहास हेतु), श्री वीर सिंह परमार

झाँसी जिले के ग्राम रक्सा में जन्मे श्री वीर सिंह परमार को यह सम्मान दिया गया। इन्होंने झाँसी में क्रांति १८५७-१८८६ लिखकर कई अनछुए पहलुओं को उद्घाटित किया है। इनकी पुस्तक का विमोचन भारत के उपराष्ट्रपति महोदय द्वारा किया गया है। आप बुन्देलखण्ड के इतिहास पर लगातार शोध आलेख लिखते रहते हैं।

डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त स्मृति सम्मान (लोककला हेतु)
श्री चन्द्रभूषण तिवारी

महोबा जिले के ग्राम कबरई में श्री लोकनाथ तिवारी के घर जन्मे श्री चन्द्रभूषण तिवारी (बब्लू भइया) को यह सम्मान लोकवाद्य ढोलक वादन के उत्कृष्ट कलाकार हेतु प्रदान किया गया। आप आकाशवाणी के बी हाई ग्रेड ढोलक वादक हैं। आपने देश के प्रख्यात मंचों पर ढोलक वादन किया है।

गौरिहार नरेश प्रताप सिंह स्मृति सम्मान
(बुन्देली कला साधना हेतु) डॉ. विष्णु अरजरिया

अजयगढ़ जिला पन्ना में डॉ. बृजकिशोर अरजरिया के घर २१ नवम्बर १९५० को जन्मे डॉ. विष्णु अरजरिया (भाई जी) को यह सम्मान उनकी बुन्देली मंच संचालन तथा अभिनय क्षमता के लिए प्रदत्त किया गया। डॉ. अरजरिया आकाशवाणी से प्रसारित कई बुन्देली नाटकों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा चुके हैं। अपनी खनकती मीठी आवाज में बुन्देली के उत्कृष्ट मंच संचालक के रूप में आपकी ख्याति है।

डॉ. हरिराम व्यास स्मृति सम्मान (पत्रकारिता हेतु), डॉ. अजय दोसाज, श्री रविन्द्र व्यास

पत्रकारिता में उत्कृष्ट करने हेतु दैनिक कृष्ण क्रान्ति के संपादक डॉ. अजय दोसाज एवं इलेक्ट्रानिक मीडिया के पत्रकार श्री रवीन्द्र व्यास को यह सम्मान उनकी सेवाओं को दृष्टिगत रखते हुए प्रदान किया गया।

नई-नई पोथीं अपुन के लानें

१. त्रिवेणी-नवल किशोर सोनी 'मायूस' प्रकाशक-सरस्वती सदन पुस्तकालय, छतरपुर कीमत ५०/-

२. दिन ललित बसंती आन लगे (निबंध संग्रह)-रचनाकार डॉ. जगदीश रावत, सं. डॉ. के.एल.पटेल

३. बेटियाँ-डॉ.सरोज गुप्ता, प्रकाशक- बुन्देली लोक साहित्य संस्थान, सागर

४. सुर दुर्लभ अमृत के घूँट-भानुप्रताप शुक्ला 'भानु' प्रकाशक-नवचेतना साहित्य एवं कला संस्थान, निवाड़ी की. ३५/-

५. परम रसिक संत श्री आत्मराम इकंगी जी की वाणी, सं. स्वामी नवल माधुरी शरण, प्रकाशक-श्री शुक्ल सम्प्रदाय साहित्य संस्थान, वृंदावन कीमत-१२५/-

६. श्री रामस्नेही संदेश सन्त ससक-बृजेन्द्र कुमार सिंहल, प्रकाशक-श्री रामस्नेही युवा संत परिषद्, शाहपुरा कीमत-१०/-

७. बरगद का न्याय-विनोद मिश्र 'सुरमणि' प्रकाशक-म0प्र0 राज्य जैव विविधता बोर्ड, भोपाल, कीमत-५०/-

८. मीरायन-सं. सत्यनारायण समदानी प्रकाशक-मीरा स्मृति संस्थान, सिंधी कॉलोनी, चित्तौड़गढ़

९. मड़ई 2013-सं. डॉ. कालीचरण यादव, प्रकाशक-रावत नाच महोत्सव समिति, बिलासपुर छ0ग0 कीमत नि:शुल्क

१०. बुन्देलखण्ड चित्रावली-अंबिका प्रसाद दिव्य, प्रकाशक-प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, कीमत-५००/-

११. सारथी-भूमि कुमारी, प्रकाशक-नूतन साहित्य समिति, पन्ना

१२. नाट्यम् अंक ७५-सं. डॉ.राधाबल्लभ त्रिपाठी, प्रकाशक-नाट्य परिषद्, संस्कृत विभाग, सागर वि.वि. सागर, कीमत-२५/-

१३. वैचारिकी-सं.डॉ.बाबूलाल शर्मा, प्रकाशक-भारतीय विद्या मंदिर, कोलकाता

१४. बुन्देली लोकोक्ति कोश भाग-1, डॉ.गौरी शंकर उपाध्याय 'सरल' प्रकाशक-सरल साहित्य संगम, झाँसी उ0प्र0 की. ५००/-

१५. काव्यकुंज-डॉ.गौरी शंकर उपाध्याय 'सरल' प्रकाशक-'सरल' प्रकाशक-सरल साहित्य संगम, झाँसी उ0प्र0 की. ५००/-

१६. लोक परम्परा-अवधरणा और संरचना- डॉ. मालती शर्मा, प्रकाशक-आलेख प्रकाशन, दिल्ली कीमत-२५०/-

१७. मेला घूमन निकरी गुईंयाँ-लक्ष्मी शर्मा, लक्ष्मी प्रकाशन, १०२०, शक्ति नगर, गुप्तेश्वर, जबलपुर म0प्र0, कीमत-१००/-

१८. बुन्देलखण्ड का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य-डॉ. गंगा प्रसाद बरसैयाँ, प्रकाशक-सन्दर्भ प्रकाशन, अलोपीबाग इलाहाबाद उ0प्र0, कीमत-२५०/-

१९. भावानुकृति-डॉ.रमेश चन्द्र खरे, दमोह, प्रकाशक-अयन प्रकाशन, महरोली, दिल्ली, कीमत-३००/-

२०. गो भक्तमाल-गोरंजनी कवित्तमयी टीका, रामस्वरूपदास, टीकमगढ़, प्रकाशक-श्रीमलूक पीठ सेवा संस्थान, वंशीवट, श्री धाम वृंदावन, कीमत-१५०/-

२१. वैभव की जन्मकुण्डली-सुशील खरे 'वैभव', प्रकाशक-आयुष प्रकाशन, पन्ना म0प्र0, कीमत- १०१/-

२२. बुन्देलखण्ड के शिलालेख-हरिविष्णु अवस्थी, प्रकाशक-मरू भूमि शोध संस्था, श्री डूंगरगढ़, कीमत-२००/-

२३. देह धरे का दर्द-वीरेन्द्र बहादुर खरे, प्रकाशक-श्री वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद टीकमगढ़, कीमत-१००/-

२४. मोपै रंग न डारौ साँवरिया- श्रीमती संतोष पटैरिया, प्रकाशक-बुन्देली साहित्य प्रकाशन, छतरपुर, कीमत-१००/-

२५. तुलसी चर्चा-बी.डी.श्रीवास्तव, प्रकाशक-वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद्, टीकमगढ़ म0प्र0, कीमत-१००/-

२६. मंगा-श्री बाबूलाल खरे, प्रकाशक-स्क्राईब पब्लिकेशन, इन्दौर, कीमत-१५०/-

२७. नौनी लगै बुन्देली-अखिलेश नारायण त्रिपाठी, 'विशेष', प्रकाशक-शोभा प्रकाश मंदिर, झाँसी उ0प्र0,

२८. अरगनी-डॉ. शिरोमणि सिंह 'पथ', प्रकाशक-बुक पब्लिकेशन, लखनऊ, कीमत-२५०/-

२९. आँगन में नागफनी-कुँ.शिवभूषण सिंह गौतम, प्रकाशक-एनस्वे इको राइटर्स, बंगलुरु, कीमत-१००/-

३०. घूमरी पृथ्वी घूम-घूम-महेन्द्र फुसकेले, प्रकाशक-सत्यशीलम् प्रकाशक, सागर म0प्र0, कीमत-५०/-

३१. काला गुलाब-हवलदार भगवंत सिंह ठाकुर, कुर्रा, प्रकाशक-अजय सिंह ठाकुर इन्दौर, कीमत-६५/-

३२. प्रकृति प्रेम-हवलदार भगवंत सिंह ठाकुर, कुर्रा, प्रकाशक-अजय सिंह ठाकुर इन्दौर, कीमत-९५/-

३३. शंख पुष्पी के फूल-डॉ.सुशीला, प्रकाशक-बुन्देली साहित्य समिति, झाँसी उ0प्र0, कीमत-५१/-

रचनाकारों से अनुरोध

बुन्देली विकास संस्थान, बसारी द्वारा प्रकाशित होने वाली पत्रिका बुन्देली बसंत हेतु समस्त रचनाकारों से मौलिक रचनायें वर्ष भर आमंत्रित हैं। आप संपादक के अनुरोध पत्र की प्रतीक्षा न कर बुन्देलीधरा पर बिखरी साहित्यिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक धरोहरों को सहेजने व विश्लेषण से युक्त आलेख रचें व संपादक के पास प्रकाशन हेतु प्रेषित करें।

बुन्देलखण्ड अंचल के रचनाकारों, साहित्यकारों, इतिहासविदों एवं संस्कृति से जुड़े कलाकारों को बुन्देली विकास संस्थान द्वारा उनके रचनात्मक अवदान को रेखांकित करने हेतु विभिन्न सम्मान प्रदान किये जाते हैं। इस संदर्भ में आपसे अनुरोध है कि आपके अंचल में या आपकी दृष्टि में कोई पात्र हो तो उसका विवरण समिति के पास प्रेषित कर सहयोग करने का कष्ट करें।

-संपादक

अठारहवें बुन्देली उत्सव २०१४ का प्रगति प्रतिवेदन

-कु.नेहा सिंह बुन्देला

बुन्देली लोक कला और संस्कृति पर आधारित सात दिवसीय 'बुन्देली उत्सव' का भव्य शुभारम्भ १७ फरवरी २०१४ को महाराजा छत्रसाल स्टेडियम, बसारी में हुआ। उत्सव के प्रथम दिन मुख्य अतिथि के रूप में माननीय श्री अजय सिंह जू (राहुल भैया) पधारे। श्री सिंह ने सर्वप्रथम महाराजा छत्रसाल के चित्र के समक्ष दीप प्रज्जवलन एवं माल्यार्पण किया साथ ही कबूतरों तथा रंगबिरंगे गुब्बारों को आसमान में स्वतंत्र छोड़ा। आतिशबाजी की मधुर ध्वनि स्टेडियम में गूँजती रही जो कि स्वतंत्रता एवं खुशहाली की परिचायक हैं।

बुन्देली विकास संस्थान के संरक्षक श्री शंकर प्रताप सिंह जू बुन्देला ने परम्परागत रूप से पुष्पहार से अतिथियों का स्वागत किया साथ ही स्वागत करने वालों में शोभालाल गुप्ता अध्यक्ष बुन्देली विकास संस्थान, अजयपाल सिंह (रावसाहब), आलोक चतुर्वेदी (पज्जन भैया), मनोज त्रिवेदी (जिला अध्यक्ष कांग्रेस कमेटी), सिद्धार्थ शंकर बुन्देला (अध्यक्ष जनपद पंचायत राजनगर), लखन दुबे, देवेन्द्र प्रताप सिंह, आयोजन समिति के पदाधिकारी तथा पत्रकार बंधु सम्मिलित रहे।

संस्थान के संरक्षक महोदय ने उत्सव में सम्मिलित मुख्य अतिथि तथा अन्य अथितियों का हार्दिक आभार प्रकट किया तथा क्षेत्रीय नागरिकों की प्रशंसा करते हुए कहा कि यह उत्सव पूर्णतया क्षेत्रीय नागरिकों के सहयोग से होता आया है और सतत् होता रहेगा।

मुख्य अतिथि श्री सिंह ने बुन्देली उत्सव के वयस्क होने पर संरक्षक महोदय सहित क्षेत्रीय नागरिकों को बधाई दी। साथ ही मध्यप्रदेश शासन से अपेक्षा करते हुए कहा कि प्रदेश में शासन के सहयोग से प्रायोजित होने वाले अन्य क्षेत्रीय उत्सवों के समान ही बुन्देली उत्सव को आर्थिक अनुदान देना सुनिश्चित करना चाहिए। जिससे बुन्देलखण्ड गौरवान्वित हो सके। माननीय अजय सिंह जू के द्वारा प्रतिवर्ष प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'बुन्देली बसंत-२०१४' का विमोचन किया गया तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में श्री रविन्द्र व्यास (संवाददाता आज तक) को 'डॉ. हरिराम मिश्र सम्मान २०१४' से सम्मानित किया गया जिसमें सम्मान पत्र, शॉल, श्रीफल एवं रुपये ३१०००/- की राशि भेंट की गई। प्रथम दिन रंगोली प्रतियोगिता, बुन्देली आधारित बच्चों के कार्यक्रम, कुश्ती आदि प्रतियोगिताएँ आयोजित हुई। कुश्ती प्रतियोगिता के निर्णायक के रूप में इब्राहीम पहलवान का निर्णय सराहनीय रहा। रंगोली प्रतियोगिता के निर्णायक मण्डल में श्री एस0के0 छारी एवं रामकुमार सोनी प्रमुख रहे। रंगोली एवं लोकचित्रण प्रतियोगिता में सविता राजपूत (छतरपुर) प्रथम, सपना बुन्देला (छतरपुर) द्वितीय तथा नेहा राजा (बरेठी) तृतीय रहीं।

१८ फरवरी उत्सव के दूसरे दिन चौपड़, कबड्डी, बॉलीवॉल, गिल्ली डंडा आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया कबड्डी प्रतियोगिता के मुख्य अतिथि श्री देवेन्द्र प्रताप सिंह (दिल्लू राजा) एवं बॉलीवॉल प्रतियोगिता के मुख्य अतिथि श्री सिद्धार्थ शंकर बुन्देला (जनपद पंचायत अध्यक्ष, राजनगर) रहे। कबड्डी व वॉलीबॉल प्रतियोगिताओं का प्रदर्शन अद्भुद रहा जिसका दर्शकों ने खूब लुफ्त उठाया। बॉलीवॉल के प्रथम प्रतियोगिता मेजवान बसारी एवं बौतराई तथा दूसरी डी0ए0बी0 छतरपुर एवं लुगासी की टीम के बीच सम्पन्न हुई जिसमें बौतराई तथा लुगासी की टीम ने विजय हासिल की कबड्डी प्रतियोगिता में बसारी तथा खरगापुर की टीमों का प्रदर्शन सराहनीय रहा। इन प्रतियोगिताओं का लुफ्त उठाने के लिये क्षेत्रीय नागरिकों का विशाल जन-समूह उपस्थित रहा जिससे समय-समय पर महाराजा छत्रसाल स्टेडियम बसारी तालियों की गड़गड़ाहट से गुंजायमान होता रहा।

१९ फरवरी उत्सव के तीसरे दिन कबड्डी, अश्व नृत्य एवं बॉलीवॉल प्रतियोगिताओं का आयोजन हुआ जिसमे मुख्य अतिथि के रूप में डॉ. गोविन्द सिंह जू विधायक लहार उपस्थित रहे। डॉ. सिंह ने अपने उद्भोदन में संरक्षक महोदय श्री शंकर प्रताप सिंह बुन्देला 'मुन्ना राजा' की अत्यंत प्रशंसा करते हुये कहा कि 'बुन्देली उत्सव' ने केवल बुन्देलखण्ड ही नहीं बल्कि पूरे मध्यप्रदेश के गौरवमयी आयोजन के रूप में अपना स्थान अर्जित किया है। ऐसे आयोजन से निश्चित रूप से लुप्तप्राय बुन्देली संस्कृति, साहित्य एवं कला आदि के विषय में बुन्देलखण्ड के आम नागरिकों को गौरव होगा। मुन्ना राजा ने बुन्देली कला और संस्कृति को जन-जन तक पहुँचाया है।

बॉलीवॉल प्रतियोगिता में पहला मैच करिया पन्ना एवं स्वागत क्लब छतरपुर के बीच खेला गया जिसमें करिया पन्ना ने अद्भुत प्रदर्शन के साथ विजय हासिल की तथा दूसरा मैंच मिर्जापुर एवं सवदुआ के बीच हुआ जिसमें मिर्जापुर ने बाजी मारी। मिर्जीपुर की टीम (विजेता) रुपये ७१००/- व शील्ड तथा बौतराई की टीम (उपविजेता) को रुपये ५१००/- व शील्ड से पुरस्कृत किया गया। कबड्डी का फाइनल मैच अजनारा (टीकमगढ़)एवं नरेड़ी स्वाशा महोबा के बीच खेला गया जिसमें अजनारा की टीम ने बाजी मारी विजेता टीम को आयोजन समिति के द्वारा रूपये ५१००/- व उपविजेता टीम को रुपये ३१००/- शील्ड पुरस्कार के रूप में प्रदान किया गया। अश्व नृत्य प्रतियोगिता में अश्व सज्जा में प्रथम स्थान अर्जुन पाल गंज एवं कल्याण सिंह श्याला ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया इन्हें रुपये २१००/- और ११००/- पुरस्कार राशि

के रूप में प्रदान की गई घुड़सवार सज्जा प्रतियोगिता में रविन्द्र पाल गंज प्रथम, कल्याण सिंह द्वितीय एवं अर्जुन पाल ने तृतीय स्थान प्रान्त किया जिन्होंने रुपये ५१००/- (प्रथम), रुपये ३१००/- (द्वितीय) तथा रुपये २१००/- (तृतीय) पुरस्कार राशि से सम्मानित किया गया और रुपये ५००/- प्रत्येक प्रतियोगी को सान्त्वना पुरस्कार के रूप में प्रदान की गई। इन्हीं व्यस्थ गतिविधियों के साथ उत्सव का तीसरा दिन व्यतीत हुआ।

२० फरवरी उत्सव के चौथे दिन पर्यटक ग्राम बसारी में बैलगाड़ी दौड़, रस्साकसी एवं बुन्देली व्यंजन प्रतियोगिताएँ आयोजित हुईं। कार्यक्रम की अध्यक्षता अजय पाल सिंह जू (रावसाहब) ने की इन्होंने अपने उद्बोधन में कहा कि 'बुन्देली उत्सव' बुन्देलखण्ड की आन-बान और शान के प्रतीक के रूप में अपने आप को स्थापित कर चुका है। इस गौरवमयी कार्यक्रम के आयोजक श्री शंकर प्रताप सिंह जू (मुन्ना राजा) बधाई के पात्र हैं जो बुन्देली माटी के साँचे सपूत हैं। बैलगाड़ी दौड़ प्रतियोगिता में प्रथम स्थान भगवत पटेल परा ने हासिल किया तथा द्वितीय स्थान लखन यादव श्रीनगर (महोबा) ने प्राप्त किया। प्रथम स्थान अर्जित करने वाले प्रतियोगी का बैलगाड़ी और रुपये ५१००/- की राशि, द्वितीय प्रतियोगी का रुपये ३१००/- की राशि तथा तृतीय प्रतियोगी की रुपये २१००/- की राशि पुरस्कार के रूप में भेंट की गई निर्णायक मंडल में धर्मेद्र खरे, भुमानीदीन पटेल एवं संजय सिंह सम्मिलित हैं सायंकाल में बुन्देली व्यंजनों का स्वाद चखा गया।

२१ फरवरी उत्सव के पाँचवे दिन डोड़ा (देशी नाव) दौड़ प्रतियोगिता और सायंकाल के कार्यक्रम का शुभारंभ आज से ही हुआ जिसमें कछयाई, दिवारी, ढिमरयाई, बुन्देली पोशाक, अहिरवारी बैठक, बुन्देली कीर्तन, कहरवा, गारी, बररे, लमटेरा, ख्याल, अलगौजा आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुये। मुख्य अतिथि के रूप में काँग्रेस के वरिष्ठ नेता जगदीश शुक्ला जू पधारे बुन्देली कीर्तन की विधा में उत्सव में प्रथम बार सम्मिलित किया गया। सैर प्रतियोगिता में भगवानदास सभापति छतरपुर ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। कहरवा में संध्या सरगम पार्टी (उरई) प्रथम, एकता ग्रुप पार्टी (दमोह) द्वितीय एवं सपना थियेटर पार्टी (बसारी) ने तृतीय स्थान प्राप्त किया सपना थियेटर पार्टी (बसारी) ने बुन्देली कीर्तन प्रतियोगिता में प्रथम, ख्याल में धनीराम वर्मा छतरपुर, अलगोजा में रविशंकर आदिवासी तथा गारी में रघुवीर सिंह यादव व साथी (झाँसी) ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। लमटेरा में प्रह्लाद रोहित पाटी दमोह तथा अहिरवारी बैठक पार्टी (स्यावरी) ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। चुन्नीलाल रैकवार के द्वारा ढिमरयाई की विशेष प्रस्तुति दी गई।

डॉ. सरोज गुप्ता को 'राव बहादुर सिंह बुन्देला सम्मान २०१४' तथा श्री चन्द्र भूषण तिवारी को 'श्री नर्मदा प्रसाद गुप्त सम्मान २०१४' से सम्मानित किया गया।

२२ फरवरी उत्सव के छठवें दिन मुख्य अतिथि के रूप में ब्रजेन्द्र सिंह राठौर जू (पूर्व विधायक निवारी) उपस्थित रहे एवं वरिष्ट अतिथियों में ब्रजेन्द्र सिंह जू पवई (पूर्व मंत्री), भरत पाठक जू (प्रधान सचिव दीन दयाल शोध संस्थान), कपूर चंद जू (पूर्व विधायक घवारा) रहे। आज की सांस्कृतिक प्रस्तुतियों में दलदल घोड़ी नृत्य, बहुरुपिया, गोटें, बधाई गीत, कार्तिक गीत, आल्हा, बिलवारी, कांडरा, रावला, सोहरे आदि विधाएँ सम्मिलित हुईं। गोटे में मूलचंद पाल अटारन ने प्रथम एवं अखिलेश पाल मऊरानीपुर द्वितीय रहे। कार्तिक गीत विधा में एकता ग्रुप (दमोह) प्रथम एवं बजरंग कार्तिक मण्डल रमपुरा पन्ना ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। दलदल घोड़ी में दुर्गा पार्टी अहिरवारी बसारी ने प्रथम तथा बिलवारी विधा में आदिवासी बलिवारी पार्टी बसारी ने प्रथम एवं मत्थी बाई व सखियों ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। रावला पार्टी रजक बंधु गुंदारा ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। श्री बटुक चतुर्वेदी भोपाल को 'राव बहादुर सिंह बुन्देला सम्मान २०१४' एवं श्री अजय दोसाज, छतरपुर को डॉ. हरिराम मिश्र सम्मान २०१४ एवं डॉ.विष्णु अरजरिया को गौरिहार महाराजा प्रताप सिंह स्मृति सम्मान २०१४ प्रदान किये गये।

२३ फरवरी उत्सव के सातवे दिन समापन दिवस पर मुख्य अतिथि के रूप में श्री यादवेन्द्र सिंह जू बुन्देला (टीकमगढ़) पधारे साथ ही विशिष्ट अतिथि के रूप में श्री तिलक सिंह लोधी (दमोह) एवं श्री सूर्य प्रकाश मिश्रा टीकमगढ़ आदि उपस्थित रहे। इसी के साथ कार्यक्रम आगे बढ़ा और डॉ. जगदीश रावत द्वारा लिखित 'दिन ललित बसंती आन लगे' बुन्देली निबंध संग्रह का लोकार्पण मुख्य अतिथि के द्वारा किया गया। आज संस्कृति प्रस्तुतियों में फाग और राई आदि की प्रस्तुतियाँ हुईं। बधाई नृत्य, फाग, और राई आदि की प्रस्तुतियों ने कार्यक्रम को रंगारंग कर दिया।

फाग प्रतियागिता में फाग पार्टी (चौकड़िया) ने प्रथम एवं कबीर लोक कलामंडल बसारी ने दूसरा स्थान प्राप्त किया। राई में बब्लू पटेल राई (खजुवा) ने प्रथम, शंकरलाल राई पार्टी बसारी, ने द्वितीय एवं ब्रजलाल राई पार्टी (अजयगढ़) ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। अंतिम दिन डॉ. विष्णु अरजरिया, डॉ. बी.एस.परमार, श्री शिवेन्द्र शुक्ला तथा श्री जगदीश गंगेले ने उद्घोषक की भूमिका निभाई।

राई की विशेष प्रस्तुतियों ने पूरी रात जबरदस्त समा बाँधा प्रतियोगिता के समापन पर संरक्षक शंकर प्रताप सिंह जू ने विजेताओं तथा विशेष सहयोगियों को भी पुरस्कृत किया इसी के साथ वयस्क, सफल 'अठारहवे बुन्देली उत्सव' का भव्य समापन हुआ।

-महल परिसर, छतरपुर म०प्र० ꣳ

बुन्देली उत्सव २०१५ हेतु समितियाँ

कार्यक्रम क्रियान्वयन समिति

१. श्री दिवान त्रिलोक सिंह बुन्देला
२. श्री आलोक चतुर्वेदी 'पज्जन भैया'
३. श्री जगदीश शुक्ला
४. श्री भारत कृष्ण देव सिंह बुन्देला
५. श्री शारदा प्रसाद शुक्ला
६. श्री पर्वत सिंह बुन्देला
७. श्री इन्द्रदेव सिंह बुन्देला

स्वागत समिति

१. श्री मनोज त्रिवेदी
२. श्री चन्द्रविजय सिह बुन्देला
३. श्री सिद्धार्थ शंकर बुन्देला
४. श्री दिग्विजय सिंह बुन्देला (अंकुरराजा)
५. श्री अजातशत्रु सिह बुन्देला
६. श्री प्रभात अग्रवाल
७. श्री रामबाबू ताम्रकार
८. श्री फैयाज खान
९. श्री घासीराम साहू
१०.श्री मैनू खान
११.श्री सुरेन्द्र सिंह बुन्देला
१२.श्री विजय रैकवार

स्वल्पाहार स्वागत व्यवस्था समिति

१. श्री संतोष अग्रवाल
२. श्री केदारनाथ अग्रवाल
३. श्री राकेश अग्रवाल
४. श्री कल्ला रैकवार
५. श्री भुमानीदीन रैकवार
६. श्री वृन्दावन रैकवार
७. श्री लखन रैकवार
८. श्री रामबाबू रैकवार
९. श्री सोनू रैकवार

मंच सज्जा समिति

१. श्री पंकज शुक्ला प्रभारी
२. श्री राहुल अग्रवाल
३. श्री मुल्ली यादव
४. श्री लली पाल
५. श्री हीरा पाल
६. श्री मन्नू पाल
७. श्री सुनील वर्मा
८. श्री जीतेन्द्र सोनी
९. श्री रमेश पाल
१०.श्री पवन विश्वकर्मा
११.श्री बब्लू साहू
१२.श्री रवि रैकवार

चाय नाश्ता समिति एवं जल व्यवस्था

१. श्री सुरेश अग्रवाल 'पप्पू', प्रभारी
२. श्री सुधीर अग्रवाल
३. श्री मिलन रैकवार (खिलइयां)
४. श्री मइयादीन रैकवार (हरि)
५. श्री झल्लन रैकवार
६. श्री कल्लू रैकवार (खिलैयां)

स्टेडियम कार्यालय समिति

१. श्री शारदा प्रसाद शुक्ला, प्रभारी
२. श्री नवल किशोर अग्रवाल, प्रभारी
३. श्री प्रभुदयाल यादव, सहायक
४. श्री जगदीश यादव, सहायक
५. श्री राजेश अग्रवाल
६. श्री अरूण शुक्ला
७. श्री अनिल रैकवार
८. श्री राजेश रैकवार

अश्वनृत्य व्यवस्था समिति

१. श्री पर्वत सिंह बुन्देला
२. श्री संजय सिंह
३. श्री मन्नू यादव
४. श्री मथुरा प्रसाद यादव
५. श्री मुकेश साहू
६. श्री खुमान रजक
७. श्री पंचा बसोर

अखाड़ा व्यवस्था समिति

१. श्री मातादीन पहलवान
२. श्री रामस्वरूप पटेल
३. श्री फुली कौंदर
४. श्री महादेव कोंदर
५. श्री हरि कोंदर
६. श्री प्रकाश अहिरवार द्वारका

स्टेडियम सुरक्षा व्यवस्था समिति

१. श्री हीरालाल पाल
२. श्री रामू अहिरवार चौकीदार
३. श्री मातादीन अहिरवार
४. श्री द्वारका अहिरवार
५. श्री टुड़ी कोंदर
६. श्री फुली कोंदर
७. श्री पूरन अहिरवार (खोबलाल)

चौपर व्यवस्था समिति

१. श्री रामबाबू ताम्रकार
२. श्री मूलचन्द्र जोशी
३. श्री जगदीश अवस्थी

भोजन व्यवस्था एवं कूपन वित० समिति

१. श्री महेश प्रसाद अग्रवाल
२. श्री अखिलेश्वर चौबे
३. श्री धर्मेन्द्र खरे
४. श्री संजय खरे

मेला व्यवस्था एवं प्रदर्शनी समिति

१. श्री बाबूलाल खरे, प्रभारी
२. श्री नाथूराम पटेल, जिमींदार
३. श्री सरजू यादव
४. श्री अनारी राजपूत
५. श्री छोटा अहिरवार
६. श्री पुन्ना अहिरवार

आवास व्यवस्था समिति
(स्कूल के चार कमरों में)

१. श्री लखन यादव, प्रभारी
२. श्री वृन्द्रावन राजपूत
३. श्री यूनिस खाँ
४. श्री संतोष रैकवार (राकेश)
५. श्री संतोष यादव (रामप्रसाद)
६. श्री रतन साहू
७. श्री राजू यादव

पंजीयन समिति

१. श्री राममूर्ति नामदेव, प्रभारी
२. श्री वीरेन्द्र खरे चुन्टे

विद्युत व्यवस्था समिति

१. श्री अजय रजक
२. श्री जयसिंह यादव
३. श्री नन्दू जोशी
४. श्री परमलाल कौंदर
५. श्री बराती रजक
६. श्री रम्मू रैकवार

चित्रकार एवं लेखन कार्य समिति

१. श्री संजू खरे
२. श्री धीरज सिंह परमार
३. श्री रमेश अहिरवार
४. श्री अनिल बाल्मीक
५. श्री सुनील बाल्मीक
६. श्री बिहारी राजपूत

गेट व्यवस्था एवं झंडा बैनर समिति

१. श्री महादेव यादव, प्रभारी
२. श्री देशराज अहिरवार
३. श्री सुधीर अग्रवाल
४. श्री चिरौंजी राजपूत
५. श्री बिहारी राजपूत
६. श्री राजू कुशवाहा
७. श्री कल्लू पाल
८. श्री रघ्घू पाल

९. श्री देवराम अहिरवार
१०.श्री शिवदीना अहिरवार
११.श्री दीपचन्द्र अहिरवार
१२.श्री पुष्पेन्द्र अहिरवार
१३.श्री रवि अहिरवार

खेलकूंद व्यवस्था समिति (कबड्डी)

१. श्री आदित्य दुबे, प्रभारी
२. श्री अशोक नायडू
३. श्री बबलू यादव
४. श्री धर्मेन्द्र राजपूत
५. श्री कल्लू यादव (बाबूलाल)
६. श्री कमलेश यादव (परमानन्द)
७. श्री मुकेश रैकवार
८. श्री रामकिशोर रैकवार (रामदास)
९. श्री पिक्का रैकवार (हरदास)
१०.श्री महेन्द्र राजपूत
११.श्री असगर खान
१२.श्री कमलेश प्रजापति

खेलकूंद व्यवस्था समिति (बालीबॉल)

१. श्री पर्वत सिंह बुंदेला
२. श्री संजय सिंह,
३. श्री महेन्द्र विश्वकर्मा
४. श्री भागवत पटेल (कर्री)
५. श्री अशोक यादव
६. श्री देवेन्द्र राठौर
७. श्री हिमालय यादव

बैठक व्यवस्था समिति

१. श्री जब्बार खाँ (प्रभारी)
२. श्री मथुरा यादव
३. श्री भागीरथ यादव
४. श्री रतन यादव
५. श्री परमानन्द यादव
६. श्री श्यामलिया कोरी
७. श्री प्रभू अहिरवार (हरिया)
८. श्री छन्नू हरिजन
९. श्री प्यारेलाल अहिरवार (गोला)
१०.श्री मन्नू यादव
११.श्री बन्दू यादव (गुटियां)
१२.श्री छुट्टन अहिरवार
१३.श्री रामकृपाल यादव
१४.श्री राकेश अहिरवार

मोटरसाइकिल/साइकिल स्टैण्ड व्यवस्था समिति

१. श्री हेमंत राठौर
२. श्री बबलू यादव

बैलगाड़ी दौड़ व्यवस्था समिति

१. श्री पुण्य प्रताप सिंह परमार, प्रभारी
२. श्री मथुरा पटेल
३. श्री भुमानीदीन पटेल
४. श्री परसू कुशवाहा
५. श्री बन्दू यादव गुटियां
६. श्री रघ्घू साहू
७. श्री विश्वनाथ अहिरवार पटवारी
८. श्री राजू रैकवार
९. श्री गोरे लाल पटेल
१०.श्री रामप्रसाद पटेल
११.श्री कमतू पाल

मेला समिति

१. श्री इद्दू खाँ, प्रभारी
२. श्री अनारी राजपूत
३. श्री सरजू यादव
४. श्री जगदीश अवस्थी (पिटु)
५. श्री संतोष यादव (रामप्रसाद)
६. श्री राकेश बाल्मीकि

डौंड़ा (देशी नाव) व्यवस्था समिति

१. श्री विजय रैकवार (प्रभारी)
२. श्री मंगल सिंह बुन्देला
३. श्री हुनवा रैकवार
४. श्री रामधीन रैकवार
५. श्री भुमानीदीन रैकवार

卐

BUNDELI VIKAS SANSTHAN BASARI, CHHATARPUR (M.P.)

INCOME & EXPENDITURE FOR THE YEAR 2013-2014

EXPENDITURE	Rs.	Rs. (R)	INCOME	Rs. (R)
Bundeli Utsav Expenses		1,722,042.00	**From Jan Sahyog**	1,705,800.00
Medical Camp. Exp.	6,014.00			
Hasya Kabi Sameelan	33,087.00		**Membership Fees**	4,680.00
Plantation Expenses	18,955.00			
Agriculture Training & Seed Di	15,640.00	73,696.00	**Smarika Advertisement**	2,05,000.00
Other Expenses			**Interest From Bank**	1,228.00
Salary	1,37,940.00			
Honararium	115,500.00		**Grant NTPC Chhatarpur**	3,50,000.00
Audit Fees & Income Tax	4,500.00			
Misc Exp.	19,804.00		**Excess of Exp.**	59,621.00
Stationary & Printing	24,125.00			
Teaching learning Exp.	33,137.00			
Ismarika Printing Exp.	159,500.00			
Postage	3,920.00			
Sangosthi (Meeting)	32,165.00	5,30,591.00		
TOTAL Rs. :		**2,326,239.00**	**TOTAL Rs.**	**2,326,239.00**

BUNDELI VIKAS SANSTHAN BASARI, CHHATARPUR (M.P.)
RECEIPTS & PAYMENTS A/C FOR THE YEAR 2013-2014

RECEIPTS	Rs.	Rs. (R)	PAYMENTS	Rs.	Rs. (R)
OPENING BALANCE			**BUNDELI UTSAV EXPENSES**		**1,722,042.00**
Cooperative Bank (46)	5,594.00		Medical Camp. Exp.	6,014.00	
Canara Bank (S/A) 1608	80,421.00		Hasya Kabi Sameelan	33,087.00	
F.D.R. Canara Bank	8,00,000.00		Plantation Expenses	18,955.00	
		8,86,015.00	Agriculture Training & Seed Dis.	15,640.00	73,696.00
From Jan Sahyog		1,705,800.00	**OTHER EXPENSES**		
			Salary	137,940.00	
Membership Fee		4,680.00	Honararium	115,500.00	
			Audit Fees & Income Tax	4,500.00	
Smarika Advertisement		2,05,000.00	Misc Exp.	19,804.00	
			Stationary & Printing	24,125.00	
Interest From Bank		1,228.00	Teaching learnng Exp.	33,137.00	
			Ismarika Printing Exp.	159,500.00	
Grant NTPC Chhatarpur		3,50,000.00	Postage	3,920.00	
			Sangosthi (Meeting)	32,165.00	**5,30,591.00**
			CLOSING BALANCES		
			Co-operative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	20,800.00	
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	**8,26,394.00**
TOTAL Rs.		**3,152,723.00**	**TOTAL Rs.**		**3,152,723.00**

BALANCE SHEET AS AT 31-3-2014

FUNDS	Rs.	Rs. (R)	ASSETS	Rs.	Rs. (R)
Society Fund			**Fixed Assets**		
As per L.BS	1,276,308.00		Land (As per last B.S.)		308,646.00
Less The year	-(59,621.00)	1,216,687.00	**Building Construction**		6,95,600.00
Loans & Deposit			**Furniture (As per last B.S.)**		9,597.00
Nehru Yuva Club Basari		132,216.00			
Loans Swami Pravanand Homeo College		5,00,000.00	**Dead Stock (W.D.V)**		8,666.00
			CLOSING BALANCES		
			Cooperative Bank (46)	5,594.00	
			Canara Bank (S/A) 1608	20,800.00	
			F.D.R. Canara Bank	800,000.00	8,26,394.00
TOTAL Rs.		**1,848,903.00**	**TOTAL Rs.**		**1,848,903.00**

We certify that receipts & Utilization of funds & Closing Balance (as above) are correct.

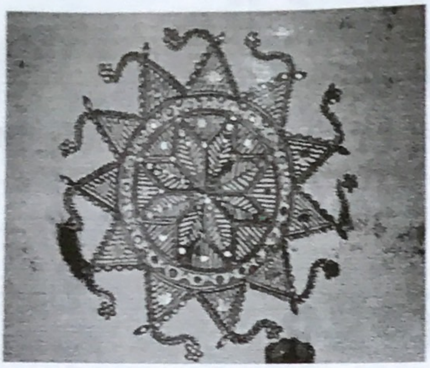
AUDIT REPORT
We have checked (enclosed) receipts and utilization a/c and Balance Sheet as on 31-3-2013 if any we certify them as correct.

SAGAR, 15-07-2014

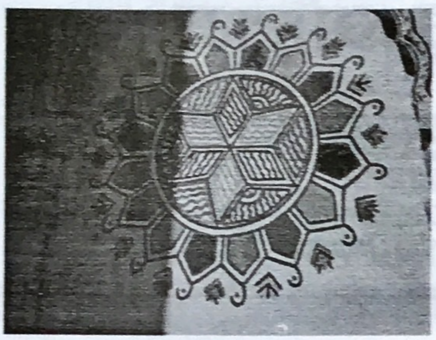
President **Secretary**

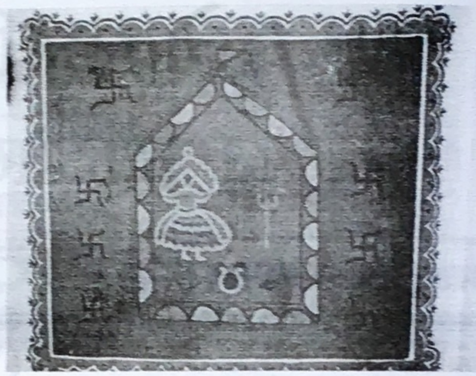
R.V. Agrawal
Chartered Accountants

बुन्देलखण्ड के लोक चित्र

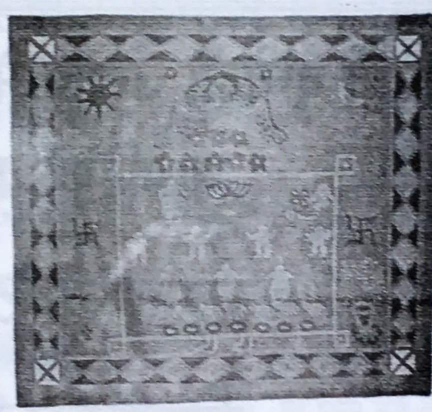


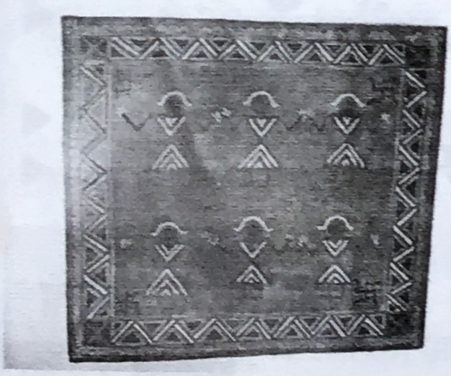








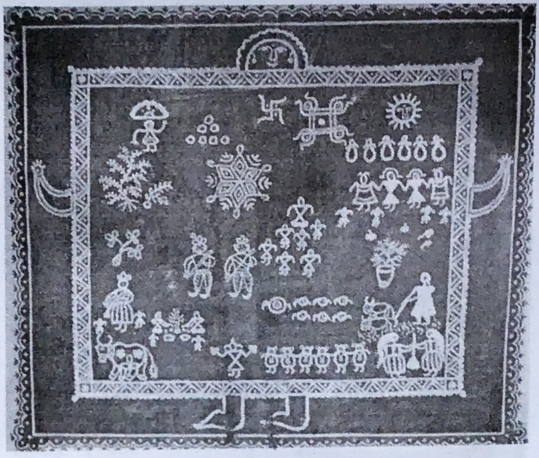




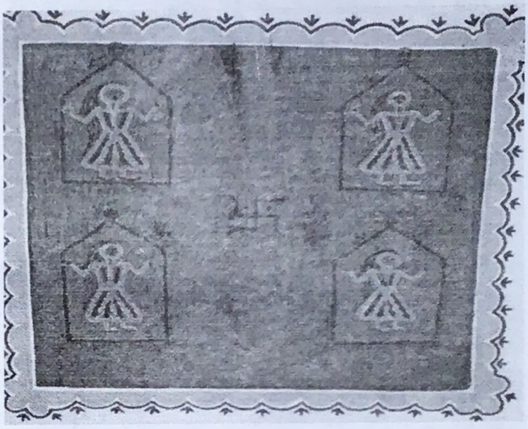


बुन्देलखण्ड के लोक चित्र

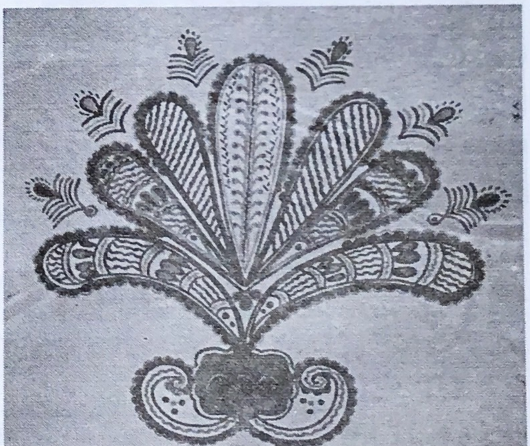




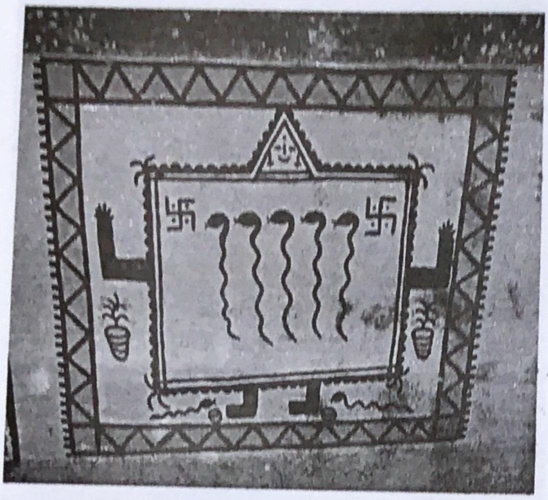




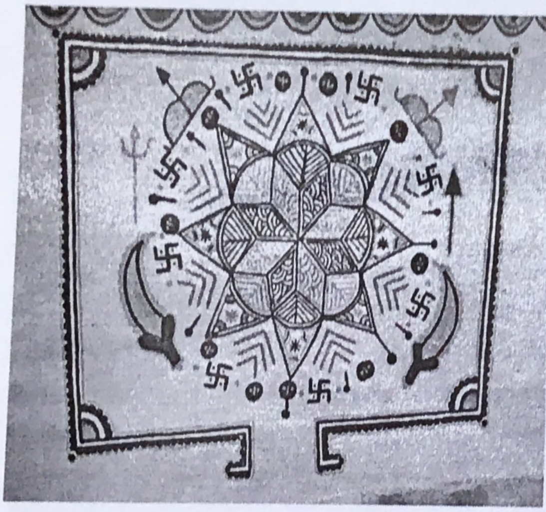


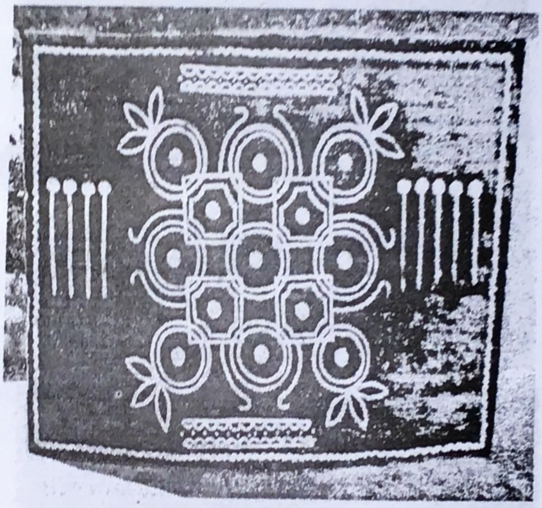


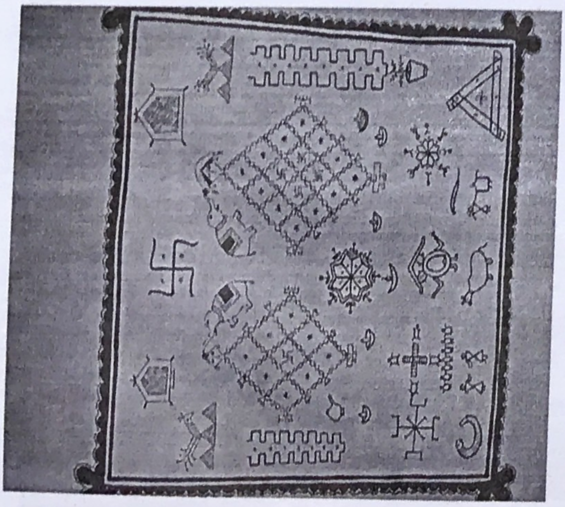
बुन्देलखण्ड के लोक चित्र

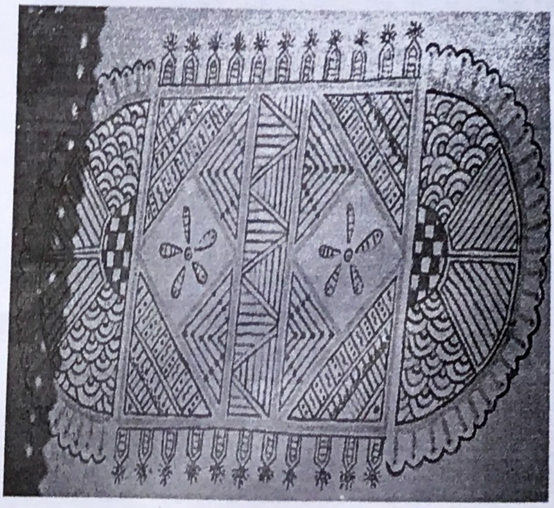










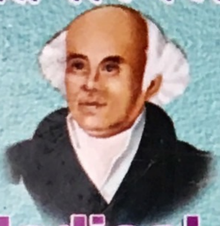


उन्नीसवें "बुन्देली उत्सव-2015"

में पर्यटक ग्राम बसारी (बुंदेलखंड) में पधारे
अतिथियों एवं कलाकारों का हम हार्दिक अभिनंदन करते हैं



Mr. S.P. Singh Bundela
Munna Raja
Patron



S.P.H. Medical College & Hospital Chhatarpur (M.P.)

Course run - B.H.M.S. ($5\frac{1}{2}$ Years Degree)

Specilities :

1. Recognised by Department of Medical Education of Madhya Pradesh Govt. & Central Council of Homoeopathy New Delhi Govt. of INDIA & Affiliated by Dr. H.S. Gour Central University Sagar (M.P.)
2. Well equipped Departments & Hospital (IPD & OPD).
3. Well Qualified & Experienced Teaching Faculty.
4. 50- Beded Hospital with well equipped OT



Mr. R.B. Tamrakar
President



Mr. Siddharth S. Bundela
Secretary



Mr. M.L. Beldar
Vice President



Mr. M. Singh
Administrator



Dr. H.R.M. Tripathi
Principal

WELCOME TO ALL GUEST



Ph. 07682-248352, 09755286989, 09630332232, 09407335046, 09584730068